अभिव्यक्ति

सरयू राय

बिहार विधान परिषद् और झारखंड विधान सभा में
अभिव्यक्त विचारों का संपादित संकलन

प्रकाशक :
झारखण्ड बुक डिस्ट्रीब्यूटर्स,
6A, गुरुनानक नगर,
साकची,
जमशेदपुर–831001

प्रथम संस्करण
जुलाई 2008

© प्रकाशक के अधीन

मूल्य : 250/–

मुद्रक :
झारखंड पब्लिकेशन,
6 'ए' गुरूनानक नगर,
साकची,
जमशेदपुर–831001

पूज्य पिता स्व. केशव प्रसाद राय

और

पूजनीया माता स्व. सुखवासी देवी

की

स्नेहिल स्मृति को समर्पित

विषय सूची

क्रम सं.	विषय		पृष्ठ संख्या
	शालीन अभिव्यक्ति	....	I
	दो शब्द	....	IV
	प्रकाशकीय	....	IX
	आत्मकथन	....	XI

खण्ड – 1

1.	बिहार का विकास और पुनर्गठन	....	1
2.	अपराध, भ्रष्टाचार और बिहार	....	20
3.	सुशासन विरोधी स्वशासी परिषद्	....	30
4.	आर्थिक पैकेज की प्रासंगिकता	....	34
5.	सत्य की विजय	....	63
6.	राष्ट्रीय विकास और झारखंड	....	74

खण्ड – 2

7.	बजट या आंकड़ों का खेल	....	85
8.	लचर वित्तीय व्यवस्था के संकेतक	....	94
9.	सरकार बदलिये बिहार बदलेगा	....	98
10.	वित्तीय अव्यवस्था का आलम	....	116
11.	बजट का विरोधाभास	....	125
12.	संसाधनों का दुरुपयोग चिंताजनक	....	130
13.	कपटपूर्ण वित्तीय प्रबंधन	....	146
14.	बचत बनाम अधिकाई व्यय	....	160

नं0	विषय		पृष्ठ
15.	राष्ट्रीय विकास और बिहार की पेंच	....	166
16.	असंवैधानिक अनुपूरक	....	176
17.	लचर वित्तीय प्रबंधन	....	182
18.	वास्तविकता से परे लेखानुदान	....	189
19.	सामाजिक न्याय का मुखौटा	....	198
20.	अनुपूरक का औचित्य	....	231
21.	भारत के पूर्वी राज्यों की उपेक्षा	....	235
22.	वयं पंचाधिकम शतम्	....	245
23.	स्वस्थ वित्तीय परम्पराओं का पालन जरूरी	....	254
24.	सी. ओ. बी. टी. बजट प्रक्रिया	....	263
25.	अराजक वित्तीय प्रबंधन	....	269
26.	राजकोषीय उत्तरदायित्व की अवहेलना	....	284

खण्ड – 3

27.	उपलब्धियों का अर्द्धसत्य	....	313
28.	जलनीति की प्राथमिकतायें	....	324
29.	नदी जोड़ो परियोजना के आयाम	....	337
30.	लचर पेयजल प्रबंधन	....	353
31.	विद्युत व्यवस्था का पुनरूद्धार	....	358
32.	दामोदर घाटी निगम अपनी ही कसौटी पर	....	372

• • •

शालीन अभिव्यक्ति

भारतीय संविधान लोकतंत्र पर आधारित है। लोकतंत्रीय व्यवस्था के मुख्यतः तीन स्तम्भ हैं – विधायिका, न्यायपालिका तथा कार्यपालिका। आज के युग में मीडिया भी एक प्रभावी स्तम्भ के रूप में निखर कर प्रकट हुआ है। प्रारम्भ के तीनों स्तम्भों में से किसी पर प्रमाणिकता के संबंध में संदेह पैदा हो जाय तो सीधे लोकतंत्रीय व्यवस्था पर चोट पहुँचती है। विधायिका में, संसद तथा विधानमंडलों में, दो प्रमुख अंग होते हैं–एक सत्ता पक्ष तथा दूसरा प्रतिपक्ष। लोकतंत्र को सुदृढ़ रखने में दोनों की ही समान भूमिका है। जहाँ दोनों अपने दायित्व को तथा अपनी सीमा को समझ कर समुचित आचरण करते हैं तो निःसंदेह वहाँ लोकतंत्र शक्तिशाली होकर प्रकट होता है। इन सभी स्तम्भों के बारे में विचार करना आवश्यक है।

इन दिनों मुझे भारतीय जनता पार्टी के विधायक श्री सरयू राय के भाषणों का संच पढ़ने को मिला है। झारखंड विधान सभा के सदस्य होने के पहले वे 6 वर्षों तक बिहार विधान परिषद के सदस्य रहे हैं। भाषणों के समूह में एक अंश विधान परिषद में दिए हुए भाषण हैं और दूसरा झारखंड विधान सभा में दिए हुए भाषण हैं। मेरा सरयू राय से विधायक या पार्षद बनने के काफी पहले से सम्पर्क रहा है। इनके भाषणों में तीन बिन्दु स्पष्ट झलकते हैं – बजट, योजना तथा प्रदूषण की समस्या। आश्चर्य लगता है यह देखकर कि किसी भी उत्तेजना के अवसर पर भी श्री सरयू राय ने शालीनता का तिरस्कार नहीं किया है। यह तीनों बिन्दु ऐसे हैं जिनमें गहराई से अध्ययन चाहिए, सदन में ठीक ढंग से प्रस्तुतीकरण चाहिए तथा भ्रमण एवं व्यावहारिक ज्ञान होना चाहिए। श्री सरयू राय ने इस मर्यादा का पूरा–पूरा पालन किया है। मैं तो इतना कहना चाहूँगा कि इन्होंने प्रतिपक्ष के सदस्य के नाते जो भाषण दिया है, सत्ता पक्ष को उस पर गंभीरता से चिन्तन करना चाहिए और यथासंभव कार्यान्वयन में उसे स्वीकार करना चाहिए।

प्रदूषण नियंत्रण के संदर्भ में अन्य बिन्दुओं के अलावे नदियों से जुड़े हुए प्रदूषण के विषय का अध्ययन के बारे में मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि आज

झारखंड विधान सभा तथा बिहार विधान मंडल के सभी सदस्यों का ज्ञान एक पलड़े पर रखा जाय और दूसरे पलड़े पर श्री राय के भाषणों को रखा जाय तो श्री राय निःसंदेह सबसे भारी पड़ेंगे। बिहार और झारखंड मिलाकर यदि देखें तो प्रकृति ने हमें नदियों के जाल विस्तार का अमूल्य धरोहर प्रदान किया है। एक समय में बिहार सरकार ने नदियों से संबंधित एक कमिटी बनाई थी उसमें श्री सरयू राय एक प्रमुख सदस्य थे। अविभाजित बिहार में जितनी नदियाँ हैं उनके उद्गम स्थान से लेकर बिहार में जहाँ तक नदियाँ चलती हैं, सबका उन्होंने बहुत ही गहरा अध्ययन किया है। इस अध्ययन में भारी दर्द भी प्रकट होता है। कई नदियाँ वरदान साबित होने के बजाय अभिशाप इसलिए बन गई हैं कि उनके निर्मल जल को मनुष्य ने काफी जहरीला बना दिया है। औद्योगिकीकरण के नाम पर नदियों के जल को दूषित कर दिया गया है। नदियों के अगल–बगल की लाखों एकड़ जमीन, जो अत्यन्त उपजाऊ थी, वीरान बन गई है। कल–कारखाने लगने के बाद उसके छाड़न को सीधे नदी में डालकर जलधारा को जहरीला बनाना कदापि उचित नहीं है। जगत के विकसित देशों में किसी कारखाने को यह दुष्कर्म करने की अनुमति नहीं होती। श्री सरयू राय आंकड़ों के आधार पर आज भी इस विषय को लेकर संघर्षरत हैं।

बजट और योजना दोनों का ऐसा गहरा संबंध है जिसे अलग–अलग करके देखना मेरी दृष्टि में बहुत लाभप्रद नहीं है। आज लगता है कि पिछड़े हुए राज्यों में इनकी समन्वित रूपरेखा तैयार करना उनकी क्षमता से बाहर हो गया है। योजना मद तथा गैर योजना मद का अनुपात पूर्णतः असंतुलित होता चला गया है। इस पर भी श्री सरयू राय के भाषणों के अंश में अच्छा चिन्तन पढ़ने के लिए मिलता है।

कार्यपालिका को सबसे पहले तो संवेदनशीलता ग्रहण करना आवश्यक है। अब हम गुलामी में नहीं चल रहे हैं अपितु आजाद देश के नागरिक हैं। फिर एक–एक पैसे का महत्व समझना भी आवश्यक है। प्रदेश तथा देश का आत्मनिर्भरता के आधार पर आचरण से देश का गौरव बढ़ेगा। आज जो चित्र दिखाई देता है वह बहुत ही कष्टदायक है। सरकार के बारे में कहा गया है – Government by the people, of the people, for the people. आजादी के 60 वर्ष हो गये। चारों

ओर समाज में भारी विषमता के उदाहरण भरे पड़े हैं। यह दृश्य अगर बदला नहीं तो भविष्य भयानक अंधकार में फँस जायेगा। कार्यपालिका के संबंध में, इसके चरित्र के संबंध में विचार करना तो आवश्यक है ही साथ ही परिवर्तन के कदम भी उठाना अतिआवश्यक है। श्री राय की अभिव्यक्ति में इसकी झलक मिलती है। न्यायपालिका का बहुत अंश आज भी सुरक्षित है। लेकिन यह भी कहा गया है कि – Justice delayed is justice denied. इसका भी शीघ्र उपचार करना आवश्यक हो गया है।

मैं अधिक विस्तार में न जाते हुए यह कहना चाहूँगा कि यदि उनके भाषण पुस्तकाकार रूप ले लिये तो मैं सभी विधायकों, पार्षदों तथा सरकारों से भी आग्रह करना चाहूँगा कि वे अवश्य इसको महत्व दें। श्री सरयू राय को मैं हृदय से बधाई देता हूँ। वे निरंतर इस प्रयत्न में बढ़ते रहें।

– कैलाशपति मिश्र

दो शब्द

संसदीय लोकतंत्र में विधायी संस्थाओं को जन–प्रतिनिधि सभा के रूप में जाना जाता है। लोकतंत्र का मतलब है जनता का शासन। चूंकि पूरी जनता की सहभागिता एक साथ शासन में संभव नहीं है, इसलिए प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन में साझेदारी इस व्यवस्था का मौलिक सिद्धांत है। जनता की बात प्रतिनिधियों के माध्यम से एक ओर जहाँ विधायी संस्थाओं में मुखरित होती है, वहीं ''इन्हीं'' के बीच से सरकारों का बनना, अब्राहम लिंकन की उस उक्ति को चरितार्थ करता है कि ''लोकतंत्र जनता का, जनता के लिए और जनता के द्वारा शासन है''। 1688 से इंग्लैंड की शासन–पद्धति, आजादी के बाद से अपने देश की शासन पद्धति और काल–क्रम से दुनिया के अनेक देशों की शासन पद्धतियों का निर्धारण, लोकतंत्र की इसी अवधारणा के अधीन हुआ है। इस पद्धति में यद्यपि शासन का अधिकार मंत्रिपरिषद् को है, तथापि उसके ऊपर नियंत्रण रखने का दायित्व विधायी संस्थाओं को सौंपा गया है। कार्यपालिका के ऊपर विधायिका के नियंत्रण का यही सिद्धान्त संसदीय शासन पद्धति का मूल तत्व है। किन्तु दुर्भाग्य की बात है कि आज विधायी संस्थायें अपने दायित्वों को पूरा करने में विफल होती दिखायी दे रही हैं। कहाँ प्रारंभ के दिनों में इंग्लैण्ड को ''डिक्टेटरशिप ऑफ पार्लियामेंट'' की शासन पद्धति के रूप में महत्ता दी जाती थी वहीं आज उसे ''प्राइम मिनिस्टर'' वाली शासन पद्धति के रूप में जाना जाने लगा है।

विधायी संस्थाओं की क्षमता और गरिमा में हो रहे लगातार ह्रास के कई कारण हैं। इनमें से एक महत्वपूर्ण कारण यह है कि आज दलों का गठन विचारवाद को लेकर नहीं, व्यक्तियों को लेकर हो रहा है, आजकल सदनों में वाद–विवाद के स्तर गिरे हैं तथा हंगामों से सदन में व्यवधान पैदा करना माननीय सदस्यों की फितरत हो गई है। बिरले सदस्य ही आज सदनों में अपनी अध्ययनशीलता तथा ज्ञान का परिचय दे पाते हैं। जनता में आम धारणा बन चूकी है कि जनप्रतिनिधि महज राजनीतिक पैंतरेबाजी ही करते हैं तथा उन्हें लिखने–पढ़ने से कुछ लेना–देना नहीं है।

श्री सरयू राय जैसे लोगों ने राजनीति में प्रवेश करके कम से कम इस प्रचलित मिथक को तो तोड़ा ही है कि राजनीति में आज के दिन अध्ययनशील एवं मौलिक चिन्तकों का अकाल पड़ चुका है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने समय में धर्म में आ चुके आडम्बरों एवं पाखंडों को देखा था तो उन्होंने रामचरित मानस में लिख डाला कि –

''त्रिया मरी गृह सम्पति नासी !
मूंड मुंड़ाय भये संन्यासी !!''

अर्थात् जब पत्नी का देहान्त हो जाए या घर की सम्पत्ति नष्ट हो जाए तो मूंड मुड़वाकर लोग संन्यासी बन जाते हैं। ठीक यही स्थिति आज राजनीति की है। यदि कोई पढ़ाई–लिखाई में सफल न हो पाए या कॉलेज से निष्कासित कर दिया जाए तो नारेबाजी करते–करते अनेक लोग नेता बन जाते हैं तथा अनुकूल अवसर पाकर विधायक तथा मंत्री तक भी बन जाया करते हैं। यही मुख्य कारण है राजनीति में आ रही गिरावट का। आज राजनीति में ऐसे लोगों की आवश्यकता है जो अध्ययनशील हों तथा प्रशासनिक नियमों एवं परिनियमों की उन्हें भली–भांति जानकारी हो ताकि प्रशासन में बैठे सुशिक्षित उच्चाधिकारियों को मंत्रणा दे सकें और उन्हें कोई पदाधिकारी गुमराह नहीं कर सके। मुझे यह कहने में प्रसन्नता हो रही है कि श्री सरयू राय इसी किस्म के राजनेता हैं जो विषय पर अपनी गहरी पैठ रखते हैं तथा सदन में अपनी बात को साधिकार तथा पूरी संजीदगी के साथ रखना उनका स्वभाव सा बन गया है। वे बिहार विधान परिषद् में जब निर्वाचित हुए तो उन्होंने परिषद के वाद–विवाद के स्तर को भी और ऊंचा उठाने का भरपूर प्रयास किया।

आज की संसद या विधान सभाओं का गठन निश्चित रूप से ब्रिटिश के वेस्ट–मिनिस्टर पद्धति पर हुआ है तथा ब्रिटेन में पार्लियामेंट शब्द ही लैटिन के पार्ले शब्द से उद्भूत हुआ है जिसका सीधा सा अर्थ है, वार्तालाप या सम्वाद करना। आज की इस पार्लियामेन्टरी डेमोक्रेसी का मूल आधार यही संवाद या वार्तालाप ही है ताकि देश, प्रदेश या दुनिया की उभरती हुई समस्याओं का निदान वाद–विवाद तथा वार्तालाप से निकाला जाए। आइवर जेनिंग्स की यह उक्ति कि ''वाद–विवाद की

भाषा संसदीय होनी चाहिए'' अपने आप में एक सारगर्भित उक्ति है तथा इसके निहितार्थों का ख्याल हर सदस्य द्वारा रखा जाना चाहिए। संसद या विधान मंडल राजनीति का रंगमंच नहीं है, यह जनप्रतिनिधियों की सभा है, और इससे भी पहले यह जन–जन की सभा है। यहां उन्हीं बातों को रखा जाना चाहिए, जिनका सरोकार जनहित से हो तथा बातों को रखने का ढंग शान्त, संयत और शालीन हो।

यह देखा गया है कि वे ही वक्ता सदन में सफल और श्रेष्ठ गिने जाते हैं, जो अपना भाषण शान्तिपूर्वक, विनोद मिश्रित और तर्कपूर्ण ढंग से देते हैं। जो सदस्य सदन का किसी मुद्दे पर ध्यान आकृष्ट कराना चाहते हैं, उनके बोलने की शैली तो अच्छी होनी ही चाहिए, साथ ही साथ उसमें बुद्धिमत्ता का पुट भी रहना चाहिए। तर्क सबल और चुभने वाले हो सकते हैं, किन्तु कटु शब्दों से बचते हुए सरकारों पर आक्षेप होना चाहिए। यद्यपि वे सही ढंग से काम नहीं कर रही हों, तथापि वाद–विवाद में शिष्टाचार बना रहे। सरकार शासन करती है, प्रतिपक्ष प्रहार करता है तथापि अच्छी चुटकियों पर दोनों पक्ष साथ–साथ हँस सकते हैं और अच्छे भाषणों पर दोनों पक्षों की वाहवाही सदस्यों को मिल सकती है। वाद–विवाद के अन्त में सदस्य अपने मत विभिन्न लॉबियों में जाकर भले ही दे दें किन्तु अवसर आने पर साथ–साथ रहना, अच्छे विषयों पर साथ–साथ चलना संसदीय शिष्टाचार के आधारभूत सिद्धान्त हैं और ऐसा करके भी दोनों पक्षों का राजनीतिक विरोध जिन्दा रह सकता है।

सदनों में उठा–पटक तथा अराजकता पूर्ण व्यवधान इस पद्धति में आई विकृतियों का ही नतीजा है। क्योंकि संसदीय लोकतंत्र तो चलना ही चाहिए वाद–विवाद एवं विचार–विमर्श से। आज जरूरत है ऐसे सदस्यों के जीत कर सदनों में आने की जो गम्भीरता के साथ बहस का स्तर सदनों में ऊँचा कर सकें। सरयू राय जी के बिहार विधान परिषद् में रहते हुए तो मैं उनके द्वारा सदन में प्रस्तुत वाद–विवाद एवं परिचर्चा की वास्तविक जानकारी नहीं पा सका था लेकिन सन् 2005 के चुनावों में जब राय जी जमशेदपुर पश्चिम से जीत कर झारखंड विधानसभा में आए तो स्पीकर रहते हुए मैंने महसूस किया कि उनके सारगर्भित विचार एवं विषय की सांगोपांग जानकारी वास्तव में स्तुत्य है। सदनों में बहस की गम्भीरता तब बढ़ती है

जब माननीय सदस्य विषय पर केन्द्रित रहकर ही बोलें। कभी–कभी तो आसन से स्पीकर को माननीय सदस्यों को विषय वस्तु की सही जानकारी देने के लिए भी मजबूर होना पड़ता है, किन्तु सरयू राय जी जैसे सदस्य विषय–वस्तु की परिधि से जरा भी इधर–उधर नहीं भटकते जिससे प्रश्नों का जवाब देने वाले मंत्रियों को भी अध्ययन करके ही सदन आने की जरूरत महसूस होती है।

मुझे राय जी द्वारा बिहार विधान परिषद तथा झारखंड विधान सभा में विभिन्न अवसरों पर तथा विभिन्न विषयों पर प्रकट किए गए विचारों के संकलन का विहंगम ढंग से अवलोकन करने का अवसर मिला है। राय जी ने इन भाषणों को पुस्तक का आकार देने का संकल्प लेकर एक सराहनीय काम किया है क्योंकि पुस्तकें तो अजर–अमर हो जाती हैं जबकि मानव का कलेवर तो क्षणभंगुर है। इस संकलन में सरयू राय जी द्वारा सदन में वित्तीय मामलों पर प्रकट किए गए विचार वास्तव में संग्रहणीय हैं। आज की राजनीति की यही विडम्बना है कि आज विधायक घपलों एवं घोटालों की चर्चाएं तो जोर–शोर से करते हैं लेकिन जब आय–व्ययक (बजट) की भारी–भरकम पुस्तकें सदन में वितरित की जाती हैं तो कभी उनके पन्नों को पलटने की भी जहमत नहीं उठाते। वित्तीय मामलों में बजट पर सार्थक चर्चा इसलिए भी नहीं हो पाती है क्योंकि कई माननीय सदस्यों को बजट की बारीकियों की पूरी जानकारी ही नहीं रहती। बजट ही किसी भी सरकार की गतिविधियों का दर्पण होता है तथा जिस सदस्य ने इस बजट की पूरी मीमांसा कर ली वह सरकार को सदन में घेरने के लिए सार्थक चर्चा कर सकता है लेकिन बिना जानकारी के सदन में व्यवधान खड़ा करना सर्वथा अनुचित है।

मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता है कि वित्तीय मामलों पर सरयू राय जी की पकड़ काफी मजबूत है। मैंने तो स्वयं ही सरयू राय जी द्वारा एक स्थानीय अखबार में लगभग दो दर्जन किस्तों में बजट के प्रकारों एवं बारीकियों पर लिखे गए लेखों का संग्रह कर रखा है ताकि समय पर उसका उपयोग किया जा सके। इस प्रस्तावित पुस्तक में भी राय जी ने बिहार विधान परिषद् तथा झारखंड विधान सभा में वित्तीय मामलों पर अपने विचार विस्तार से व्यक्त किए हैं जिसका लाभ पाठक इस संकलन के

पुस्तक का रूप ले लेने के बाद प्राप्त कर सकेंगे। मैंने विषय–सूची देखने के बाद पाया है कि उन्होंने वित्तीय मामलों के हरेक अंग को छूने का प्रयास किया है चाहे वह आम बजट हो या अनुपूरक बजट। कटौती प्रस्तावों के माध्यम से कैसे सरकार को वित्तीय मामलों में घेरा जा सकता है, इसका मसाला भी राय जी की पुस्तक में मिलेगा। लेखानुदान एवं विनियोग विधेयक जैसे अन्य वित्तीय मामलों में भी उन्होंने बहुत बुद्धिगम्य ढंग से तथ्यों को रखने का पुनीत कार्य किया है।

जल प्रबन्धन पर तो मानो राय जी को महारत ही हासिल है। दामोदर नदी के उद्‌गम स्थल से अपनी यात्रा शुरू करके इस नदी के प्रवाह के साथ–साथ समुद्र में इसके विलय स्थल तक पदयात्रा करके इन्होंने आज इस नदी में हो रहे प्रदूषण का जो लेखाजोखा पुस्तक के रूप में दिया है वह किसी भी पाठक की आंखें खोल सकता है। इस प्रस्तावित पुस्तक में भी राय जी ने सिंचाई एवं पेयजल की विकट समस्याओं पर चर्चा की है तथा दामोदर घाटी निगम पर बहस की चर्चा के क्रम में डी.वी.सी. के पूरे इतिहास–भूगोल को भी पन्नों पर उकेर दिया है। जल–संग्रह का अध्ययन भी इस पुस्तक का एक संग्रहणीय भाग होगा। राय जी का प्रबल मत है कि प्रत्येक राज्य को अपनी जलनीति का निर्माण करना चाहिए क्योंकि पानी ही एक ऐसी वस्तु है जिसके अभाव में जीवन की सार्थकता ही खत्म हो जाती है। शायद इसीलिए रहीम खानखाना को भी लिखना पड़ा था कि –

''रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून ! पानी गए न ऊबरे, मोती मानुस चून !!''

जलनीति पर राय जी ने झारखंड में प्रशंसनीय काम किया है तथा अनेक संगोष्ठियां करवाकर इस मूलभूत समस्या को आम जनता के संज्ञान में लाने का महत्वपूर्ण काम किया है ताकि देश के कर्णधार इस समस्या का कोई निराकरण निकाल सकें। पुस्तक में इस अति महत्वपूर्ण विषय पर भी पाठकगण राय जी के विचारों को पढ़ सकेंगे। मेरी आकांक्षा है कि राय जी में लेखन की ऊर्जा का उत्तरोतर विकास होता रहे।

– इन्दर सिंह नामधारी

प्रकाशकीय

संसदीय लोकतंत्र में संसद व विधानमंडलों की अहम् भूमिका होती है और उतनी ही अहम् भूमिका होती है जन प्रतिनिधियों की। सदन में आम जनता से जुड़े विभिन्न मुद्दों पर चर्चा व निर्णय करने में उनकी भूमिका सर्वविदित है।

'अभिव्यक्ति' दर असल माननीय विधायक सरयू राय के सदन (बिहार विधान परिषद् एवं झारखंड विधान सभा) में दिए गए भाषणों का संकलन है। इससे विद्वता, शालीनता, विषय पर अच्छी पकड़ व प्रखर वक्ता की उनकी छवि सामने आती हैं। लम्बे समय तक क्रमशः बिहार विधान परिषद् व झारखंड विधान सभा का सदस्य होने के नाते उन्होंने आम जनता के मुद्दों को जिस गहराई व कुशलता से उठाया है यह सर्वथा पढ़ने व जानने योग्य है। संकलन के प्रकाशन से न सिर्फ आम पाठकों को यह जानने व समझने का अवसर मिल सकेगा, बल्कि उन ज्वलंत समस्याओं को सुलझाने में यह मददगार भी साबित होगा।

संकलन की भूमिका विद्वान, कुशल राजनेता व प्रखर वक्ता पूर्व विधानसभा अध्यक्ष इंदर सिंह नामधारी ने लिखी है। वस्तुतः यह मणि–कांचन संयोग है। 'शालीन अभिव्यक्ति' के तहत भारतीय राजनीति के एक शीर्ष हस्ताक्षर कैलाशपति मिश्रा ने अपनी प्रतिक्रिया देकर इसका मान बढ़ाया है। हमारा प्रयास होगा कि हम इसे व्यवस्थित व गुणवत्तापूर्ण ढंग से प्रकाशित कर आप तक पहुंचायें। वस्तुतः तीन खण्डों में विभाजित इस पुस्तक में न सिर्फ बिहार व झारखंड की विभिन्न राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक पहलुओं की विस्तृत चर्चा की गई है, बल्कि समस्याओं को तथ्यपरक ढंग से देखने व समझने की कोशिश भी की गई है। सदन में विभिन्न मुद्दों को उठाते हुए माननीय विधायक ने कई अनुछुए पहलुओं को उजागर किया है तथा विभिन्न सम्बद्ध संदर्भों के सहारे उसे व्यापक परिप्रेक्ष्य में दिखलाने का प्रयास भी किया है। विभिन्न मुद्दों को उठाते समय यह बात स्पष्ट हो जाती है कि यह महज 'आंकड़ों' के सहारे तैयार किया गया नीरस भाषण नहीं है, बल्कि यह उनके हृदय से निकली हुई आवाज है। इससे उनकी संवेदनशीलता व आम जनता से गहरे सरोकार का पता चलता है। 'आत्मकथन' में व्यक्त उद्गारों से न सिर्फ उनकी संवेदनशीलता सामने आती है बल्कि देश की राजनीति, आर्थिक व समाजिक नीति की उनकी गहरी समझ एवं उनमें आ रहे बदलावों के सटीक मूल्यांकन पर गहरी पकड़ का अंदाजा भी होता है।

पुस्तक के **प्रथम खण्ड** में जहां 'बिहार का विकास और पुनर्गठन' की चर्चा है वहीं अपराध, भ्रष्टाचार और बिहार से लेकर राष्ट्रीय विकास और झारखंड पर उनके द्वारा विभिन्न अवसरों पर उठाये गए मुद्दों को समाहित किया गया है। यह खंड बिहार के पुनर्गठन के पूर्व की स्थितियों व उन पर हुई चर्चा की जीवंत झांकी है।

दूसरे खण्ड में उनके बजट से सम्बद्ध विभिन्न भाषणों के अंश संकलित हैं। माननीय सरयू राय की जितनी पकड़ राजनीति पर है उससे कम आर्थिक नीति पर नहीं। बजट के विभिन्न प्रावधानों की इतनी गहरी व पैनी समझ आज के दौर में दुर्लभ है, खासकर तब जब सदन में कथित 'बाहुबलियों' का प्रभाव लगातार बढ़ रहा है। बजट के विभिन्न पहलुओं को समझने में यह अंश मददगार साबित होगा।

तीसरे खण्ड में अभिव्यक्त उनके तथ्यपूर्ण विचारों से जल नीति, जल प्रबंधन, बाढ़ नियंत्रण एवं विद्युत ऊर्जा के क्षेत्र से सम्बन्धित उनकी गहरी समझ और अनुभव का अंदाजा होता है।

उन्होंने न सिर्फ इस क्रम में व्यापक तथ्य जुटाए हैं बल्कि खुद जमीनी अवलोकन व सर्वेक्षण के जरिए वैसी जानकारी जुटाई है व लोगों के सामने रखी है जो अन्यत्र दुर्लभ हैं। वे न सिर्फ सदन में बल्कि धरातल पर भी इस सवाल को उठाते रहे हैं। जाहिर है इस मुद्दे ने उन्हें एक विशेष पहचान दी है। गहराते जल संकट के मौजूदा दौर में यह जानकारी सर्वथा प्रासंगिक है। तीन खंडों की यह पुस्तक वस्तुतः 'गागर में सागर' मुहावरे को चरितार्थ करती है। सहज, सरल एवं उत्कृष्ट भाषा इस पुस्तक की बेहतरी को रेखांकित करती है तथा शब्दों में विषय वस्तु की प्रस्तुति इसे और प्रभावशाली बनाती है। सचमुच यह पुस्तक न सिर्फ आम लोगों के लिए उपयोगी साबित होगी बल्कि इन विषयों में गहरी रूचि रखनेवाले व्यक्तियों व शोधरत छात्र–छात्राओं के लिए संदर्भ ग्रंथ का काम करेगी।

निश्चय ही यह एक सार्थक पहल है। ऐसी व्यापक, सामयिक व तथ्यपरक जानकारी से लैश पुस्तक इस क्षेत्र में रूचि रखने वाले तमाम लोगों तक पहुँच सके ऐसी मेरी कामना है। मेरी शुभकामना इस पुस्तक के साथ है तथा आपका सहयोग अपेक्षित है।

सधन्यवाद।

प्रकाशक

आत्मकथन

प्रस्तुत पुस्तक बिहार विधान परिषद् और झारखंड विधान सभा के विभिन्न सत्रों में कतिपय प्रासंगिक विषयों पर मेरी धारा प्रवाह अभिव्यक्ति का संपादित संकलन है। 22 जुलाई 1998 से 21 जुलाई 2004 के बीच 6 वर्ष तक मैं बिहार विधान परिषद का सदस्य रहा था। विधान परिषद् के द्विवार्षिक चुनाव में मेरा निर्वाचन भारतीय जनता पार्टी के उम्मीदवार के रूप में विधान सभा क्षेत्र से हुआ था। यह चुनाव बिहार विधान सभा के सदस्यों द्वारा एकल हस्तांतरणीय पद्धति से किया जाता है।

सदस्यता की शपथ लेने के बाद बिहार विधान परिषद का 143 वां सत्र मेरे लिये पहला सत्र था। यह एक सामान्य सत्र नहीं था, जिसे विधान मंडल के सत्रावसान के 6 माह के भीतर संविधान के अनुच्छेद 174 के प्रावधान के अनुसार महामहिम राज्यपाल के निर्देशानुसार आहूत किया जाता है। यह एक विशेष सत्र था जिसे संविधान के अनुच्छेद 3 के तहत बिहार राज्य के पुनर्गठन की प्रक्रिया पूरा करने की एक आवश्यक शर्त के रूप में बुलाया गया था। एक पृथक झारखण्ड राज्य का गठन करने के उदेश्य से केन्द्र सरकार द्वारा तैयार किये गये बिहार पुनर्गठन विधेयक–1998 पर विचार करना इस विशेष सत्र का एकमात्र उद्देश्य था।

संविधान का अनुच्छेद 3 भारत की संसद को यह अधिकार देता है कि वह कानून बनाकर (क) किसी राज्य में से उसका राज्यक्षेत्र अलग करके अथवा दो या अधिक राज्यों को या राज्यों के भागों को मिलाकर अथवा किसी राज्यक्षेत्र को किसी राज्य के भाग के साथ मिलाकर नए राज्य का निर्माण कर सकेगी, (ख) किसी राज्य का क्षेत्र बढ़ा सकेगी, (ग) किसी राज्य का क्षेत्र घटा सकेगी, (घ) किसी राज्य की सीमाओं में परिवर्तन कर सकेगी, (ङ) किसी राज्य के नाम में परिवर्तन कर सकेगी। ऐसा कानून बनाने के लिये राष्ट्रपति की सिफारिश पर केन्द्र सरकार द्वारा संसद में एक विधेयक लाया जाता है। परन्तु ऐसा विधेयक संसद में तब तक नहीं लाया जा सकता है जब तक कि ऐसे विधेयक में अंतर्विष्ट प्रस्थापना का प्रभाव जिस राज्य पर या जिन

राज्यों पर पड़ता है वहाँ के विधानमंडल द्वारा उस विधेयक पर एक निर्देशित अवधि के भीतर अपना विचार नहीं दे दिया जाय।

इस बारे में प्रक्रिया है कि भारत सरकार का गृह मंत्रालय एक 'राज्य पुनर्गठन विधेयक' तैयार करता है और राष्ट्रपति द्वारा निर्देशित अवधि के भीतर उनका विचार जानने के लिये संबंधित राज्य अथवा राज्यों के पास भेजता है। संबंधित राज्य अथवा राज्यों द्वारा इस पर विचार करने के लिये विधान मंडल का सत्र आहूत किया जाता है। इस प्रक्रिया के तहत बिहार राज्य में से छोटानागपुर और संथाल परगना का भू–भाग अलग करके भारत के राजनीतिक मानचित्र पर एक नये राज्य झारखंड का गठन करने के लिये श्री अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबन्धन की तत्कालीन केन्द्र सरकार ने बिहार पुनर्गठन विधेयक–1998 तैयार कर बिहार सरकार के पास भेजा था ताकि इस पर बिहार विधान मंडल का विचार लेकर इसे संसद में प्रस्तुत किया जा सके और पृथक झारखंड राज्य गठित करने की चिरलम्बित मांग को पूरा किया जा सके।

भारत सरकार के तत्कालीन गृहमंत्री श्री लाल कृष्ण आडवाणी इस विधेयक के भार साधक सदस्य थे। इस विधेयक पर विचार करने के लिये 22 सितम्बर, 1998 को बिहार विधान मंडल का दो दिवसीय विशेष सत्र आहूत किया गया। विधान परिषद में 22 और 23 सितम्बर, 1998 को दो दिनों तक इस विधेयक पर व्यापक चर्चा हुई। इस विधेयक के समर्थन में किया गया भाषण, जो प्रस्तुत पुस्तक का अंग है, बिहार विधान परिषद् में मेरा पहला भाषण था। संसद और विधान मंडल में यह सर्वमान्य परम्परा रही है कि किसी सदस्य के पहले भाषण के दौरान टोका–टोकी एवं व्यवधान नहीं किया जाता है। सदस्य के पहले भाषण की समय सीमा भी निर्धारित नहीं रहती है। परन्तु मेरे पहले भाषण के दौरान ये दोनों परम्परायें कायम नहीं रह सकीं। भाषण के दौरान अक्सर सदन का वातावरण उत्तेजक और असहिष्णुतापूर्ण हो जाता था।

उस समय बिहार में राष्ट्रीय जनता दल की सरकार थी। इसके पूर्व 22 जुलाई, 1997 के दिन इस सरकार ने बिहार को विभाजित कर अलग झारखण्ड

राज्य बनाने के लिये बिहार विधान सभा में एक प्रस्ताव रखा था। विधान सभा द्वारा इस आशय की एक पंक्ति का प्रस्ताव पारित कर केन्द्र सरकार को भेजा गया था। प्रस्ताव था कि ''यह सभा केन्द्र सरकार से सिफारिश करती है कि वह पृथक झारखंड राज्य का निर्माण करे।'' उस समय केन्द्र में श्री एच.डी. देवेगौड़ा प्रधान मंत्री थे। राष्ट्रीय जनता दल इस सरकार में शामिल था। बिहार में भी श्री लालू प्रसाद के नेतृत्व में चल रही राष्ट्रीय जनता दल की सरकार को अलग झारखंड राज्य के हिमायती झारखंड मुक्ति मोर्चा का समर्थन प्राप्त था। इस समर्थन के बदले में झारखण्ड क्षेत्र स्वायत परिषद के अध्यक्ष पद पर झारखण्ड मुक्ति मोर्चा के नेता श्री शिबू सोरेन और उपाध्यक्ष पद पर श्री सूरज मंडल आसीन थे, जिन्हें क्रमशः उपमुख्यमंत्री और मंत्री पद का दर्जा एवं सुविधायें प्राप्त थीं। श्री लालू प्रसाद ने अल्पमत की अपनी सरकार बचाने और झारखण्ड मुक्ति मोर्चा ने अपना चेहरा संवारने की रणनीति के तहत बिहार विधान सभा से अलग झारखण्ड राज्य बनाने की एक पंक्ति का प्रस्ताव तो पारित करा लिया, परन्तु अपनी ही केन्द्र सरकार से संविधान के अनुच्छेद-3 के तहत इस बारे में आगे की विधि सम्मत कार्रवाई पूरी कराने में रूचि नहीं दिखायी।

उल्लेखनीय है कि इसके पूर्व 1995 में झारखण्ड मुक्ति मोर्चा ने लोकसभा में श्री नरसिंहा राव की सरकार के समर्थन में वोट देकर उसे गिरने से बचा लिया था। मगर इसके लिये भी उन्होंने झारखण्ड अलग राज्य बनाने की शर्त नहीं रखी थी बल्कि तीन करोड़ रुपया लेने की शर्त रखी थी और लिया भी था। झारखंड मुक्ति मोर्चा के नेताओं का यह कारनामा 'संसद घूस कांड' के नाम से कुख्यात है। इसी प्रकार यह प्रस्ताव भी एक दिखावा था, छलावा था, झारखण्ड अलग राज्य बनने की प्रक्रिया को लम्बे समय तक शिथिल रखने अथवा स्थगित कर देने की साजिश का अंग था। इनकी मंशा थी कि अलग राज्य का गठन अनिश्चित काल तक टलता रहे और वे झारखंड क्षेत्र स्वायत्त परिषद के पदधारी के रूप में उपमुख्यमंत्री, मंत्री एवं अन्य पदों की सुविधायें प्राप्त करते रहें।

जब 1998 में श्री अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की भारत सरकार ने बिहार पुनर्गठन विधेयक-1998 तैयार कर विधि सम्मत

प्रक्रिया के मुताबिक बिहार विधान सभा की सहमति के लिये भेजा तो राष्ट्रीय जनता दल की बिहार सरकार ने इसका पुरजोर विरोध किया। राज्य सरकार का यह उत्कट विरोध ही बिहार पुनर्गठन विधेयक पर बहस के दौरान सदन में व्याप्त उत्तेजना और असहिष्णुता के वातावरण का मुख्य कारण था। उत्तेजना और असहिष्णुता का अंदाजा श्री लालू प्रसाद की इस उत्तेजक उक्ति से लगाया जा सकता है कि ''झारखण्ड मेरी लाश पर बनेगा।'' वे यह कहकर भी भावनायें भड़काते थे कि ''झारखण्ड अलग हो जाने के बाद बिहार के लोग क्या बालू फांककर जिन्दा रहेंगे?'' राज्य सरकार के प्रबल विरोध के कारण विधान सभा में भी और विधान परिषद् में भी यह विधेयक पारित नहीं हो सका। बिहार विधान मंडल के दोनों सदनों ने इसे खारिज कर दिया। विधान मंडल की असहमति के साथ इस विधेयक को महामहिम राष्ट्रपति के पास लौटा दिया गया।

संसद में यह विधेयक रखा जाता उसके पहले मई 1998 में वाजपेयी सरकार लोकसभा में एक वोट से बहुमत साबित नहीं कर सकी और गिर गयी। लोकसभा भंग हो गयी। पुनर्गठन विधेयक व्ययगत हो गया। अक्टूबर 1999 में लोक सभा का मध्यावधि चुनाव हुआ। केन्द्र में पुनः राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की सरकार बनी। पुनः श्री अटल बिहारी वाजपेयी प्रधानमंत्री और श्री लालकृष्ण आडवाणी गृहमंत्री बने। आडवाणी जी ने भार साधक सदस्य के नाते फिर से बिहार पुनर्गठन विधेयक-2000 तैयार कराया और राष्ट्रपति के निर्देशानुसार बिहार विधान मंडल के समक्ष विचारार्थ भेजा। बिहार पुनर्गठन विधेयक - 2000 पर विचार हेतु 25 अप्रील, 2000 को बिहार विधान मंडल के दोनों सदनों, विधान सभा और विधान परिषद, का विशेष सत्र आहूत हुआ। बदली हुई राजनीतिक परिस्थितियों में राष्ट्रीय जनता दल की बिहार सरकार ने भी इस बार विधेयक का समर्थन किया और अपार बहुमत से, करीब-करीब सर्वसम्मति से, बिहार विधान मंडल द्वारा यह विधेयक पारित हो गया। इस बार सदन में उत्तेजना और असहिष्णुता का माहौल नहीं था। उल्टे एक होड़ का वातावरण था कि इसका श्रेय किसे मिले। बिहार पुनर्गठन विधेयक-1998 और बिहार पुनर्गठन विधेयक-2000 पर बिहार विधान परिषद में व्यक्त मेरे विचार

प्रस्तुत पुस्तक के प्रथम खंड में हैं।

बिहार विधान मंडल का विचार जान लेने के बाद भारत सरकार ने यह बिहार पुनर्गठन विधेयक–2000 संसद में प्रस्तुत किया। 2 अगस्त, 2000 को लोक सभा ने और 11 अगस्त, 2000 को राज्य सभा ने इस विधेयक को पारित कर दिया। मानसून सत्र में संसद की मुहर लग जाने और राष्ट्रपति महोदय द्वारा इस पर सहमति दे दिये जाने के बाद यह विधेयक अधिनियम बन गया। इस अधिनियम के अधीन 15 नवंबर, 2000 को भारत के राजनीतिक मानचित्र पर 28वें राज्य के रूप में एक नये राज्य 'झारखंड' का उदय हुआ। भाजपा के लिये अलग राज्य का निर्माण केवल राजनीतिक नारा नहीं था बल्कि एक निष्ठा थी, एक नीतिगत प्रतिबद्धता थी। पार्टी ने केन्द्र में अपनी सरकार बनते ही जनता के साथ किया गया यह वादा पूरा किया।

नवगठित झारखंड विधान सभा के लिये प्रथम आम चुनाव फरवरी 2005 में हुआ। इस चुनाव में भाजपा उम्मीदवार के रूप में मैं जमशेदपुर पश्चिम विधान सभा क्षेत्र से निर्वाचित हुआ। चुनाव का नतीजा 22 फरवरी, 2005 को आया। यह चुनाव झारखण्ड की द्वितीय विधान सभा के लिये हुआ था। झारखण्ड की पहली विधान सभा का गठन इस क्षेत्र के उन 81 निर्वाचित विधायकों और एक मनोनीत विधायक को मिलाकर हुआ था, जो मार्च 2000 में बिहार विधान सभा के लिये हुये आम चुनाव में झारखण्ड क्षेत्र से चुने गये थे। पहली झारखंड विधान सभा में किसी एक दल का अथवा गठबंधन का बहुमत नहीं था। कतिपय निर्दलीय विधायकों के समर्थन से भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की सरकार गठित हुई थी। झारखण्ड की द्वितीय विधान सभा के लिये फरवरी 2005 में हुये आम चुनाव में भी किसी एक दल या गठबंधन को बहुमत नहीं मिला। पहली विधान सभा का कार्यकाल जितना उथल–पुथल भरा था उससे कहीं अधिक उथल–पुथल भरी स्थिति द्वितीय विधान सभा की हो गई। इसके गठन के साथ ही संसदीय राजनीति की स्वस्थ परम्परा, कार्यपालिका की सीमा, विधायिका की मर्यादा, राजभवन की साख तथा संविधान एवं कानून के प्रासंगिक प्रावधान धूल–धुसरित हो गये।

राज्य में सरकार गठन के संदर्भ में राजनीतिक अवसरवादिता, अनियंत्रित

महात्वाकांक्षा, निर्दलियों की सौदेबाजी, निहित स्वार्थों का बोलबाला, भ्रष्ट आचरण का निर्लज्ज प्रदर्शन, लोकतंत्र की हत्या, संविधान की अवहेलना, बहुमत पर अल्पमत की वरीयता आदि अचंभित और शर्मसार कर देनेवाली घटनायें घटीं। केन्द्र सरकार की विश्वसनीयता और राजभवन की साख पर भी बट्टा लगा। राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के पक्ष में बहुसंख्यक विधायकों द्वारा राजभवन में सदेह उपस्थित होने के बावजूद राजभवन से अल्पमत वाले संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन को सरकार बनाने का निमंत्रण मिला। इस अल्पमत सरकार द्वारा विधान सभा में बहुमत सिद्ध करने के असफल प्रयत्न के क्रम में 'विधायिका के कार्यक्षेत्र में न्यायपालिका का हस्तक्षेप' राष्ट्रीय बहस का मुद्दा बना।

लोकसभा के माननीय अध्यक्ष भी इस बहस से अछूता नहीं रह सके। लोकसभा अध्यक्ष श्री सोमनाथ चटर्जी और केन्द्रीय कानून मंत्री श्री हंसराज भारद्वाज ने इस मुद्दे पर अचंभित करने वाला परस्पर विरोधी रुख अख्तियार कर लिया। क्षुब्ध होकर लोकसभा अध्यक्ष ने राज्य विधान सभाओं के पीठासीन पदाधिकारियों का सम्मेलन बुला लिया। राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन शासित राज्यों की विधान सभाओं के पीठासीन पदाधिकारियों ने इसमें भाग नहीं लिया। जनहित और राज्यहित के साथ साथ राष्ट्रहित भी इस उथल–पुथल का शिकार हुआ। यह सिलसिला दिन प्रतिदिन गम्भीर स्वरूप धारण करते जा रहा है। अब तो कानून का उल्लंघन ही झारखंड सरकार में कानून बन गया है। भ्रष्ट आचरण के नित्य नये कीर्तिमान स्थापित हो रहे हैं। ऐसी विद्रुप कार्य संस्कृति का उदाहरण शासन–प्रशासन में रोज–ब–रोज प्रस्तुत हो रहा है जिसके लिये यही कहा जा सकता है कि–न भूतो न भविष्यति। उथल–पुथल भरी द्वितीय झारखंड विधान सभा में दिसंबर 2007 तक बहस और वाद–विवाद के लिये मिलने वाले अत्यल्प समय में इन विषयों को स्पर्श करने वाले मेरे कतिपय वक्तव्य भी प्रस्तुत पुस्तक में यथास्थान संकलित हैं।

राज्य में वित्तीय अनुशासन कायम रहे और किसी भी सूरत में शासन–प्रशासन के समक्ष वित्तीय संकट नहीं उत्पन्न हो, इसके लिये भारत के संविधान में पर्याप्त प्रावधान किये गये हैं। केन्द्र के संदर्भ में ये प्रावधान संविधान के अनुच्छेद–112 से

अनुच्छेद–117 तक हैं और राज्यों के बारे में अनुच्छेद–202 से अनुच्छेद–207 तक हैं। इन प्रावधानों के अनुसार राज्य शासन का कोई भी अंग विधान सभा की अनुमति के बिना एक पैसा भी खर्च नहीं कर सकता है। यह अनुमति हासिल करने के लिये राज्य सरकार हर वर्ष शासन के तीनों अंगों–विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका – के लिये 'आय और व्यय का वार्षिक वित्तीय विवरण' बजट सत्र में विधान सभा के समक्ष रखती है और विहित प्रक्रिया के अनुसार इसे पारित कराती है। इस वार्षिक वित्तीय विवरण को प्रचलित भाषा में राज्य का 'वार्षिक बजट' कहा जाता है। विधान सभा से बजट पारित हो जाने के बाद सरकार इसके अनुरूप अनुदान की मांगों को विनियोग विधेयक के रूप में विधान सभा के समक्ष रखती है और इसे पारित कराकर वार्षिक बजट के विभिन्न शीर्षों में अंकित निधि को व्यय करने की अनुमति विधान सभा से प्राप्त करती है।

इसके अलावा अगर सरकार को वित्तीय वर्ष के दौरान कोई ऐसा व्यय करना पड़ता है, जिसके लिये वार्षिक बजट में निधि कर्णांकित नहीं है तो इसके लिये वार्षिक बजट में ही एक 'आकस्मिकता निधि' का प्रावधान किया हुआ रहता है। झारखंड राज्य के लिये यह निधि 150 करोड़ रुपये की है। सरकार को 'आकस्मिकता निधि' से किये जानेवाले व्यय पर विधान सभा की पुनः अनुमति लेनी पड़ती है। आवश्यकता पड़ने पर वित्तीय वर्ष के बीच में सरकार को कभी कभी नई योजनायें भी लेनी पड़ती है और गैर योजना मद के विभिन्न शीर्षों में भी अतिरिक्त व्यय करना पड़ता है। सरकार इसके लिये एक अनुपूरक व्यय विवरणी, जिसे प्रचलित शब्दावली में 'अनुपूरक बजट' कहा जाता है, विहित प्रक्रिया के अनुसार विधान सभा के समक्ष रखती है और इसे पारित कराकर विनियोग विधेयक के माध्यम से इस व्यय हेतु अथवा आकस्मिकता निधि से किये जा चुके व्यय की प्रतिपूर्त्ति हेतु सदन की अनुमति प्राप्त करती है। बजट मैनुअल के अनुसार राज्य सरकार एक वर्ष में विधान सभा के सामने सामान्यतः तीन अनुपूरक व्यय विवरणी प्रस्तुत कर सकती है।

अगर सरकार किसी कारण से 31 मार्च को वर्तमान वित्तीय वर्ष पूरा होने के पूर्व आगामी वित्तीय वर्ष के लिये पूरा वार्षिक बजट पारित कराने की स्थिति में नहीं है

तो वह एक निर्धारित अवधि के लिये विधान सभा से लेखानुदान पारित कराती है और लेखानुदान की अवधि के भीतर विहित प्रक्रिया के अनुसार उस वर्ष का पूर्ण वार्षिक बजट पारित कराती है। इसके अतिरिक्त भारत के संविधान में अपवादानुदान, प्रत्ययानुदान आदि का प्रावधान भी है। अगर किसी वर्ष राज्य का वार्षिक बजट पारित होने के पूर्व ही विधान सभा भंग हो गई है या निलंबित अवस्था में है तो उस वर्ष के लिये राज्य का वार्षिक बजट भारत की संसद द्वारा पारित कराये जाने का प्रावधान संविधान में है। ऐसी स्थिति में केन्द्र सरकार राज्य का बजट विहित प्रपत्र में संसद के समक्ष रखती है और पारित कराती है।

बिहार विधान परिषद में भी और झारखंड विधान सभा में भी वार्षिक बजट, लेखानुदान, अनुपूरक अनुदान, विनियोग विधेयक आदि पर चर्चा के दौरान मुझे इन विषयों के विविध पहलुओं पर अपना विचार व्यक्त करने का अवसर समय–समय पर मिलते रहा है। इस संदर्भ में मेरी अभिव्यक्ति प्रस्तुत पुस्तक के खंड–2 में संकलित है।

भारत के संविधान में किये गये तमाम ऐसे प्रावधानों, नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक कार्यालय द्वारा दी जाने वाली नियमित हिदायतों और समय–समय पर भारत सरकार के वित्त विभाग द्वारा जारी निर्देशों के बावजूद बिहार और झारखंड की सरकारें राज्य की वित्त व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने, वित्तीय अनुशासन कायम रखने, बजट, लेखानुदान, अनुपूरक, विनियोग, आदि की भावनाओं के अनुरूप आचरण करने में कोताही बरतती रही हैं। 1990 के बाद से तो बजट की विधायी प्रक्रिया के बारे में राज्य की सरकारों ने घोर लापरवाही बरतनी शुरू की हैं। बजट मैनुअल में अंकित प्रक्रियायें पूरी किये बिना ही बजट तैयार करने और अनुदान की मांगों पर आवश्यक वाद–विवाद कराये बिना ही बहुमत के बल पर ध्वनिमत से विधान सभा में बजट पारित कराने की सरकार की प्रवृत्ति में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। इससे विधान सभा की साख पर बट्टा लगा है। कार्यपालिका की वित्तीय गतिविधियों को जनहित में नियंत्रित करने की संविधान प्रदत्त शक्ति रखने वाली विधायिका मौजूदा माहौल में शासन–प्रशासन की अनुगामिनी बनती जा रही है। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि विशेषकर

वित्तीय मामलों में सरकार की अनियंत्रित कारगुजारियों पर आंख मूंदे रहना और गैरकानूनी गतिविधियों पर मुहर लगाना विधान सभा की विवशता बन गयी है। एक स्वस्थ विधायी संसदीय प्रक्रिया के लिये यह शुभ संकेत नहीं है।

राज्य के वित्त लेखा का संधारण और अंकेक्षण करने वाली संवैधानिक संस्था नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (सी.ए.जी.) के अंकेक्षण प्रतिवेदन हर वर्ष विधान सभा में रखे जाते हैं। इन प्रतिवेदनों में चिन्हित त्रुटियों के निराकरण के लिये विधान सभा में एक लोक लेखा समिति की स्थायी व्यवस्था है। परन्तु राज्य की सरकारें इस बीच इतना मगरूर हो गई हैं कि वे लोक लेखा समिति के प्रति अपना उत्तरदायित्व महसूस नहीं करती हैं। सी.ए.जी. की हजारों टिप्पणियाँ लोक लेखा समिति के समक्ष लम्बित हैं। सरकार को दिये गये लोक लेखा समिति के निर्देश अनुत्तरित रह जाते हैं। पूर्व के वर्षों में राज्य सरकारों द्वारा किये गये अरबों रुपयों के व्यय का सामंजन अभी भी शेष है। इसके कारण घपलों–घोटालों, वित्त के दुरूपयोग, नाजायज खर्च, वास्तविक व्यय हुये बगैर सरकारी खजाना से कपटपूर्ण निकासी की घटनायें हो रही हैं। ये घटनायें सरकार की जानकारी में अंजाम दी जा रही हैं। इनकी ओर किये गये संकेत एवं इनके संबंध में उपलब्ध कराये गये ठोस प्रमाण भी निष्फल एवं निष्प्रभावी साबित हो रहे हैं।

सिद्धांत रूप में तो संविधान के अनुच्छेद 164(2) के मुताबिक राज्य की सरकार यानी कार्यपालिका, विधान सभा यानी विधायिका के प्रति उत्तरदायी होती है। परन्तु व्यवहार में झारखंड सरकार ने बहुमत के बल पर विधान सभा को ही अपना अनुगामिनी बना लिया है। विधान सभा की भूमिका राज्य सरकार पर नियंत्रक की नहीं बल्कि इसके पृष्ठपोषक की होती जा रही है। यह क्षरण रुकने का नाम नहीं ले रहा है। संविधान के प्रावधान और विधान सभा द्वारा बनाये गये नियम एवं कानून मंत्रियों की धृष्टता, मनमानी, निरंकुशता और उनके कानून एवं संविधान विरोधी आचरण के सामने बेबस हैं। आर्थिक मामलों में अराजकता का यह वातावरण राज्य के विकास की गति को पीछे की ओर ले जा रहा है। जनहित और राज्यहित सतारूढ़ नेताओं के अनैतिक आचरण और बेलगाम महत्वाकांक्षा की बलिवेदी पर कुर्बान हो रहे

हैं। बिहार विधान परिषद और झारखंड विधान सभा में विभिन्न अवसरों पर वित्त, बजट, योजना प्रकिया तथा विधायिका–कार्यपालिका अन्तसंबंध के संदर्भ में व्यक्त मेरे विचार प्रस्तुत पुस्तक में यथास्थान संकलित हैं।

राज्य सरकार द्वारा राज्य के वित्त प्रबंधन में संविधान, नियम, कानून एवं परम्पराओं का पालन नहीं करने, जानबूझकर उनकी अवहेलना करने तथा कार्यपालिका द्वारा विधायिका को निष्प्रभावी बनाने की साजिशपूर्ण असंवैधानिक कोशिश करने का प्रभाव उत्तरवर्ती बिहार और झारखंड दोनों राज्यों की प्रगति को प्रभावित कर रहा है। वस्तुतः दोनों ही राज्य इस मामले में एक ऐसी साझा विरासत के प्रतिनिधि हैं, जिसका उद्भव ब्रिटिश हुकुमत के दौरान बिहार राज्य में संसदीय व्यवस्था के विकास और संचालन के दौरान हुआ और जो देश की स्वतंत्रता के उपरांत बिहार की संसदीय एवं योजनात्मक विकास प्रक्रिया के क्रियान्वयन में व्याप्त अदूरदर्शी एवं निहितस्वार्थी मनोवृति तथा राज्यहित एवं जनहित के स्थान पर निजी हित एवं निजी स्वार्थ को प्राथमिकता देने वाली राजनीतिक प्रवृत्ति के साये में पल्लवित–पुष्पित होती रही। इस विरासत के प्रतिनिधित्व पर स्वतंत्रता संग्राम के दौरान देश और राज्य में संसदीय प्रणाली की स्थापना के प्रयत्नों और स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त योजनात्मक विकास प्रक्रिया के दौरान उत्पन्न कार्य संस्कृति का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित है। बिहार के विकास के प्रति केन्द्र सरकार की उपेक्षापूर्ण रवैया ने इसे घनीभूत किया है।

फलस्वरुप प्रचुर प्राकृतिक संपदाओं का स्वामी होने और कृषि एवं औद्योगिक विकास की प्रबल संभावना युक्त होने के बावजूद देश और राज्य के योजना दस्तावेजों में यह क्षेत्र आज भी सामाजिक–आर्थिक पिछड़ापन और लचर प्रशासन का एक विचित्र एवं विस्मयकारी उदाहरण बना हुआ है। देश और राज्य का समसामयिक इतिहास और योजनात्मक विकास के दस्तावेज न्यस्त स्वार्थप्रेरित राजनीतिक अवसरवादिता और केन्द्र सरकार की उपेक्षा जनित इस साझा विरासत की विडम्बना के उदाहरणों से भरे पड़े हैं।

स्वतंत्रता संग्राम के दरम्यान और स्वतंत्रता प्राप्त होने के उपरांत बिहार और झारखंड की राजनीति में आत्मसम्मान और स्वाभिमान, जनहित और राज्यहित की

कीमत पर राजनैतिक सौदेबाजी एवं निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिये कदम–कदम पर वसूलों एवं जनोन्मुखी विकास के साथ समझौता करने की एक ऐसी कार्य संस्कृति ने जन्म लिया जिसका गुणात्मक और परिमाणात्मक प्रभाव राज्य की प्रगति पर पड़ा। इस कार्यसंस्कृति के विद्रूप प्रभाव से पीछा छुड़ाना बिहार और झारखंड के लिये कठिन चुनौती बन गया है ।

वर्तमान बिहार और झारखंड ने पूर्ववर्ती बिहार राज्य के अंतर्गत 1 अप्रील 1936 से एक राज्य के रूप में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक विकास की संयुक्त यात्रा आरम्भ की और 15 नवंबर 2000 के दिन बिहार का पुनर्गठन होकर अलग झारखंड राज्य का गठन होने तक यह क्षेत्र एक राज्य बिहार के अंतर्गत रहा। इसके पूर्व 1911 तक बिहार, झारखंड, बंगाल और उड़ीसा के भू–भाग संयुक्त रूप से एक राज्य बंगाल के अधीन थे। 1911 में बिहार, झारखंड और उड़ीसा के भू–भाग को बंगाल राज्य से अलग कर एक नया राज्य ''बिहार और उड़ीसा'' का गठन किया गया। 1 अप्रील 1936 को इससे पृथक होकर उड़ीसा एक अलग राज्य बन गया। 1935 में ब्रिटिश शासन के अधीन 'नया गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट' लागू हो जाने के बाद 1936 के अंत में राज्य विधान सभाओं के चुनावों की घोषणा हुई और 1937 के आरम्भ में इनके चुनाव सम्पन्न हुये। देश के अन्य प्रांतों की तरह बिहार में भी कांग्रेस ने इन चुनावों में भारी बहुमत प्राप्त किया। तत्कालीन बिहार विधान सभा के कुल 152 स्थानों में से 97 स्थानों पर कांग्रेस के उम्मीदवार विजयी हुये। कांग्रेस ने यह चुनाव आर्थिक एवं राजनीतिक मुद्दों के आधार पर लड़ा था जिनमें देश की आजादी, राज्यों में स्वायत्त शासन, राष्ट्रीय संविधान सभा का गठन, स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों की रिहाई और जनोन्मुखी आर्थिक विकास के कार्यक्रम आदि प्रमुख मुद्दे थे। इन चुनावों के साथ पराधीन भारत में सीमित संसदीय लोकतंत्र के आधुनिक युग का सूत्रपात हुआ।

इस बीच एक महत्वपूर्ण राजनीतिक घटना 'आदिवासी महासभा' के गठन के रूप में हुई। छोटानागपुर उन्नति समाज, कैथोलिक सभा, मुंडा सभा आदि संगठनों को मिलाकर करिश्माई व्यक्तित्व वाले श्री जयपाल सिंह के नेतृत्व में आदिवासी

महासभा का गठन हुआ। स्वतंत्रता संग्राम की प्रतिनिधि संस्था कांग्रेस का प्रबल विरोध करना और ब्रिटिश साम्राज्य का समर्थन करना इस संगठन का प्रमुख उद्देश्य था। 22 जनवरी 1937 को इस संगठन ने रांची में एक सम्मेलन आयोजित किया और संथाल परगना तथा छोटानागपुर को मिलाकर अलग झारखंड राज्य बनाने का प्रस्ताव पारित किया।

20 जुलाई 1937 को तत्कालीन बिहार की प्रथम निर्वाचित कांग्रेस सरकार ने सत्ता सम्हाला। चुनाव घोषणा पत्र पर आधारित सरकार के जनोन्मुखी कार्यक्रमों की आम जनता के बीच सराहना होने लगी। इस सरकार द्वारा बनाये गये बजट को 'लोक बजट' के रूप में सराहा गया। सीमित संसाधनों के अंतर्गत लोकोन्मुख बजट तैयार करने के चुनौतीपूर्ण कार्य को इस सरकार ने दक्षतापूर्वक पूरा किया। परन्तु स्वतंत्रता संग्राम की प्रचंडता और द्वितीय विश्वयुद्धजनित परिस्थितियों के दबाव में कांग्रेस मंत्रिपरिषद् का अधिक दिनों तक टिका रहना मुश्किल हो गया। ब्रिटिश सरकार सत्ता छोड़ने का कोई संकेत नहीं दे रही थी और कांग्रेस द्वितीय विश्वयुद्ध के खिलाफ खुलकर खड़ा हो गयी थी। फलस्वरूप 30 अक्टूबर 1939 को 'कांग्रेस मंत्रिपरिषद्' ने त्यागपत्र दे दिया। त्याग पत्र की घटना के दिन को आदिवासी महासभा ने 'मुक्ति दिवस' के रूप में मनाया।

1939 में द्वितीय विश्वयुद्ध आरंभ हुआ तो देश का जनमानस युद्ध में ब्रिटिश हुकूमत की सहायता करने के विरूद्ध था। आजादी की लड़ाई में जनान्दोलन का नेतृत्व करने वाली कांग्रेस पूरी तरह युद्ध के खिलाफ खड़ा हो गई। इसके उलट नवगठित आदिवासी महासभा युद्ध के पक्ष में मुखर हो गई। इसके नेता श्री जयपाल सिंह को ब्रिटिश सरकार ने युद्ध में रांची का 'चीफ वार्डेन' बना दिया और युद्धकाल तक 'इस्टर्न कमांड सर्विसेज सेलेक्शन बोर्ड' का असैनिक सलाहकार बना दिया। अलग झारखंड राज्य की मांग के आरंभिक काल में ही राष्ट्रहित की कीमत पर राजनीतिक सौदेबाजी का खेल भी आरम्भ हो गया।

द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद मार्च 1946 में पुनः प्रांतीय असेम्बलियों और केन्द्रीय असेम्बली के चुनाव हुये। स्वतंत्रता और स्वराज आंदोलन की प्रचंड

लोकप्रियता के माहौल में संपन्न हुये इस चुनाव में विधान सभा की कुल 152 सीटों में से 98 सीटों पर कांग्रेस विजयी हुई। श्री जयपाल सिंह स्वयं खूंटी सीट से चुनाव हार गये। इसके बाद जुलाई 1946 में 'संविधान सभा' के चुनाव हुये। इस चुनाव में वे मुस्लिम लीग की सहायता से 'संविधान सभा' का सदस्य बनने में कामयाब हुये। स्वतंत्रता आंदोलन के समय इन घटनाओं ने बिहार और झारखंड के राजनीतिक मानस पटल पर गहरा प्रभाव डाला। जिसका असर आज भी किसी न किसी रूप में मौजूद है।

आजादी मिलने के बाद 1952 में हुये लोकसभा और विधान सभा के प्रथम आम चुनाव में कांग्रेस को भारी बहुमत प्राप्त हुआ। बिहार विधान सभा में कांग्रेस को 330 में से 239 सीटों पर विजय हासिल हुई। बिहार विधान सभा की 33 सीटें जीत कर झारखंड पार्टी मुख्य विपक्षी दल के रूप में उभरी। तदुपरांत 1956 में राज्य पुनर्गठन आयोग के समक्ष एक बार फिर पृथक झारखंड राज्य की मांग उठी। पृथक झारखंड राज्य के प्रबल हिमायती और 1937 से आदिवासी महासभा के बैनर तले इस मांग को जोरदार ढंग से उठाने वाले झारखंड पार्टी के नेता श्री जयपाल सिंह उस समय इसके प्रति गम्भीर नहीं थे। कुछ समय बाद वे उसी कांग्रेस में शामिल हो गये जो उस समय अलग झारखंड राज्य की प्रबल विरोधी थी। बिहार की राजनीति में दो दशक से प्रतिस्पर्धा और प्रतिद्वन्दिता का प्रतीक रही कांग्रेस और झारखंड पार्टी के विलय से अलग झारखंड राज्य की मांग की धार कुंद हो गयी। इसके बावजूद एन.ई.होरो सदृश कतिपय नेतागण अलग झारखंड राज्य का अलख जगाते रहे।

1974 में झारखंड मुक्ति मोर्चा के गठन के बाद अलग झारखंड राज्य की मांग पुनः नये तेवर के साथ उभरी। मगर स्थापना के कुछ ही वर्षों के भीतर यह संगठन आंतरिक मतभेद का शिकार होकर पहले कांग्रेस का हमराही और बाद में राष्ट्रीय जनता दल का अनुचर हो गया। 1995 में प्रधान मंत्री नरसिंहा राव की अल्पमत सरकार को समर्थन देने की एवज में पृथक झारखंड राज्य की मांग को तरजीह देने के बदले धन लेने की सौदेबाजी करने के कारण झारखंड मुक्ति मोर्चा की काफी किरकिरी हुई और इसकी बची खुची साख भी समाप्त हो गयी। बाद के दिनों में झारखंड मुक्ति

मोर्चा के नेतागण श्री लालू प्रसाद और श्रीमती राबड़ी देवी की राज्य सरकारों के साथ समझौता करते रहे और 'झारखंड क्षेत्र स्वशासी परिषद्' (जैक) में उप मुख्यमंत्री और मंत्री पद का दर्जा और सुख सुविधाओं का लाभ प्राप्त करते रहे। इस पुस्तिका के प्रथम खंड में संग्रहित मेरे भाषणों में इसका संक्षिप्त जिक्र यथास्थान मौजूद है।

इस बीच 6 अप्रील 1980 को भारतीय जनता पार्टी का गठन हुआ। 1980 के दशक के उतरार्द्ध में भारतीय जनता पार्टी ने अलग झारखंड के स्थान पर वनांचल राज्य की मांग को नये सिरे से स्वर दिया और इसे सर्वस्वीकार्य बनाया। भाजपा ने स्पष्ट किया कि 18 जिलों का झारखंड ही वनांचल है। उल्लेखनीय है कि झारखंड मुक्ति मोर्चा के नेतागण बिहार, बंगाल, उड़ीसा और छत्तीसगढ़ के 26 जिलों को मिलाकर वृहद झारखंड बनाने के पक्षधर रहे हैं, जबकि भाजपा इसे अव्यावहारिक करार देती रही है। 1998 लोकसभा चुनाव के बाद केन्द्र में वायदा के मुताबिक भाजपा नेतृत्व वाली राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की सरकार बनी तो इस सरकार ने अलग राज्य गठित करने की चिरलम्बित मांग को पूरा किया। इस विषय को स्पर्श करने वाली मेरी अभिव्यक्ति प्रस्तुत पुस्तक के प्रथम खंड में यथास्थान संकलित है।

बिहार का पुनर्गठन होकर भारत के मानचित्र पर एक नया राज्य झारखंड का उदय होने के पूर्व के 50 वर्षों की योजनात्मक विकास यात्रा में बिहार ने विकसित राज्यों की श्रेणी में स्थान बनाने का सुनहरा अवसर खो दिया। भारत में पंचवर्षीय योजना आधारित योजनात्मक विकास के ये पांच दशक उन समस्त घटनाक्रमों के गवाह हैं जिनके कारण एक संसाधन समृद्ध विकासोन्मुख राज्य किस प्रकार योजनात्मक विकास के प्रथम दशक के बाद के दिनों में विकास विमुख होते गया और 'संसाधन संपन्नता के बीच आर्थिक विपन्नता' का चकित कर देने वाला उदाहरण बनकर रह गया। यद्यपि योजनात्मक विकास के आरम्भिक वर्ष 1951 तक बिहार आर्थिक दृष्टि से एक कमजोर राज्य था। उस समय इसकी प्रतिवर्ष आय मात्र 181 रुपये थी, जबकि इसका राष्ट्रीय औसत 298 रुपया था। इसके बावजूद 1951-61 के दशक में बिहार का विकास तेज गति से हुआ। यह विकास कृषि और उद्योग दोनों ही क्षेत्रों में हुआ। मध्यम, लघु एवं अति लघु सिंचाई कार्यक्रमों की बदौलत बिहार ने महत्वाकांक्षी

राष्ट्रीय परियोजना 'ग्रो मोर फूड' अभियान में उत्साहजनक प्रगति किया। नतीजतन 1961 में बिहार खाद्यान्न उत्पादन में आत्म निर्भर हो गया। योजना दस्तावेजों के अनुसार 1950–51 में बिहार का खाद्यान्न उत्पादन 44.42 लाख टन था। एक दशक बाद 1960–61 में बढ़कर यह 74.19 लाख टन हो गया। इस कालखंड में बिहार का खाद्यान्न उत्पादन 452 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर से बढ़कर 747 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर हो गया। इस अवधि में एक ओर उत्तर बिहार में सिंचाई की महत्वाकांक्षी कोसी और गंडक सिंचाई परियोजनाओं का कार्य आरम्भ हुआ तो दूसरी ओर झारखंड क्षेत्र में एच.ई.सी. एवं बोकारो स्टील प्लांट सदृश वृहद औद्योगिक परियोजनाओं की स्थापना का कार्य भी आरम्भ हुआ।

इतना ही नहीं प्रथम एवं द्वितीय पंचवर्षीय योजना अवधि में बिहार द्वारा किया गया वास्तविक योजना व्यय इस अवधि के लिये स्वीकृत योजना उद्व्यय उपबंध से अधिक रहा। प्रथम और द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में बिहार का स्वीकृत योजना उद्व्यय उपबंध का क्रमशः 65.79 करोड़ रुपया और 174.25 करोड़ रुपया था, जबकि इस अवधि में बिहार का वास्तविक योजना व्यय क्रमशः 73 करोड़ रुपया और 179.25 करोड़ रुपया हुआ, जो स्वीकृत योजना उद्व्यय उपबंध का क्रमशः 108.39 प्रतिशत और 102.25 प्रतिशत था। इस बीच बिहार के प्रशासन को देश भर में सर्वश्रेष्ठ प्रशासन का श्रेय भी प्राप्त हुआ। यहाँ यह उल्लेख अप्रासंगिक नहीं होगा कि इस कालखंड के अधिकांश भाग में वही राजनेता बिहार के शासन–प्रशासन के प्रमुख थे जिन्हें 1937 में गठित बिहार की प्रथम सरकार में 'विकासोन्मुख कार्यों और लोकोन्मुख बजट' के लिये सराहा गया था। मुख्यमंत्री के रूप में डा. श्री कृष्ण सिंह और वित्त मंत्री के रूप में डॉ. अनुग्रह नारायण सिंह की ख्यातिलब्ध जोड़ी भारतीय राजनीति में स्वस्थ प्रतिस्पर्द्धा, शालीन प्रतिद्वन्दिता, मर्यादित महत्वाकांक्षा, परस्पर समादर, कर्तव्यनिष्ठ कार्य संस्कृति, अद्भुत प्रशासनिक समन्वय और सैद्धान्तिक परस्परानुकूलता की भावना के लिये विख्यात रही है।

तीसरी पंचवर्षीय योजना तक बिहार के आर्थिक विकास की यह रफ्तार बरकरार रही, मगर इसके बाद इसमें शिथिलता का प्रवेश हो गया, धीरे धीरे आर्थिक विकास

की वृद्धि दर धीमी होने लगी। तीसरी पंचवर्षीय योजना में बिहार का आर्थिक वृद्धि दर राष्ट्रीय औसत से थोड़ा अधिक था। परन्तु चौथी, पांचवीं एवं छठी पंचवर्षीय योजनाओं में राज्य के आर्थिक विकास की वृद्धि दर राष्ट्रीय औसत से कम हो गई। सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985–90) के दौरान इसमें थोड़ी गति जरूर आयी, परन्तु आंठवी पंचवर्षीय योजना (1992–97) के दौरान बिहार का विकास औंधे मुँह गिर गया।

तीसरी पंचवर्षीय योजना से लेकर छठी पंचवर्षीय योजना तक की अवधि में बिहार का वास्तविक योजना व्यय इस अवधि के लिये स्वीकृत योजना उद्व्यय उपबंध की तुलना में 91 प्रतिशत से 98 प्रतिशत के बीच रहा। सातवीं पंचवर्षीय योजना में स्थिति पुनः सुधरी। सातवीं पंचवर्षीय योजना का आरम्भिक स्वीकृत उद्व्यय उपबंध 5100 करोड़ रुपया था। इसमें उर्ध्वगामी मध्यवर्ती संशोधन हुआ और इसका आकार बढ़कर 6132 करोड़ रुपया हो गया जिसमें से 6033.17 करोड़ रुपये का वास्तविक व्यय हुआ। इसके ठीक विपरीत आठवीं पंचवर्षीय योजना के स्वीकृत उद्व्यय उपबंध 13000 करोड़ रुपया का अधोगामी संशोधन करना पड़ा और इसके स्वीकृत उद्व्यय उपबंध को 13000 करोड़ रुपये से घटाकर 11,569 करोड़ रुपये करना पड़ा। परंतु इस घटे हुये योजना उद्व्यय उपबंध का भी मात्र 46.72 प्रतिशत, यानी 5404.39 करोड़ रुपया ही वास्तविक व्यय आठवीं पंचवर्षीय योजना अवधि में हुआ।

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के लिए निर्धारित योजना उद्व्यय और वास्तविक योजना व्यय के आंकड़ों पर एक नजर डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि आजादी के बाद सभी पंचवर्षीय योजनाओं में प्रति व्यक्ति योजना व्यय और प्रतिव्यक्ति केन्द्रीय सहायता के मामले में बिहार केन्द्र सरकार की घोर उपेक्षा का शिकार रहा है। इन मदों में केन्द्र सरकार से बिहार को मिलने वाला हिस्सा इनके राष्ट्रीय औसत से काफी कम रहा है। दूसरी पंचवर्षीय योजना से उत्तर बिहार में जल प्रबंधन की महत्वाकांक्षी कोसी एवं गंडक परियोजनाओं, सोन नहर पुनर्स्थापन परियोजना और छोटानागपुर क्षेत्र में स्वर्णरिखा बहुद्देशीय परियोजना, तेनुघाट ताप विद्युत परियोजना एवं बोकारो

स्टील प्लांट जैसी परियोजनाओं को अपेक्षाकृत विलम्ब से ही सही, लागू करने के बावजूद बिहार के खाता में प्रतिव्यक्ति योजना व्यय और प्रतिव्यक्ति केन्द्रीय सहायता की राशि राष्ट्रीय औसत की तुलना में काफी कम रही है।

प्रथम एवं द्वितीय पंचवर्षीय योजनाओं में स्वीकृत योजना उद्व्यय से अधिक वास्तविक व्यय होने के बावजूद इन योजनाओं में बिहार का प्रतिव्यक्ति योजना उपबंध क्रमशः 25 रुपया और 40 रुपया था, जबकि इसका राष्ट्रीय औसत क्रमशः 39 रुपया और 52 रुपया था। इसी प्रकार इस दौरान प्रतिव्यक्ति केन्द्रीय सहायता मद में भी बिहार को काफी कम आवंटन प्राप्त हुआ। प्रथम और द्वितीय पंचवर्षीय योजना में बिहार को मिलने वाली प्रतिव्यक्ति केन्द्रीय सहायता की राशि क्रमशः 14 रुपये और 19 रुपये थी, जबकि इसका राष्ट्रीय औसत क्रमशः 23 रुपये और 25 रुपये था।

इसी प्रकार तीसरी, चौथी, पांचवी, छठवी, सातवीं और आठवीं पंचवर्षीय योजनाओं में भी बिहार को मिलने वाली प्रतिव्यक्ति केन्द्रीय सहायता की राशि इसके राष्ट्रीय औसत से कम थी। इस अवधि में बिहार को प्रति व्यक्ति केन्द्रीय सहायता के रूप में क्रमशः 44 रुपये, 57 रुपये, 105 रुपये, 201 रुपये और 340 रुपये प्राप्त हुये जबकि इसका राष्ट्रीय औसत क्रमशः 55 रुपये, 65 रुपये, 130 रुपये, 196 रुपये और 375 रुपये था।

राष्ट्रीय स्तर के वित्तीय संस्थानों ने भी पहली पंचवर्षीय योजना से लेकर आठवीं पंचवर्षीय योजना के बीच बिहार में काफी कम पूंजी निवेश किया। उर्जा क्षेत्र में पूंजी निवेश तो द्वितीय पंचवर्षीय योजना के बाद उत्तरोतर कम होता गया। प्रथम पंचवर्षीय योजना में बिहार के उर्जा क्षेत्र में प्रतिव्यक्ति पूंजी निवेश राष्ट्रीय औसत का 7.90 प्रतिशत था। द्वितीय पंचवर्षीय योजना अवधि में बढ़कर यह 8.50 प्रतिशत हो गया। इसके बाद इसमें योजनावार ह्रास होता गया। तृतीय पंचवर्षीय योजना में घटकर यह 7.51 प्रतिशत, चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में 5.27 प्रतिशत, पंचम में 4.64 प्रतिशत, षष्टम में 3.08 प्रतिशत और सप्तम पंचवर्षीय योजना में 2.93 प्रतिशत हो गया। अष्टम पंचवर्षीय योजना में तो यह पूंजी निवेश घटाकर शुन्य के समीप पहुँच गया।

पूंजी निवेश के संदर्भ में बिहार दोहरी मार झेलता रहा। एक ओर बैंकों का ऋण–जमा अनुपात काफी कम (21 प्रतिशत से 39 प्रतिशत के बीच) रहने के कारण बिहार की बचत का अधिकांश हिस्सा राज्य से बाहर चला जाता रहा तो दूसरी ओर आई.डी.बी.आई, आई.सी.सी.आई., आई.एफ.सी.आई, एल.आई.सी., जी.आई.सी. जैसे राष्ट्रीय संस्थानों का पूंजी निवेश भी बिहार में काफी कम हुआ। इन वित्तीय संस्थानों ने सातवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक कुल मिलाकर करीब 72,446 करोड़ रुपये का पूंजी निवेश देश भर में किया था जिसमें से बिहार में इनका पूंजी निवेश मात्र 16.42 करोड़ रुपया था, जबकि गुजरात में यह निवेश 9,770 करोड़ रुपया और महाराष्ट्र में 19,861 करोड़ रुपया था। इसके अलावा वाणिज्यिक बैंकों का जो भी पूंजी निवेश बिहार में दिखाया गया उसका अधिकांश भाग सरकारी प्रतिभूतियों में निवेशित हुआ।

स्पष्ट है कि देश आजाद होने के बाद आर्थिक विकास के क्षेत्र में बिहार केन्द्र सरकार की घोर उपेक्षा का शिकार रहा। कृषि एवं औद्योगिक विकास के लिये उर्वर भूमि, गुणवतायुक्त जल संसाधन, खनिज सम्पदा की प्रचुरता एवं वन सम्पदा की बहुलता के बावजूद पर्याप्त पूंजी, कुशल प्रबंधन और समुचित राजनीतिक इच्छाशक्ति के अभाव में बिहार प्रकृति प्रदत अपनी संसाधन क्षमता का समुचित उपयोग अपने विकास के लिये नहीं कर पाया। प्रति व्यक्ति न्यून योजना व्यय, न्यून केन्द्रीय सहायता, अल्प बचत, अत्यल्प पूंजी निवेश, क्षीण राजस्व क्षमता, संसाधनों का बहिर्गमन, पूंजी का पलायन, भाड़ा समानीकरण आदि के कारण बिहार विकास विडम्बना के एक ऐसे कुचक्र में फंस गया जिससे उबारने में यहाँ का राजनैतिक नेतृत्व पूरी तरह विफल रहा।

मार्च 1990 में कांग्रेस ने सत्ताच्युत होने और सत्ता की बागडोर लोकनायक जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व वाली 1974 छात्र आंदोलन के एक नेता श्री लालू प्रसाद के हाथ में आने के बाद आशा बंधी कि सही मायने में राज्य की यह प्रथम गैरकांग्रेसी सरकार राज्य के आर्थिक विकास के लिये ठोस नीतिगत पहल करेगी, जिससे 1950 से 1990 के बीच के चार दशक में केन्द्र सरकार द्वारा विभिन्न

पंचवर्षीय योजनाओं में प्रतिव्यक्ति योजना व्यय, प्रतिव्यक्ति केन्द्रीय सहायता एवं निजी–सार्वजनिक वित्तीय संस्थानों के पूँजी निवेश एवं अन्य मामलों में किये गये सौतेला व्यवहार की यथासंभव भरपाई करने तथा विकास, विकलांगता से उपजे क्षेत्रीय असंतुलन को कम करने का सार्थक प्रयत्न होगा।

इसके ठीक पहले 1989 में भारत सरकार के योजना आयोग ने बिहार का आर्थिक पिछड़ापन दूर करने का उपाय सुझाने के लिये श्री अजीत मजुमदार के नेतृत्व में विशेषज्ञों के एक समूह का गठन किया था जिसमें बिहार के आइ.सी.एस युगीन ख्यातिलब्ध प्रशासक श्री एल. पी. सिंह भी शामिल थे। भारत सरकार के योजना आयोग द्वारा गठित एक विशेषज्ञ समूह ने बिहार के पिछड़ापन के ऐतिहासिक कारणों को चिन्हित करते हुये इसे दूर करने के लिये प्रामाणिक एवं तथ्यपूर्ण सुझावों के साथ एक प्रतिवेदन राज्य सरकार और भारत सरकार को सौंपा था। इससे पहले भी 1983 में भारत के रिजर्व बैंक द्वारा प्रसिद्ध अर्थशास्त्री एस.आर.सेन की अध्यक्षता में गठित विशेषज्ञ समिति द्वारा पूर्वी भारत में कृषि क्षेत्र के पिछड़ापन के कारणों को चिन्हित करते हुये इन्हें दूर करने के ठोस उपाय अपने प्रतिवेदन में सुझाये गये थे। समिति ने दो खंडों में दिये गये अपने प्रतिवेदन में बिहार के पिछड़ापन के कारणों का सांगोपान विश्लेषण किया था और अपनी अनुशंसाओं को प्राथमिकता के आधार पर समय सीमा के भीतर लागू करने हेतु केन्द्र सरकार के समक्ष ठोस सुझाव प्रस्तुत किया था।

हमें उम्मीद थी कि श्री लालू प्रसाद की सरकार इन प्रतिवेदनों के आलोक में पर्याप्त केन्द्रीय सहायता प्राप्त करने की दिशा में ठोस पहल करेगी और ट्राइबल एग्रीकल्चर सहित अन्य आधारभूत संरचनाओं को विकसित करने के लिये सटीक कार्यक्रम तैयार करेगी। मैने स्वयं 21 सितम्बर 1990 को तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री लालू प्रसाद को एक पत्र लिखा था और इस प्रतिवेदन के आधार पर चिन्हित योजनाओं के माध्यम से केन्द्र से बिहार का अपेक्षित हक प्राप्त करने हेतु प्रयास करने का अनुरोध किया था। मगर इस दिशा में कोई कार्रवाई नहीं हुई और बिहार का पिछड़ापन दूर करने के लिए केन्द्र से वाजिब हक प्राप्त करने का प्रयास विफल हो गया।

इतना ही नहीं 1990–2000 के दशक में बिहार के शासन–प्रशासन में भारी गिरावट आई। 1990 तक बिहार की परिसम्पत्तियाँ दायित्वों की तुलना में अधिक थीं। इसके बाद साल दर साल परिसम्पत्तियों की तुलना में दायित्वों में वृद्धि होती गयी और यह दशक समाप्त होते समय बिहार पर ऋण का बोझ 40,000 करोड़ रुपया से अधिक हो गया। इस कालखंड में जिस प्रकार के घपले–घोटाले शासन तंत्र में उजागर हुये वे कल्पनातीत एवं अविश्वसनीय थे। कपटपूर्ण तरीका अपनाकर और फर्जी आपूर्ति दिखाकर सरकारी खजाना से अवैध निकासी का अनोखा कारनामा बिहार में उजागर हुआ। इस कारण देश और दुनिया में बिहार की छवि धूमिल हुई। योजनात्मक विकास में न केवल ठहराव आया बल्कि इसकी दिशा ऋणात्मक हो गई। विकास कार्यों के लिये धन का टोटा पड़ गया। आये दिन सरकारी खजाना पर लाल बत्ती जलने लगी। ओवरड्राफ्ट का संकट दैनन्दिन राजकीय अर्थव्यवस्था प्रबंधन का अंग बन गया।

इस अवधि में भी कुख्यात पशुपालन घोटाला, अलकतरा घोटाला, मेधा घोटाला, दवा घोटाला, आदि अनेक घोटालों का पर्दाफाश हुआ। न्यायालय के हस्तक्षेप से सी.बी.आई. जांच के उपरांत मुख्यमंत्री और मंत्रियों सहित कई प्रभावशाली राजनीतिकर्मी, भारतीय प्रशासनिक सेवा एवं राज्य प्रशासनिक सेवा के पदाधिकारी, फर्जी आपूर्तिकर्ताओं और षडयंत्र में संलग्न सरकारी कर्मचारियों के विरूद्ध मुकदमें दायर हुये और इन्हें जेल जाना पड़ा। सी.बी.आई. की विशेष अदालतें अब तक दर्जनों अभियुक्तों को सजा सुना चुकी हैं। परन्तु भारतीय दंड संहिता के छिद्रों का अनुचित लाभ उठाकर, शीर्ष सत्ता का दुरूपयोग कर, आयकर विभाग एवं सी.बी.आई. को कदम कदम पर प्रभावित कर और पंगु बनाकर राजनैतिक रूप से प्रभावशाली इसके कतिपय मुख्य सूत्रधार आज भी अपने आपको सजा से बचाने की कवायद में लगे हुये हैं।

ऐसे माहौल में 15 नवंबर 2000 के दिन बिहार और झारखंड अलग हुये तो आर्थिक पिछड़ापन, शासन – प्रशासन की गैर जिम्मेदाराना कार्य संस्कृति, सत्ताधारी राजनैतिक नेतृत्व की विद्रुप कार्यशैली और शासन प्रशासन की भ्रष्ट कार्य प्रणाली

आदि अनेक प्रत्यक्ष एवं परोक्ष समस्यायें भी साझा विरासत के तोहफा के रूप में दोनों राज्यों को स्वाभाविक–अस्वाभाविक रूप में उपलब्ध हुईं। ऐसी विरासत से पीछा छुड़ाना और विकास के पथ पर तेज रफ्तार से आगे बढ़ने की कठिन चुनौती दोनों ही राज्यों के सामने है । विगत सात वर्षों के दौरान इस परिप्रेक्ष्य में मिला–जुला अनुभव के दृष्टांत हमारे सामने उभरकर आ रहे हैं । एक ओर बिहार में दृढ़ राजनैतिक इच्छाशक्ति की बदौलत समस्याओं पर काबू पाने के सराहनीय प्रयास के दृष्टांत दिखाई पड़ रहे हैं तो दूसरी ओर झारखंड में समाधान ढूंढने की बजाय समस्याओं का हिस्सा बन जाने तथा ''जैसी बहे बयार पीठ तब तैसी कीजै''वाली कार्यसंस्कृति के चिंताजनक उदाहरण भी परिलक्षित रहे हैं। झारखंड में तो शीर्ष पदों पर आसीन राजनीतिक बिरादरी और नौकरशाही के एक हिस्से के आचरण से संवैधानिक संस्थाओं की विश्वसनीयता, उपयोगिता एवं प्रासंगिकता पर प्रश्न चिन्ह खड़ा हो रहे हैं । ऐसी स्थिति में लोकतांत्रिक प्रक्रिया के माध्यम से जनोन्मुखी विकास का लक्ष्य हासिल करने के लिये सार्थक जनपहल ही एकमात्र विकल्प है ।

झारखंड और बिहार दोनों ही भारत के पूर्वी क्षेत्र के राज्य हैं । भौगोलिक दृष्टिकोण से पूर्वी भारत के अन्य राज्यों में पश्चिम बंगाल, उड़ीसा और छत्तीसगढ़ भी शामिल हैं । क्षेत्रीय विकास के संदर्भ में भारत के राजनीतिक मानचित्र पर एक नजर डालने से स्पष्ट हो जाता है कि दक्षिणी क्षेत्र के चारों राज्य ''आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु और केरल'' का एक परिसंघ है, जिसके माध्यम से वे राष्ट्रीय संसाधनों में अधिक से अधिक हिस्सा प्राप्त करने में सफल हो रहे हैं और तेज गति से विकसित हो रहे हैं । बम्बई को आर्थिक गतिविधियों का केन्द्र मानकर महाराष्ट्र और इससे लगे मध्यप्रदेश का क्षेत्र विकासमान है । इस बीच गुजरात स्वयं एक शक्तिशाली आर्थिक केन्द्र के रूप में उभरा है, जिसका लाभ पड़ोस के राज्य राजस्थान तक पहुँच रहा है। भारत की राजनीतिक सत्ता का केन्द्र दिल्ली के इर्द–गिर्द के इलाके राष्ट्रीय राजधानी परिक्षेत्र के नाते संगठित और विकसित हो रहे हैं जिसका परिणाम पश्चिमी उत्तर प्रदेश, हिमाचल, पंजाब, हरियाणा आदि राज्यों को प्राप्त हो रहा है । जम्मू–कश्मीर पर भारत सरकार की विशेष मेहरबानी है और पूर्वोत्तर भारत के राज्यों के विकास के

लिये केन्द्र सरकार ने एक अलग मंत्रालय बना रखा है । इस परिप्रेक्ष्य में पूर्वी भारत के ये पाँच राज्य ही राष्ट्रीय स्तर पर किसी क्षेत्रीय विकास उपक्रम के अंग नहीं हैं । जबकि इन राज्यों के पास देश का सर्वाधिक खनिज संसाधन, उर्वर भूमि, गुणवत्तायुक्त जलसंसाधन और समृद्ध वन क्षेत्र हैं ।

पश्चिम बंगाल और उड़ीसा के बन्दरगाहों को सक्रिय बनाकर दक्षिण–पूर्व एशियाई देशों एवं सुदूर पूर्व के देशों के साथ वाणिज्य एवं व्यापार में वृद्धि की संभावना का लाभ भारत के पूर्वी क्षेत्र के ये राज्य आसानी से उठा सकते हैं । भौगोलिक सीमाओं के अतिरिक्त नदियों एवं यातायात मार्गों से भी ये राज्य अच्छी तरह जुड़े हुये हैं । पड़ोसी देश नेपाल तथा भूटान सहित पूर्वोत्तर भारत के अन्य राज्यों की आर्थिक एवं व्यापारिक समृद्धि में भी यह क्षेत्र सार्थक भूमिका निभा सकता है और इनके लिये वाणिज्य व्यापार का स्थल एवं जल मार्ग उपलब्ध करा सकता है । इसलिये राज्यहित, राष्ट्रीय हित एवं व्यापक क्षेत्रीय हित के लिये आवश्यक विकास के विभिन्न आयामों के संदर्भ में परस्पर सहयोगी की भूमिका निभाने के लिये आगे आने और विकास का अधिकाधिक लाभ प्राप्त करने के लिये पूर्वी भारत के इन पाँच राज्यों को एक परिसंघ के रूप में संगठित होने की आवश्यकता है । इस अवधारणा को मूर्त रूप देने में झारखंड राज्य महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है । झारखंड विधान सभा में अपने इस भाषण के दौरान माननीय अध्यक्ष महोदय के हस्तक्षेप के संदर्भ में मैंने इस बिंदु की ओर संकेत किया है जो प्रस्तुत पुस्तक के खंड–2 में यथास्थान संकलित है ।

प्रस्तुत पुस्तक के विषय वस्तु को तीन खंडों में समाहित किया गया है। प्रथम खंड में वैसी अभिव्यक्तियां संकलित हैं जो वस्तुपरक एवं तथ्यपरक तो हैं मगर इनमें राजनीतिक वक्तव्य का पुट भी है । द्वितीय खंड की विषयवस्तु मुख्य रूप से बिहार और झारखंड के योजना, बजट एवं वित्त प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं से संबंधित है । इनमें कतिपय वर्षों की योजनाओं, बजट, लेखानुदान, अनुपूरक, विनियोग आदि के बारे में राज्य सरकारों के दृष्टिकोण पर मेरी सकारात्मक आलोचनायुक्त एवं सलाहपूर्ण टिप्पणियाँ हैं । तृतीय खंड में कतिपय वैसी अभिव्यक्तियों को स्थान दिया गया है जो नीतिपरक एवं जनसमस्याओं से सरोकार रखने वाली हैं ।

विधानसभा और विधान परिषद् सदृश संवैधानिक एवं जनप्रतिनिधि संस्थाओं के अपेक्षाकृत कम गम्भीर और तत्कालिक परिस्थिति से प्रभावित माहौल में राजकाज की वित्त व्यवस्था सदृश नीरस, बोझिल और अरूचिकर प्रतीत होने वाले विषयों पर किये गये धाराप्रवाह भाषणों का सम्पादन एक दुष्कर कार्य है। परिस्थितिजन्य परिवेश के माहौल विशेष में व्यक्त इन धाराप्रवाह विचारों की सहजता को लिपिबद्ध करते समय अभिव्यक्ति की भाषा, भावभंगिमा और भावना को यथास्वरूप बनाये रखना असंभव नहीं तो मुश्किल अवश्य है। इस मुश्किल का प्रभाव प्रस्तुत पुस्तक के विषय वस्तु पर यथास्थान परिलक्षित हो रहा है। इसके अतिरिक्त पुस्तक में पर्याप्त मात्रा में पुनरूक्ति दोष भी व्याप्त है। सदन के भीतर व्यक्त विचार किसी विशेष विषयवस्तु एवं घटनाक्रम के संदर्भ में तत्कालीन वस्तुस्थिति को अधिकतम प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत करने और वस्तुपरकता को उजागर करने की दृष्टि से अभिव्यक्त किये गये होते हैं। फलस्वरूप पुस्तक के सम्पादन की प्रक्रिया में स्थान–स्थान पर व्याप्त पुनरावृत्ति दोष से छुटकारा पाना संभव नहीं हो सका है।

बिहार विधान परिषद् और झारखंड विधान सभा में विभिन्न अवसरों पर किये गये मेरे अनेक भाषणों में से प्रस्तुत पुस्तक के लिये उपयुक्त अभिव्यक्तियों का चयन, संकलन, संपादन, टंकन और मुद्रण के कार्य में कई व्यक्तियों ने यथायोग्य परिश्रम किया है। इनमें बिहार विधान परिषद् में सहायक पद पर कार्यरत और परिषद् की विभिन्न समितियों का सभापति रहने के दौरान मेरे साथ निजी सचिव के रूप में संबद्ध श्री ज्ञान प्रकाश का योगदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है। बिहार विधान परिषद् के प्रकाशनों में से मेरे भाषणों को ढूंढने, छांटने और उन्हें यथास्थान सिलसिलेवार संकलित करने का कार्य इन्होंने मनोयोग से किया है। इसके लिये ये विशेष धन्यवाद के पात्र हैं।

झारखंड विधान सभा का सदस्य निर्वाचित होने के पूर्व से श्री अमिताभ गुप्ता मेरे निजी सहायक के रूप में कार्यरत हैं। इन्होंने भी झारखंड विधान सभा में किये गये मेरे भाषणों को तलाशने एवं एकत्र रखने में योगदान किया है। सहायक के रूप में न्यूनाधिक समय तक मेरे साथ जुड़े रहे सर्व श्री विनोद कुमार, शिव कुमार सिंहा,

भुवनेश्वर कुमार एवं अनुज कुमार ने एकत्र सामग्रियों को समय–समय पर टंकित करने और इन्हें कम्प्यूटर में डालकर सुरक्षित रखने का दायित्व निभाया है। झारखंड प्रदेश भारतीय जनता पार्टी मुख्यालय में कार्यरत श्री महाशंकर झा और बिहार प्रदेश भारतीय जनता पार्टी के कार्यालय प्रभारी श्री शशि नाथ झा को भी मैं धन्यवाद देना चाहता हूँ, जिन्होंने अपने कार्यालय की व्यस्तताओं के बावजूद आवश्यकतानुसार पुस्तक सामग्री के किसी न किसी भाग के टंकन का मेरा आग्रह सहर्ष स्वीकार किया। अभिव्यक्ति के पुस्तकाकार प्रकाशन में योगदान के लिये ये सभी व्यक्ति मेरे हार्दिक धन्यवाद के अधिकारी हैं।

वरीय पत्रकार श्री विष्णु राजगढ़िया और श्री रतन जोशी तथा भारतीय विपणन विकास केन्द्र के श्री मनोज कुमार सिंह ने पुस्तक की पांडुलिपि को एकाधिक बार पढ़ने और इस यथासंभव अशुद्धिविहीन बनाने का कष्ट उठाया है और धाराप्रवाह अभिव्यक्ति को पठनीय बनाने और सामग्रियों के संपादन एवं स्वरूप निर्धारण के बारे में उपयोगी सुझाव देकर इनके संपादन में मेरा योग्य मार्गदर्शन किया है। मासिक पत्रिका 'प्रथम प्रवक्ता' से संबद्ध पत्रकार श्री मनोज कुमार झा ने दिल्ली से आकर और कई दिनों तक राँची और जमशेदपुर रहकर पुस्तक की बिखरी सामग्री को खंडों में संयोजित करने और अभिव्यक्तियों के लिये उपयुक्त शीर्षक निर्धारित करने का श्रमसाध्य कार्य सम्पन्न किया। इनके माध्यम से वरीय पत्रकार श्री राम बहादुर राय का महत्वपूर्ण सुझाव एवं प्रोत्साहन मुझे मिला जिसके फलस्वरूप पुस्तक के प्रकाशन के बारे में मेरा उहापोह समाप्त हुआ और पुस्तक का प्रकाशन सुनिश्चित हो पाया। इन सभी के प्रति मैं हृदय से आभार प्रकट करता हूँ।

संपादन के क्रम में शेष रह गई अशुद्धियों को दुरुस्त करने की दृष्टि से पुस्तक को गम्भीरतापूर्वक पढ़कर अशुद्धियों को चिह्नित करने के लिए मैने बिहार और झारखण्ड विधान सभा के अवकाश प्राप्त अधिकारी एवं पूर्व मुख्यमंत्री श्री अर्जुन मुंडा के संसदीय सलाहकार श्री अयोध्यानाथ मिश्र तथा झारखण्ड विधानसभा के उप सचिव श्री उदयभान सिंह से आग्रह किया जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया और दक्षता एवं प्रवीणता पूर्वक इस दायित्व का निर्वाह किया। मैं इन दोनों प्रतिभावान पदाधिकारियों

खण्ड - 2

बजट केवल आंकड़ों का खेल नहीं होता

माननीय वित्त मंत्री द्वारा वित्तीय वर्ष 1999-2000 के बजट में 18,503 करोड़ रुपये का वार्षिक आय-व्यय विवरण सदन के समक्ष रखा गया है। 1990-91 में पहली बार बिहार में जनता दल की गैर कांग्रेसी सरकार बनी थी। उस वर्ष 6,162 करोड़ रुपये का बजट सदन में रखा गया था। इस वर्ष का बजट आकार उससे तीन गुणा ज्यादा है। मगर उस अनुपात में विकास एवं योजना के विभिन्न मदों में व्यय का जितना प्रावधान होना चाहिए था वह इस बजट में नहीं है। 1990-91 की तुलना में योजना एवं विकास के मद में काफी कम व्यय का प्रावधान इस वर्ष के बजट में रखा गया है।

मंत्री महोदय को पता होगा कि ब्रिटिश शासनकाल में बिहार में पहली बार एक अन्तरिम सरकार 1937 में बनी थी। एक निर्वाचित बिहार सरकार का पहला बजट उस समय की विधान सभा में रखा गया था। वह बजट 8 करोड़ 9 लाख रुपये का था। जब वित्तीय वर्ष का अंत हुआ और गणना हुई तो पाया गया कि उस वित्तीय वर्ष में राज्य सरकार द्वारा कुल व्यय16 करोड़ 15 लाख रुपये हुआ था। यानी बजट राशि से करीब दो गुना संसाधन बिहार की पहली सरकार ने जुटाया था। उस समय के बजट भाषण में तत्कालीन वित्त मंत्री डा. अनुग्रह नारायण सिंह ने ग्लैडस्टोन को उद्धृत करते हुये बताया था कि किसी सरकार का बजट के बारे में क्या दृष्टिकोण होना चाहिए। उन्होंने कहा था कि ''बजट केवल आंकड़ों का खेल नहीं होता है, केवल अर्थमेटिक नहीं होता है, आय-व्यय का सिर्फ जोड़-घटाव और गुणा-भाग नहीं होता है, बल्कि बजट बनाते समय सरकार का यह दृष्टिकोण रहना चाहिए कि यह बजट एक व्यक्ति का, राज्य के प्रत्येक व्यक्ति का, व्यक्तियों के समूह का और कुल मिलाकर आम जनता का जीवन स्तर ऊपर उठाने के लिए हजार तरीके सुझानेवाला है।'' इस पर हजारों दृष्टिकोण से विचार किया जाता है कि किस तरह से आम जनता की हालत सुधरेगी, किस तरह से राज्य आगे जाएगा। मुझे नहीं लगता है कि वित्तीय वर्ष 1999-2000 का जो बजट बिहार सरकार ने तैयार

किया है उसमें अनुग्रह बाबू का वह दृष्टिकोण समाहित है।

बजट या विकास के कार्यों के बारे में महात्मा गाँधी का भी एक दृष्टिकोण था। उनके अनुसार जब ''तुम विकास के काम में जुटते हो तो तुम्हें ध्यान रहना चाहिए राज्य के विकास की अंतिम सीढ़ी पर बैठे आम आदमी का, ध्यान रहना चाहिये कि जो दस्तावेज तुम तैयार कर रहे हो, जो कार्यक्रम तुम तैयार कर रहे हो, उस कार्यक्रम में गरीबों तथा आम जनता के विकास के लिए क्या है। अंतिम सीढ़ी पर बैठे व्यक्ति और राज्य की आम जनता की भलाई के दृष्टिकोण से बजट तैयार होना चाहिए।'' अगर 1977 से 1979 के बीच के दो वित्तीय वर्ष के बजट दस्तावेजों को छोड़ दिया जाए तो साठ के दशक के बाद के किसी भी वार्षिक बजट में बिहार सरकार का यह दृष्टिकोण नहीं रहा है। आज आवश्यकता है कि बजट तैयार करने के मामले में, विकास के कार्य की योजनाएं बनाने के मामले में, हम लकीर का फकीर नहीं बनें। हम गांधी और ग्लैडस्टोन की हिदायतों को भी ध्यान में रखें।

राज्य की वित्तीय व्यवस्था में सुधार के बारे में वित्त मंत्री महोदय ने सदन के समक्ष बजट रखते समय दिये गये अपने भाषण में कहा था कि अब राज्य सरकार का वित्तीय प्रबंधन बहुत अच्छा हो गया है। कारण कि अब खजाने पर लाल बत्ती नहीं दिखाई पड़ती है। अब हम ओवर ड्राफ्ट के संकट से मुक्त हो गये हैं, जब हम साल के अन्त में आय-व्यय का लेखा जोखा करते हैं तो बचत होती है, अब क्लोजिंग बैलेंस निगेटिव में नहीं जाता है, यह मंत्री महोदय ने कहा था। पिछले 8-9 वर्षों के बजट का इतिहास देखें तो यह जरूर है कि 1990-91 से 1995-96 तक कुछ साल ऐसे थे जब खजाने पर हर वक्त लालबत्ती जली रहती थी। कोषागार निदेशक हर महीना दो महीना में कम से कम आठ-दस बार वायरलेस से जिला के कोषागारों को निर्देश देते रहते थे कि कौन तरीका अपनाइए, किस तरह का खर्च रोक दीजिए कि राज्य सरकार ओवर ड्राफ्ट के संकट से बच सके। परन्तु, जब हम वस्तुस्थिति का विश्लेषण करते हैं तो लगता है कि उस समय अगर सरकारी खजाना पर लाल बत्ती जली रहती थी तो वह लाल बत्ती विकास के काम के लिए होने वाले व्यय के

कारण नहीं जली रहती थी। बल्कि इसलिये जली रहती थी कि उस वक्त बेतहाशा घपले–घोटाले हो रहे थे, सरकारी खजाने से अवैध रूप से और कपटपूर्ण ढंग से निकासी हो रही थी और वही अवैध निकासी खजाना पर लाल बत्ती जले रहने का मुख्य कारण थी। मार्च 1996 में न्यायालय के हस्तक्षेप से पशुपालन घोटाले की सी.बी.आई जांच का आदेश होने के बाद वह अवैध निकासी बन्द हो गयी तो अब सरकार को सूझता नहीं है कि बजट आवंटन को खर्च करें तो कहां करें। पर मंत्री महोदय को यह वित्तीय प्रबंधन में सुधार का नतीजा दिखाई पड़ता है।

इसी सदन में चर्चा के दौरान कई बार यह विषय उठा है कि खर्च करनेवाले जो कार्य विभाग हैं, इंजीनियरिंग डिपार्टमेंट्स हैं, जब उनके मंडलों–प्रमंडलों की कार्य क्षमता देखते हैं कि वह कितना पैसा खर्च कर सकता है, कितना काम करने की उसकी क्षमता है तो पता चलता है कि एक एग्जेक्यूटिव इंजीनियर के नीचे एक डिवीजन में जितने सहायक और कनीय अभियंता हैं वे एक प्रखंड में एक साल में अधिक से अधिक डेढ़ से दो करोड़ रुपये खर्च कर सकते हैं, इससे अधिक का काम उनसे नहीं संभव है। मगर उनको 20 करोड़ रुपये से अधिक का आवंटन विभिन्न कार्यमदों में खर्च करने के लिए प्राप्त होता है। उनकी क्षमता नहीं है इतना काम कराने की, इतना खर्च सही तरीका से कर पाने की, नतीजतन आवंटित राशि साल के अंत में लौट जाती है, इस राशि का प्रत्यर्पण हो जाता है। इसके बावजूद मंत्री जी कहते हैं कि काम हो रहा है, बढ़िया तरीके से हो रहा है। खजाना पर लाल बत्ती नहीं जल रही है। आखिर कैसे? मुझे लगता है कि अगर इस बार के बजट में अपेक्षित सुधार संभव नहीं हुआ तो कम से कम आगे जब भी सरकार सदन के सामने वार्षिक बजट प्रस्तुत करे तो उस समय यह ध्यान में अवश्य रखना चाहिए कि जो ग्लैडस्टोन ने कहा था, जो महात्मा गांधी ने कहा था और जिसे बिहार के प्रथम वित्तमंत्री श्री अनुग्रह नारायण सिंह ने अपने पहले बजट भाषण में उद्धृत किया था, वह दृष्टिकोण बजट के संबंध में इस सरकार का भी होना चाहिए।

जब हम राज्य की वित्तीय व्यवस्था पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि आमतौर

पर राज्य की वित्तीय व्यवस्था का स्वास्थ्य इस पर निर्भर करता है कि राज्य अपनी राजस्व आय में से कितना धन योजना मद में व्यय के लिये बचा पाता है। राज्य का राजस्व अधिशेष, जिसको बैलेन्स ऑफ करेंट रेवेन्यू कहते हैं, कैसा रहता है। घनात्मक रहता है या ऋणात्मक रहता है। पिछले 10 वर्षों से योजना दस्तावेजों में हम देख रहे हैं बिहार सरकार का बैलेन्स ऑफ करेन्ट रेवेन्यू, राजस्व अधिशेष हमेशा ऋणात्मक रहता है। यानी सरकार जितना राजस्व इकट्ठा करती है उससे अधिक खर्च अपने राजस्व मद में करती है। इसके बाद अपने राजस्व के अलावे राज्य सरकार को अन्य श्रोतों से भी राजस्व प्राप्त होते हैं। केन्द्रीय करों में राज्य के हिस्सा का राजस्व आता है, बैंकों एवं वित्तीय संस्थानों से राज्य सरकार निगोशिएटेड लोन लेती है, देश के बाहर के वित्तीय संस्थानों से सहायता या ऋण मिलता है, अल्पबचत की व्यवस्था से यानि आम लोग अपना पेट काटकर जो अल्प बचत करते हैं, उससे सरकार ऋण लेती है, कर्मचारियों के प्रोविडेन्ट फंड से सरकार ऋण लेती है। केन्द्र सरकार से सहायता एवं अनुदान मद में राजस्व प्राप्त होता है। इस तरह से कुल मिलाकर राज्य सरकार अपने राज्य की वित्तीय व्यवस्था के लिये राजस्व और पूंजीगत आय–व्यय का तथा योजना एवं गैर योजना व्यय का एक खाका तैयार करती है। इस आधार पर सरकार राज्य की वार्षिक वित्तीय विवरणी तैयार करती है और बजट प्रारूप सदन पटल पर रखती है।

आज इस बात पर विचार करने की जरूरत है कि जितना धन राज्य के खजाने में नाना प्रकार के स्रोतों से, विविध प्रयत्नों से आ रहा है उससे कहीं अधिक पूंजी इस राज्य से बाहर जा रही है। यह सिलसिला रूके तो राज्य की आय में वृद्धि होगी। इस राज्य की जनता के पास क्षमता है, हमारे पास मानव संसाधन है, भूमि संसाधन है, जल संसाधन है, खनिज संसाधन है, अन्य प्राकृतिक संसाधन है? हम एक संसाधन समृद्ध राज्य हैं। इनकी समुचित व्यवस्था करें, इनका योग्य प्रबंधन करें तो आज जितना खर्च हो रहा है योजना और विकास के मद में उससे कम–से–कम पांच गुणा खर्च करने की सामर्थ्य सरकार हासिल कर सकती है। तब हमारे यहां राज्य के विकास के काम के लिये पैसा कम नहीं पड़ेगा। आज राज्य के संसाधनों के

प्रबंधन की क्या स्थिति है ? जो खनिज संसाधन हमारा है उससे हमको जितनी आय होनी चाहिए थी क्या उतनी आय हो रही है? इस पर विचार होना चाहिये। इसका कोई विश्लेषण बजट दस्तावेजों में नहीं है।

चाहे केन्द्रीय सरकार के प्रतिष्ठान हों या निजी क्षेत्र के संस्थान हों, ये सभी बिहार राज्य की जमा पूंजी को राज्य से बाहर ले जा रहे हैं और इस कदम को रोकने में राज्य सरकार सक्षम नहीं हो पा रही है। चाहे स्टॉक ट्रान्सफर के आधार पर टिस्को, टेल्को एवं अन्य औद्योगिक इकाइयां ले जा रही हों या कोल इंडिया ले जा रहा हो या स्टील ऑथोरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड ले जा रहा हो, जो पैसा राज्य के राजस्व में बढ़ोतरी करता, जिससे राज्य के वित्त में मजबूती आती, वह पैसा बाहर चला जा रहा है और सरकार इसको रोकने में, उसे यहां लाने में, उसका सदुपयोग करने में सक्षम नहीं हो रही है। क्लैमिटी रिलीफ फंड, आपदा राहत कोष, जैसे कई अन्य अनुदान मदों से केन्द्रीय सहायता प्राप्त करने की कोई व्यवस्था राज्य के पास नहीं है। भारत के संविधान में कुछ विषय स्टेट लिस्ट में हैं, कुछ सेन्ट्रल लिस्ट में है, कुछ कंकरेन्ट लिस्ट में है, मगर प्राकृतिक आपदा किसी लिस्ट में नहीं है। केन्द्र सूची या राज्य सूची या समवर्ती सूची में यह कहीं नहीं है। हमारे यहां बाढ़ की समस्या है, सूखा की समस्या है, समय–समय पर भूकम्प आते रहते हैं। इसमें जितना अनुदान हमको मिलना चाहिए, जितना पैसा मिलना चाहिए, वह पैसा नहीं मिलता है। राज्य सरकार इसे प्राप्त करने लिए आवश्यक कदम नहीं उठाती है। इसका नतीजा है कि इस मद में अनुदान की राशि भी नहीं मिलती है और हर साल राज्य सरकार को भारी व्यय भी करना पड़ता है।

हमारे राज्य की प्रशासनिक मशीनरी कर एवं गैर कर राजस्व वसूलती है। इन करों का हमारे बजट में कितना हिस्सा है ? मुश्किल से 30 प्रतिशत हिस्सा है पूरे बजट में राज्य के कर और गैर कर राजस्व का। इसको हम कैसे बढ़ा सकते हैं, इस बारे में यह बजट दस्तावेज मौन है। आज हमारे बिहार राज्य का सकल घरेलू उत्पादन, जिसको जी.एस.डी.पी. कहते हैं कितना है? एक अनुमान के मुताबिक यह

55 हजार करोड़ रुपया से 60 हजार करोड़ रुपया के बीच है। हमारे सकल घरेलू उत्पादन में कृषि क्षेत्र एवं इसकी सहायक गतिविधियों का हिस्सा करीब आधा यानी 49 प्रतिशत के करीब है। खाद्यान्न एवं अन्य क्रय–विक्रय पर सेल्स टैक्स और बाजार टैक्स का हिसाब लगायें तो इस राज्य को सालाना कम–से–कम 2800 से 3000 करोड़ रुपए की आमदनी इस मद में होनी चाहिए थी। मगर इतना आमदनी नहीं हो रही है। यह आमदनी 1000 से 1500 करोड़ रुपये के बीच अटकी हुई है।

यहां जितनी पूंजी पैदा होनी चाहिए, उसके लिये भी सरकार कोई सार्थक प्रयास नहीं कर रही है। जो पैसा यहां से बाहर चला जा रहा है, उसको रोकने का प्रयास भी हम नहीं कर रहे हैं। सांस्थिक वित्त के माध्यम से जो पैसा हमारे यहां आना चाहिए, वह भी पर्याप्त नहीं आ रहा है। अनेकों वित्तीय संस्थाएं हैं, आई.सी.आई.सी.आई. है, एल.आई.सी. है, जी.आई.सी. है, यू.टी.आई है, अन्य राष्ट्रीयकृत बैंक हैं, आई.डी.बी.आई. और इस तरह की जो वित्तीय संस्थाएं बनी हुई हैं, वे अन्य राज्यों को और वहाँ वित्तीय संस्थाओं को मदद कर रही हैं। परन्तु बिहार राज्य की वित्तीय संस्थाओं की संरचना कमजोर एवं अक्षम होने के कारण, इनकी वित्तीय स्थिति और इनके प्रबंधन की स्थिति बदतर होने के कारण जो पैसा इस राज्य को इन वित्तीय संस्थाओं के माध्यम से आना चाहिए, वह नहीं आ रहा है। ये संस्थायें देशभर में जितना फंडिंग कर रही हैं, उसका अधिक से अधिक 2 प्रतिशत हमारे राज्य में उनका निवेश हो रहा है। जबकि हमारी जनसंख्या देश की कुल जनसंख्या का करीब 10 प्रतिशत है। आज यह स्थिति यहां है। इस राज्य के अपने प्रयास से जो होना चाहिये वह काम नहीं हो रहा है। निजी क्षेत्रों से संतोषजनक सहयोग नहीं प्राप्त हो रहा है। सांस्थिक वित्त के माध्यम से जो धन हमारे यहाँ आना चाहिए, वह नहीं आ रहा है। जो कॉमर्शियल बैंक हैं, उनको जितना पैसा यहाँ लगाना चाहिए, उतना नहीं लग रहा है। यदि हमारे राज्य की जनता बैंकों में अपना सौ रुपया पूंजी जमा करती है, तो मुश्किल से 27–28 रुपया पूंजी निवेश बैंकों के

द्वारा यहाँ होता है। फिर भी सरकार का कहना है कि हमारी वित्तीय स्थिति सुधरी है क्योंकि हमने कुशल वित्त प्रबंधन किया है।

कुछ समय पहले मैने हिसाब लगाया था तो मालूम हुआ कि 1990-93 के बीच तीन वर्षों में राज्य की जनता का राज्य के बैंकों में जितना पैसा जमा हुआ, उसमें से कम से कम 90 हजार करोड़ रुपया इस अवधि में राज्य से बाहर गया है। राज्य सरकार के सांस्थिक वित्त विभाग के प्रतिवेदन में दिये गये आंकड़ों से भी यह स्पष्ट होता है। 90 हजार करोड़ रुपया की यह विपुल धन राशि केवल तीन वर्षों में राज्य के बाहर चली गई। इससे हमारी कई पंचवर्षीय योजनाएं पूरी हो सकती थी। ध्यान रहे कि बिहार की आठवीं पंचवर्षीय योजना कुल 13 हजार करोड़ रुपये की तैयार की गई थी। ऐसी स्थिति में किस आधार पर यह सरकार कह रही है कि उसने अच्छा वित्तीय प्रबंधन किया है और कुशल वित्तीय प्रबंधन के माध्यम से इनके द्वारा प्रयास किया गया है कि राज्य की अर्थव्यवस्था की गाड़ी पटरी पर आ जाय और आगे बढ़े।

राज्य की अर्थव्यवस्था को, वित्तीय स्थिति को सुदृढ़ता प्रदान करने वाले, सामाजिक-आर्थिक विकास के जितने भी नियामक होते हैं, उनकी एक भी कसौटी पर यह सरकार खरा नहीं उतर रही है। पिछले 9-10 वर्षों से यह सिलसिला इसी तरह से चला आ रहा है। यह बताना चाहिए वित्त मंत्री महोदय को कि आखिर इसका क्या कारण है कि जितने भी नियामक हैं राज्य की वित्त व्यवस्था का स्वास्थ्य बताने वाले, वे सब के सब इस तरह से नीचे क्यों जा रहे हैं ? हमारी वित्तीय स्थिति इतनी दयनीय क्यों हो गयी है ? इसके बावजूद सत्तापक्ष से जो भी भाषण हो रहे हैं, जो भी वक्तव्य उनके द्वारा इस वाद-विवाद में दिए जा रहे हैं उससे ऐसा लगता है ये सब लोग सदन में बजट या राज्य की अर्थव्यवस्था पर विचार नहीं कर रहे हैं, बल्कि लालू प्रसाद को केन्द्र में रखकर लालू पुराण का पाठ कर रहे हैं।

महोदय, राज्य के वित्त विभाग के बारे में सरकार को गंभीर रुख अख्तियार करना चाहिए और वित्त विभाग के भीतर या वित्त विभाग के बाहर राजस्व संग्रह

करनेवाले विभागों पर लगाम कसी जानी चाहिये। सरकार का अपना राजस्व विभाग तो वास्तव में राजस्व विभाग नहीं रह कर केवल भूमि राजस्व और भूमि समस्याओं से संबंधित विभाग रह गया है। बोर्ड ऑफ रेवेन्यू की कोई सार्थक भूमिका नहीं रह गयी है। राज्य की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करना है तो एक तो जहां से भी राज्य का राजस्व आ रहा है, चाहे आंतरिक राजस्व हो या केन्द्र से प्राप्त राजस्व हो या विदेशी सहायता से मिलने वाला राजस्व हो, इन सब का समुचित प्रबंधन करने के लिए एक अलग विभाग सरकार में होना चाहिए। विभाग के बाहर हो या भीतर हो, इसका निर्णय सरकार को करना चाहिए और दूसरे, हमारे राज्य के ऊपर कर्ज का बोझ इतना बढ़ गया है कि राज्य की 20 से 21 प्रतिशत आमदनी इस कर्ज का सूद और मूलधन का किशत चुकाने में खर्च हो जा रही है। इसके प्रबंधन के बारे में भी राज्य सरकार को तत्परता पूर्वक सोच विचार करना चाहिए।

अगर वित्त मंत्री जी को ठीक लगे तो एक सर्वदलीय प्रतिनिधिमंडल जाना चाहिए केंद्र सरकार के पास यह बताने और जानने के लिये कि पिछले कई वर्षों से बिहार पर निरंतर बढ़ता जा रहा कर्ज का बोझ कैसे कम किया जा सकता है। जब देश आजाद हुआ था उस समय बिहार पर मात्र 5 करोड़ रुपया कर्ज था। यह कर्ज आज बढ़कर 25 हजार करोड़ रुपया हो गया है। 21वीं सदी में हम जायेंगे एक वर्ष बाद तो कर्ज का यह भारी बोझ लेकर जायेंगे। कर्ज के इस भारी बोझ से हम तब तक निजात नहीं पा सकेंगे जब तक हम राज्य के अंतिरिक राजस्व को वर्षानुवर्ष बढ़ाते जाने की दिशा में कोई ठोस उपाय नहीं करेंगे अथवा केन्द्र सरकार कर्ज के बोझ को माफ नहीं करेगी। कुछ दिन पहले प्रधानमंत्री श्री इन्द्र कुमार गुजराल ने 8 हजार करोड़ रुपया का पंजाब का कर्ज माफ किया है। इस बारे में सदन में चर्चा हो चुकी है। इसलिए मैं पुनः उसे दुहराना नहीं चाहता हूँ। बिहार से राज्य सभा में चुने जाने वाले प्रधानमंत्री जी अगर पंजाब के बारे में यह निर्णय ले सकते हैं तो बिहार के बारे में क्यों नहीं ? इसका स्पष्टीकरण देना चाहिए उन लोगों को जो लोग यह कह रहे हैं कि हमारा इस प्रधानमंत्री पर प्रत्यक्ष-परोक्ष अंकुश है या इस प्रधानमंत्री को बनाने में हमारा महत्वपूर्ण योगदान है। उन्हें इस पर सोचना चाहिये। परंतु, इस सरकार ने

या इस सरकार का रहनुमा कहे जाने वाले उस व्यक्ति विशेष ने इस बारे में नहीं सोचा, इसके लिये केन्द्र पर दबाव नहीं डाला कि पंजाब के लिए कर्ज माफी का जो निर्णय हो सकता है, वह बिहार के लिए क्यों नहीं हो सकता है । इसलिए मैं अपने सत्ता पक्ष के मित्रों से भी आग्रह करना चाहूंगा कि राज्य की वित्त व्यवस्था के मामले में स्पष्ट बातें की जानी चाहिए। वस्तु स्थिति को स्वीकार किया जाना चाहिए और प्रयास करना चाहिए कि परिवर्तन की जो प्रक्रिया राज्य को आगे ले जाने के लिए तय हो, हमें उसके रथ का सारथी बनना चाहिए, हमको किसी पालकी का कहार नहीं बनना चाहिए, चाहे वह पालकी देशी हो या विदेशी हो ।

□ 26 अप्रील 1999
बिहार विधान परिषद्

•••

लचर वित्तीय व्यवस्था के संकेतक

माननीय मंत्री जी ने 1999–2000 का प्रथम अनुपूरक बजट रखते समय सदन को सूचित किया है कि केन्द्र सरकार ने राज्य को दिये जाने वाले अनुदानों एवं सहायता की घोषणा समय पर नहीं की, इसलिये उन्हें सदन में अनुपूरक व्यय विवरणी रखना पड़ रहा है। माननीय मंत्री जी के कथन का आशय है कि केन्द्रीय एवं केन्द्र प्रायोजित कार्यक्रमों के लिए केन्द्र सरकार द्वारा जो धन मुहैया कराया जाना था, उसकी घोषणा उस समय तक नहीं की गयी जब राज्य सरकार का वार्षिक बजट तैयार किया जा रहा था । यह पूर्णतः अथवा अंशतः सही हो सकता है, परन्तु सदन में अनुपूरक व्यय विवरणी लाने का यही एकमेव आधार नहीं हो सकता है। सदन के समक्ष अनुपूरक व्यय विवरणी रखा जाना तो एक संवैधानिक वित्तीय प्रक्रिया है। सबसे पहले तो मैं यह जानना चाहूंगा कि बिहार सरकार ने बजट तैयार करने के पहले अपनी वार्षिक योजना में केन्द्रीय सहायता एवं अनुदान का अंश निर्धारित करने के बारे में केन्द्र सरकार से आवश्यक विमर्श किया था या नहीं किया था ? ऐसी क्या मजबूरी थी कि राज्य सरकार ने भारत सरकार के योजना आयोग से विमर्श कर समय पर वार्षिक योजना को अंतिम रूप देने का काम नहीं किया। (व्यवधान)

भोलाप्रसाद सिंह : महोदय, मेरा प्रश्न व्यवस्था का है। एक बहुत ही गंभीर बात माननीय सदस्य सरयू राय जी कह रहे हैं । क्या प्रांतीय सरकार जब बजट बनायेगी तो केन्द्र की राय से बनायेगी ? तो जो स्वायतता की बात है, फेडरल स्ट्रक्चर की बात है, वह कहां रहेगी ? इनके दिमाग में जो इनका दल है, जो यूनिटरी कंसेप्ट है कि देश में यूनिटरी कंसेप्ट लाया जाये, वह बोल रहा है। हुजूर, ऐसी खतरनाक बात नहीं बोलनी चाहिये । महोदय, केन्द्रीय सरकार से पूछ कर बजट बनायेंगे, मेरा प्वायंट ऑफ ऑर्डर यही है कि इनकी बात को प्रोसीडिंग से निकाल दिया जाये । इस सदन में यह बात नहीं कही जा सकती है। इसको डिलिट कर दिया जाय ।

सरयू राय : महोदय, माननीय भोला बाबू की व्यवस्था के प्रश्न से मेरा भी और सदन का भी कौतुहलपूर्ण ज्ञानवर्द्धन हुआ है । भोला बाबू सदन के वरीय सदस्य हैं, इसलिये शायद वे यह भी जानते होंगे कि जब भी राज्य की योजना को अंतिम रूप

दिया जाता है तो केन्द्रीय सहायता एवं अनुदान के बारे में, लोक ऋण के बारे में, वित्तीय संस्थाओं द्वारा राज्य में किये जाने वाले निवेश के बारे में, अल्प बचत एवं भविष्य निधि से ऋण एवं विशेष सहायता आदि के बारे में विमर्श कर उसको अंतिम रूप देने के लिए एक बार भारत सरकार के योजना आयोग से विस्तृत बातचीत होती है और योजना आयोग से बातचीत के बाद ही राज्य की वार्षिक या पंचवार्षिक योजना को अंतिम रूप दिया जाता है। मैं इस संदर्भ में ही माननीय मंत्री से प्रासंगिक सवाल पूछना चाहता हूँ कि अगर केन्द्र ने समय पर सहायता अनुदान की घोषणा नहीं की तो मूल बजट में किस आधार पर इस स्रोत से अनुमानित आय के आंकड़े दर्ज किये गये हैं ?

अनुपूरक व्यय विवरणी की पुस्तिका माननीय मंत्री महोदय ने सदन में रखा है। इसमें अनुपूरक व्यय विवरण दो भाग में दिया हुआ है। इसका एक खंड ऐसा है जिसमें उन्होंने वैसी नई मांगों के लिये निधि की मांग की है जिनके लिये वार्षिक बजट में आवंटन नहीं था। ये विशुद्ध नई योजनायें हैं। इनका व्यय प्रावधान वार्षिक बजट में नहीं था। दूसरे खंड में उन्होंने वैसा व्यय विवरण अंकित किया है, जिसको सरकार ने राज्य की आकस्मिकता निधि से अग्रिम लेकर पहले ही व्यय कर दिया है और इस व्यय की परिपूर्ति के लिये सदन की अनुमति चाहती है। व्यय विवरणी देखने से प्रतीत होता है कि राज्य आकस्मिकता निधि से इस बीच करीब 213 करोड़ रुपया व्यय हो गया है। सदन की सहमति मिलते ही यह व्यय समेकित निधि में स्थानान्तरित हो जायेगा और समेकित निधि से होने वाले व्यय का आकार उतना से बढ़ जायेगा। यह बढ़ा हुआ व्यय कहां से आयेगा ? इसके लिये सरकार अतिरिक्त संसाधन जुटायेगी या बजट में कटौती करेगी या इससे बजट घाटा बढ़ेगा ? सरकार को यह स्पष्ट करना चाहिये।

अनुपूरक बजट के दोनों ही खंडों में विभिन्न प्रकार के आंकड़े दिये गये हैं। जैसा कि मंत्री जी ने कहा कि कई प्रावधानों को इसमें रखने के लिए केन्द्र सरकार ने मंजूरी दी है। मैं यह बताना चाहता हूँ कि अनुपूरक व्यय-विवरणी के पहले खंड में गैर योजना मद में 339 करोड़ 63 लाख रुपये खर्च करने की मांग इन्होंने की है। यह सारा व्यय गैर योजना मद का है। केंद्रीय योजनागत योजना है उसमें केवल 45

करोड़ रुपया व्यय की मांग की गयी है। केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजना मद में 228 करोड़ रुपया व्यय रखा गया है। दूसरे खंड में जो व्यय विवरण दिखाया गया है उसके अनुसार भी 210 करोड़ 57 लाख रुपया गैर योजना मद के लिए निर्धारित हुआ है।

महोदय, आकस्मिकता निधि में से अग्रिम लेकर 210 करोड़ 57 लाख रुपया सरकार ने गैर योजना मद में व्यय किया है। इसमें से केंद्रीय योजनागत योजना में केवल ढाई लाख रुपए व्यय हुए हैं और केन्द्र प्रायोजित योजना में तो शून्य व्यय हुआ है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि मंत्री महोदय का यह कथन सत्य नहीं है कि केन्द्र सरकार सुनिश्चित रोजगार योजना या जवाहर रोजगार योजना या अन्य केंद्र प्रायोजित योजनाओं के लिए कितना धन मुहैया करायेगी, इसकी सूचना समय पर प्राप्त नहीं होने के कारण उनको यह अनुपूरक व्यय विवरणी सदन के सामने रखना पड़ा है।

वस्तुतः ऐसा इस कारण हुआ है कि बजट बनाते समय वित विभाग द्वारा पूरा अभ्यास नहीं किया गया कि योजना एवं गैर योजना मद में साल भर की हमारी क्या आवश्यकताएँ हो सकती हैं। इस वित्तीय वर्ष में निर्वाचन होना है। लोकसभा के चुनाव नहीं होते तो भी विधानसभा के चुनाव तो होते ही। इन निर्वाचनों में कितना व्यय होगा, इसका एक अनुमान वार्षिक बजट में रखा जाना चाहिए था। ऐसा हुआ होता तो इस अनुपूरक व्यय विवरणी में निर्वाचन मद का ऐसा व्यय शामिल नहीं होता। यह व्यय आकस्मिकता निधि से करने की नौबत नहीं आती। इसे सीधे वार्षिक बजट से प्रावधान के अनुरूप ले लिया गया होता। मैं स्मरण दिलाना चाहता हूँ कि मंत्री महोदय ने सदन के सामने दो महीना पहले चालू वित्तीय वर्ष 1999-2000 के लिये वार्षिक बजट रखा था। उसमें कुल व्यय करीब 15,308 करोड़ रुपया का था। वार्षिक आय-व्ययक में 1700 करोड़ रुपया के आसपास लोक लेखा से लेने के बाद भी इस बजट में करीब 241 करोड़ रुपया का घाटा रह गया था। अभी जो अनुपूरक बजट रखा गया है, 1318 करोड़ 69 लाख रुपये का, इससे बजट घाटा और भी बढ़ जाएगा। इसके बाद बजट घाटा 1600 करोड़ रुपया से अधिक हो जायेगा। यह हाल जब साल के आरंभ में है तो साल बीतते-बीतते

यह घाटा कितना होगा, इसका अनुमान भी लगाया जाना चाहिए । क्योंकि अभी द्वितीय और तृतीय अनुपूरक सदन में रखे जाने की संभावना आगे बनी हुई है।

एसी लचर वित्तीय व्यवस्था होने, ऐसा कुप्रबंध होने के बाद भी मंत्री महोदय बजट भाषण में कहते हैं कि वे राज्य की वित्तीय व्यवस्था को पटरी पर लायेंगे। अभी हाल ही में सी.ए.जी. की रिपोर्ट सदन के सामने रखी गयी है इस रिपोर्ट से स्पष्ट हो जाता है कि यहां की वित्तीय व्यवस्था कितनी लचर है, कितनी खामियाँ हैं इसमें । वित्तीय प्रबंधन का जो तरीका होना चाहिए, योजना और बजट तैयार करने के बारे में जो नियम हैं, जो परम्परायें हैं उनका सही ढंग से पालन नहीं किया जाता है । राज्य का योजना बोर्ड मृतप्राय है । यह बोर्ड अफसरों के लिए कालापानी बना हुआ है । बोर्ड के बदले जब योजना विभाग ही राज्य के लिये योजना प्रारूप तैयार कर देगा और इसमें योजना बोर्ड के विशेषज्ञों की राय नहीं ली जायेगी तो निश्चित रूप से योजना समय पर नहीं बनेगी और ऐसी योजना में खामियां रहेंगी । ऐसी योजनाएं वास्तविकता से दूर रहेंगी ।

मंत्री महोदय को यह भी बताना चाहिए कि बजट का घाटा अगर 1600 करोड़ रुपया से अधिक हो जायेगा तो इसकी भरपाई कहां से होगी? जब भी सरकार सदन के समक्ष अनुपूरक बजट रखती है तो उसमें इस बारे में जिक्र नहीं होता कि इसके लिये धन कहाँ से आयेगा ? बजट के समय तो सरकार सदन को बताती है कि हमारी प्राप्तियां कितनी होंगी और शेष जो हमारा घाटा है उसको हम किस तरह से पूरा करेंगे । अगर अनुपूरक बजट के कारण हमारा घाटा बढ़ रहा है, समेकित निधि पर बोझ बढ़ रहा है तो उसकी परिपूर्ति कहां से होगी, यह बताए बिना इसको स्वीकृत करना सदन के लिए उचित नहीं होगा। इसलिये मेरा अनुरोध है कि सदन अनुपूरक व्यय विवरण की मांगों को खारिज करे और सरकार को ऐसे व्यय करने की अनुमति नहीं दे ।

□ 5 अगस्त 1999
बिहार विधान परिषद

•••

सरकार बदलिये बिहार बदलेगा

वित्तीय वर्ष 2000–2001 का आय–व्ययक राज्य सरकार द्वारा सदन के सामने रखा गया है । हम सभी जानते हैं कि किसी राज्य का आय–व्ययक केवल निर्जीव आंकड़ों की फेहरिश्त नहीं होता है । ऐसा नहीं होता है कि कौन विभाग कितना खर्च करेगा, किस विभाग के लिए कितना आवंटन जरूरी है, इसको केवल अंकगणित के आधार पर तय करके बजट बना दिया जाये और आंकड़ों का यह पुलिंदा स्वीकृति की औपचारिकता पूरा करने के लिये विधान मंडल में पेश कर दिया जाय । बल्कि सरकार का जो आय–व्ययक होता है वह सरकार की नीतियों का दर्पण भी होता है । मोटा–मोटी कहा जाय तो सरकार की अपनी नीतियों की जो कसौटी होती है आय–व्ययक का वही आधार होता है । यह सरकार की प्राथमिकताओं को परिलक्षित करता है ।

अगर सरकार ने किसी खास मद में कोई खास व्यय निर्धारित किया है तो उसका उद्देश्य क्या है, उतना ही आवंटन क्यों किया गया है, उससे अधिक या कम क्यों नहीं किया गया, सरकार ने कोई कार्यक्रम तय किया है तो उन कार्यक्रमों की पृष्ठभूमि क्या है, उनका उद्देश्य क्या है । वे कार्यक्रम ठीक से लागू हों इसके लिये अर्थ की आवश्यकता कितनी है और कार्यक्रम पूरा हो जाने के बाद राज्य को और राज्य की जनता को इससे क्या लाभ होगा ।

हम इस कसौटी पर इस आय–व्ययक को कसने की कोशिश करें और यह देखने की कोशिश करें कि सरकार इस बजट के माध्यम से राज्य की जनता को क्या संदेश देना चाहती है । आज जो हमारी आर्थिक अवस्था है, विकास की जो हमारी स्थिति है, वह स्थिति इस आय–व्ययक के प्रावधानों के लागू हो जाने के बाद कैसी रहेगी, उसमें कितना सुधार होगा या वह इससे भी खराब होगी? यह भी एक कसौटी हो सकती है इस आय–व्ययक को परखने की ।

आज ही इस सदन में एक सवाल के जवाब में सरकार ने स्वीकार किया है कि हमारे यहां रोजगार वृद्धि की दर पहले से कम हो गयी है । राष्ट्रीय स्तर की तो छोड़

दें, कई राज्यों ने रोजगार में वृद्धि की जो दर हासिल की है इस पंचवर्षीय योजना में, उसके आधा से भी कम बिहार में रोजगार वृद्धि की दर हो गयी है। इसे खुद सरकार ने आज ही इस सदन में स्वीकार किया है। आखिर इसका क्या कारण है ? क्यों रोजगार की दर में तेज वृद्धि नहीं हो पा रही है ? क्यों यहां का विकास तेजी से नहीं हो रहा है? क्यों हम पीछे की ओर जा रहे हैं ? ये और ऐसे ही अन्य कई सवाल जुड़े हैं इस आय-व्ययक से।

तीन साल पहले बिहार की आठवीं पंचवर्षीय योजना का कार्यकाल पूरा हुआ है। उस पंचवर्षीय योजना में सरकार को करीब 13 हजार करोड़ रुपया खर्च करना था। सरकार कहती है हमने केवल 11 हजार करोड़ रुपया खर्च किया है। मेरा अनुमान इससे भी कम है। आठवीं पंचवर्षीय योजना में व्यय का वास्तविक आंकड़ा करीब 9 हजार करोड़ रुपया है। इस योजना का 61 प्रतिशत हिस्सा केन्द्र की सहायता पर आधारित था। केवल 39 प्रतिशत हिस्सा ही आठवीं पंचवर्षीय योजना में बिहार सरकार को अपने साधनस्रोत से खर्च करना था। बिहार सरकार वह खर्च भी नहीं जुटा सकी। 61 प्रतिशत के हिसाब से जितनी राशि केन्द्रीय सहायता के रूप में मिली उतनी राशि भी यानी केन्द्रीय सहायता के बराबर राशि भी, इस सरकार ने आठवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत विकास के काम पर खर्च नहीं किया। खर्च किया केवल कुल योजना उद्व्यय का 32 प्रतिशत। 61 प्रतिशत सहायता केन्द्र की और खर्च केवल 32 प्रतिशत। इसका मतलब है कि यह सरकार अपने लिये अतिरिक्त संसाधन तो नहीं ही जुटा पाती है केन्द्र की ओर से जो संसाधन सहायता अनुदान आदि के रूप में मिलता है उस संसाधन का भी पूरा उपयोग नहीं कर पाती है। आज यह वस्तुस्थिति है बिहार सरकार की।

वर्तमान नौवीं पंचवर्षीय योजना राज्य सरकार ने 16,668 करोड़ रुपये का निर्धारित किया है। 1997 से 2002 के बीच के पांच वर्षों में 16,668 करोड़ रुपये सरकार योजना मद में व्यय करेगी। विकास के कार्यों पर, योजना मद के कार्यों पर करेगी। इसमें भी 61 प्रतिशत हिस्सा केन्द्र सरकार से मिलने वाला है। इस पंचवर्षीय योजना अवधि के तीन वर्ष बीत गये पर इसकी मध्यवर्ती समीक्षा नहीं हुई

है। आज यह आकलन करने की जरूरत है सरकार को भी और इस सदन को भी कि बिहार की इस नौवीं पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य कितना रखा गया था और आरम्भ के तीन वर्ष में लक्ष्य की ओर हम कहाँ तक पहुंचे हैं। ये तीन वर्ष हमको विकास की दिशा में कहां तक ले गये हैं। पिछले तीन वर्षों में हुये व्यय के आंकड़ों पर गौर करने पर तथ्य सामने आता है कि वर्ष 1997-98 के लिए 2268 करोड़ रुपया योजना एवं विकास मद में व्यय करने का लक्ष्य सरकार ने रखा था। उसमें से केवल 17 सौ करोड़ रुपये ही खर्च हुए हैं। 1998-99 में योजना एवं विकास कार्यों के लिए 3768 करोड़ रुपये का वार्षिक बजट रखा गया था। इस सदन में ही योजना विभाग की उपलब्धियों पर बहस का उत्तर देते हुये माननीय मंत्री महोदय ने कहा था कि ये बहुत बड़ी उपलब्धि हमारी है कि कहां हम साल में 1600 करोड़, 1700 करोड़, 1500 करोड़ रुपया भी नहीं खर्च कर पाते थे और इस बार हमने वार्षिक योजना व्यय का जो बजट रखा है वह 3768 करोड़ रुपये का है। यह योजना व्यय ऊपर की ओर परिलक्षित हो रहा है, भारी वृद्धि हो रही है योजना व्यय में। आम तौर पर इस राज्य में यह होता रहा है कि योजना मद के खर्च का जब पुनरीक्षण होता है तो पता चलता है कि वास्तविक खर्च मूल आवंटन से काफी कम हुआ है। मंत्री महोदय ने बजट रखते वक्त सदन में जब यह कहा था, तो हमलोगों को भी संतोष हुआ था कि शायद बिहार के विकास की गाड़ी फिर से आगे की ओर बढ़ने वाली है। इसलिए कि मंत्री महोदय ने वार्षिक योजना व्यय को ऊपर की तरफ संशोधित किया हुआ बताया था। उन्होंने यह भी कहा था कि जब पुनरीक्षण होगा तो यह योजना व्यय 4000 करोड़ रुपया से कम नहीं होगा। यह इसी सदन में कही गई बात है। परन्तु असल में हुआ क्या ? वर्ष 1998-99 का जो योजना व्यय 3768 करोड़ रुपया का, वह उपर की ओर 4000 करोड़ रुपया तक जाने की बजाय घटकर 1800 करोड़ रुपये पर आ गया। इसी तरह से 1999-2000 के लिये 3630 करोड़ रुपये का योजना व्यय तय किया गया था और आज ही अखबार में छपा है कि इस वर्ष योजना एवं विकास मद में 1200 करोड़ रुपये से अधिक व्यय नहीं हो पायेगा।

वस्तुस्थिति यह है कि योजना बनाते समय सरकार जो प्राथमिकतायें तय

करती है और उन प्राथमिकताओं को पूरा करने के लिए अतिरिक्त संसाधन का जो लक्ष्य निर्धारित करती है वह लक्ष्य पूरा नहीं कर पाती है। लगता है कि सरकार का कोई सम्यक आर्थिक दृष्टिकोण नहीं है, विकास के बारे में कोई स्पष्ट नीति नहीं है। इससे यही साबित होता है और यही कारण है कि आज राज्य में रोजगार वृद्धि की दर घट रही है। रोजगार जहां तेजी से बढ़ना चाहिए वहां रोजगार वृद्धि की दर हमारे राज्य में घट रही है और कई सालों से विशेष कर 1990 से आज तक देखा जाए तो इधर के कई वर्षों में राज्य की विकास दर भी ऋणात्मक दिशा में गयी है। यह कहने में मुझे कोई संकोच नहीं है कि विकास की वह ऋणात्मक दिशा वित्तीय प्रबंधन के प्रति राज्य सरकार की आपराधिक लापरवाही का नतीजा है। वित्तीय मामलों में जैसा अनुशासन होना चाहिये, वह नहीं है, जो वित्तीय अराजकता व्याप्त है वह समाप्त होनी चाहिए, पर नहीं हो पा रही है। बल्कि वह अराजकता दिन पर दिन बढ़ती ही जा रही है, घनीभूत होती जा रही है।

1999-2000 का वित्तीय वर्ष शुरू हुआ तो कहा गया था, बजट पेश करते समय सरकार द्वारा इस सदन में ही कहा गया था कि इस वित्तीय वर्ष की शुरुआत सरप्लस से हो रही है। हमारा जो ओपनिंग बैलेंस है, जो हमारा अर्थशेष है वह 129 करोड़ रुपये धनात्मक है। इसके बारे में भी माननीय मंत्री महोदय द्वारा उस समय बड़े ही घमंड पूर्वक उल्लेख किया गया था। हमलोगों को भी संतोष हुआ था कि शायद अब हम विकास की दिशा में आगे की ओर चलेंगे। इस वर्ष मार्च में बजट रखते समय सरकार द्वारा सदन में यह भी कहा गया था कि जब वित्तीय वर्ष 1999-2000 समाप्त होगा तो राज्य के पास 92 करोड़ रुपये का सरप्लस बचेगा। यानी हमारा क्लोजिंग बैलेंस निगेटिव नहीं होगा, हमारा इतिशेष भी धनात्मक होगा। मगर इस बारे में आज वस्तु स्थिति क्या है सरकार को स्पष्ट करना चाहिए। जहाँ तक मेरी जानकारी है उसके मुताबिक 768 करोड़ रुपया माइनस में पिछले साल का हमारा क्लोजिंग बैलेंस है। यानी वर्तमान वित्तीय वर्ष के आरम्भ में जब हम अर्थव्यवस्था की शुरूआत कर रहे हैं तो वह शुरूआत 768 करोड़ रुपये के शुद्ध घाटा से कर रहे हैं। ये घाटा कैसे पूरा होगा? घाटा की यह राशि, बीते वित्तीय वर्ष

की इति शेष को क्लोजिंग बैलेंस को ऋणात्मक दर्शाने वाली यह राशि कहां खर्च हुई है, किस मद में खर्च हुई है ? क्या इसके लिए ओवर ड्राफ्ट लिया गया? सरकार को अपना जवाब देते समय यह स्पष्ट करना चाहिए, बताना चाहिए। (व्यवधान)

महोदय, राज्य के सिविल डिपोजिट में 2500 करोड़ रुपये जमा थे। ये 2500 करोड़ रुपये इस वर्ष निकाल कर खर्च कर दिये गये हैं। सिविल डिपोजिट में रखा हुआ पैसा खर्च होता है, तो माना जाता है कि पीछे के पेन्डिंग काम पूरा हो रहे हैं। परन्तु जब हमारा बैलेंस निगेटिव में जाता है, तो लगता है कि सरकार की नीतियों में विरोधाभास है और सिविल डिपोजिट में रखे हुए जो पैसे खर्च हो रहे हैं, वे पैसे कोई विकास के काम में नहीं बल्कि गैर विकास के काम में खर्च हो रहे हैं।

जिस समय राज्य की नौवीं पंचवर्षीय योजना तैयार हो रही थी उस समय सरकार द्वारा कहा गया था कि बिहार की सरकार ने योजना आयोग के साथ बात करते समय बता दिया है कि अभी जितना हमारा वर्तमान खाद्यान्न उत्पादन है, यानी 1996-97 के वर्ष में खाद्यान्न का जितना हमारा उत्पादन है, हम इन पांच वर्षों में इस उत्पादन को दोगुना करेंगे। यह सरकार ने कहा था, रेकर्ड पर है। उस समय यानी वर्ष 1996-97 में राज्य में 165 लाख टन खाद्यान्न का उत्पादन हुआ था और राज्य सरकार ने कहा था कि जब 2002 में नौवीं पंचवर्षीय योजना का कार्यकाल पूरा होगा, तो हमारे यहां खाद्यान्न का उत्पादन 300 लाख टन पर पहुंच जायेगा। उसको यहाँ तक पहुंचाने के लिए क्या करना होगा, यह भी सरकार ने कहा था। सरकार ने कहा था कि अभी जो हमारी उत्पादकता है प्रति हेक्टेयर खाद्यान्न की वह 2423 किलोग्राम है। हम 2002 तक इसको बढ़ायेंगे और बढ़ाकर 3000 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तक ले जायेंगे। यही नहीं, हम अतिरिक्त जमीन पर खेती करेंगे। आज जो खेती का दायरा है, हम उस दायरा को बढ़ायेंगे। इस तरह से हम खाद्यान्न का अधिक उत्पादन करेंगे। इस आधार पर नौवीं पंचवर्षीय योजना के लिये योजना व्यय का आवंटन हुआ था। इसी आधार पर केन्द्र से सहायता मिली थी। परन्तु आज सदन में सरकार के कृषि विभाग का जो वक्तव्य आया है उसमें कहा गया है कि तीन वर्षों में हम 184 लाख टन खाद्यान्न उत्पादन पर ही पहुंचे हैं। ऐसी स्थिति में यह

300 लाख टन खाद्यान्न उत्पादन का लक्ष्य कैसे पूरा होगा यह भी सरकार को सदन में बताना चाहिए ।

आज नकली खाद के, नकली बीज के, अनेक मामले सामने आ रहे हैं। यहां तक कि भारत सरकार के दो–एक उपक्रम हैं उनका भी जो उत्पाद बिहार में किसानों के बीच बंट रहा है, वह घटिया पाया गया है । नेशनल फर्टिलाइजर लिमिटेड का, इंडियन पोटाश लिमिटेड का और कुछ मल्टीनेशनल कम्पनियां हैं, हिन्दुस्तान लीवर लिमिटेड जैसी बहुराष्ट्रीय कंपनियां हैं वे भी जो उर्वरक बेच रही हैं, बिहार में, वे उर्वरक भी अमानक पाये गये हैं । मेरे पास इसकी रिपोर्ट है कि घटिया उर्वरक बिहार में बिक रहे हैं और बहुराष्ट्रीय कंपनियों का यह कहना है कि बिहार की जो स्थिति है उसमें हमको अपने उत्पादन को अमानक बनाना पड़ता है क्योंकि और कई ऐसे अवैधानिक सत्ता केन्द्र हैं, लोग हैं, जहां हमको अपने मुनाफे में हिस्सेदारी करनी पड़ती है । (व्यवधान)

आज हम देखें, पूरा उत्तर बिहार के इलाके का मात्र पिछले तीन वर्ष का नहीं बल्कि हम पांच, छः, सात वर्षों का अध्ययन करें, तो पता चलता है कि उत्तर बिहार में बाढ़ के समय अधिकांश इलाका पानी से भरा रहता है । जिस समय में लोग सड़कों पर चल नहीं सकते हैं, पूरा इलाका डूबा हुआ रहता है, प्रखंडों में उस समय उर्वरक पहुंचाये गये हैं। यह आपूर्ति भारी वाहनों से उन्हीं प्रखंडों में हुई है जो प्रखंड पूरी तरह बाढ़ से घिरे हुए रहे हैं । जो उर्वरक बिहार में आते हैं, बिहार के लिये आवंटित होते हैं, उनका आधा से अधिक हिस्सा उत्तर बिहार के उन प्रखंडों में चला जाता है, जो नेपाल की सीमा से सटे हुए हैं। इस संबंध में मुकदमें भी दर्ज हुए हैं। एक एफ. आई. आर. पटना के मालसलामी थाना में भी दर्ज हुआ है। दो साल पहले हुआ है । मोतिहारी में भी दर्ज हुआ है । रक्सौल में भी दर्ज हुआ है । साफ है कि हमारे यहां का उर्वरक चला जाता है नेपाल और उसके बदले उर्वरक उद्योगों को बिहार के नाम पर भारत की सरकार सब्सिडी देती है। कृषि विभाग को इसके बारे में सचेत होना चाहिए । अगर यह नहीं हुआ तो हम खाद्यान्न उत्पादन का लक्ष्य प्राप्त करने में सफल नहीं हो सकते हैं ।

राज्य में सिंचाई की स्थिति के बारे में तत्कालीन सिंचाई मंत्री ने सदन में 1990 में कहा था कि अब 27.15 लाख हेक्टेयर भूमि में बड़ी और मध्यम परियोजनाओं से हम सिंचाई देने में कामयाब हुए हैं। उसी समय लघु सिंचाई मंत्री ने कहा था कि हमारे राज्य में लघु सिंचाई योजनाओं द्वारा करीब 42–43 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में सिंचाई सुविधा की व्यवस्था हो गयी है । परन्तु आज लघु सिंचाई विभाग की भी और वृहद् एवं मध्यम सिंचाई विभाग की भी, इन दोनों विभागों की, पोल खुल गयी है । वास्तव में ये विभाग कितना क्षेत्र सिंचित कर रहे हैं? महत्वपूर्ण यह बात नहीं है कि हमने कितनी सिंचाई क्षमता का सृजन किया है । सवाल यह है कि पिछले 10 वर्षों में सिंचाई क्षमता के सृजन में वृद्धि कितनी हुई है। कितनी ? तो केवल 1 लाख हेक्टेयर की । अभी 58 लाख हेक्टेयर में सिंचाई सुविधा सृजित करना बाकी है । बड़ी, मध्यम और लघु श्रेणी की योजनाओं द्वारा पूरी सिंचाई क्षमता का सृजन करने में कितना समय लगेगा, इसे हम कैसे कर पायेंगे और इस आलोक में हमारे खाद्यान्न उत्पादन का लक्ष्य पूरा होगा या नहीं। यह बताने में सरकार समर्थ नही है । आज ही के अखबारों में रिपोर्ट है । सरकार ने भी स्वीकार किया है कि ट्यूबवेल परियोजना की स्थिति बदतर है । इस बारे में सदन में सरकार के मंत्रीगण की तरफ से आधिकारिक वक्तव्य आ रहा है । ऐसी स्थिति में खाद्यान्न का उत्पादन 300 लाख टन तक पहुंचाने का लक्ष्य कब पूरा होगा, पूरा होगा या नहीं, यह बात आसानी से समझी जा सकती है। सरकार को इस बारे में सदन के समक्ष एक स्पष्ट व्यक्तव्य देना चाहिये ।

हर बार सरकार की ओर से यह बात उठाई जाती है कि केन्द्र की सरकार केन्द्रीय मदों में सहायता कम कर देती है, कटौती कर देती है। अभी मेरे पास एक आधिकारिक दस्तावेज केन्द्र सरकार का है । बिहार सरकार ने भी इसे छापा है । कृषि विभाग की कई परियोजनाओं का जिक्र है इसमें । नेशनल वाटरशेड डेवलपमेंट पर केन्द्र से कितना धन मिला, राज्य सरकार ने कितना खर्च किया। प्लास्टिक का उपयोग कृषि क्षेत्र में करना है, इसके मद में केन्द्र से कितना धन मिला, राज्य सरकार ने कितना खर्च किया । फल–फूल, सब्जी पैदा करने वाले कार्यक्रमों के लिए केन्द्र

सरकार से कितना पैसा मिला और इसमें से कितना पैसा राज्य सरकार द्वारा खर्च हुआ, इसका आंकड़ा मैं सदन के सामने रख देना चाहता हूँ ताकि इन सारी योजनाओं में जितना धन केन्द्र से मिला और उसमें से कितना राज्य सरकार द्वारा खर्च हुआ इसका पर्दाफाश हो सके। कटु सच्चाई यह है कि इन मदों में केन्द्र सरकार ने जितना धन दिया, वह पूरा का पूरा बिना खर्च हुये रह गया, वापस लौट गया, सरेन्डर हो गया।

इसके अलावा इस सरकार की जो प्राथमिकतायें हैं उनके बारे में भी हम थोड़ी बात करें। सरकार की एक प्राथमिकता है गरीबी उन्मूलन की। इसके लिए भी सारा का सारा पैसा नहीं तो भी अधिकांश पैसा केन्द्र सरकार देती है। अब गरीबी हटाने के लिए गरीबी उन्मूलन की जो योजनायें हैं, उन योजनाओं की क्या स्थिति है। हमारे सामने सबसे बड़ी योजना है आई. आर. डी. पी. की। उसमें हम देखते हैं कि 1997-98 में केन्द्र से 84 करोड़ रुपया मिला, खर्च केवल 34 करोड़ रुपया हुआ। 98-99 में केन्द्र से मिला 127 करोड़ रुपया और खर्च हुआ मात्र 61 करोड़। इन दो वर्षों में गरीबी उन्मूलन की योजनाओं में 211 करोड़ रुपया केन्द्र से मिला और कुल मिलाकर मात्र 95 करोड़ रुपया ही खर्च हुआ। इस पर भी राज्य सरकार कहते नहीं थकती है कि यह सरकार गरीबों की विशेष चिंता करती है।

उसी तरह जवाहर रोजगार योजना में केन्द्र से 99 करोड़ रुपया मिला था, इसमें से 86 करोड़ रुपया खर्च नहीं हुआ। केन्द्रीय सहायता अनुदान के कुल करीब 297 करोड़ रुपये खर्च नहीं हुए। दिनांक 1 अप्रैल 97 को जो बचा हुआ बैलेंस था वह 80 करोड़ रुपये का था। 1 अप्रैल 98 को बढ़कर यह बैलेंस 139 करोड़ रुपया हो गया। इससे पता चलता है कि सरकार इन योजनाओं पर खर्च करने में कितना तत्पर है ? सुनिश्चित रोजगार योजना की भी यही स्थिति है। सरकार केन्द्र से पैसा लेती है, मगर उस पैसा के व्यय के बारे में उपयोगिता प्रमाण पत्र केन्द्र के पास नहीं भेजती है। पिछले ही साल की बात है, 1998-99 में इस सरकार ने राज्य के 727 प्रखंडों में से 617 प्रखंडों में सुनिश्चित रोजगार योजना के लिए पहली किश्त की राशि प्राप्त की और दूसरी किश्त प्राप्त करने का मौका आया तो

कितने प्रखंडों के लिए प्राप्त किया, तो केवल 54 प्रखंडों के लिए ही। मतलब, जो पहली किश्त प्राप्त की गई थी 617 प्रखंडों के लिए, उसको ठीक ढंग से सरकार खर्च नहीं कर सकी। उसकी उपयोगिता क्या हुई, इसका प्रमाण-पत्र राज्य सरकार केन्द्र को नहीं दे सकी।

नतीजा है कि इस राज्य में ग्रामीण गरीबी का हिस्सा राष्ट्रीय औसत का 19 प्रतिशत हो गया है। जितनी ग्रामीण गरीबी पूरे देश में है, उसमें से 19 प्रतिशत ग्रामीण गरीबी बिहार में है। मगर, सरकार गरीबी उन्मूलन योजनाओं के लिये प्राप्त धन का मात्र 10 प्रतिशत खर्च कर पाती है। इस आय-व्ययक पर बहस के दौरान सरकार ने जो प्राथमिकतायें बतायी है, उससे साफ जाहिर होता है कि ये प्राथमिकतायें नहीं, बल्कि प्राथमिकताओं का पाखंड है, जो सरकार इस आय-व्ययक के माध्यम से कर रही है।

अब हम आवास के बारे में बात करें। ग्रामीण आवास के बारे में कहा गया था कि 1991 की जनगणना के आधार पर यहां पर 40 लाख 95 हजार 740 आवास की जरूरत है। इतने आवास की जरूरत है और 1992, 1993, 1994 में अनेक बार उस समय के मुख्यमंत्री ने और संबंधित मंत्रीगण ने यह कहा कि हम सबके लिये आवास की सुविधा इस सदी के अंत होने के पहले पूरा कर देंगे, सबको आवास दे देंगे, सारी झोपड़ियों की जगह हम पक्का बना देंगे, परन्तु हुआ कितना? 40 लाख 95 हजार 740 आवास की जगह, जो रिपोर्ट है, अब तक केवल 5 लाख 25 हजार 396 आवास ही सरकार लोगों को दे सकी है। इस आवास में भी जो आवास दस साल पहले दिए गये थे, वे आवास आज किस स्थिति में हैं, इसका कोई उल्लेख नहीं है। आवास की आवश्यकता 1991 में कितनी थी, आज कितनी है, अगर सरकार इसकी रेगुलर मॉनिटरिंग करती तो यह पता रहता, पर आज इस सरकार के पास इस बारे में कोई सूचना नहीं है। जबकि आवास के मामले में, जो हमारी बुनियादी न्यूनतम सुविधा है, जो पैसा आया है केन्द्र से, इस मद का जो केन्द्रीय अनुदान प्राप्त हुआ है, वह भी पूरा का पूरा इंदिरा आवास योजना में ही खर्च हो रहा है।

राष्ट्रीय सामाजिक सहायता भी एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम है। इस बारे में 1997

से 1999 तक का आंकड़ा हम देखें, तो केन्द्र सरकार से इस मद में मिला है कुल 194 करोड़ रुपया और खर्च हुआ है 93 करोड़ रुपया से भी कम। अगर राष्ट्रीय सामाजिक सहायता जैसे उच्च प्राथमिकता वाले कार्यक्रमों के कार्यान्वयन की ऐसी स्थिति है तो अन्य कार्यक्रमों के बारे में जिनकी प्राथमिकता अपेक्षाकृत कम है इस सरकार की नजर में, उनकी स्थिति के बारे में हम आसानी से अनुमान लगा सकते हैं।

महोदय, गन्दी बस्तियों की बढ़ती संख्या को कम करने के बारे में केन्द्र सरकार ने एक अभियान चलाया है और जोर दिया है कि जो गन्दी बस्तियां हैं, उनके उन्नयन पर विशेष कार्यक्रम चलाये जायेंगे, मलिन बस्तियों का उत्थान किया जायेगा, उनकी स्थिति को ठीक किया जायेगा। एक आकलन के अनुसार बिहार में करीब 35 लाख 34 हजार मलिन बस्तियों की संख्या है। उनके विकास के लिए 1996 से 1998 तक 45 करोड़ रुपया केन्द्र सरकार की तरफ से मिला, लेकिन सरकार के पास कोई आंकड़ा नहीं है कि उसने 45 करोड़ रुपया में से इस कार्यक्रम में कितना पैसा खर्च किया। शायद कुछ भी खर्च नहीं किया।

इसी तरह से बुनियादी न्यूनतम सुविधा के मद में 64 करोड़ रुपया मिला था केन्द्र से 1997-98 में। 1998-99 में 383 करोड़ रुपया, 1999-2000 में 683 करोड़ रुपया यानी कुल मिलाकर 1430 करोड़ रुपया मिला, बुनियादी न्यूनतम सुविधाओं के लिए। परन्तु उसमें से व्यय का हिसाब नदारत है। क्या हुआ इसका, यह कहा नहीं जा सकता है। सरकार की एक सबसे महत्वपूर्ण योजना है 20 सूत्री कार्यक्रम क्रियान्वयन की। बिहार की क्या स्थिति है 20 सूत्री कार्यक्रम के क्रियान्वयन में ? 1994-95 में हम 21वें स्थान पर थे, 1997-98 में हम 21 वें से आगे चले गए, 26वें स्थान पर पहुँच गए। हमसे नीचे कोई राज्य नहीं बचा जिसकी 20 सूत्री कार्यक्रम क्रियान्वयन में हमसे कम उपलब्धि हो। 1999 में भी उसी तरह की प्रगति है। अब सरकार कह रही है कि हमने प्रगति की है, फिर से हमने 22वां स्थान प्राप्त कर लिया है।

सरकार भूमि सुधार की बात भी खूब करती है। मगर भूमि सुधार के लिए कर क्या रही है ? भू-अभिलेखों के सुदृढ़ीकरण के लिए केन्द्र सरकार से 100 प्रतिशत सहायता राशि मिलती है। पांच करोड़ सत्रह लाख रुपये मिले, केवल भू अभिलेखों के कंप्यूटरीकरण के लिए। खर्च कितना हुआ 5 करोड़ 17 लाख में से ? खर्च हुआ मात्र 20 लाख रुपया के करीब। ये सरकार की प्राथमिकता का हाल है। जो बुनियादी सुविधायें हैं, जो गरीबी उन्मूलन की योजनायें हैं, भूमि सुधार की जो योजनायें हैं उनमें से सरकार की प्रगति का, सरकार की कामयाबी का, सरकार की सफलता का यही पैमाना है।

महोदय, अल्पसंख्यकों के बारे में जो वित्त निगम हैं, अल्पसंख्यक वित्त निगम, उसकी स्थिति क्या है? 15 सूत्री कार्यक्रम है। अल्पसंख्यकों के लिये, मदरसों के शिक्षकों के वेतन का सवाल है, अल्पसंख्यक विद्यालयों के शिक्षकों के वेतन का सवाल है, उर्दू के नाम पर जो लफ्फाजी हो रही है, उसका सवाल है। कितना खर्च हो रहा है जो ऐसे सवाल हैं, जो ऐसी समस्यायें हैं उनसे जुड़े समाधान के बारे में सरकार को सामने आना चाहिए और इस बारे में बताना चाहिए...(व्यवधान)

नागेन्द्र प्रसाद सिंह : माननीय सदस्य ईसाई को अल्पसंख्यक मानते हैं कि नहीं ?

सरयू राय : जब हम अल्पसंख्यक विद्यालयों की बात करते हैं तो माननीय सदस्य को समझना चाहिए कि उनमें ईसाई प्रबंधन वाले विद्यालयों और उनके शिक्षक भी शामिल हैं, अन्य भी हैं, हम उन सभी की बातें कर रहे हैं। मैं सरकार की उनसे संबंधित नीतियों की, कार्यक्रमों की आलोचना कर रहा हूँ। सरकार ने अपने आय-व्ययक में जो प्राथमिकताएं रखी हैं, स्वयं के लिए जो कसौटी तय की है उन्हीं के आधार पर मैं सरकार को कटघरे में खड़ा कर रहा हूँ। मैं सरकार को उसकी कसौटियों पर ही तौल रहा हूं। जो पैमाना हमारा हो सकता है, जो कसौटियां हमारी हो सकती हैं, उन पर नहीं सरकार ने अपने आप के लिये जो कसौटी तय की है, उस कसौटी पर यह सरकार कितना खरा उतर रही है, मैं केवल उन्हीं बातों का जिक्र कर रहा हूँ। आगे मौका मिलेगा तो अपनी नीतियों एवं अन्य बातों का जिक्र करूँगा।

महोदय, ग्रामीण शिक्षा का सवाल भी काफी अहम है । कहा जाता है कि भारत गांवों का देश है। बिहार की 87 प्रतिशत से ज्यादा जनसंख्या गांवों में रहती है । गांवों में प्राथमिक शिक्षा की क्या स्थिति है ? उसमें ड्रॉप आउट का क्या प्रतिशत है ? कितने विद्यार्थी प्राथमिक शिक्षा पूरी करने के पहले ही स्कूल छोड़ देते हैं ? इसमें उनका जिक्र नहीं है जो प्राथमिक विद्यालयों में नामांकन ही नहीं लेते हैं। बल्कि ग्रामीण इलाके के जो विद्यार्थी प्राथमिक विद्यालयों में नामांकन कराते हैं उसमें 62 प्रतिशत विद्यार्थी प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर ही स्कूल छोड़ देते हैं । पहली से 11वीं कक्षा के बीच पढ़ने वाले जो विद्यार्थी हैं उसमें से 72 प्रतिशत पढ़ाई छोड़ देने के लिए विवश हो जाते हैं। महोदय, तो आज यह स्थिति है इस राज्य के ग्रामीण स्कूलों की ।

हमारे विद्यालयों की क्या स्थिति है? इसी सरकार की रिपोर्ट है, उसके मुताबिक बिल्कुल भवनहीन विद्यालय जो आसमान के नीचे चलते हैं, जो पेड़ के नीचे चलते हैं, उनकी संख्या 6077 है । जो फूस की झोपड़ियों में चलते हैं उनकी संख्या है 1386 और जो कच्चे मकानों में चलते हैं उनकी संख्या 2441 है। यह संख्या इसी सरकार द्वारा दी गयी है । ऐसे विद्यालयों में अगर पढ़ाई हो रही है तो कितनी हो रही है और नहीं हो रही है तो कैसे होगी । जब ऐसे स्कूलों में शिक्षक भी नदारद हैं तब इस हालत में उनमें पढ़ाई हो रही है कि नहीं इसका उल्लेख सरकार ने बजट दस्तावेज में और मंत्री जी ने अपने बजट भाषण में नहीं किया है । यह सरकार स्वयं अपने विद्यालयों की दुर्व्यवस्था के बारे में जितना बता रही है उससे प्राथमिक शिक्षा की स्थिति का आसानी से अंदाजा लगाया जा सकता है । इस आधार पर स्पष्ट है कि बिहार में ग्रामीण शिक्षा के बारे में सरकार जितना बता रही है उससे कहीं अधिक तथ्यों को छुपा रही है ।

राज्य में गरीबी, जनसंख्या वृद्धि, दुर्बल आधारभूत संरचना एवं उग्रवाद प्रभावित इलाकों की स्थिति एक अलग गंभीर विषय है । जब हम पिछले 10 वर्षों के बजट भाषण पढ़ते हैं, राज्यपाल महोदय के अभिभाषण पढ़ते हैं, तो उसमें एक ही तकिया कलाम मिलता है कि गरीबी दूर करेंगे । पर मंत्री महोदय सदन में उत्तर देते हैं

कि गरीबों की संख्या बढ़ रही है । पूछने पर कि क्यों बढ़ रही है तो कहते हैं कि जनसंख्या बढ़ रही है । जब जिम्मेदार पद पर बैठा हुआ एक आदमी फुटबॉल और क्रिकेट टीम पैदा करेगा तो निश्चित रूप से जनसंख्या बढ़ेगी । इसलिए गरीबी नियंत्रण के लिए यह भी जरूरी है कि हम जनसंख्या की नीति बनाएं, उसके लिए हम कोई ऐक्ट बनाएं, कोई कानून बनाएं, कोई प्राथमिकता तय करें कि हमारी प्राथमिकता इसके बारे में क्या होगी ।

हर वर्ष सरकार द्वारा यह कहा जा रहा है कि 1500 से ज्यादा आबादी वाले जो गांव हैं उनको सड़कों से जोड़ देंगे । जल निकासी की व्यवस्था करेंगे, पेयजल की व्यवस्था करेंगे, गरीबों के लिए धोती–साड़ी जैसे कार्यक्रमों को हर साल प्राथमिकता के आधार पर लागू करेंगे । ये और ऐसे ही दर्जनों कार्यक्रमों की घोषणा प्रायः हर साल के बजट भाषण में, प्रायः हर साल राज्यपाल के अभिभाषण में की जाती है । मगर 10 वर्षों में ये घोषणाएं कहीं भी लागू होते हुए नहीं दिखाई पड़ रही हैं । लगता है कि सरकार ने ठान लिया है कि जनकल्याण के ऐसे कार्यक्रमों को लागू नहीं करेगी, केवल घोषणाओं का पाखंड करती रहेगी ।

महोदय, अपने बिहार राज्य में आज कानून–व्यवस्था की स्थिति बदतर है । प्रशासन की स्थिति बदतर है । उग्रवाद प्रभावित बहुत बड़ा इलाका है । यह इलाका दिनोंदिन फैलता जा रहा है । उसका प्रसार होता जा रहा है । इसका हाल आज ऐसा है कि बी.डी.ओ, सी.ओ., यहां तक कि उन इलाकों में कहीं–कहीं डी.डी.सी. को भी जन अदालत में हाजिर होना पड़ता है । वहां सरकार से लेवी वसूली जाती है। जो विकास के पैसे ग्रामीण इलाके में जाते हैं, एक अनुमान के मुताबिक उनमें से 32 प्रतिशत पैसा उग्रवादी ले लेते हैं । खुफिया विभाग की रिपोर्ट देखेंगे तो सही जानकारी मिल जाएगी । क्या सरकार यह रिपोर्ट देखकर सदन को बताएगी कि जो अनुमान है उसके मुताबिक कम–से–कम 150 से 175 करोड़ रुपये की वसूली हर साल ऐसे उग्रवादी तत्वों द्वारा की जाती है, जिन्होंने कई इलाकों में समानान्तर सत्ता कायम रखी है । (व्यवधान)

नागेन्द्र प्रसाद सिंह : मैं माननीय सदस्य से जानना चाहूंगा उग्रवाद की समस्या राष्ट्रीय नहीं, अन्तर्राष्ट्रीय समस्या है, इस पर भारत सरकार बिहार में उग्रवाद के निराकरण के लिए क्या सहयोग कर रही है ?

सरयू राय : मैं प्रयास करूंगा कि माननीय सदस्य की जिज्ञासा शांत कर सकूं, उनको संतुष्ट कर सकूं । तो महोदय उग्रवाद के बारे में अभी बात हो रही थी कि बिहार में उग्रवाद के बढ़ने का कारण क्या है ? एकमात्र कारण है कि हमारी जो प्रशासनिक मशीनरी है, जिसको हमने लोक कल्याणकारी राज्य के सपनों को साकार करने के काम में लगाया है, उसमें पुलिस भी आती है, बी.डी.ओ., सी.ओ. डाक्टर, मास्टर जैसे अधिकारी एवं कर्मचारी भी आते हैं, तो ये हमारी जो लोक कल्याणकारी मशीनरी है, 10 वर्षों में उसने ऐसा स्वरूप धारण कर लिया है कि ग्रामीण जनता का, गरीब जनता का उस पर से विश्वास उठता जा रहा है और इनकी जगह ग्रामीण इलाकों में एक समानांतर व्यवस्था कायम होती जा रही है । इसका दायरा दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। पलामू, चतरा जैसे इलाकों को कहा जाता है कि लिबरेटेड जोन हो गये हैं । इस बारे में सरकार का क्या प्रयास है ? जब इस मुद्दे पर सवाल उठते हैं तो राज्य सरकार कहती है कि केन्द्र सरकार ने हमको पर्याप्त केन्द्रीय बल नहीं भेजा है। राज्य सरकार कहती है कि केवल 24 कंपनियां हैं, केन्द्रीय बलों की बिहार में । अगर 50 कंपनियां रहतीं तो सरकार इस पर काबू पा लेती । परन्तु सरकार केन्द्रीय बलों की इन 24 कंपनियों का इस्तेमाल किस प्रकार कर रही है । इन कंपनियों का उपयोग क्या हो रहा है ? यहां दो कम्पनी, वहां चार कम्पनी, कहीं पाँच कम्पनी इस तरह से पूरे बिहार में केन्द्रीय बलों को छींट दिया जाता है । इन कम्पनियों को कानून व्यवस्था की ड्यूटी में लगा दिया जाता है । (व्यवधान)

राम कृपाल यादव : राज्य सरकार के पदाधिकारियों की बैठक केन्द्र सरकार के अधिकारियों के साथ हुई थी, उसमें यह तय हुआ था कि आवश्यकता तो 75 से भी अधिक कंपनियों की है लेकिन कम-से-कम 50 कंपनियां देने का आग्रह सरकार से किया गया था । केन्द्र सरकार ने सहमति भी दी थी लेकिन उसके बावजूद मात्र 23 कंपनियां दी गईं । 23 कंपनियों से उग्रवाद पूरे बिहार में समाप्त करने की बात

कर रहे हैं, तो यह संभलने वाला नहीं है और अन्य कई चीजों पर भी सहमति हो गयी थी । केन्द्र सरकार राज्य सरकार के साथ सहयोग नहीं करना चाहती है । माननीय सदस्य को अच्छी भावना से कार्य करना चाहिए, सरकार के साथ सहयोग करना चाहिए । आप केन्द्र सरकार पर क्यों नहीं दबाव डाल रहे हैं । आपकी भी जिम्मेदारी बनती है और केन्द्र में आपकी सरकार है। माननीय सदस्य को उस पर भी गौर करना चाहिए । मिनिमम से काम नहीं चलने वाला है । आज उग्रवाद का व्यापक रूप पूरे बिहार के पैमाने पर बना है और उसके पीछे सीधी नीति है। खुले मन से चिन्तन का काम करें तो निश्चित रूप से इसका सोल्यूशन निकल सकता है। केवल राज्य सरकार पर दोषारोपण करने से काम नहीं चलेगा। यह बड़ी समस्या है और सभी पार्टी के लोगों को दलगत भावना से ऊपर उठकर विचार करने की आवश्यकता है और खासकर, माननीय सरयू बाबू से जो कंस्ट्रक्टिव विचारधारा के हैं, विद्वान हैं, और बुद्धिजीवी हैं, वे अपनी विद्वता का उपयोग सिर्फ राज्य सरकार की आलोचना पर नहीं करें, केन्द्र सरकार भी उसमें आती है इसकी जिम्मेदारी से नहीं भागें ।

सरयू राय : निश्चित रूप से माननीय सदस्य ने जो बात रखी है वह सराहनीय है, और मैं जो बात रख रहा हूँ वह इस दृष्टि से नहीं रख रहा हूँ कि मैं सरकार की सिर्फ आलोचना करूं । बल्कि मैं इस दृष्टि से रख रहा हूँ कि सरकार को इस सच्चाई के प्रति सचेत होना चाहिए । मैं यह नहीं कह रहा हूं कि बिहार में उग्रवाद को नियंत्रित करने के लिए आज जितना अर्द्धसैनिक बल है, वह पर्याप्त है । उन मसलों पर भी विचार करना है, जो पिछले 10 वर्षों से उग्रवाद के बढ़ने के कारण सिद्ध हुए हैं, इन कारणों के बारे में भी सोचना चाहिए, उनके बारे में हमको जानना चाहिए। आज गांवों में उग्रवादी संगठन कार्य कर रहे हैं । वे आम जनता के बीच में लोकप्रिय होते जा रहे हैं। ऐसे गांवों में मुझे व्यक्तिगत रूप से जाने का मौका मिलता है । उन क्षेत्रों में लोगों को सरकार की लोक कल्याणकारी मशीनरी से नफरत हो गयी है ।

मैंने पहले भी कहा था कि उग्रवादी या अतिवामपंथी संगठन जो तरीका अपना रहे हैं, वे लोकतंत्र की जड़ों में मट्ठा डालने वाले साबित हो रहे हैं । लोकतंत्र

की समाप्ति हो रही है। लोकतांत्रिक विचार और क्रियाकलाप संकट में है। लोकतंत्र के सपनों को साकार करने के लिए जो मशीनरी हमने बनायी है, जो प्राथमिकताएं हमने लागू की हैं, वे प्राथमिकताएं जमीन पर पूरी नहीं उतर रही हैं, वह मशीनरी नकारा साबित हो रही है, भ्रष्टाचार का घुन लग गया है व्यवस्था में, सुशासन की पहल को भ्रष्टाचार दीमक की तरह चाट रहा है। हमारी दृष्टि जो हो उन संगठनों के बारे में, आम जनता को लगता है कि इनसे उन्हें तुरंत राहत मिलती है। जनता को लगता है कि सरकारी मशीनरी जो उत्पात मचाती है उससे ये राहत दिलाते हैं। तो आज यह स्थिति हो गई है प्रदेश में कानून के शासन की। इस परिप्रेक्ष्य में हमको अपनी दृष्टि भी इस समस्या के बारे में बदलनी पड़ेगी। इसलिए मैंने कहा था कि अगर पुलिस कम्पनियाँ ही उग्रवाद खत्म करने वाली हैं और 24 कंपनियां पुलिस बल उपलब्ध हैं तो इनको किसी एक खास इलाके में लगाया जाना चाहिये ताकि वहां तो उग्रवाद खत्म हो जाय। उग्रवाद केवल केन्द्रीय बल के आधार पर ही खत्म नहीं होने वाला है।

मैं इस सदन के माध्यम से सरकार को एक अत्यंत गंभीर सूचना दे रहा हूँ कि किस तरह से बड़े अधिकारी उग्रवाद की घटना को नियंत्रित करने में लापरवाही बरत रहे हैं। पिछले दिनों, 20 और 21 जून 2000 को, सरकार को खुफिया जानकारी मिली थी कि पलामू जिले में मनिका और बालूमाथ के बीच में एम.सी.सी., जो एक खूंखार उग्रवादी संगठन है, उसके अत्यन्त टॉप लोगों की बैठक हो रही है, उनका सम्मेलन हो रहा है। विश्वस्त सूत्रों से शासन को उसकी जानकारी मिली। यह आधिकारिक जानकारी थी। केन्द्रीय खुफिया मशीनरी ने दी थी। सरकारी रिकार्ड में है। 20 किलोमीटर पैदल चलाकर वहां बी.एस.एफ. को दौड़ाया गया। बी.एस.एफ. के लोगों ने उस गांव को घेर लिया जहां बैठक चल रही थी, उनलोगों के जो टॉपमोस्ट लीडर्स हैं, उनकी बैठक चल रही थी। जरूरत थी कि पुलिस बल वहां त्वरित कार्रवाई करता। परन्तु, जो राज्य पुलिस के अधिकारी थे, जो नियंत्रित कर रहे थे केन्द्रीय पुलिस बल के आपरेशन को, उन्होंने कहा कि नहीं, आप हथियार मत चलाइये। आप हमला मत कीजिये। आप घने जंगल के इलाके में पहाड़ के पीछे से

उपर आकर उनको घेरने की कोशिश कीजिये। जिस तरह का इलाका है, अगर पुलिस बल इस तरह घेराबंदी करने में लगेगा तो इसके जवान साफ दिखलाई पड़ने लगेंगे। दूर से ही दिखाई पड़ने लगेंगे। नतीजा हुआ कि घेराबंदी करते पुलिस बल को देखकर सारे के सारे उग्रवादी नेता निकल गये। क्या मिला पुलिस को ? मिला 10 दिन के उनके खाने का सामान, मिला उनका कुछ साहित्य। मगर ग्रुप नहीं पकड़ा गया। अगर पकड़े जाते तो इनके ऐसे सीनियर लोग वहाँ जमा थे, जिससे एक दिन में उस उग्रवादी संगठन की कमर टूट जाती। पर वह नहीं हुआ। जान बूझ कर उन्हें नहीं पकड़ा गया। अगर नीति और नीयत में खोट रहेगी तो केन्द्रीय बल की 200–400 कम्पनियां भी आ जायेंगी तब भी सरकारी अधिकारी उग्रवाद को नियंत्रित नहीं कर सकेंगे। इसलिए मैं कह रहा हूँ कि जितना केन्द्रीय पुलिस बल उपलब्ध है, उस बल का समुचित उपयोग करना चाहिये। सरकार में बैठे लोग अपनी नीति बदलें और नीयत भी तभी उग्रवाद पर प्रभावी नियंत्रण कायम हो सकता है। तभी बिहार को बदला जा सकता है।

महोदय, केवल राज्य पुलिस बल और केन्द्रीय पुलिस बल के आधार पर उग्रवाद का सफाया नहीं कर सकते हैं। इसके लिए जन बल और जन समर्थन की आवश्यकता भी है, बल्कि यही ज्यादा जरूरी हैं। लोकतंत्र के इस गंभीर खतरे को पहचानकर समुचित कार्यक्रम तय करने होंगे। सरकारी कार्यक्रमों को जमीनी स्तर पर लागू करने वाली, खतरे का सामना करने वाली जो कल्याणकारी मशीनरी है, उसमें पिछले 10 वर्षों में घुन लग गया है। यह घुन है भ्रष्टाचार का, अकर्मण्यता का, लापरवाही और चापलूसी का। प्रशासनिक मशीनरी में लगे इस घुन को खत्म करने का प्रयास होना चाहिए। यह आय–व्ययक मैं जो देख रहा हूँ उसमें ऐसा कोई भी प्रयास दिखाई नहीं पड़ता है। हर बार के आय–व्ययकों की तरह यह भी एक औपचारिकता भर है, यह रूटीन की तरह है। केवल तीन हजार करोड़ रुपये का आवंटन बढ़ा दिया गया है, पिछली बार जो बजट रखा गया था उससे सरकार ने तीन हजार करोड़ रुपये बढ़ाकर मांग लिये, बस ! और हमारी समस्याओं की इति श्री हो गई।

सदन से मेरा विनम्र अनुरोध है कि जिस आय–व्ययक के ऊपर आज हम वाद–विवाद कर रहे हैं उसकी समालोचना की जानी चाहिए। आज नौवीं पंचवर्षीय योजना के मध्यान्तर समीक्षा की जरूरत है। मध्यान्तर समीक्षा राज्य की आठवीं पंचवर्षीय योजना की भी नहीं हुई है। इस नौवीं योजना की भी नहीं होगी तो योजनाओं को बनाने का, नहीं बनाने का कोई मतलब नहीं रह जायेगा। सरकार ने कतिपय प्राथमिकताएं तय की हैं।

मैं नहीं कहता कि यह सरकार बिहार को तुरन्त, दो वर्ष, चार वर्ष या पाँच वर्ष में, स्वर्ग बना दे, मगर इन्होंने जो प्राथमिकताएं तय की हैं उन प्राथमिकताओं को तो लागू करें। वे प्राथमिकताएं तो इनके आय–व्ययक में परिलक्षित होनी चाहिए। इस आय–व्ययक से यह दिखलाई नहीं पड़ता है। इसलिए, मैं सलाह के तौर पर, सुझाव के तौर पर और सुझाव–सलाह से भी अगर परेशानी हो तो मैं प्रार्थना के तौर पर सरकार के सामने यह बात रखना चाहता हूं कि कृपा करके आप अपनी कसौटियों के आधार पर ही इस बजट को मत कसिये, आप समालोचना कीजिये और ठीक लगे तो कार्यक्रमों की दिशा बदलिये। अपनी नीति और नीयत में सामंजस्य करने का प्रयास कीजिये। अगर ये प्रयास होगा तो इस आय–व्ययक का प्रारूप बदलेगा और जब प्रारूप बदलेगा तो इससे बिहार के भाग्य को बदलने की दिशा में एक सार्थक पहल होगी। अत्यंत कठिन परिस्थिति जो आज दिखाई पड़ रही है वह बदल सकती है, उसे बदला जा सकता है। दिशा बदलिये, बिहार बदलेगा। नहीं तो सरकार बदलिये, बिहार बदलेगा। इन्हीं शब्दों के साथ, आपने मुझको समय दिया, इसके लिए बहुत–बहुत धन्यवाद।

□ 7 जून 2000
बिहार विधान परिषद

• • •

वित्तीय अव्यवस्था का आलम

आज हमलोग वित्तीय वर्ष 2001–02 के बजट और उससे संबंधित विनियोग विधेयक पर सदन में चर्चा कर रहे हैं। विडम्बना है कि यह बजट बिहार विधान मंडल के समक्ष रखने वाले वित्त मंत्री महोदय मंत्रीपरिषद से बाहर हो गये हैं। मैं विस्तार के साथ उनके उस वक्तव्य पर नहीं जाना चाहता हूँ जिसे उन्होंने मंत्रिपरिषद से अपना त्यागपत्र देने के तुरंत बाद समाचार पत्रों को दिया है। फिर भी मैं इतना अवश्य कहना चाहता हूँ कि उन्होंने अपने वक्तव्य के माध्यम से जिन बातों को सार्वजनिक रूप से उजागर किया है, निश्चित रूप से उनमे सच्चाई है। यह सच्चाई सरकार को काफी कटु लग रही है। मेरा निवेदन है कि उनका यह वक्तव्य भी उतना ही आधिकारिक माना जाना चाहिए जितना आधिकारिक सदन के समक्ष उनके द्वारा रखा हुआ यह बजट है और इस बजट को रखते समय विधान सभा में उनके द्वारा दिया गया भाषण है।

मुझे उम्मीद थी कि इस वर्ष का बजट रखते समय सरकार बतायेगी कि इस राज्य की माली हालत फिलहाल कैसी है ? क्योंकि बजट भाषण के आरंभ में ही वित्त मंत्री महोदय ने जिक्र किया है कि बिहार के पुनर्गठन के बाद राजस्व के आधा से अधिक संसाधन हमारे हाथ से निकल गये हैं जब कि दो तिहाई से अधिक व्यय के बोझ हमारे पास रह गये हैं। उन्हें यह भी बताना चाहिए था कि इस परिस्थिति में अब हम इस राज्य का विकास कैसे करेंगे ? उन्होंने यह तो नहीं बताया है पर कुछ आंकड़े अवश्य दिये हैं जो प्रथमदृष्ट्या अत्यंत हास्यास्पद प्रतीत होते हैं। ऐसा लगता है कि इन आंकड़ों का सच्चाई से कोई सरोकार नहीं है। अपने बजट भाषण में उन्होंने कहा है कि जब बिहार अविभाजित था, उस समय हमने अनुमान किया था कि हमारा राजस्व घाटा 3000 करोड़ रुपये होगा और जब बिहार पुनर्गठित होकर सिमटे भूगोल के साथ शेष बिहार के रूप में रह गया है तो यह घाटा 1354 करोड़ रुपये का हो गया है। एक तरफ तो यह सरकार कहती है कि आधा से अधिक राजस्व के साधन हमारे हाथ से चले गये, झारखंड में चले गये और दो तिहाई से अधिक व्यय भार हमारे पास रह गया, शेष बिहार के साथ रह गया, फिर थोड़ी ही

देर बाद सरकार कहती है कि हमारा राजस्व घाटा कम हो गया, घट गया। अगर संयुक्त बिहार के समय का 3000 करोड़ रुपये का राजस्व घाटा बिहार बँटने के बाद केवल 1354 करोड़ रुपये का हो गया तो यह पता नहीं चल रहा है कि अर्थशास्त्र के किस नियम से या वित्तीय गणना की किस पद्धति के अनुसार वित्त मंत्री जी यह परस्पर विरोधाभासी बात कह रहे हैं ? उसी तरह से वित्तीय घाटा के बारे में भी उन्होंने कहा है कि जब वर्तमान बिहार और झारखंड दोनों एक साथ थे, तो हमारा वित्तीय घाटा 5000 करोड़ रुपये का था और जब बिहार का विभाजन हो गया तो उनका कहना है कि अब यह घाटा केवल 3000 करोड़ रुपया रह गया है।

भोला प्रसाद सिंह : माननीय सदस्य सरयू राय जी आप इसी सदन में बोलते हुए आर्थिक पैकेज की बात करते थे, आप बतायें कि आर्थिक पैकेज कब मिलेगा, कब दिलाएंगे, या नहीं दिलाएंगे, यह बतायें।

सरयू राय : महोदय, भोला बाबू ने एक सटीक प्रसंग की याद दिलायी है। इसी सदन में बिहार पुनर्गठन विधेयक–2000 पर बहस के दौरान जब मैं आर्थिक पैकेज पर बोल रहा था उस समय भी राज्य सरकार द्वारा यही बात कही गयी थी कि हमारा सबसे अधिक राजस्व देने वाला हिस्सा बिहार से अलग हो रहा है। इससे हमको भारी वित्तीय क्षति होनेवाली है। यह काबिले गौर है कि अभी तक बिहार को केन्द्र से आर्थिक सहायता का कोई पैकेज नहीं मिला है, कहीं से कोई विशेष सहायता नहीं मिली है मगर शेष बिहार को आर्थिक सहायता मिले बगैर यहां का राजस्व घाटा कम हो गया है। आश्चर्य है कि राज्य पुनर्गठन के मात्र तीन माह में ही शेष बिहार की सरकार का वित्तीय घाटा पहले से कम हो गया है। ऐसा कह कर क्या राज्य सरकार यही साबित करना चाहती है कि अगर वर्ष 2001–02 के बजट के अनुसार शेष बिहार का वित्तीय घाटा पहले की तुलना में कम हो गया, तब इस राज्य को किसी प्रकार के आर्थिक सहायता पैकेज की जरूरत ही नहीं है। सवाल उठता है कि क्या बिहार पुनर्गठन विधेयक 2000 पर सदन में विचार करते समय इस सरकार ने झारखंड अलग हो जाने के कारण होने वाली राजस्व की संभावित क्षति की भरपाई के लिए केन्द्र के समक्ष जो आर्थिक पैकेज रखा था वह लफ्फाजी थी ? क्या उस

पैकेज में कोई सच्चाई नहीं थी ? क्या वह पैकेज आंकड़ों का भ्रमजाल था? क्या वह राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की केन्द्र सरकार के खिलाफ दुष्प्रचार की एक सुनियोजित साजिश थी ? राज्य सरकार को इस बारे में सदन के समक्ष स्पष्टीकरण देना चाहिए। तथाकथित आर्थिक पैकेज के पीछे की नीयत की मीमांसा भी सदन में होनी चाहिए।

अध्यासीन सदस्य (डा. नीलांबर चौधरी) : माननीय सदस्य सरयू बाबू को जानकारी होनी चाहिए कि इसी सदन में उन्होंने भी एक आर्थिक पैकेज का प्रारूप दिया था और इस प्रस्ताव को केन्द्र सरकार के पास भेजा गया था। इसलिए इस बात से आप मत मुकरिये लेकिन जो बजट बना है उसके संबंध में जो कहना हो आप कहिये।

सरयू राय : मैं भी यही कह रहा हूँ, इससे मुकरने का सवाल ही नहीं हैं। इस बजट के संदर्भ में ही मैं राज्य सरकार द्वारा उस समय सदन में प्रस्तुत आर्थिक सहायता पैकेज की असलीयत और इसके पीछे की कपटपूर्ण नीयत के बारे में बता रहा हूँ। मैंने जो बातें अब तक इस सदन में कही है या जो प्रस्ताव रखा है या जो भी आर्थिक पैकेज अपनी ओर से रखा है, मैं उस पर आज भी अडिग हूँ। बिहार प्रदेश भारतीय जनता पार्टी की ओर से मेरे द्वारा जो आर्थिक सहायता पैकेज केन्द्र सरकार के समक्ष प्रस्तुत किया गया है और जिसे बिहार पुनर्गठन विधेयक – 2000 पर बहस के दरम्यान मैंने सदन पटल पर रखा है, उसकी विशेषताओं का विश्लेषण करने का यह उचित समय नहीं है। उसकी चर्चा कर मैं सदन का समय जाया नहीं करना चाहता हूँ। इसलिये वित्तीय वर्ष 2001–02 के वार्षिक बजट तक ही अपनी बातों को सीमित रख रहा हूँ।

इस संदर्भ में मैं केवल यह कहना चाह रहा हूँ कि जिस सरकार ने सदन पटल पर बिहार विभाजन से होने वाली संभावित क्षति की भरपाई के संदर्भ में आर्थिक सहायता का एक पैकेज रखा और जिस सरकार ने हल्ला मचाया कि झारखण्ड अलग हुआ तो हम कंगाल हो जायेंगे, हमारा सर्वनाश हो जायेगा, हमें बालू फांककर जिन्दा रहना पड़ेगा, वही सरकार आज कह रही है कि झारखंड अलग हो जाने के बाद हमारी आर्थिक स्थिति सुधर रही है, हमारा राजस्व घाटा और वित्तीय घाटा कम हो रहा है। मैं सदन का ध्यान सरकार के इस वक्तव्य की ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ

और बताना चाहता हूँ यह लफ्फाजी है, सरासर बेईमानी है । इसलिए सरकार को अपनी कथनी में ईमानदारी लानी चाहिए और इमानदारी के साथ वस्तुस्थिति सदन के सामने रखनी चाहिए । जब हमारे कुल राजस्व का दो तिहाई भाग हमसे अलग हो गया, जब हमारे कुल राजस्व का केवल एक तिहाई भाग ही शेष बिहार की तरफ रह गया और कुल व्यय भार के दो तिहाई भाग का बोझ यहां रह गया तो ऐसी स्थिति में एक साफ दृष्टि होनी चाहिए थी इस बजट में कि आने वाले दिनों में इस राज्य की वित्तीय स्थिति को कैसे सुधारेंगे ? केन्द्र से राज्य हित में क्या मांगेंगे और किस तरह से मांगेंगे? यहां हम किस तरह के कार्यक्रम चलायेंगे, कैसी परियोजनायें चलायेंगे ? यदि कोई आर्थिक पैकेज सहायता के रूप में केन्द्र सरकार से प्राप्त करना है तो उसे प्राप्त करने का आधार क्या होगा ? पर इसका कोई जिक्र इस बजट में नहीं है । ऐसा कोई संकेत बजट में मौजूद नहीं है, जब कि झारखंड राज्य अलग हो जाने के बाद शेष बिहार का यह पहला वार्षिक बजट है।

भोला बाबू जब इस बजट पर बोल रहे थे तो उन्होंने इस संदर्भ में शून्य आधारित बजट का जिक्र किया था । उन्होंने कहा था कि शून्य आधारित बजट का मतलब है कटौती । यानी यह सरकार मान रही है कि अब कटौती हो रही है, सुधार किया जा रहा है और अब तक पिछले 10 वर्षों के राष्ट्रीय जनता दल के शासन में और उसके पहले के 40 वर्षों में कांग्रेस के शासन में जो हो रहा था वह फिजूलखर्ची थी । उस फिजूलखर्ची को अब सुधारा जा रहा है। यानी पिछले 50 वर्षों में लालू-राबड़ी सरकार और पूर्ववर्ती कांग्रेसी सरकारों का बजट के बारे में जो दृष्टिकोण रहा है, उसको इस सरकार ने नकार दिया है, उसे गलत ठहरा दिया है ।

मगर केवल कटौती से ही कोई बजट शून्य आधारित बजट नहीं हो जाता है। इसके पहले वित्त मंत्री महोदय ने सदन में बजट पेश करते हुए इस बजट को यथार्थमूलक कहा था। यथार्थमूलक और शून्य बजट में अन्तर है। शून्य आधारित बजट में यह देखा जाता है कि हम बजट आवंटन इस तरह करें कि हाथ में ली गई योजनायें समय सीमा के भीतर पूरी हो जायं । ऐसा नहीं की वर्तमान व्यवस्था में जैसा हो रहा है वह चलता रहे, राज्य में योजनाओं-परियोजनाओं की कब्र बनती

रहे । अनेकों योजनायें राजनीतिक सुविधा के आधार पर ले ली जाती हैं। हर बजट में कतिपय निहित स्वार्थ आधारित अव्यावहारिक योजनायें आरम्भ कर दी जाती हैं । अनुपूरक बजट में भी बिना सोचे विचारे नई योजनायें ले ली जाती हैं । वार्षिक बजट में से ऐसी हरेक परियोजना के मद में कुछ-न-कुछ राशि छींट दी जाती है, भले ही यह राशि अत्यल्प एवं अपर्याप्त क्यों न हो । कई मामलों में तो हाथ में ली गई योजना पर नगण्य व्यय होता है और आवंटन का अधिकांश भाग योजना के साथ जुड़े वेतन आदि गैरयोजना अवयवों पर व्यय हो जाता है । योजनायें साल दर साल आगे खिसकती जाती हैं, पूरा होने का नाम ही नहीं लेती हैं ।

शून्य आधारित बजट में अनुपयोगी योजनाओं पर आवंटन रोककर प्राथमिकतानुसार उपयोगी योजनाओं को पूरा करने के लिए आवश्यक धनराशि का आवंटन किया जाता है और इन्हें समय सीमा के भीतर पूरा करना सुनिश्चित किया जाता है । जो अनुपयोगी परियोजनायें हैं उनपर सरकार खर्च नहीं करे, इन्हें रोक दे तथा प्राथमिकता के आधार पर उन्हीं उपयोगी योजनाओं को चुने जिन्हें समय सीमा के भीतर निर्धारित अवधि में सरकार पूरा कर सके और उनके लिये बजट में आवश्यक निधि उपलब्ध कराये । जितना हमारा वित्तीय संसाधन है उसे सही तरीका से व्यय करके तत्परता पूर्वक हम निश्चित अवधि के भीतर कार्य योजना को पूरा कर दें और उसका पूरा लाभ लें । यह शून्य आधारित बजट परिकल्पना का एक महत्वपूर्ण अंग है । वस्तुतः यही शून्य आधारित बजट का यथार्थ है ।

मंगनीलाल मंडल – शून्य बजट और यथार्थ बजट एक नहीं है ।

सरयू राय : सही कहा आपने ये दोनों एक नहीं हैं, मगर एक जैसा होने का आभास जरूर देते हैं । जिस तरह का बजट सदन के सामने है और जिस पर हम सभी चर्चा कर रहे हैं, वह कहीं से भी यथार्थ मूलक बजट नहीं है । राज्य के विभाजन के बाद शेष बिहार की जैसी स्थिति है और जो संसाधन यहाँ बचे हुये हैं, उस स्थिति में, उन संसाधनों की सीमा में, शून्य आधारित बजट राज्य के विकास का एक कारगर हथियार साबित हो सकता है । मगर इस बजट में यह दृष्टि स्पष्ट रहे कि सरकार की सोच की दिशा क्या है, कि सरकार की कौन सी योजनायें उपयोगी एवं चालू रखी

जाने लायक हैं और कौन तत्काल स्थगित कर दिये जाने की श्रेणी में डाले जाने लायक हैं

सदन के सामने यह बजट रखने वाले वित्त मंत्री ने इस्तीफा देते समय कहा है कि अब शेष बचे बिहार राज्य में केवल कृषि ही राज्य के विकास का साधन बच गयी है। कृषि क्षेत्र का विकास करके हम राज्य की वित्तीय स्थिति सुधार सकते हैं। उन्होंने यह भी कहा है कि यहाँ की चीनी मिलें बन्द हैं। कृषि के क्षेत्र में केन्द्र सरकार से जो योगदान या सहायता आ रही है, वह राशि इस सरकार द्वारा खर्च नहीं हो पा रही है। उन्होंने प्रायः सभी क्षेत्रों के बारे में विस्तार से बतलाया है कि कल तक वे जिस सरकार का अंग थे उस सरकार द्वारा कितनी लापरवाही बरती जा रही है। उनका अखबारों में छपा हुआ भाषण मैं पढ़ रहा था कि किस तरह से हजारों करोड़ रुपये जो केन्द्र सरकार से सहायता एवं अनुदान मद में मिले उन्हें इस सरकार ने खर्च नहीं किया। बिहार की जो लम्बे समय से बदतर स्थिति है उसका यह एक मुख्य कारण है कि यहां सरकारी क्षेत्र में वित्तीय अव्यवस्था का आलम रहा है। उस वित्तीय अव्यवस्था को सुधारने के बारे में, उस वित्तीय अव्यवस्था के कुचक्र से बिहार को बाहर निकालने के बारे में क्या किया जा सकता है इसका कोई जिक्र इस बजट में नहीं है।

यह बजट लोक-लेखा से अधिक पैसा खींचकर बजट का प्रत्यक्ष घाटा पाटने की कसरत भर है। फिर भी यह बजट करीब 100 करोड़ रुपये के घाटे का है, जब कि करीब 854 करोड़ रुपये बजट के प्राप्ति शीर्ष में लोक-लेखा से लिया गया है। अगर यह पैसा नहीं लिया जाता तो यह बजट घाटा 950 करोड़ रुपया से ऊपर जाता। (व्यवधान) इसकी छान-बीन होनी चाहिये। इसका विश्लेषण होना चाहिये कि सरकार ने बजट में जितनी राशि व्यय होने की आवश्यकता बताई है और जिसे व्यय करने के लिये सरकार विनियोग विधेयक के माध्यम से सदन की अनुमति प्राप्त करना चाहती है, वास्तव में इतनी राशि की आवश्यकता है भी या नहीं। इसके पहले के दो वर्षों में बजट और विनियोग के माध्यम से सदन की सहमति लेकर योजना और गैरयोजना मद में हुये व्यय के आंकड़े भी राज्य सरकार ने हमारे सामने

रखा है। इसकी एक झलक इस बजट में मौजूद है।

महोदय, हम सभी जानते है कि प्रासंगिक वर्ष के बजट दस्तावेज में उस साल होने वाले आय-व्यय का अनुमानित विवरण रहता है यह विवरण गैर योजना, राज्य योजना, केन्द्रीय योजना और केन्द्रीय योजनागत योजना के बारे में अलग अलग प्रदर्शित किया रहता है। इसके साथ ही चालू वित्तीय वर्ष, यानी जिस वर्ष के अंत में प्रासंगिक वर्ष का बजट रखा जाता है, बजट अनुमान और उसका पुनरीक्षित अनुमान के आंकड़े और चालू वर्ष के ठीक पहले वाले वर्ष के आय और व्यय के वास्तविक आंकड़े भी प्रासंगिक बजट दस्तावेज में यथास्थान दिये हुये रहते है। परन्तु जब हम इस बजट के पन्नों को उलटते हैं तो पाते हैं कि इस बजट दस्तावेज में प्रासंगिक वर्ष के दो वर्ष पूर्व के वार्षिक बजट में अंकित आय-व्यय अनुमान के विरूद्ध हुये वास्तविक आय-व्यय के जो आंकड़े दर्शाये जाने चाहिये थे वे नहीं दर्शाये गये हैं। बल्कि उनके स्थान पर बजट दस्तावेज में शून्य अंकित कर दिया गया है। सम्पूर्ण बजट दस्तावेज में, बजट के हरेक पृष्ठ पर, अंकित किया गया है कि चालू वर्ष के पहले वाले वर्ष में राज्य सरकार को जो वास्तविक आय हुयी वह आय शून्य है, व्यय भी शून्य है। सरकार को स्पष्टीकरण देना चाहिये कि इस बारे में वस्तुस्थिति क्या है ? किसी वर्ष में किसी सरकार का आय और व्यय शून्य कैसे हो सकते हैं ?

इससे स्पष्ट है कि बजट छपने के समय तक राज्य सरकार को वर्ष 1999-2000 में हुये वास्तविक आय-व्यय की जानकारी नहीं मिल पायी थी इसलिये इनके स्थान पर बजट दस्तावेज में शून्य दर्ज कर दिया गया। यह सरकार के लेखा प्रबंधन में अराजकता का द्योतक है। यह एक अत्यन्त गंभीर मामला है। यदि मंत्री महोदय को मेरी बात विश्वसनीय नहीं लगती है और वे इसे परखना चाहते हैं तो इसी सत्र में कुछ दिन पहले सदन पटल पर रखे गये प्रासंगिक वर्ष 2001-02 के मूल दस्तावेज को मंगाकर उसमें अंकित तीनों वर्षों की आय-व्यय विवरणिका को देख सकते हैं। उसमें या तो बड़ी भूल रह गयी है या इसे सदन के सामने वस्तुस्थिति को छुपाने की चाल कहा जा सकता है। क्योंकि चालू वित्तीय वर्ष के पहले वाले वर्ष में सरकार ने जितना वास्तविक व्यय किया है और चालू वर्ष के बजट अनुमान के

विरूद्ध वर्षांत में आय–व्यय का जो पुनरीक्षित अनुमान है वही प्रासंगिक वर्ष के लिये सरकार द्वारा सदन से की जा रही निधि की मांग का एक सटीक आधार हो सकता है। इतनी बड़ी गलती और लापरवाही की ओर मैं सरकार का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ और चाहता हूँ कि सरकार की ओर से उत्तर देते समय माननीय मंत्री महोदय मेरी जिज्ञासाओं का समाधान करेंगे।

महोदय, अविभाजित बिहार के पुनर्गठन के बाद अब उत्तरवर्त्ती बिहार एक नये भूगोल के साथ हमारे सामने है । पुनर्गठित बिहार का भूगोल घटा है, क्षेत्रफल कम हुआ है, जनसंख्या भी पहले की अपेक्षा कम हुयी है परन्तु जनसंख्या का घनत्व बढ़ा है । पुनर्गठित बिहार में कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल भी पहले की तुलना में कम हुआ है परन्तु यहाँ की ऐसी जमीन जो प्रायः हर वर्ष बाढ़ की चपेट में आ जाती है और जिस पर लगी खरीद की फसल नष्ट हो जाया करती है उसका क्षेत्रफल जस का तस है । इस परिप्रेक्ष्य में शेष बिहार के अंतर्गत कृषि के विकास की भावी दिशा के बारे में यह बजट मौन है ।

राज्य सरकार भी मानती है और यह सच भी है कि पुर्नगठित बिहार में आय के स्रोत कम हुये हैं। पूर्व में स्थापित निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र के छोटे–बड़े उद्योग समूह नवगठित राज्य झारखंड में चले गये हैं। आजादी के पहले और बाद में पुनर्गठित बिहार के क्षेत्र में स्थापित उद्योगों ने दम दोड़ दिया है। 1974 के बाद यहां स्थापित किये गये इन्डस्ट्रीयल स्टेट कामयाब नहीं हो सके हैं। इस क्षेत्र के उद्योगों में से प्रायः सभी या तो रुग्ण हैं या मृतप्राय हैं या बन्द हो चुके हैं। ऐसी स्थिति में यहाँ के लिये मुफीद औद्योगीकरण की दिशा के बारे में कोई प्रत्यक्ष अथवा अपरोक्ष संकेत इस बजट में दिखाई नहीं पड़ता है । यह बजट इस दिशा में कोई प्रकाश डालता हुआ प्रतीत नहीं हो रहा है।

वर्तमान बिहार सरकार की कोई उद्योग नीति नहीं है । 1995 में जो उद्योगनीति इस सरकार ने बनाई थी वह उद्योगनीति इस वर्ष समाप्त हो रही है । पता नहीं राज्य सरकार के मंत्रियों को यह जानकारी है भी या नहीं कि उनकी सरकार के पास कोई उद्योग नीति आज की तिथि में नहीं है। यहाँ कृषि पर आधारित कोई उद्योग लगाया

जाय, नवसृजित पड़ोसी राज्य झारखंड या भारत के किसी अन्य राज्य से खनिज लाकर यहाँ कोई उद्योग लगाया जाय, यहाँ पर किस प्रकार का उद्योग सरकार विकसित करना चाहती है, अब तक जो उद्योग यहाँ लगे है वे कैसे जीवित रहेंगे, यहाँ के जो उद्योग सम्प्रति रुग्ण हैं उनको किस प्रकार पुनर्जिवित किया जायेगा या वे दम तोड़ देंगे? इन सवालों का कोई जवाब इस बजट में नहीं है। राज्य के वित्त मंत्री ने भी बजट प्रस्तुत करते समय अपने बजट भाषण में इस बारे में कुछ भी नहीं कहा है। यह बहुत दुखद स्थिति है कि पहले से ही पिछड़ा माने जाने वाले, पहले से ही गरीब माने जाने वाले इस राज्य..... (व्यवधान)

यशोदानन्द सिंह : हुजूर, झारखंड में इनकी सरकार विनियोग विधेयक पर गिर गई है। सदन में वहाँ की सरकार हार गयी है । इसलिये हमने कहा कि अब मत बोलिये।

सरयू राय : मुझे लगता है कि इस सदन में यह चर्चा का विषय नहीं है । महोदय, तो मैं यह बताना चाह रहा हूँ कि कहीं से भी इस बजट में कोई दिशा दिखाई नहीं पड़ती है कि अपने संसाधनों के आधार पर इस राज्य को सरकार कैसे विकसित करना चाहती है? किस प्रकार इस पुनर्गठित राज्य को आगे ले जाया जा सकेगा, किस तरह से यह राज्य और इस राज्य की जनता सुखी और सम्पन्न होगी इसका कोई जिक्र इस बजट में नहीं है। अगर यह बजट इस राज्य की आर्थिक स्थिति का दर्पण है, राज्य सरकार की आर्थिक सोच को प्रतिबिम्बत करता है तो यह राज्य दिवालियापन की कगार पर है और इस राज्य सरकार की सोच भी पूरी तरह दिवालिया है। इस सरकार को चलाने वालों के पास ऐसी कोई कारगर दूरदृष्टि नहीं है जिससे पुनर्गठित बिहार राज्य को समृद्ध और संसाधन सम्पन्न बनाया जा सके, और राज्य को आगे ले जाने की दिशा में सार्थक प्रयास किया जा सके। इन तथ्यों के आलोक में मैं सरकार द्वारा रखे गये विनियोग विधेयक को खारिज करने की अपील सदन से करता हूँ ।

□ 29 मार्च 2001
बिहार विधान परिषद्

•••

बजट का विरोधाभास

अभी कुछ देर पहले माननीय प्रभारी वित्त मंत्री जी ने बताया कि सरकार वित्तीय प्रबंध कुशलता में माहिर हो रही है, इसलिए राज्य की आर्थिक स्थिति सुधर रही है। इसी क्रम में आगे उन्होंने बताया कि केन्द्र सरकार से केन्द्रीय करों में जो हिस्सा राज्य को मिलता है वह हिस्सा इस वर्ष कितना होगा, यह अभी तक राज्य सरकार को पता नहीं चला है। इसलिए राज्य सरकार पूरा बजट पास कराने के बदले लेखानुदान की प्रक्रिया में जा रही है। पिछली बार भी जब वित्त मंत्री का भाषण हुआ था तो उन्होंने यही कहा था कि केन्द्रीय करों से जो हिस्सा राज्य को मिलता है वह समय पर पूरा नहीं मिलता है। बजट तैयार करते समय उसकी जानकारी नहीं हो पाती है।

माननीय मंत्री महोदय ने कहा है कि केन्द्र सरकार राज्य को इस वर्ष कितना अनुदान दे रही है, केन्द्रीय करों में राज्य को कितना हिस्सा मिलेगा यह स्पष्ट नहीं है। परन्तु जिस बजट को उन्होंने सदन पटल पर रखा है उसमें यह जानकारी अंकित है कि इन्कम टैक्स का जो हिस्सा इस वित्तीय वर्ष में राज्य को मिलेगा वह 1581 करोड़ रुपये होगा। इस वर्ष सहायता अनुदान के रूप में जो राशि मिलेगी वह 1703 करोड़ रुपये होगी। इसी तरह अन्यान्य प्राप्तियों के बारे में भी बजट में अलग-अलग स्थानों पर स्पष्ट उल्लेख है। पर मंत्री जी कहते हैं, कि वे नहीं जानते कि केन्द्रीय करों से राज्य को इस वर्ष मिलने वाला हिस्सा कितना है, उसमें से अभी तक कितना मिला है, कुछ मिला भी है या नहीं। आश्चर्य है कि बजट भाषण में इस बारे में विस्तार से उल्लेख होने के बावजूद मंत्री महोदय सदन पटल पर इस तरह का वक्तव्य दे रहे हैं। यह राज्य के प्रभारी वित्त मंत्री के गैर जिम्मेदार आचरण और वित्त व्यवस्था के बारे में उनकी लापरवाही एवं अज्ञानता का द्योतक है। साथ ही यह सदन के प्रति सरकार के उपेक्षापूर्ण रुख का भी परिचायक है। वस्तुतः यह गलत बयानी सदन की अवमानना है।

इस बार के बजट भाषण में यह उल्लेख भी है कि राज्य को मिलने वाले

केन्द्रीय करों के हिस्सा में इस वर्ष कुल 1136 करोड़ रुपये की कमी हुई है। राज्य कर की प्राप्तियों में 104 करोड़ रुपये की, गैर कर प्राप्तियों में 93 करोड़ रुपये की और केन्द्रीय अनुदान में 18 करोड़ रुपये की कमी हुई है। यानी कुल 1351 करोड़ रुपये की कमी इस बार राजस्व खाता के विभिन्न प्राप्ति शीर्षों में राज्य को हुई है। पिछले वर्ष के बजट भाषण में भी तत्कालीन वित्त मंत्री ने कहा था कि केन्द्रीय करों में 513 करोड़ रुपये की, राज्य करों में 974 करोड़ रुपये की, गैर करों में 1031 करोड़ रुपये की और केन्द्रीय अनुदान में 653 करोड़ रुपये की कमी हुई है। इनका कुल जोड़ 3171 करोड़ रुपये होता है जो पिछले बार के बजट भाषण में अंकित है। इस बार के बजट भाषण में राजस्व प्राप्ति शीर्ष में कुल कमी 1351 करोड़ रुपये की बताई गयी है। इस वर्ष प्राप्तियों में 1351 करोड़ रुपये की कमी ने सरकार को यह कहने पर बाध्य कर दिया कि इस कारण से वह पूरा बजट इस वर्ष सदन से पारित नहीं करा पा रही है और लेखानुदान लेने के लिये बाध्य हो रही है। परन्तु पिछली बार 3171 करोड़ रुपये की ऐसी ही कमी हुई थी, उसके बावजूद सरकार अपनी पीठ थपथपा रही थी कि वह बहुत दिनों के बाद पूरा बजट एक बार में पास करा रही है और लेखानुदान की प्रक्रिया में नहीं जा रही है। इस विरोधाभास से सरकार की नीयत पर सवाल खड़ा हो रहा है।

भारत सरकार का उल्लेख इस बार के बजट भाषण में जिस तरह से किया गया है, वह अनुचित है, असंवैधानिक है, एक आपत्तिजनक परम्परा स्थापित करने वाला है। ऐसा नहीं होना चाहिए था। यह वर्ष आठवीं पंचवर्षीय योजना का अंतिम वर्ष है। इसी सरकार ने पांच साल पहले आठवीं पंचवर्षीय योजना तैयार की थी। उस समय योजना दस्तावेज में कहा गया था कि सरकार इस योजना अवधि में 893 करोड़ रुपये का अतिरिक्त राजस्व इकट्ठा करेगी। बजट भाषण में कहीं भी इस बारे में कोई उल्लेख नहीं है। इस वर्ष आठवीं पंचवर्षीय योजना का अंत हो रहा है, नौवीं पंचवर्षीय योजना का आरंभ होने वाला है। जिस पंचवर्षीय योजना का कार्यकाल पूरा हो गया है, जिसकी अवधि समाप्त हो गयी है, प्रबंधन और कार्यान्वयन कैसे किया गया, उस योजना में क्या कमियां रहीं, निर्धारित अतिरिक्त राजस्व इकट्ठा

हुआ या नहीं, 18 हजार करोड़ रुपये की आठवीं पंचवर्षीय योजना बनाई गई थी पर वह 9 हजार करोड़ रुपये से भी कम में सिमट रही है तो इसका क्या कारण है, यह सब सरकार को बताना चाहिए था पर इस बजट में इसका सांकेतिक उल्लेख भी नहीं है ।

हमलोग कई वर्षों से देख रहे हैं कि सरकार की योजना में और सरकार के बजट में कोई तालमेल नहीं रहता है । योजना विभाग राज्य योजना का आकार अलग निर्धारित करता है और सरकार आनन–फानन में अवास्तविक आंकड़ों का पुलिंदा बजट के नाम पर विधान मंडल के सामने रख देती है । सदन में सरकार समर्थक पक्ष का बहुमत होने के कारण विधान सभा इसके गुण–दोष में गये बिना इस पर स्वीकृति भी प्रदान कर देती है। बहुमत के जोर पर विधान मंडल से बजट पारित करा लिया जाता है । सदन से पारित हो जाने के बाद बजट के प्रावधानों को राज्य सरकार की प्राधिकृत समिति बदल देती है। वित्तीय संकट के नाम पर सदन से पारित योजनाओं के क्रियान्वयन पर रोक लगा दी जाती है । बजट और योजना में कहीं तालमेल नहीं है। इस बार के बजट में भी वास्तविक आंकड़े नहीं हैं। आशंका व्यक्त की जा रही थी कि वर्ष 2001–02 में राज्य की आर्थिक स्थिति पर राज्य के विभाजन का असर पड़ेगा, परन्तु ऐसा कोई असर इस बजट में नहीं दिखाई पड़ रहा है ।

2000–01 में, जिस वित्तीय वर्ष में झारखंड राज्य बिहार से अलग हुआ, उस वर्ष के लिये सरकार ने बजट में जो आंकड़े दिए हैं, वे आँखें खोलने वाले हैं। जिस समय वित्तीय वर्ष 2000–01 का बजट विधान सभा में पेश हुआ उस वक्त बिहार अविभाजित था । अब जब उस वर्ष के आय–व्यय के वास्तविक आंकड़े प्राप्त हो गये हैं तब बिहार अलग राज्य है और झारखंड अलग राज्य है । इस वर्ष के बजट में सरकार ने 2000–01 के वास्तविक व्यय के आंकड़ों को दिया है और कहा है कि वर्ष 2000–01 में समेकित निधि में कुल 5512 करोड़ रुपये की वास्तविक प्राप्तियां हुई और वास्तविक व्यय हुआ 6826 करोड़ रुपये का । अब चलिये हम देखते हैं कि इस वर्ष 2001–02 में समेकित निधि में प्राप्ति और व्यय के आंकड़े

क्या है ? 2000–01 से कितना अधिक या कितना कम खर्च सरकार इस वर्ष कर रही है । सरकार कह रही है कि 2001–02 के लिये जब राज्य का वार्षिक बजट बना तो सरकार ने अनुमान किया था कि राज्य की समेकित निधि में 16,089.74 करोड़ रुपये की प्राप्ति होगी । परन्तु उससे ज्यादा यानी 20,695 करोड़ रुपये की प्राप्ति हुई है । इस वर्ष के बजट में वर्ष 2001–02 की प्राप्तियों का यह रिवाइज्ड एस्टिमेट दिया हुआ है, जिसको हम प्री–एक्चुअल कह सकते हैं । यह रिवाइज्ड एस्टिमेट सरकार ने गत जनवरी–फरवरी में कभी तैयार किया होगा । इस रिवाइज्ड एस्टिमेट में सरकार कहती है कि वर्ष 2001–02 में राज्य की समेकित निधि में कुल जितनी राशि प्राप्त होने का अनुमान था, वस्तुतः कुल प्राप्तियाँ उससे करीब 4606 करोड़ रुपये अधिक की हुई हैं । इस बजट में भी सरकार कह रही है कि जब 2000–01 में, जिस आधार वर्ष में झारखंड राज्य अलग हुआ, उस आधार वर्ष में कुल मिलाकर केवल 5512 करोड़ रुपये की वास्तविक प्राप्ति समेकित निधि में हुई थी । तो उसके ठीक अगले साल यानी 2001–02 में 20,695 करोड़ रुपये की प्राप्ति कैसे हो गयी ? उसी तरह से, जिस वर्ष झारखंड अलग हुआ बिहार से उस वर्ष इस सरकार ने 6826 करोड़ रुपये खर्च किये हैं समेकित निधि से। इस वर्ष 2001–02 के बजट में, यानी झारखंड राज्य बिहार से अलग होने के एक वर्ष बाद के बजट में, बिहार सरकार कह रही है कि इस वर्ष वह कुल 16599 करोड़ रुपये खर्च करेगी । आखिर कैसे ? वित्तीय संसाधनों में इस बढ़ोतरी का राज क्या है ? इसका खुलासा बजट में क्यों नहीं है ।

महोदय, ये आंकड़े मेरे नहीं हैं ये राज्य सरकार के अधिकृत आंकड़े हैं बिहार सरकार द्वारा इन्हें सदन पटल पर रखा गया है । इसके पहले सरकार कहती रही है कि झारखंड राज्य अलग हो गया तो शेष बिहार की आर्थिक स्थिति बहुत खराब हो जायेगी । पिछले साल के बजट भाषण में भी सरकार ने यही कहा था कि वित्तीय स्थिति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है । इस बार भी यही कहा जा रहा है। भाषण में बार–बार यही दुहराया जा रहा है । परन्तु इस वर्ष के बजट के आंकड़ों से यह कत्तई परिलक्षित नहीं हो रहा है । जिस वर्ष झारखंड अलग हुआ उसके एक वर्ष बाद, यानी

वर्ष 2001–02 के बजट के पुनरीक्षित अनुमान में 20,695 करोड़ रुपये की आय अपनी समेकित निधि में होने की बात आखिरकार राज्य सरकार कैसे बता रही है ? आखिर कैसे ? क्या इस बजट के सारे आंकड़े भ्रामक हैं ? क्या यह बजट नीरस एवं अविश्वसनीय आंकड़ों का पुलिन्दा है सरकार को चाहिए कि इस बजट के प्रावधानों पर फिर से विचार करे। इसमें आवश्यक संशोधन करे। इसलिये इस सदन को भी चाहिए कि सरकार द्वारा सदन में प्रस्तुत बजट को एकमत से खारिज करे और सरकार को इस पर लेखानुदान लेने की अनुमति नहीं दे।

□ 21 मार्च 2002
बिहार विधान परिषद्

•••

संसाधनों का दुरुपयोग चिंताजनक

राज्य सरकार द्वारा सदन के समक्ष प्रस्तुत वित्तीय वर्ष 2002–03 का यह आय–व्ययक दसवीं पंचवर्षीय योजना का पहला आय व्ययक है। बिहार का पुनर्गठन होने के बाद विधान मंडल के समक्ष रखा गया यह दूसरा आय–व्ययक है और वर्तमान मुख्यमंत्री श्रीमती राबड़ी देवी के कार्यकाल में सदन के समक्ष रखा गया यह चौथा आय–व्ययक है। इस सदन में बजट पर अपना विचार रखते हुए माननीय सदस्य रामकृपाल यादव जी हमलोगों को 1990 की ओर ले गये थे। अगर हम 1990 से देखें तो जिस दल की सरकार उस समय से बिहार में लगातार चली आ रही है, उस दल की सरकार की ओर से सदन में रखा गया यह 11वां बजट है।

जब हम इस बजट की विषय वस्तु का विश्लेषण दसवीं पंचवर्षीय योजना के पहले साल के बजट के रूप में या पुनर्गठित बिहार के दूसरे साल के बजट के रूप में या वर्तमान मुख्यमंत्री के चौथे बजट के रूप में अथवा राष्ट्रीय जनता दल की सरकार के 11वें बजट के रूप में करते हैं तो यह साफ दिखायी पड़ता है कि जिस तरह इसके पूर्व की सरकारों द्वारा सदन में पेश किये गये पिछले सभी दस बजट दिशाहीन थे, यह बजट भी उसी तरह की दिशाहीनता से ग्रस्त है। जिस तरह से विगत एक दशक के बजट प्रबंधन ने बिहार में आर्थिक कुप्रबंध बढ़ाया है, वित्तीय अव्यवस्था फैलाया है, यह बजट भी वैसा ही है, उसी श्रेणी का है, यथास्थिति को मजबूत करनेवाला है, जड़ता को मजबूत करनेवाला है। हमलोगों को उम्मीद थी कि उत्तरवर्ती बिहार में जब दसवीं पंचवर्षीय योजना लागू होगी तो शायद यह सरकार अगर विगत पन्द्रह, बीस, पच्चीस साल का नहीं तो कम से कम पिछले 11 वर्षों की आर्थिक स्थिति का मूल्यांकन जरूर करेगी। परन्तु इस बजट को देखने से ऐसा नहीं लगता है।

1980 से 1990 के बीच कांग्रेस की सरकार इस राज्य में थी। कांग्रेस आज वर्तमान राष्ट्रीय जनता दल सरकार की सहयोगी पार्टी के रूप में है। उस दशक में राज्य का औसत विकास दर 4.2 प्रतिशत था। उल्लेखनीय है कि यह छठवीं और

सांतवीं पंचवर्षीय योजना का कार्यकाल था जो 1980 में आरम्भ हुआ था और 1990 में समाप्त हुआ। सातवीं पंचवर्षीय योजना उद्व्यय में मध्यवर्ती संशोधन हुआ था। योजना का आकार बढ़ा था, मध्यवर्ती संशोधन ऊपर की दिशा में हुआ था। हम सभी उस समय की कांग्रेसी सरकारों को नकारा, निकम्मी, यथास्थितिवादी, प्रतिगामी और सामंतों की सरकार कहते थे। ऐसी सरकार के समय में सातवीं पंचवर्षीय योजना का आकार जो आरम्भ में 5100 करोड़ रुपये निर्धारित था उसका अंत 6400 करोड़ रुपये पर हुआ। सांतवीं पंचवर्षीय योजना समाप्त होने के समय 31 मार्च 1990 को इस राज्य की परिसम्पत्ति भी दायित्वों से करीब 700 करोड़ ज्यादा थी। राज्य की परिसम्पत्तियों और दायित्वों का अन्तर प्लस में था, धनात्मक था। यानी मार्च 1990 में जब श्रीमान लालू प्रसाद बिहार के मुख्यमंत्री बने तो विरासत में उन्हें एक अच्छी उर्ध्वगामी अर्थव्यवस्था मिली थी। परन्तु 1990 के बाद जैसे ही आठवीं पंचवर्षीय योजना का कालखंड आरम्भ हुआ राज्य की वित्तीय स्थिति में तेजी से गिरावट आने लगी। आठवीं पंचवर्षीय योजना 1992 में शुरू हुई। इसके पहले 1990-91 और 1991-92 के वित्तीय वर्षों में दो वार्षिक योजनायें लागू की गईं। केन्द्र में सरकार बदलते रहने के कारण आठवीं पंचवर्षीय योजना की प्राथमिकतायें निर्धारित नहीं हो सकीं। हालांकि बिहार ने 1990-95 के लिये अपनी आठवीं पंचवर्षीय योजना तैयार कर ली थी। पर केन्द्र ने पूर्ववर्ती सरकार की प्राथमिकतायें बदलकर 1992-97 के लिए आठवीं पंचवर्षीय योजना प्रारूप पुनः तैयार किया। क्योंकि इसके पूर्व का प्रारूप वी.पी.सिंह की गैर कांग्रेसी सरकार ने तैयार किया था। 1991 में मध्यावधि चुनाव के बाद केन्द्र में कांग्रेस की सरकार बन गई। बिहार सरकार ने भी स्वाभाविक रूप से इसका अनुकरण किया। पूरे देश की तरह बिहार के लिये भी 1990-92 में दो वर्षों का योजनावकाश रहा। राज्य की आठवीं पंचवर्षीय योजना 13,000 करोड़ रुपये की तैयार की गयी। 1997 में इसकी अवधि पूरी होने पर पता चला कि लालू-राबड़ी सरकार द्वारा आठवीं पंचवर्षीय योजना के लिये निर्धारित उद्व्यय राशि का 45 प्रतिशत भी खर्च नहीं किया जा सका, क्योंकि इसके लिये जरूरी संसाधन नहीं जुट पाया। घपलों-

घोटालों और सरकारी खजाना से कपटपूर्ण अवैध निकासी इस अवधि में बढ़-चढ़ कर हुयी। जिस राज्य में सातवीं पंचवर्षीय योजना अवधि में निर्धारित राशि से अधिक व्यय हुआ, उसी राज्य में आठवीं पंचवर्षीय योजना औंधे मुँह गिर गयी। इसका आकार आधा से भी कम रह गया।

उसके बाद इसी सरकार ने नौवीं पंचवर्षीय योजना का प्रारूप तैयार किया। वर्ष 1997-98 से 2001-02 के पाँच वित्तीय वर्षों के लिये इसे लागू किया। मैं तो खोजता रहा कि नौवीं पंचवर्षीय योजना प्रारूप का दस्तावेज भी कहीं मिल जाय, जिस तरह से आठवीं पंचवर्षीय योजना का प्रारूप छपा हुआ मिला था। लेकिन यह दस्तावेज कहीं मिला नहीं। आज तक यह दस्तावेज छपा नहीं है। राज्य सरकार ने इसे छपवाना मुनासिब नहीं समझा। यह कार्यालय प्रति तक सिमटा हुआ है। यह नौवीं पंचवर्षीय योजना 16000 करोड़ रुपये की बनी थी। दो साल भी नहीं बीते कि सरकार को लगा कि यह योजना संसाधनों की कमी के कारण पूरी नहीं हो सकती है। नतीजतन इसका पुनरीक्षण हुआ, इसके उद्व्यय अनुमानों में मध्यवर्ती संशोधन हुआ। मध्यवर्ती आंकलन के बाद वह संशोधन नीचे की ओर हुआ। नौवीं पंचवर्षीय योजना का उद्व्यय आकार घटाकर 9,792 करोड़ रुपया कर दिया गया। पिछले साल 31 मार्च 2002 को जब इस पंचवर्षीय योजना का कार्य काल पूरा हुआ तो पता चला कि राज्य सरकार संशोधित योजना आकार का भी मात्र 90 प्रतिशत ही खर्च कर पायी है। यह स्थिति है इस सरकार के व्यय क्षमता की, वित्तीय संसाधनों के उपयोग की।

दोनों ही पंचवर्षीय योजनाओं में लक्ष्य था कि सरकार साढ़े पांच प्रतिशत की वृद्धि दर हासिल करेगी। पर हुआ क्या? 1990 से 1996 के बीच इस राज्य की विकास दर ऋणात्मक रही, माइनस 1.6 प्रतिशत की दर से। अगर हम पूरे 10 वर्षों की स्थिति देखें तो राज्य सरकार ने 1990 से 2000 के बीच 10 वर्षों में मात्र 2.1 प्रतिशत का विकास दर हासिल किया है जबकि सातवीं पंचवर्षीय योजना में राज्य का विकास दर 4.2 प्रतिशत था।

दसवीं पंचवर्षीय योजना में केन्द्र सरकार ने 8 प्रतिशत विकास दर का लक्ष्य रखा है। केन्द्र सरकार के विकास दर का यह लक्ष्य तभी हासिल हो सकता है जब बिहार जैसा राज्य भी केन्द्र की रफ्तार के साथ अपने कदम बढ़ाये, केन्द्र की चाल से चले। परन्तु लगता नहीं है कि जो बजट हमारे सामने पेश किया गया है वह बजट हमको 2 प्रतिशत से ज्यादा का विकास दर दे सकेगा। यानी बिहार दुनिया भर में इसके लिए जाना जायेगा कि भारतवर्ष ने जिस समय तेज रफ्तार से प्रगति करनी शुरू की, जिस समय यहां की आर्थिक गतिविधियों ने उछाल लेना शुरू किया, उस समय बिहार एक ऐसा राज्य था जो संसाधन सम्पन्न होने के बाद भी इस देश की प्रगति की राह में कांटा साबित हुआ, देश की प्रगति की रफ्तार में रोड़ा बना रहा। देश के विकास को बिहार की इस नाकाबिल सरकार की यही देन है। स्थिति ऐसी बनी रही तो भारत तेजी से दुनिया के विकसित देशों की श्रेणी में स्थान कैसे प्राप्त कर सकेगा ?

मैं इस तथ्य से सदन को अवगत कराना चाहूँगा कि 1980 में दुनिया भर में यह धारणा थी कि 100 मिलियन डॉलर जिस देश की सकल घरेलू आय है वह देश विकसित देशों के समूह में, विकसित देशों की लीग में शामिल माना जाता था। भारत उनमें एक था। चार देश थे इस श्रेणी में। 1990 में इसमें 24 देश शामिल हो गये। भारत का योगदान इसमें 1.44 प्रतिशत का था। 2000 आते-आते यह योगदान 1.68 प्रतिशत हो गया। भारत की योजनात्मक प्रगति की तेज रफ्तार को देखकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के विशेषज्ञ अनुमान लगा रहे हैं कि 2010 में जब 38 देश इस लीग में शामिल रहेंगे तो उस समय भारत का योगदान 2.6 प्रतिशत होगा। 2020 के लिए जो दूरगामी योजना भारत सरकार ने बनाई है और जो लक्ष्य तय किया है उस लक्ष्य तक पहुंचते-पहुंचते 2020 में दुनिया के 42 देशों के इस लीग में शामिल हो जाने की संभावना है। मुझे प्रसन्नता हो रही है यह बताने में कि उस समय भारत का योगदान इनमें 4.07 प्रतिशत होगा। इसका जिक्र महामहिम राष्ट्रपति अब्दुल कलाम की पुस्तक में है।

परन्तु बिहार जैसे राज्य जब विकास की दौड़ में देश की रफ्तार के साथ

कदम मिलाकर नहीं चलेंगे, इस देश की प्रगति में अपेक्षित योगदान नहीं देंगे, जब इनकी विकास का दर ऋणात्मक होगा, बिहार जब अपना निर्धारित लक्ष्य नहीं प्राप्त कर सकेगा तो निश्चित रूप से देश की प्रगति बाधित होगी। इसलिए आज देश के आर्थिक विशेषज्ञ चिंतित हैं कि बिहार जैसे राज्यों के विकास की रफ्तार कैसे तेज की जाय। केन्द्र सरकार इसके लिए हर कदम पर सहयोग देने के लिए तैयार है। केन्द्र सरकार ने जो सहयोग दिया है इस बीच, उसको देखें तो पता चलता है कि जहाँ वर्ष 1990 में सिर्फ 1995 करोड़ रुपये केन्द्रीय सहायता अनुदान के रूप में बिहार को मिले थे, आज 10,220 करोड़ रुपये मिल रहे हैं। विगत तीन-चार वर्षों से केन्द्र सरकार का भरपूर सहयोग भी बिहार सरकार की प्रगति की धीमी रफ्तार को बढ़ाने में कामयाब नहीं हो पा रहा है।

हम भी चाहते हैं कि हमारी जिंदगी में वह दिन आये जब हम कहें कि हम उस हवा में सांस ले रहे हैं जहां बिहार भी विकास की ओर तेज रफ्तार से गतिशील है। परन्तु, लगता नहीं है कि वर्तमान राज्य सरकार के रहते ऐसा हो पायेगा। आखिर विकास का मतलब क्या होता है ? कोई राज्य कब और कैसे विकसित होता है। किसी राज्य को विकसित होता हुआ तब कहा जाता है जब उस राज्य का सकल घरेलू उत्पाद बढ़ रहा हो, दायित्वों और परिसम्पत्तियों में से दायित्वों की तुलना में परिसम्पत्तियां बढ़ रही हों, पूंजी निर्माण की शक्ति राज्य में पैदा हो रही हो, विकास का दर बढ़ रहा हो, योजना व्यय बढ़ रहा हो, प्रति व्यक्ति आय बढ़ रही हो, यहां के लोगों की खरीद क्षमता बढ़ रही हो,यह सब होगा तो मानेंगे कि राज्य प्रगति की ओर बढ़ रहा है। विकास दर कोई कागजी चीज नहीं है, कोई कोरी कल्पना नहीं है। विकास दर के बारे में कहा जाता है कि विकास दर यह इंगित करता है कि किसी राज्य की आर्थिक स्थिति कितनी मजबूत है और उसमें उस आर्थिक स्थिति को मजबूत करते रहने की कितनी क्षमता है? हम जब वस्तुस्थिति का विश्लेषण करते हैं तो लगता है कि बिहार की आर्थिक एवं वित्तीय स्थिति तो मजबूत है ही नहीं। यह राज्य तो अपने बलबूते अपनी संसाधन क्षमता का विकास करने की भी स्थिति में नहीं है।

सच्चाई तो यह है कि राज्य के विकास के द्योतक माने जाने वाले ऐसे औसत आंकड़े वास्तव में राज्य के आम आदमी की असली स्थिति के द्योतक नहीं होते हैं। इसलिए आम लोगों के संदर्भ में जब हम विकास की बात करते हैं तो ऐसे विकास का मतलब क्या होता है ? विकास का मतलब होता है कि लोगों की क्वालिटी ऑफ लाइफ इम्प्रूव करे, उनके जीवन जीने की गुणवत्ता बढ़े । किस प्रकार का भोजन उनको मिलता है, भोजन में पौष्टिक तत्वों का अंश कितना है, औसत भोजन की उपलब्धता उनकी कितनी है, जीवन काल की औसत संभावना उनकी कितनी है, शिशुओं की मृत्यु दर कितनी है, पीने के पानी की उपलब्धता कितनी है, आवास की स्थिति क्या है, स्वास्थ्य की स्थिति क्या है और किस–किस किस्म के हुनरों के सीखने के अवसर उन्हें मिल रहे हैं । महोदय, यह लोगों के साथ संबंध होता है विकास का। मगर जब हम इस सदन में ही सवालों का मंत्रियों के द्वारा दिया गया जवाब सुनते हैं तो यह साफ हो जाता है कि लोगों को शिक्षा की सुविधा देने की स्थिति में, स्वास्थ्य सुविधा देने की स्थिति में, स्वच्छ पानी पिलाने की स्थिति में, पौष्टिक भोजन देने की स्थिति में यह सरकार नहीं है ।

राज्य सरकार के अन्दर नीति और नीयत की खोट न केवल राज्य के औसत आर्थिक विकास को बाधित कर रही है, बल्कि यहां के लोगों के विकास को, प्रगति को, उत्थान को भी बाधित कर रही है। महोदय, आखिर हम विकास की कोई योजना बनाते हैं तो हमारे सामने कौन सी तस्वीर रहती है? महात्मा गांधी ने कहा था कि ''विकास की योजनाओं को बनाते समय हमारे सामने यह स्पष्ट रहना चाहिए कि हम जो कर रहे हैं, उसका असर विकास की अंतिम सीढ़ी पर बैठे व्यक्ति के उपर क्या होगा।'' उन्हीं के शब्दों में उद्धृत करूं तो महात्मा गांधी ने कहा था कि ''किसी भी देश या राज्य के विकास के लिए किए गए हर काम की कसौटी यह होनी चाहिए कि उसके द्वारा सबसे गरीब और पिछड़े आदमी की आंखों के आंसू पोछे जा सकते हैं या नहीं''। यह महात्मा गांधी की विकास की कल्पना थी। एक बार हम सोचें कि बजट बनाते समय, दसवीं पंचवर्षीय योजना बनाते समय, आठवीं–नौवीं पंचवर्षीय योजना बनाते समय तत्कालीन सरकारों के समक्ष महात्मा गांधी द्वारा बताया गया

यह लक्ष्य था या नहीं था? जब हम विश्लेषण करते हैं तो लगता है कि यह लक्ष्य सामने रहना तो दूर आज की ये सरकारें शायद इस दिशा में सोच भी नहीं रही हैं । आज ऐसी स्थिति में हम सदन में बिहार सरकार के वर्ष 2002–03 के बजट के बारे में विचार कर रहे हैं कि यह बजट बिहार को किस दिशा में ले जाने वाला है। मैं सदन से आग्रह करूंगा कि इस विश्लेषण के बाद सदन को एक राय बनानी चाहिए और सर्वसम्मति से इस सरकार को सलाह देनी चाहिए कि अगर विकास की दिशा में जानेवाला बजट बना सकना सरकार के बूते की बात नहीं है तो वह इस मुद्दे पर चर्चा के लिये सर्वदलीय बैठक बुलाए, विशेषज्ञों की बैठक बुलाये ।

सरकार द्वारा कुछ दिन पूर्व अर्थशास्त्री श्री एस.सी.झा की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गयी थी । इस समिति ने अपनी एक रिपोर्ट दी है । उस रिपोर्ट के तथ्यों और सुझावों के बारे में इस बजट में कुछ भी चर्चा नहीं है । मुझे लगा कि श्री जे. जे. ईरानी की रिपोर्ट पर और श्री एस. सी. झा की रिपोर्ट पर सरकार कुछ करेगी। मगर जिस बजट पर हम विचार कर रहे हैं, उसमें इन रिपोर्टों के बारे में कोई चर्चा ही नहीं है । जे. जे. ईरानी और एस.सी.झा की रिपोर्टों को सदन के सामने रखा जाना चाहिए । उनके फलाफल के बारे में चर्चा होनी चाहिये । सरकार को चाहिए कि इस बारे में एक सर्वदलीय बैठक बुलाये, विशेषज्ञों की बैठक बुलाये और उनके सामने अपनी समस्याओं को रखे । आगे आनेवाले वर्षों में हम जो योजनायें और बजट बनानेवाले हैं, कम से कम उनमें तो हम सावधानी रखें, उनमें तो इन समितियों के सुझावों पर अमल करने का प्रावधान करें ।

इसके पहले के वित्तीय वर्ष में भी यहां के वित्त मंत्री ने, जो अब सरकार में नहीं हैं, सदन के समक्ष वार्षिक बजट रखा था । बजट प्रस्ताव पर हम सब का भाषण हुआ था । मंत्री महोदय उसके पक्ष में बोलने के लिए खड़े हुए तो उन्होंने कहा था कि हमने एक सुचिंतित आर्थिक संरचना खड़ी की है, अच्छा आर्थिक प्रबन्धन किया है, कठिनाइयों के बावजूद हमने बिगड़ती हुई आर्थिक स्थिति को संभाला है । उन्होंने यह भी बताया था कि किस तरह झारखण्ड अलग राज्य होने के बाद जब हमारे राजस्व के बहुत सारे संसाधन यहां से चले गये, तब भी हमने यहां की स्थिति को

संभाला है। यह बताया गया था उस समय के राज्य के वित्त मंत्री महोदय के द्वारा।

परन्तु आज जब भी मैं खड़ा होता हूँ बोलने के लिये तो कई तरफ से सदन में आवाजें आती हैं कि झारखंड अलग राज्य हो जाने से बिहार की आर्थिक स्थिति खराब हो गयी है। यहां की आर्थिक स्थिति बिगड़ गयी है। जितना हमारा राजस्व था, जितने हमारे कमाई के साधन थे, सब यहां से चले गये। अगर यह दृष्टिकोण सही है तो यह इस बजट में भी परिलक्षित होना चाहिए था। परन्तु इस बजट में यह परिलक्षित नहीं हुआ है। महोदय, जब हम आंकड़े देखते हैं बजट के तो जैसा कि सभी बजट के साथ होता है कि जिस साल का बजट होता है, उस वर्ष के आय–व्यय का अनुमान, उसके पहले साल का बजट आवंटन और इसका पुनरीक्षित अनुमान तथा उसके भी पहले वाले साल के वास्तविक आय–व्यय के आंकड़े बजट में रहते हैं। इस तरह से हम देखते हैं कि वर्ष 2000–01 के वास्तविक व्यय का आंकड़ा इसी बजट में हुआ है। यह हमारे सामने रखा हुआ है। इसमें यह दिया गया है कि वर्ष 2000–01 में बिहार का वास्तविक राजस्व आय 2706.56 करोड़ रुपये की थी और जब झारखंड अलग हो गया, जब बिहार का पुनर्गठन हो गया, और 2001–02 में शेष बिहार का पहला बजट पेश हुआ तो उसका बजट अनुमान और पुनरीक्षित अनुमान के जो आंकड़े हैं उनके अनुसार शेष बिहार की राजस्व आय 11568.99 करोड़ रुपया हो गयी है। यानी 2706 करोड़ रुपया का वास्तविक राजस्व व्यय बिहार का उस समय था जब झारखंड साथ था। झारखंड अलग होते ही शेष बिहार के राजस्व व्यय में बेतहाशा वृद्धि हो गयी। हम रॉकेट की रफ्तार से भागे और वर्ष 2001–02 के बजट अनुमान बिहार की अनुमानित राजस्व आय बढ़कर 11569 करोड़ रुपया आखिर इस बजट अनुमान का आंकड़ा किस प्रकार के आंकलन पर आधारित है, हो गयी।

वर्ष 2003–04 के बजट में 2001–02 के राजस्व आय का आंकड़ा 9995.18 करोड़ रुपया है। आखिर बजट अनुमान और वास्तविक आकड़ा में इतना अंतर क्यों है ? ऐसा ही अंतर 2002–03 के राजस्व आय के बजट अनुमान और वास्तविक आंकड़ें में है बजट अनुमान है 12015.48 करोड़ रुपया जब कि

वास्तविक राजस्व आय है मात्र 5842.15 करोड़ रुपया। जब सरकार यह कहती है कि झारखंड के अलग हो जाने के बाद बिहार की आर्थिक स्थिति खराब हुई है इसलिये बिहार को आर्थिक सहायता का पैकेज मिलना चाहिए तो इस स्थिति को बजट द्वारा भी संपुष्ट किया जाना चाहिए। अन्यथा सदन में और सदन के बाहर इस बात को कहने से सरकार की विश्वसनीयता खतरे में पड़ेगी, सरकार की स्थिति हास्यास्पद होगी और राज्य का हित प्रभावित होगा। यदि हम आर्थिक आंकड़ों के साथ ईमानदारी नहीं बरतेंगे और बजट को सही तरीके से नहीं बनायेंगे तो राज्य का हित नहीं सधेगा और हम केन्द्र से जितनी सहायता प्राप्त करना चाहते हैं महोदय, वह भी प्राप्त नहीं कर पाएंगे। हमलोग हमेशा कहते हैं, यहां भी कई बार चर्चा होती है और कुछ लोग तो बहुत तल्खी के साथ कहते हैं कि केन्द्र सरकार को जितनी सहायता देनी चाहिए, उतनी सहायता केन्द्र सरकार हमको नहीं दे रही है। एक बार हम गौर करें कि केन्द्र से पहले क्या सहायता प्राप्त होती थी और अब क्या प्राप्त हो रही है। मैं पहले कह चुका हूँ कि केन्द्र से जितनी सहायता और अनुदान 1990 में प्राप्त होता था, उससे काफी अधिक, 5 गुना से भी अधिक, अभी प्राप्त हो रहा है। परन्तु राज्य सरकार ''नाच न जाने आंगन टेढ़ा'' वाली कहावत चरितार्थ कर रही है।

मैं पुनः जोर देकर कहना चाहता हूँ कि राज्य सरकार ने सदन के सामने वर्ष 2002–03 का जो बजट पेश किया है, उस बजट में राज्य को आर्थिक स्थिति की घोर अनदेखी की गयी है। जब तक हम इस बात का विश्लेषण नहीं करेंगे कि किन कारणों से पिछले 10–12 वर्षों में बिहार की आर्थिक स्थिति खराब होती जा रही है, तब तक हम आगे इसके निदान के लिए किसी प्रयास में सफल नहीं हो सकेंगे। महोदय, मैं राज्य सरकार द्वारा इस सदन में पेश बजट से ही उद्धृत कर रहा हूँ कि सरकार प्रत्येक वर्ष जितनी योजनाएं बना रही है जितना योजना उद्व्यय निर्धारित कर रही है उस लक्ष्य को पूरा नहीं कर पा रही है। कई वर्षों से लम्बे समय से राज्य का बैलेंस ऑफ करेन्ट रेवेन्यू निगेटिव में जाता रहा है। ये स्थिति हो गयी है कि राज्य सरकार के अपने राजस्व से योजना उद्व्यय में योगदान ऋणात्मक हो गया है।

अभी वित्तीय वर्ष 2001–02 बीता है इस वर्ष के लिये सरकार ने वार्षिक योजना उद्व्यय निर्धारित किया था करीब 2600 करोड़ रुपया का। वित्तीय वर्ष आरम्भ होने के कुछ माह बाद योजना उद्व्यय को संशोधित करके 1600 करोड़ रुपया किया गया और जब वित्तीय वर्ष का अंत हुआ तो पाया गया कि योजना मद का वास्तविक व्यय 1400 करोड़ रुपया से भी कम है। इस योजना के लिए एक पैसा का भी संसाधन राज्य सरकार ने अपने राजस्व से नहीं लगाया। पूरी योजना केन्द्रीय सहायता वाले कार्यक्रमों पर आधारित है और यहाँ मंत्री जी कह रहे हैं कि केन्द्र सरकार सहायता नहीं दे रही है राज्य को।

इसी तरह से वर्तमान वित्तीय वर्ष के लिए जो योजना बनायी गयी है, इसके लिये बजट में जो प्रावधान रखा गया है उसके मुताबिक केन्द्र सरकार से राजस्व खाता में 3512 करोड़ रुपया और पूंजीगत खाता में 6288 करोड़ रुपया यानी कुल मिलाकर करीब 9600 करोड़ रुपया का हिस्सा सहायता अनुदान एवं अन्य मदों में केन्द्र से राज्य को मिल रहा है। राज्य सरकार जो व्यय कर रही है, वह राजस्व खाता में ब्याज अदायगी के रूप में 2864 करोड़ रुपया और पूंजीगत खाता में 2767 करोड़ रुपया यानी कुल मिला कर 5631 करोड़ रुपया राज्य सरकार पूर्व में लिये गये कर्जों के ब्याज शोधन के रूप में व्यय कर रही है। इसके बाद 3969 करोड़ रुपया केन्द्र सरकार से हुई प्राप्तियों में से शेष बचता है। अगर यह राशि पूरा का पूरा योजना मद में खर्च की जाय तो हमारे राज्य की वार्षिक योजना कम से कम 3969 करोड़ रुपया की होनी चाहिए थी। परन्तु योजना मद का उद्व्यय इस बजट में रखा गया है मात्र 2390 करोड़ रुपया। राज्य सरकार का अपना राजस्व योगदान वार्षिक योजना में इस वर्ष भी यानी 2002–03 में भी 1579 करोड़ रुपया निगेटिव में जाने का संकेत है। यह स्थिति राज्य के लिए एलार्मिंग है। किसी भी सरकार को सोचना चाहिए कि हमारा बैलेंस ऑफ करेन्ट रेवेन्यू निगेटिव में हो जाये, वहाँ तक तो ठीक है। कई राज्यों में ऐसा हो रहा है। मगर राज्य का अपना योगदान अपनी वार्षिक योजनाओं में शून्य से नीचे चला जाय, वो भी 1500 करोड़ रुपया से भी अधिक नीचे चला जाय, तो यह चिन्ता की बात है। इस तरह से राज्य का विकास

नहीं हो सकता है।

पिछले 10–12 वर्षों के अंदर बिहार सरकार ने बेतहाशा कर्ज लिया है और उस कर्ज का ही परिणाम है कि आज हमारी ये हालत हुई है। आज ब्याज अदायगी के मद में सरकार को काफी पैसे चुकाने पड़ रहे हैं। 1990 में केवल 479 करोड़ रुपया व्यय होता था सरकार द्वारा लिये गये कर्जों पर ब्याज भुगतान के मद में। आज 2002–03 के बजट में 5611 करोड़ रुपया चुकाने की बात कही गयी है, केवल अबतक लिये गए कर्जों के ब्याज के रूप में। आखिर इस पर अंकुश नहीं लगायेंगे तो राज्य विकास की दिशा में आगे कैसे बढ़ पायेगा।

यह तो एक बात है। इसके साथ साथ राज्य सरकार बजट से जो उधार दे रही है उसकी वसूली नगण्य है। आज सरकार का 5758 करोड़ रुपया उधार खाता में पड़ा हुआ है। केवल बोर्ड–निगमों पर 5600 करोड़ रुपया उधार है। अकेले बिजली बोर्ड पर 4500 करोड़ रुपया से उपर उधार है। यह धन कैसे वापस मिलेगा ? इसकी वसूली कैसे होगी ? इसकी चिन्ता सरकार को नहीं है। सरकार इस वर्ष के बजट में भी विभिन्न संस्थाओं को उधार दे रही है, जिसमें बिजली बोर्ड का ही सबसे ज्यादा हिस्सा है। इस वर्ष कुल 634 करोड़ रुपया बजट से उधार दे रही है राज्य सरकार, जिसमें से 563 करोड़ रुपया केवल बिजली बोर्ड को उधार दिया जा रहा है। यह पूरा का पूरा उधार गैर योजना मद में जा रहा है। इतना उधार तो सरकार दे रही है मगर वसूली कितने की हो रही है ? वसूली हो रही है केवल 29 करोड़ रुपये की। यानि सरकार जो कर्जे दे रही है, उनकी वसूली नहीं हो रही है और स्वयं सरकार जो कर्जे भारी पैमाने पर प्रतिवर्ष लेती जा रही है, उनके मूलधन की किश्त और ब्याज का भुगतान करने के लिए सरकार अपने बजट में हर साल अरबों रुपया का प्रावधान कर रही है।

महोदय, हम सभी को पता होना चाहिये कि तीन तरह की सेवाओं का जिक्र रहता है बजट में। सामान्य सेवाएं, सामाजिक सेवाएं और आर्थिक सेवाएं। इनमें खर्च की क्या स्थिति है ? इसी बजट में सरकार ने गैर योजना मद में, सामान्य

सेवाओं के गैर योजना मद में, 6986.69 करोड़ रुपये का खर्च रखा है और सामान्य सेवाओं के योजना मद में व्यय का अनुमान केवल 42.14 करोड़ रुपया है। अगर करीब 7000 करोड़ रुपया गैर योजना मद में खर्च हो रहा है और केवल 42 करोड़ रुपया योजना मद में व्यय हो रहा है, तो ऐसी योजना का क्या अर्थ है ? इसी तरह सामाजिक सेवाओं के मद में 3345.43 करोड़ रुपया सरकार गैर योजना मद में खर्च करने जा रही है और 321.74 करोड़ रुपया योजना मद में खर्च कर रही है। सब मिलाकर देखें तो कुल 11969.43 करोड़ रुपया गैर योजना मद में खर्च होने वाला है और मात्र 1091 करोड़ रुपया इन सेवाओं के योजना मद में खर्च करने की बात सरकार द्वारा की जा रही है ।

अगर ऐसी स्थिति रहेगी योजना और गैर योजना मद के व्यय अनुपात की तो यह अनुपात आखिर इस राज्य को कहां ले जायेगा? अगर इसका जिक्र इस बजट में होता, सरकार समीक्षा दस्तावेज सदन के सामने रखती, कोई श्वेत पत्र प्रकाशित करती, उपाय खोजती, लोगों से सुझाव मांगती, तो शायद इसका कोई समाधान हो सकता था और जो राजस्व घाटा बेतहाशा बढ़ता जा रहा है उस पर अंकुश लग सकता था। 1990 में बिहार का राजस्व घाटा केवल 191 करोड़ रुपया था वर्ष 2000 आते-आते यह राजस्व घाटा 2703 करोड़ रुपया हो गया। इसका सीधा असर हमारी परिसम्पत्तियों पर पड़ रहा है। हमारी परिसम्पतियाँ घट रही हैं। इस पर महालेखाकार ने एक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। उसके अनुसार बिहार राज्य में पिछले 10 वर्षों में परिसम्पत्तियों के घटने की दर 0.72 परसेंट रही है और दायित्वों के, लाइबिलिटीज के, बढ़ने की दर 13 प्रतिशत रही है। विगत पांच वर्षों की स्थिति तो और ज्यादा गंभीर है। 65 प्रतिशत की दर से 1995 और 2000 के बीच में सरकार के दायित्व बढ़े हैं। किसी-किसी वर्ष 81 प्रतिशत तक दायित्व बढ़े हैं। ये स्थिति अगर रहेगी तो हम कभी भी अपनी अर्थव्यवस्था को बदहाली से उबार नहीं सकेंगे। (व्यवधान) यह हंसी-मजाक का विषय नहीं है, ठिठोली का मामला नहीं है यह। इसे हंसी मजाक का खेल बनाने के बदले में सरकार को और सरकारी पक्ष के माननीय सदस्यों को गंभीरता का परिचय देना चाहिए और इन

आलोचनाओं को अपनी कार्य प्रणाली में सुधार के संकेत के रूप में स्वीकार करना चाहिए ।

महोदय, राज्य का गैर योजना व्यय आखिर किस स्थिति में बढ़ रहा है ? 1990 में बिहार राज्य का गैर योजना व्यय 3023 करोड़ रुपया था और आज 12827 करोड़ रुपया हो गया है, क्यों? उल्लेखनीय है कि जिस वर्ष बिहार राज्य का बँटवारा हुआ था यानी वर्ष 2000 में, उस वर्ष यहाँ का गैर योजना व्यय 12,521 करोड़ रुपया था। इस आधार पर राज्य बँटवारा के बाद इसमें कमी आनी चाहिये थी। पर इसमें कमी होने का कोई लक्षण नहीं दिखता है। यह स्थिति यहां है। सरकार को इसलिए इस ओर ध्यान देना चाहिए कि आर्थिक प्रबंधन की हालत को हम मिलजुल कर कैसे सुधारें। सरकार को चाहिए कि इस मामले में विपक्षी दलों को भी भरोसा में ले।

महोदय, मैं एक और बात कहना चाहूंगा। हमारे बजट में दो तरह का शीर्ष होता है, एक प्राप्ति मद का और दूसरा व्यय मद का। इन दोनों में एक राजस्व खाता और पूंजीगत खाता होता है। पूंजीगत खाता में मुख्यतः बैंकों से लिये गये ऋण, केन्द्र सरकार से प्राप्त कर्जे एवं अन्य मदों की सहायता आदि शामिल रहते हैं। इन सभी को विकास के काम में खर्च होना चाहिए। लेकिन ऐसा नहीं हो रहा है। कई वर्षों से नहीं हो रहा है। 1993 से 2000 के बीच में बड़े पैमाने पर कर्जे लिये गये विकास के नाम पर, परन्तु उनको विकास के काम पर खर्च नहीं करके जमा कर दिया गया रिजर्व बैंक की प्रतिभूतियों में। ऐसे कर्जे सरकार लेती है 12.5 परसेंट से 18 परसेंट की ऊंची ब्याज दर पर और रिजर्व बैंक की प्रतिभूतियों में इसे रखा गया है 3 प्रतिशत से 5 प्रतिशत की कम ब्याज दर पर। इससे राज्य को करीब 100 करोड़ रुपया का नुकसान हुआ है, इन वर्षों में । 100 करोड़ रुपये के इस नुकसान की भरपाई कौन करेगा? 100 करोड़ रुपये का यह नुकसान जनता की गाढ़ी कमाई से आने वाले पैसे का नुकसान है। सरकार में आखिर कौन जिम्मेवार होगा इसके लिये कि हम ऊंची दर पर कर्ज ले रहे हैं और कम दर पर उसका निवेश कर रहे हैं। इतना ही नहीं मनमर्जी से एक-ब-एक इन सारे पैसों को निकाल लिया जाता है। 1999-

2000 में 3306 करोड़ रुपया एक–ब–एक निकाल लिया गया और सब का सब पैसा राजस्व मद में खर्च कर दिया गया। वह भी केवल दो–तीन चुनिन्दा विभागों में खर्च कर दिया गया। आखिर इसका क्या कारण है ? क्या इसमें घपले–घोटाले की आशंका नहीं हो सकती है ? क्या इसमें संदेह नहीं व्यक्त किया जा सकता है कि सरकारी निधियों का दुरुपयोग हो रहा है।

इतना ही नहीं, सी. ए. जी. के यहाँ से जो अंकेक्षित रिपोर्ट आ रही है, उस अंकेक्षित रिपोर्ट के हिसाब से अब तक 6488 करोड़ रुपये का अधिकाई व्यय हुआ है विभिन्न सरकारी विभागों में। इस अधिकाई व्यय के सामंजन की कोशिश होनी चाहिए। 704 करोड़ रुपया का एक अनुपूरक व्यय विवरणी सरकार ने रखा सदन के सामने, उसके बाद एक और अनुपूरक व्यय विवरणी भी रखी गई। इस पूरे अनुपूरक व्यय में 727 करोड़ रुपये का ऐसा व्यय पाया गया है जिसकी कोई जरूरत नहीं थी, आवश्यकता नहीं थी। 56 करोड़ रुपया का तो ऐसा व्यय हो गया है पिछले दो तीन वर्षों में जिसका कोई प्रावधान ही बजट में नहीं था। इसके लिए सदन से, विधान मंडल से कोई अनुमति नहीं ली गयी। आखिर इस तरह कैसे हो गया 56 करोड़ रुपये का व्यय? क्या यह एक गम्भीर अनियमितता नहीं है ? आखिर कौन इसके लिए जिम्मेवार होगा ? सरकार को इसका उत्तरदायित्व सुनिश्चित करना चाहिये।

इस तरह की अनोखी घटनाएं इस राज्य में हो रही हैं और इन्हें कोई रोक नहीं पा रहा है। जब मैं प्रमाण के साथ कोई गम्भीर बात सदन में रखता हूँ तो घोटाला का आरोप लगाने की बात कहकर सत्ता पक्ष द्वारा इसे टालने और राजनीतिक रंग देकर हल्का बनाने की कोशिश की जाती है। घोटाले का आरोप लगाने की बात कह कर ऐसी गंभीर अनियमितता टाल दिया जाता है। इस सदन में और दूसरे सदन में भी जो बातें आती रहती हैं वे सारी बातें प्रोसिडिंग का हिस्सा हैं। मैं इन्हें दोहराना नहीं चाहता हूँ। कैसे ! आखिर कोई कैसे कह सकता है कि हरियाणा से स्कूटर पर सांढ़ आ रहे हैं और टेम्पो पर भैंस आ रही है और यह विषय जब सदन में उठता है, इस सदन के सदस्य भी उठाते हैं इस विषय को तो सरकार जवाब में कहती है कि

सी. बी. आई. क्या हम यू. एन. ओ. से जांच करा देंगे, जिससे कहिएगा हम उससे जांच करा देंगे। लेकिन वर्षों तक जांच नहीं होती है और जाँच नहीं होने दी जाती है। (व्यवधान) उसके पक्ष में भी आपलोगों को अधिकार है जो चाहे वह बोलें। परन्तु, घपलों–घोटालों का जो इतिहास है, उसको इतना जल्दी लोग नहीं भूल सकते हैं। महोदय, मैं और कुछ बातें कहना चाहता था मगर आपका इशारा हो रहा है अब भाषण समाप्त करने का। सत्ता पक्ष के साथी भी मुझे बोलने नहीं देना चाह रहे हैं, अनुचित व्यवधान कर रहे हैं। इसलिए मैं एक मिनट में अपनी बात समाप्त कर दूंगा।

केन्द्र सरकार से कई तरह की सहायता एवं अनुदान निधियां मिलती हैं। इनके दुरुपयोग के ठोस प्रमाण हैं। सरकार को चाहिए कि जब अंकेक्षण की रिपोर्ट आती है तब उसमें जो संकेत और विश्लेषण हैं, उनको ठीक से देखे–समझे और उन पर कार्रवाई करे। ऐसा होगा तो सारे मामले सुलझ जायेंगे। 1996–97, 1997–98, 1998–99 के तीन वर्षों में केन्द्र सरकार ने 90 करोड़ रुपया बाढ़ राहत के लिए भेजा, वह खर्च नहीं हुआ। राज्य के ग्यारह जिलों के पौने आठ लाख लोग बाढ़ से पीड़ित थे। आवंटन था उनके लिए, लेकिन सहायता नहीं पहुंची और 15 ऐसे जिलों में बाढ़ के नाम पर सहायता दे दी गयी जहां कभी बाढ़ आती ही नहीं है। जिन क्षेत्रों में बाढ़ नहीं आयी वहाँ बाढ़ राहत के लिए सहायता दे दी गयी। इसके अलावा प्रधानमंत्री राहत कोष से जो 7 करोड़ रुपये मिले उन्हें टेलीविजन सेट खरीदने पर खर्च कर दिया गया। कम्प्यूटरीकृत करने के लिए, प्रशासनिक क्षमता बढ़ाने के लिए 10 करोड़ रुपये तीन सालों में केन्द्र से मिले हैं वह सारे के सारे पैसे रखे हुए हैं। उग्रवाद प्रभावित 22 जिलों में सड़कों के निर्माण के लिए जो पैसे आये उसमें से 61 करोड़ रुपये उन जिलों में खर्च हुए जहां कोई उग्रवाद नहीं है। वहां उग्रवाद की कोई शिकायत नहीं है। पिछले पांच वर्षों में नेशनल हाइवे की लम्बाई में 400 किलोमीटर की बढ़ोत्तरी हुई है और स्टेट हाइवे में एक इंच की भी बढ़ोत्तरी नहीं हुई है। राज्य की सड़कों में, जिला की सड़कों में कहीं कोई बढ़ोत्तरी नहीं हुई है।

एक आश्चर्यजनक बात और है। सरकार अगर चाहे तो इसका खंडन करे। महालेखाकार ने हाल ही में सदन में प्रस्तुत अपने अद्यतन प्रतिवेदन में लिखा है कि

27 मोबाइल चिकित्सा वैन इंगलैंड से आये थे। उनमें उपचार की सभी सुविधाएं थीं। 1997 में उनको पटना मंगा लिया गया और उनका इस्तेमाल गरीब रैली के लिए किया गया। यह सब अंकेक्षण रिपोर्ट में है। उसमें यह भी उल्लेख है कि सरकारी हेलीकाप्टर का इस्तेमाल सत्ताधारी दल के चुनाव प्रचार के लिये किया गया। उसका बिल 40 लाख रुपया हुआ। 40 लाख रुपये एक दल के चुनाव प्रचार में खर्च किये गये और आज तक उसका भुगतान नहीं हुआ। इस तरह की अनियमितताएं होती रही हैं। इन अनियमितताओं की ओर ध्यान दिलाना निहायत जरूरी है। (व्यवधान) पुनः आपका निर्देश मुझे भाषण समाप्त करने के लिए हो रहा है इसलिये मैं अपनी वाणी को विराम दे रहा हूँ, धन्यवाद।

नोट : सत्ता पक्ष के व्यवधान के कारण यह भाषण अधूरा रह गया। सदन स्थगित करना पड़ा गतिरोध दूर होने के बाद पुनः सत्र आरम्भ हुआ तो सत्ता पक्ष के प्रक्रिया संबंधी विरोध के बावजूद बिहार विधान परिषद के सभापति महोदय ने यह भाषण पूरा करने की अनुमति दी, जिसका सार संक्षेप अगले पृष्ठ पर अलग शीर्षक से दिया जा रहा है।

☐ 20 जुलाई 2002
बिहार विधान परिषद्

•••

कपटपूर्ण वित्तीय प्रबंधन

बिहार सरकार ने वर्ष 2002–03 का यह बजट 18 मार्च 2002 को प्रस्तुत किया है। चार माह के लेखानुदान की अवधि पूरी होने के पहले इस बजट पर विधानमंडल की मुहर लगाने के लिए विधान परिषद में हम इस बजट की मांगों पर, अनुदान के प्रावधानों पर विचार–विमर्श कर रहे हैं। इस दौरान पुनः यह दुहराना अप्रासंगिक नहीं होगा कि यह बजट राज्य की दसवीं पंचवर्षीय योजना का पहला बजट है। पुनर्गठन के उपरांत उत्तरवर्ती बिहार का यह दूसरा वार्षिक बजट है। वर्तमान मुख्यमंत्री की सरकार द्वारा पेश किया जा रहा यह चौथा बजट है। थोड़ा और पीछे चला जाय तो जिस दल की सरकार आज हमारे सूबे में है उसकी सरकारों द्वारा 1990 से अबतक पेश किया गया यह 11वाँ बजट है। बीच के कालखंड में केवल दो बार, 1998 में राज्य में अल्पकालीन राष्ट्रपति शासन होने के कारण केन्द्र सरकार द्वारा संसद में और वर्ष 2000 में अल्पकालीन मुख्यमंत्री नीतिश कुमार की सरकार द्वारा विधानसभा में बिहार का बजट पेश हुआ था।

इसलिए ये कुछ कसौटियां हो सकती हैं इस बजट को परखने की, जांचने की और इसके प्रावधानों का विश्लेषण कर निष्कर्ष निकालने की। ये कुछ आधार हो सकते हैं, जिनपर बजट के प्रावधानों का विश्लेषण किया जाय और यह निष्कर्ष निकाला जाय कि क्या यह बजट विगत बारह वर्षों से राज्य में गहराती जा रही वित्तीय अराजकता से राज्य को उबारने में सक्षम है ? क्या वैश्वीकरण एवं उदारीकरण की आर्थिक–सामाजिक चुनौतियों का सामना करने के लिए राज्य को सक्षम बनाने के बीज इस बजट में हैं ? क्या केन्द्र सरकार ने दसवीं पंचवर्षीय योजना काल में देश के विकास का जो महत्वाकांक्षी लक्ष्य तय किया है, उसे प्राप्त करने में यह बजट सहायक है ? क्या सचमुच इस बजट से वे आशंकाएं सम्पुष्ट होती दिख रही हैं जिनका हौवा राज्य सरकार और सत्तारूढ़ दल बिहार के पुनर्गठन के समय से करते आ रहे हैं ?

बजट प्रावधानों का गहराई से अध्ययन करने पर लगता है कि इस बजट के

प्रसंग में ये और इस प्रकार के कई अन्य सवाल बेमानी हैं। वास्तव में यह बजट ऐसी कसौटियों पर खरा उतरने के काबिल ही नहीं है। यह बजट भी पूर्ववर्ती बजटों की तरह ही आर्थिक कुव्यवस्था के उस कुचक्र को मजबूत कर रहा है जो पिछले बारह वर्षों में भ्रष्टाचार, अनियमितता और शासकीय लापरवाही के कारण पैदा हुआ है।

दसवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान 8 प्रतिशत विकास दर हासिल करने का लक्ष्य केन्द्र सरकार ने तय किया है। इसलिए सरकारी, अर्द्ध-सरकारी, गैर-सरकारी, निजी और बाह्य पूंजी-निवेश की संभावनाएं साकार करनेवाला तथा विकास का लाभ आम आदमी तक पहुँचाने के लिए एक सक्षम तंत्र खड़ा करने का जो लक्ष्य केन्द्र सरकार का है, उसे राज्य सरकार की दक्षता के बगैर प्राप्त किया जाना संभव नहीं हो सकता है। राज्य सरकार द्वारा तैयार 10वीं पंचवर्षीय योजना प्रारूप में इस दौरान केवल 5.5 प्रतिशत विकास दर का लक्ष्य रखा गया है। योजना प्रारूप का मानना है कि इसके लिए जरूरी 25103 करोड़ के संसाधन का मात्र 36 प्रतिशत योगदान ही राज्य सरकार कर सकेगी, शेष निवेश केन्द्र सरकार और निजी क्षेत्र से हासिल करना होगा। परन्तु राज्य सरकार का यह बजट इस बारे में मौन साधे हुआ है कि अबतक केन्द्र सरकार से प्राप्त ऋण और अनुदान का तथा बाजार ऋण का पूरा उपयोग सरकार क्यों नहीं कर पा रही है और 12.5 प्रतिशत से 18.5 प्रतिशत के उच्च ब्याज पर उगाही गई बाजार ऋण की राशि को काफी कम ब्याज दर 3 से 5 प्रतिशत पर रिजर्व बैंक के ट्रेजरी बिल में निवेश करने के लिए सरकार की क्या मजबूरी है ? वस्तुस्थिति तो यह है कि 10वें वित्त आयोग द्वारा प्रदत्त 230.86 करोड़ रुपया की सहायता राशि में मात्र 65.44 करोड़ रुपया ही सरकार खर्च कर पाई है और 11वें वित्त आयोग द्वारा प्रदत्त अवार्ड की भी वही हालत होने वाली है।

यहाँ यह उल्लेख प्रासंगिक प्रतीत हो रहा है कि 1980 के दशक में राज्य की औसत विकास दर करीब 4.2 प्रतिशत रही थी। 1985 और 1990 सातवीं पंचवर्षीय योजना का आकार संशोधित हुआ था और योजना उद्व्यय 5,100 करोड़ रुपया से बढ़कर 6,500 करोड़ रुपया हो गया था। परन्तु 1990 के दशक में यह प्रवृत्ति औंधे मुँह गिर पड़ी। विकास दर घटकर 2.2 प्रतिशत पर आ गया। इस

अवधि के कतिपय वर्षों में तो विकास-दर ऋणात्मक हो गयी। इस दौरान दो पंचवर्षीय योजनाओं, 8वीं और 9वीं, में भी संशोधन हुए हैं, पर ये संशोधन कटौती के रूप में हुए हैं। इनका आकार छोटा किया गया। आठवीं पंचवर्षीय योजना का आकार 13,000 रुपए रखा गया था, मगर सरकार मुश्किल से इसका 46.72 प्रतिशत ही खर्च कर पाई। 9वीं पंचवर्षीय योजना की स्थिति भी कमोबेश ऐसी ही रही। इस योजना का आकार घटाकर 9,732 करोड़ रुपया कर देना पड़ा। योजना अवधि के अंत में इसका भी मात्र 90 प्रतिशत के करीब ही वास्तविक व्यय हो पाया। इन दोनों योजनाओं का लक्ष्य भी राज्य में 5.5 प्रतिशत विकास दर हासिल करना रखा था। स्पष्ट है कि यह लक्ष्य पूरा नहीं हो पाया।

आठवीं पंचवर्षीय योजना के दस्तावेज में कहा गया है कि 5.5 प्रतिशत विकास दर का लक्ष्य पूरा होने पर बिहार आगामी 25 वर्षों में विकास के राष्ट्रीय औसत को छू लेगा। परन्तु 1990 के दशक में विकास दर घटकर 2.2 प्रतिशत हो जाने के कारण यह उम्मीद धराशायी हो गई है। 1990 से 1996 के बीच तो विकास दर (–1.6 प्रतिशत की दर से) ऋणात्मक रहा। नौवीं पंचवर्षीय योजना की विफलता ने रही-सही उम्मीद भी खत्म कर दी। इस पृष्ठभूमि में यह बजट 10वीं पंचवर्षीय योजना के लक्ष्यों को पूरा कर सकेगा, इसमें संदेह है। यह बजट पेश करते समय राज्य सरकार को अर्थव्यवस्था के समक्ष चुनौतियों का खुलासा करना चाहिए था और उच्च विकास दर हासिल करने के लिये जरूरी प्रयासों का जिक्र करना चाहिए था। इस मायने में यह बजट पूरी तरह निराश करनेवाला है।

इस बजट में राजस्व आय एवं राजस्व व्यय के जो आंकड़े दिये गये हैं, उनका विश्लेषण करने से चौकानेवाले निष्कर्ष निकलते हैं। आज राज्य की सरकार और सत्ताधारी दल तथा इसके सहयोगी दलों का हर नेता अपनी विफलताओं को राज्य के पुनर्गठन के मत्थे मढ़ने के लिए लंबी-चौड़ी हांकते रहता है कि पुनर्गठन के फलस्वरूप राज्य के संसाधन समृद्ध इलाके झारखंड में चले गए। इस कारण राज्य को भारी राजस्व हानि का सामना करना पड़ेगा और राज्य का विकास प्रभावित होगा। इस आशंका में दम हो सकता है, पर इस बजट के आंकड़े इससे मेल नहीं

खाते हैं। वर्ष 2002–03 के बजट के अनुसार जिस वर्ष झारखंड राज्य बना यानी वर्ष 2000–01 में उस वर्ष राज्य की वास्तविक राजस्व आय 2,706.56 करोड़ रुपया थी। अगले वर्ष यानी वर्ष 2001–2002 में राजस्व आय का बजट अनुमान बढ़कर 11,568.98 करोड़ हो गया। चालू वर्ष 2002–2003 में सरकार ने 12015.49 करोड़ की राजस्व आय का अनुमान बजट में लगाया है। वर्ष 2003–04 के बजट में वर्ष 2001–02 के राजस्व आय का वास्तविक आंकड़ा और वर्ष 2004 के वार्षिक बजट में वर्ष 2002–03 के राजस्व आय का वास्तविक आंकड़ा दिया हुआ है। ये आंकड़े क्रमशः 9995.18 करोड़ रुपया और 5842.13 करोड़ रुपया है, जो कि वर्ष 2000–01 के राजस्व आय के वास्तविक आंकड़ा से अधिक है। इससे जाहिर होता है कि झारखंड अलग हो जाने के बाद के वर्षों में शेष बिहार की राजस्व आय में वृद्धि हुई है। क्या वास्तव में ऐसा है ? अगर है तो सरकार के पास इसके क्या स्पष्टीकरण है ? इतना ही नहीं इन वर्षों के बजट अनुमान, पुनरीक्षीत अनुमान और वास्तविकी में भारी अंतर क्या सरकार के वित्त एवं बजट प्रबंधन पर सवालिया निशान नहीं खड़ा करता है ? 2004–05 के बजट दस्तावेज में इस वर्ष सहायता अनुदान और अंशदान के रूप में प्राप्ति आंकड़ा नहीं जोड़ा हुआ है। विडम्बना तो यह है कि इन दोनों वर्षों में वर्ष 2000–01 की तुलना में राज्य के कर राजस्व तथा केन्द्रीय सहायता एवं अनुदान में भी वृद्धि हुई है। यानी यह बजट और इसके पहले साल के बजट के आंकड़े भी प्रमाणित करते हैं कि झारखंड बनने के बाद शेष बचे बिहार में राजस्व संग्रह में काफी अधिक वृद्धि हुई है। यही स्थिति राजस्व व्यय की भी है। तब आखिर सरकार किस मुँह से झारखंड बनने के बहाने केन्द्र से भारी आर्थिक पैकेज की मांग क्षतिपूर्ति के रूप में कर रही है ? इसका औचित्य आखिर क्या है ?

यह कहते समय सरकार भूल जाती है कि झारखंड अलग राज्य का प्रस्ताव भी, अवसरवादिता के दबाव में ही सही, इसी सरकार ने सदन में रखा था। राष्ट्रीय जनता दल को झारखंड मुक्ति मोर्चा के समर्थन की जरूरत थी, अपनी सरकार को बचाने के लिए, तो उन्होंने 1997 में एक लाइन का प्रस्ताव पास करा दिया था

बिहार विधानसभा में कि ''यह सदन अलग झारखंड राज्य के गठन का प्रस्ताव करता है।'' काम निकल गया तो थोड़े ही समय बाद उनके नेता श्री लालू प्रसाद ने ऐलान कर दिया कि झारखंड उनकी लाश पर ही बन सकता है। केन्द्र सरकार द्वारा भेजे गए बिहार पुनर्गठन के प्रस्ताव को 1998 में उन्होंने विधानसभा से खारिज करा दिया। छः माह बाद पुनः उन्हें अपने श्रीमती जी की गद्दी जाती नजर आई तो कांग्रेस का समर्थन पाने के लिए केन्द्र सरकार के उसी प्रस्ताव को समर्थन देकर विधान मंडल में पारित करा लिया। अहम मसलों पर अपने निहित स्वार्थों और सत्ता–सुख को राज्यहित और जनहित के ऊपर रखनेवाले जब बजट के आंकड़ों में राज्य की गिरती वित्तीय स्थिति सुधरने का दावा करते हैं तथा सदन में और सदन के बाहर झारखंड बनने के बाद राज्य की आर्थिक स्थिति खराब होने का रोना रोते हैं तो उनपर तरस आती है।

बजट पर चर्चा करते समय राज्य की वित्तीय स्थिति का वास्तविकता के धरातल पर सार्थक विश्लेषण करना सर्वथा उचित होगा। खासकर उत्तरवर्ती बिहार के संदर्भ में तो यह अपरिहार्य प्रतीत होता है। व्यावहारिक दृष्टिकोण से इस बारे में वर्तमान बजट प्रावधानों के साथ ही बिहार पुनर्गठन के आधार वर्ष 1999–2000 तक के प्रासंगिक आंकड़ों पर ध्यान देना होगा। बिहार में वर्तमान सत्ताधारी दल के नेतृत्व में मार्च 1990 में सरकार बनी थी। माननीय सदस्य रामकृपाल यादव ने भी संयोगवश अपने भाषण में 1990 से आज तक सरकार की उपलब्धियों और कठिनाइयों का जिक्र किया है। पर उनके निष्कर्ष सत्य से कोसों दूर हैं। उस समय यानी 1990 में राज्य की आर्थिक स्थिति के कुछ पैमानों का जिक्र मैं करना चाहता हूँ। उस समय राज्य की परिसम्पत्तियाँ राज्य पर दायित्वों से 747 करोड़ रुपया अधिक थीं। राज्य की परिसम्पत्तियां थीं कुल 9,770 करोड़ रुपया और दायित्व थे 9,023 करोड़ रुपया के। वर्ष 1999–2000 आते–आते स्थिति बदल गई। दायित्व बढ़कर करीब 32 हजार करोड़ रुपया हो गया और परिसम्पत्तियों और दायित्वों के बीच का अंतर 11,640 करोड़ ऋणात्मक हो गया। महोदय, वर्ष 1990 से 2000 के बीच तो परिसम्पत्तियों में गिरावट के लक्षण आ गए जबकि दायित्वों में वृद्धि के।

इस दौरान राज्य सरकार के दायित्व 13 प्रतिशत की दर से बढ़े और परिसम्पत्तियों में 0.72 प्रतिशत की दर से गिरावट आई । इस बजट में कोई भी प्रावधान ऐसा नहीं है जो इस प्रवृत्ति पर रोक लगाए ।

इसी तरह राज्य सरकार का राजस्व घाटा भी तेजी से बढ़ रहा है। मार्च 1990 में यह घाटा मात्र 197 करोड़ रुपया था। मार्च 2000 में यह घाटा बढ़कर 3,703 करोड़ रुपया हो गया। इस बजट में सरकार इसे कम करने का दावा कर रही है। पर सरकार का यह दावा इस वर्ष की वार्षिक योजना के लिए राजस्व में वृद्धि के आंकड़ों से मेल नही खा रहा हैं । हर वर्ष के बजट में ऐसे दावे होते हैं पर वास्तविक आंकड़े सामने आते–आते ये दावे धराशायी हो जाते हैं । भारी राजस्व घाटा ही सरकार के दायित्वों में वृद्धि का मुख्य कारण है ।

गैर योजना व्यय में वृद्धि को रोकने के संकेत भी इस बजट में नही हैं। मार्च 1990 में 3,023 करोड़ रुपया का गैर योजना व्यय था। यह बढ़कर मार्च 2000 में 12521 करोड़ रुपया हो गया। सरकारी दस्तावेजों के मुताबिक उत्तरवर्त्ती बिहार में भी यह व्यय इस वर्ष 12,827 करोड़ रुपया होने का अनुमान है जो सन् 2000 में अविभाजित बिहार के गैरयोजना व्यय की तुलना में अधिक है । महोदय, आश्चर्यजनक स्थिति तो यह है कि राजस्व व्यय सरकार के कुल व्यय का 86 प्रतिशत तक पहुँच गया है और पूंजीगत व्यय मात्र 7 प्रतिशत पर सिमट गया है । यही कारण है कि राज्य की परिसम्पत्तियों में वृद्धि की दर ऋणात्मक हो गई है ।

योजना व्यय के नाम पर अत्यधिक उधार लेने, उसे विकास कार्यों के अलावे अन्यत्र खर्च करने तथा काफी बड़ी राशि को खर्च करने में विफल रहने के कारण 1995 से 1999 के बीच 3,308 करोड़ रुपया सरकार के रोकड़ शेष में जमा हो गए और इन्हें बाद में राजस्व मद में खर्च कर दिया गया। ये रुपए राज्य सरकार ने विभिन्न वित्तीय संस्थाओं से 14.5 प्रतिशत से 18.5 प्रतिशत की उच्च ब्याज दर पर लिया था और हर वर्ष इन्हें खर्च करने के बदले रिजर्व बैंक की प्रतिभूतियों में 3 से 5 प्रतिशत के अत्यन्त कम ब्याज दर पर निवेश कर दिया गया जिसके चलते राज्य को

100 करोड़ से ऊपर का नुकसान उठाना पड़ा। आखिरकार इसके लिए जिम्मेवार कौन है ? योजना व्यय के लिए बाजार ऋण का सहारा लेने और उस ऋण को विकास कार्य में खर्च करने के बदले नगण्य प्रतिफल वाले प्रतिभूतियों में निवेशित कर राज्य पर करोड़ों रुपए का बोझ डालने के बारे में नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक ने 31 मार्च 1998 को समाप्त हुए वर्ष के असैनिक प्रतिवेदन के कंडिका 1.10.4 में उल्लेख किया है और राज्य सरकार से उसकी जाँच गहराई से करने का अनुरोध किया है। पर कोई जाँच नहीं हुई होगी भी नहीं। क्योंकि इससे वर्तमान सरकार की पोल खुल जायेगी ।

बिहार विधान मंडल के समक्ष 31 मार्च 2000 को प्रस्तुत अपने प्रतिवेदन में भी नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक ने इसका उल्लेख किया है। महोदय, नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक द्वारा इसके बारे में बार–बार जांच की सिफारिश करना तथा सरकार द्वारा इस सिफारिश की उपेक्षा करना स्पष्ट करता है कि इसमें भारी घपला है और सरकार इस पर पर्दा डालना चाहती है । सदन के माध्यम से मैं इसकी उच्च स्तरीय जांच कराने की मांग करता हूँ। विडंबना तो यह है कि 5 वर्षों तक नगण्य प्रतिफल वाली प्रतिभूतियों में रखने के बाद वर्ष 1999–2000 में इसे निकाल कर इसका प्रायः पूरा हिस्सा मात्र 2–3 विभागों में राजस्व व्यय के रूप में करना भी संदेह को जन्म देता है। सरकार की यह प्रवृत्ति ही कारण है कि 1995–96 से 1999–2000 के बीच राज्य सरकार का कुल दायित्व 65 प्रतिशत बढ़ा है। यह दायित्व आंतरिक ऋण के मद में 5 प्रतिशत, भारत सरकार से प्राप्त कर्जे एवं अग्रिमों के रूप में 81 प्रतिशत तथा अन्य मदों में 44 प्रतिशत बढ़ा है ।

यही नहीं, विभिन्न मदों में हो रहे अधिकाई व्यय का स्पष्टीकरण सरकार द्वारा लोक–लेखा समिति को नहीं देने की प्रवृत्ति भी आर्थिक कुप्रबंध का एक पहलू है । केवल 1997 से 2000 के बीच हुए 6,254 करोड़ रुपया के अधिकाई व्यय के बारे में लोक–लेखा समिति को स्पष्टीकरण देने में सरकार आनाकानी कर रही है । यह सरकार की चोरी भी और सीनाजोरी भी की नीयत को उजागर करता है । महोदय, यहाँ याद दिलाना चाहूँगा कि ऐसे ही अधिकाई व्ययों के विश्लेषण से

पशुपालन घोटाला और अलकतरा घोटाला जैसे संगीन अपराधों का पर्दाफाश हुआ था। इस संभावना से इंकार करना मुनासिब नहीं होगा कि सरकार की इस प्रवृत्ति के गर्भ में कोई न कोई घोटाला छिपा हुआ है। सरकार को इस बारे में सदन के सामने स्पष्टीकरण देना चाहिए।

हर पाँच वर्ष पर केन्द्र सरकार वित्त आयोग का गठन करती है। अभी 11वें वित्त आयोग की अनुशंसा प्राप्त होने का तीसरा वर्ष चल रहा है। पर सरकार 10वें वित्त आयोग की अनुशंसा पर राज्य को मिली भारी धन–राशि का 30 प्रतिशत भी खर्च नहीं कर सकी और शेष राशि वापस लौट गई। तीन वर्ष बीत जाने के बाद 11वें वित्त आयोग की अनुशंसा पर प्राप्त राशि के उपयोग के बारे में भी कोई प्रगति नहीं है। लगता है कि सरकार की शिथिलता के कारण यह राशि भी बिना खर्च हुये ही वापस चली जाएगी। इसके बावजूद सरकार केन्द्र से आर्थिक सहायता नहीं मिलने का राग अलापती रहती है। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना में वर्ष 2000 में जो पैसे प्राप्त हुए उनका भी उपयोग सरकार नहीं कर सकी। कार्यालयों को कम्प्यूटरीकृत करने के लिये प्राप्त 10 करोड़ रुपये दो साल से खर्च नही हो रहे हैं। प्रशासनिक उन्नति एवं स्वास्थ्य सेवा के लिए 1996–2000 के बीच केन्द्र सरकार से मिले 2000 करोड़ रुपये खर्च नहीं हुए। बाद के वित्तीय वर्षों में मिली योजना एवं विकास मद की राशि भी बिना उपयोग के पड़ी हुई है। केन्द्र से पैसा लेना, उसका उपयोगिता प्रमाणपत्र नहीं देना और फिर अधिक से अधिक पैसे की मांग करना और अपनी विफलताओं के लिए केन्द्र से पैसे नहीं मिलने का दुष्प्रचार करना इस सरकार की फितरत बन गई है। आखिर सरकार इससे क्या हासिल करना चाह रही है ? राज्य की जनता को विकास से दूर रखकर और देश के विकास में अपना ऋणात्मक योगदान देकर यह सरकार आम लोगों के साथ ही पूरे राष्ट्र के साथ भी बेइमानी और धोखाधड़ी कर रही है। झूठ और फरेब का यह नाटक ज्यादा दिन नहीं चल सकता, परन्तु इससे आनेवाली पीढ़ियों का भारी नुकसान यह सरकार कर रही है।

अपने कार्यकाल में बेतहाशा ऋण लेने और इस ऋण का अपव्यय विकास की जगह राजस्व व्यय पर करने के कारण आज राजकोष का बड़ा हिस्सा सरकार को

ब्याज भुगतान मद में खर्च करना पड़ रहा है। मार्च 1990 में ब्याज भुगतान मद में होने वाला व्यय 479 करोड़ रुपया था। मार्च 2000 में बढ़कर यह व्यय 2,867 करोड़ रुपया हो गया। आज झारखंड अलग हो जाने के बावजूद सरकार का यह बजट बता रहा है कि ब्याज भुगतान मद में इस वर्ष 5,631 करोड़ रुपया खर्च होंगे। आखिर क्यों ? मुख्यमंत्री के बजट भाषण में इसका कोई जिक्र नहीं है। कोई स्पष्टीकरण नहीं है। विडम्बना तो यह है कि एक ओर सरकार 12.5 प्रतिशत से 18.5 प्रतिशत के ऊँचे दर पर कर्ज ले रही है तो दूसरी ओर अरबों रुपए खर्च नहीं कर काफी कम ब्याज दर पर रिजर्व बैंक की प्रतिभूतियों में निवेश कर रही है। आज बैंकों का ब्याज दर काफी कम हो गया है। सरकार को चाहिए कि वित्तीय संस्थानों से कम ब्याज दर पर कर्ज लेकर और केन्द्र से इस मद में सहायता माँगकर पहले लिए गये उच्च ब्याज दर वाले कर्जों का समायोजन करने की एक ठोस नीति बनाये। पर ऐसी किसी योजना में सरकार की कोई रुचि नहीं है और न तो इस बजट में ही ऐसा कोई प्रयास नजर आ रहा है। बजट के आकड़ों का विश्लेषण करने पर स्पष्ट होता है कि 1990 से आरंभ वित्तीय कुप्रबंध की स्थिति दिन प्रतिदिन बद से बदतर होती जा रही है। यह बजट भी इस कुप्रबंध को बढ़ावा देनेवाला है।

महोदय, विधानमंडल के समक्ष बजट पेश करने के साथ ही प्रथम अनुपूरक आय–व्यय विवरणी पेश करने की परिपाटी सरकार ने चालू कर दी है। ये अनुपूरक प्रावधान मूल बजट प्रावधान का 25 प्रतिशत से 30 प्रतिशत तक हो जा रहे हैं। अनेकों मामलों में ये अनुपूरक प्रावधान अनावश्यक और आवश्यकता से अधिक साबित हो रहे हैं। महालेखाकार ने अपने अद्यतन अंकेक्षण प्रतिवेदन में इस ओर भी इशारा किया है। यही नहीं, प्रतिवेदन में उल्लेख है कि सरकार के विभागों द्वारा व्यय के आँकड़ों का महालेखाकार के आकड़ों के साथ मिलान करने में भी सरकार तत्पर नहीं है। वर्ष 1990–2000 तक करीब 6,500 करोड़ रुपया के अन्तर का मिलान नहीं हुआ है।

महोदय, सदन में अपनी हर विफलता के लिए केन्द्र सरकार को कोसने और जिम्मेदार ठहराने की फोबिया प्रवृत्ति से सरकार और सरकार के समर्थक दल के

सदस्य भी ग्रस्त हैं। इनके अनुसार राज्य सरकार की विफलता का सबसे बड़ा कारण केन्द्र सरकार और बैंकों से मुँहमांगा धन नहीं मिलना है। इस बजट में और इसके पहले के बजटों के आंकड़ों से, ही जिन्हें इसी सरकार ने तैयार किया है, स्पष्ट होता है कि विगत वर्षों में केन्द्रीय सहायता और अनुदान में भारी वृद्धि हुई है। 31 मार्च 1990 को अंत होनेवाले वित्तीय वर्ष में राज्य सरकार को केन्द्र से सहायता एवं अनुदान मद में 1995 करोड़ रुपया प्राप्त हुए थे। बिहार पुनर्गठन के वर्ष में यह राशि बढ़कर 7,408 करोड़ रुपया हो गई और इस बजट के मुताबिक इस वर्ष कुल 10,220 करोड़ रुपए केन्द्र सरकार से सहायता एवं अनुदान मद में प्राप्त हो रहे हैं। इतनी बड़ी केन्द्रीय सहायता आलोचकों का मुँह बंद करने के लिए काफी है और इस वित्तीय कुप्रबंध की जननी राज्य सरकार को आइना दिखानेवाली है। इसके अतिरिक्त बाजार ऋण के रूप में 3,142 करोड़ रुपया का इन्तजाम भी केन्द्र सरकार की सहायता से राज्य सरकार इस राज्य के लिए कर रही है।

मुश्किल तो यह है कि राज्य सरकार का यह बजट भी हर दृष्टिकोण से पिछले कई वर्षों से चली आ रही आर्थिक जड़ता और दिशाहीनता को मजबूत बनाता हुआ प्रतीत हो रहा है। राज्य सरकार एक ओर भारी मात्रा में कर्ज लेकर राजस्व घाटा पाट रही है और इन कर्जों पर बड़ी धनराशि ब्याज के रूप में चुका रही है तो दूसरी ओर राज्य सरकार जो कर्ज एवं सहायता अपने खजाना से दे रही है उसका मूलधन या ब्याज की किस्त वसूल नहीं हो पा रहा है तथा राज्य सरकार जहाँ निवेश कर रही है, वहाँ से कोई प्रतिफल प्राप्त नहीं हो रहा है।

विकासात्मक एवं गैर विकासात्मक गतिविधियों के लिए सरकारी कंपनियों, निगमों, स्थानीय निकायों, स्वायत्तशासी निकायों, सहकारिता संस्थानों, गैर-सरकारी संस्थानों इत्यादि को जो ऋण सरकार ने दिया है, उनपर मूलधन का करीब 3,200 करोड़ रुपए और ब्याज का करीब 1,700 करोड़ रुपया बकाया है। इनकी वसूली नगण्य है। बजट में वसूली का लक्ष्य भी नगण्य है। 2002-03 के बजट में सरकार ने इस मद में 29 करोड़ रुपया वसूलने का लक्ष्य रखा है जो अत्यंत कम है, जबकि इसी बजट में सरकार ने फिर से करीब 635 करोड़ रुपया उधार एवं अग्रिम अपनी

उन संस्थाओं को देने का लक्ष्य रखा है जो नकारा हो गई है। यह सभी बकाया धनराशि सरकार के लेखा में परिसम्पत्ति का हिस्सा बनी हुई है।

इस प्रकार का कुल बकाया करीब 6,500 करोड़ रुपया का है जिसमें ऊर्जा परियोजनाओं के लिए बकाया ऋण 4,500 करोड़ रुपया और अन्य कार्यों के लिए विकास ऋण करीब 1,800 करोड़ रुपया है। इसके अतिरिक्त पेशगियों में सरकार का करीब 90 करोड़ रुपया, प्रेषण शेष के रूप में करीब 1,600 करोड़ रुपया, उचंत या विविध मद में करीब 1,000 करोड़ रुपया आदि फंसे हुए हैं। सरकार का वित्तीय कुप्रबंध इस समस्या को गंभीर और चिन्ताजनक बना रहा है। राज्य सरकार की 43 सरकारी कंपनियों में करीब 600 करोड़ रुपया तथा 3 निगमों में करीब 4,600 करोड़ रुपया का घाटा हो चुका है। मगर इसके बारे में कोई नीति निर्धारण करना तो दूर, सरकार इनमें अपना निवेश भी जारी रखे हुए है। चार वर्ष पूर्व इनके बारे में विचार करने के लिए मुख्य सचिव की अध्यक्षता में एक समिति बनी थी। इस समिति ने अपना प्रतिवेदन काफी पहले दे दिया है। इसका प्रतिवेदन प्राप्त होने पर इसकी अनुशंसाओं पर विचार करने के लिए एक मंत्रीमंडलीय उप समिति सरकार ने गठित की थी। यह समिति भी अपनी अनुशंसाएं 3 वर्ष पूर्व दे चुकी है। पर सरकार इनके आलोक में कोई निर्णय नहीं ले रही है। नतीजा यह हो रहा है कि ये संस्थाएं सफेद हाथी बनकर राज्य की अर्थव्यवस्था पर बोझ बढ़ा रही हैं। 31 मार्च 2000 तक सार्वजनिक क्षेत्र के 54 उपक्रमों में सरकार का निवेश 8162.62 करोड़ रुपया का है। इसमें 610.23 करोड़ रुपया हिस्सा पूंजी के रूप में और 3550 करोड़ रुपया का दीर्घकालीन ऋण के रूप में और 5714.35 करोड़ रुपया सीधा सहायता के रूप में है।

बजट में सरकार ने राजकोषीय घाटा को नियंत्रित करने की बात पर जोर दिया है। अगर ऐसा हो सका तो सरकार धन्यवाद की पात्र है। पर बजट प्रावधानों के विश्लेषण से ऐसा लगता नहीं है। महोदय, राजकोषीय घाटा सरकार के कुल शुद्ध कर्जे को इंगित करता है। इन कर्जों का उपयोग राजकोषीय घाटा पूरा करने, पूंजीगत व्यय करने तथा विकासात्मक प्रयोजनों के लिए सार्थक निवेश करने में होना चाहिए।

इन उपयोगों का सापेक्षिक अनुपात राज्य सरकार की वित्तीय दूरदर्शिता का द्योतक होता है । पर सरकारी व्यय की प्रवृत्ति इस मामले में निराश करनेवाली है । अपवाद स्वरूप दो-एक वर्षों को छोड़कर, विगत 10-12 वर्षों, में प्रायः हर वर्ष कर्ज ली गई राशि का 60% तक का इस्तेमाल हुआ राजस्व व्यय में है । नतीजतन पूंजी निर्माण ठप पड़ा हुआ है और सरकार कर्ज के दलदल में फंसती जा रही है। कुछ वर्षों के चौकानेवाले आंकड़ों का नियंत्रक एवं महालेखापरीक्षक के अद्यतन प्रतिवेदन से लेकर उद्दृत करना चाहता हूँ और इसे भाषण का अंग बनाने की अनुमति महोदय आपसे चाहता हूँ। यह आंकड़े आपके समक्ष रख रहा हूँ।

अनुपात	1995-96	1996-97	1997-98	1998-99	1999-2000
राजस्व घाटा/राजकोषीय घाटा	0.63	0.46	0.47	0.62	0.62
पूंजीगत व्यय/राजकोषीय घाटा	0.29	0.37	0.25	0.22	0.20
शुद्ध ऋण/राजकोषीय घाटा	0.08	0.17	0.28	0.16	0.18
जोड़	1.00	1.00	1.00	1.00	1.00

इससे स्पष्ट है कि आर्थिक प्रबंधन के क्षेत्र में राज्य सरकार की कपटपूर्ण नीयत से राज्य को भारी क्षति उठानी पड़ी है। मैं पहले भी कह चुका हूँ कि 1990 से 2000 के बीच वार्षिक योजनाओं में भारी कटौती के कारण जनता और वित्तीय संस्थानों की आंखों में धूल झोंकने की नीयत से राज्य सरकार ने योजना व्यय के लिए बाजार ऋण का सहारा लिया। यह ऋण 12 से 14.5 प्रतिशत के उच्च दर पर लिया गया परन्तु इसे उन योजनाओं पर व्यय नहीं किया गया, बल्कि 3.5 प्रतिशत से 5 प्रतिशत ब्याज पर कोषागार विपत्रों में इसका निवेश कर दिया गया । करीब 2,500 करोड़ रुपया के ऐसे निवेश पर करीब 100 करोड़ रुपया का अनावश्यक बोझ राज्य की अर्थ-व्यवस्था पर पड़ा है । योजना मद में लिए गए इस धन को 1999-2000 में राजस्व मद में खर्च कर दिया गया। यह जालसाजी और धोखाधड़ी का एक उदाहरण है । महोदय, इसकी जांच होनी चाहिए, क्योंकि आनन-फानन में निकाले गए इस धन का बड़े पैमाने पर दुरुपयोग हुआ है । इससे संदेहास्पद खरीद

हुई है, गलत भुगतान हुआ है । आखिरकार तत्काल आवश्यकता के बगैर इतनी बड़ी राशि, जो 2,300 से 2,500 करोड़ रुपया के बीच है, अचानक कोषागार से क्यों निकाल ली गई ? महालेखाकार के जाँच करने के निर्देशों के बावजूद सरकार जाँच से क्यों कतरा रही है ?

मार्च 2001 तक 16 सरकारी कम्पनियों एवं 3 सरकारी निगमों के विरूद्ध 821.64 करोड़ रुपया की सरकारी गारन्टियां बकाया हैं। बन्द पड़ी अन्य कम्पनियों में भी 20 करोड़ रुपया से ज्यादा बकाया है। 32 कम्पनियों में काम नहीं हो रहा है। इनकी गारन्टी डूब चुकी है । यह व्यय संचित निधि से होता है । अफसोस तो यह है कि दायित्व दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। अभी ऐसे गारंटी मद में संचित निधि से अधिकतम व्यय के बारे में कोई कानून नहीं है। मैं माँग करता हूँ कि संविधान की धारा 293 के तहत राज्य की संचित निधि की प्रत्याभूति पर गारंटी की अधिकतम सीमा निर्धारित करने के लिए सरकार विधानमंडल में कानून पारित कराए ताकि सरकार के अनावश्यक व्यय की प्रवृत्ति पर रोक लग सके और सरकार को नियम-कानून तथा विधान मंडल के प्रति जिम्मेवार होने के लिए बाध्य किया जा सके ।

मैं संक्षेप में राज्य की आर्थिक दुरावस्था प्रदर्शित करने वाले कतिपय नियामकों की चर्चा करना चाहूँगा । एक, राज्य का चालू राजस्व अधिशेष वर्षों से ऋणात्मक है, जो इस बात का द्योतक है कि राज्य के पास योजना व्यय हेतु धन नहीं होने के कारण उसे कर्ज पर निर्भर करना पड़ता है । दूसरा, राज्य के ब्याज अनुपात की प्रवृति में वृद्धि स्पष्ट परिलक्षित है जो इस बात का द्योतक है कि सरकार उच्च ब्याज दर पर धन लेकर न्यून ब्याज दर पर निवेश कर रही है। तीसरा, पूंजीगत परिव्यय बनाम प्राप्तियों का अनुपात राज्य में हमेशा 0.16 से 0.17 रहा है, जो संसूचित करता है कि पूंजीगत प्राप्तियों का 83 से 84 प्रतिशत अन्यान्य अनुत्पादक प्रयोजनों में निवेश हुआ है। चौथा, कर राजस्व बनाम सकल राज्य घरेलू उत्पाद भी केन्द्रीय करों के मामले में 0.11 पर और राज्य करों के मामलों में 0.04 पर पिछले छः-सात वर्षों से स्थिर है जो इस बात का द्योतक है कि सरकार अपने कर आधार को सुधारने में भी निष्फल रही है और बकाया करों के संग्रह में भी। पाँचवां, निवेश पर प्रतिफल नगण्य रहा है, जो पूंजीगत लागत से उपार्जन और पूंजी निर्माण की दयनीय

स्थिति का द्योतक है। छठा, पूंजीगत अदायगी बनाम पूंजीगत कर्ज का न्यून अनुपात इस बात का द्योतक है कि लिए गए कर्ज पूंजीगत अदायगी से काफी अधिक है। महोदय, यह विवरण स्वतः स्पष्ट है और राज्य सरकार की लापरवाही तथा कपटपूर्ण नीयत के कारण राज्य को रसातल की ओर ले जाने का संकेत दे रहा है। इसी प्रकार ऋण बनाम सकल राज्य घरेलू उत्पाद, राजस्व घाटा बनाम राजकोषीय घाटा, प्रारंभिक घाटा बनाम राजकोषीय घाटा, गारंटी बनाम राजस्व प्राप्तियां, परिसम्पत्तियां बनाम दायित्व आदि सभी नियामकों की कसौटी पर भी राज्य की अर्थव्यवस्था बद से बदतर होती जा रही है।

बिहार के पुनर्गठन के उपरांत 10वीं पंचवर्षीय योजना की अवधि का उपयोग राज्य के लिए उपयुक्त प्राथमिकताओं की तलाश करने और अर्थव्यवस्था की ढलान रोकने हेतु ठोस कदम उठाने के रूप में होना चाहिए था। इसके संकेत योजना के प्रथम वर्ष के बजट से ही आरंभ होना चाहिए था, पर ऐसा नहीं हुआ। इस पर सभी एकमत हैं कि उत्तरवर्ती बिहार में कृषि की प्राथमिकता होनी चाहिए। पर इस बजट में कृषि एवं संबद्ध गतिविधियों के लिए मात्र 2.05 प्रतिशत व्यय का उपबंध किया गया है। राज्य की औद्योगिक स्थिति जर्जर है, पर इसके लिए 2000-03 की वार्षिक योजना में मात्र 0.7 प्रतिशत का आवंटन है। ऊर्जा क्षेत्र के लिए 3.34 प्रतिशत, सामान्य आर्थिक सेवाओं के लिए 0.57 प्रतिशत और विशेष क्षेत्र कार्यक्रम के लिए मात्र 0.29 प्रतिशत का प्रावधान है। महोदय, योजना आवंटन का यह अत्यल्प प्रावधान राज्य को विकास की दिशा में ले जाने और अर्थव्यवस्था के समक्ष गंभीर चुनौतियों का सामना करने में कितना कारगर होगा ? अतः यह बजट महोदय इस लायक नहीं है कि इसे विधान मंडल की स्वीकृति मिले। मैं इस बजट का विरोध करता हूँ और सदन से इसे खारिज करने की अपील करता हूँ। साथ ही आपको धन्यवाद देता हूँ कि आपने मुझे दोबारा अपनी बातों को रखने का अवसर प्रदान किया।

□ 20 जुलाई 2002
बिहार विधान परिषद्

• • •

बचत बनाम अधिकाई व्यय

अभी वर्ष 2002-2003 का वार्षिक बजट पास भी नहीं हुआ कि बिहार सरकार ने साथ में इस वर्ष का प्रथम अनुपूरक बजट भी सदन में रख दिया। माननीय सदस्य बद्री बाबू ने इस अनुपूरक बजट के कतिपय रोचक पहलुओं पर सदन का ध्यान आकृष्ट किया है। अभी तो इस वर्ष का यह पहला अनुपूरक बजट है। दिसम्बर माह में दूसरा और वित्तीय वर्ष की समाप्ति होते होते फरवरी-मार्च में तीसरा अनुपूरक बजट भी सरकार सदन के समक्ष लायेगी। तब तीनों मिलाकर कुल अनुपुरक व्यय और मूल बजट व्यय का अनुपात क्या होगा इसका अंदाज लगा पाना फिलहाल मुश्किल प्रतीत हो रहा है। राज्य के समेकित निधि के अंतर्गत इस वित्तीय वर्ष के लिये सदन के समक्ष प्रस्तुत वार्षिक बजट में अंकित कुल व्यय अनुमान और इस वार्षिक बजट की कुल प्राप्तियों के अनुमान के बीच का अन्तर यानी कुल बजट घाटा में इस प्रथम अनुपूरक व्यय विवरणी के चलते जितनी वृद्धि होगी उतना अतिरिक्त वित्तीय संसाधन राज्य सरकार कहां से जुटायेगी इसका कोई व्योरा सरकार द्वारा सदन पटल पर अनुपूरक व्यय विवरणी रखते समय नहीं दिया गया है। इस अनुपूरक बजट का परिणाम बजट घाटा और राजकोषीय घाटा पर क्या होगा, राज्य की वित्तीय व्यवस्था पर इसका कितना प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, इस बारे में यह अनुपूरक व्यय विवरणी पूरी तरह मौन है। विकास दर पर इसका क्या असर होगा यह कहना तो अभी कठिन है मगर इतना जरुर कहा जा सकता है कि यह राज्य की वित्तीय सेहत के लिये अच्छा नहीं होगा।

जब हम पिछले कुछ वर्षों के अनुपूरक अनुदानों और उन्हीं वर्षों के बजट के मूल अनुदानों की मांगों के बारे में विचार करते हैं तो पता चलता है कि किसी-किसी साल कुल अनुपूरक अनुदान मूल बजट अनुदान का 25 प्रतिशत तक चला गया है। पिछले 10 सालों में किसी भी साल यह आकड़ा 11 प्रतिशत से तो कम है ही नहीं। अभी 468 करोड़ रुपये की प्रथम अनुपूरक अनुदान मांग सदन के सामने रखी गई है। यह इस वर्ष के बजट में अंकित कुल वार्षिक योजना उद्व्यय का कम-से-कम 25 प्रतिशत तो है ही। क्या राज्य सरकार इसके लिये अतिरिक्त वित्तीय संसाधन जुटाने की स्थिति में है ? या इसके फलस्वरूप होने वाले बजट घाटा में वृद्धि के कारण मूल वार्षिक बजट

के योजना उद्व्यय में तदनुरुप कटौती की जायेगी ?

सदन इस अनुपूरक बजट की स्वीकृति देने के बारे में किसी निर्णय पर पहुँचे, इसके पहले मैं राज्य सरकार से कतिपय अनुरोध करना चाहूंगा । इस 468 करोड़ रुपये के अनुपूरक व्यय में से करीब 129 करोड़ रुपये की राशि गैर योजना मद में आकस्मिकता निधि से अग्रिम लेकर पहले ही खर्च कर दी गयी है । अब सदन को इस पर मुहर लगाना है । क्षेत्रीय उप योजनाओं, केन्द्र प्रायोजित योजनाओं और केन्द्रीय योजनागत योजनाओं पर समीक्षात्मक नजर डालने पर लगता है कि इन योजनाओं को तैयार करते समय इनके विविध पहलुओं पर सम्पूर्णता में विचार नहीं किया गया है । इनके बारे में समन्वित और व्यापक दृष्टिकोण नहीं रखा गया है । पता नहीं, ऐसे कौन से कारण हैं जिसके चलते पूर्व में आरम्भ की गयी ऐसी योजनाओं में सरकार को नये सिरे से अतिरिक्त धन की आवश्यकता पड़ रही है। इसका स्पष्ट अर्थ है कि इन योजनाओं के प्राक्लन का और इनके लिये किये गये बजट उपबंध का आपस में कोई तालमेल नहीं है।

बिडम्बना है कि इस राज्य में जो योजनायें बनती हैं और उनके लिये जितना बजट उपबंध किया जाता है, वे योजनायें और उनके लिये निर्धारित उद्व्यय राज्य योजना बोर्ड से स्वीकृत नहीं होते हैं । यहां तक कि 10वीं पंचवर्षीय योजना पर भी जितना धन खर्च करने का प्रावधान किया गया है उन योजनाओं को और उनके लिये निर्धारित योजना उदव्यय को राज्य योजना बोर्ड ने स्वीकृति नहीं दी है। योजना बोर्ड एक डिफंक्ट ऑर्गेनाइजेशन की तरह काम कर रहा है । इसका नतीजा है कि राज्य की योजनाएं विकास की प्राथमिकताओं के अनुसार नहीं बनती हैं और योजनाओं के उद्व्यय के साथ इनके बजट उपबंध का कोई तालमेल नहीं रहता है । तभी ऐसी स्थिति आती है कि वार्षिक बजट सदन से पारित होने के तुरत बाद पहले अनुपूरक में ही इनके लिये भारी अतिरिक्त निधि की आवश्यकता हो जाती है ।

इसके अलावे जब हम पिछले कुछ वर्षों के वार्षिक बजट और अनुपूरक बजट का अध्ययन करते हैं तो ऐसा लगता है कि सरकार बिना वजह भी अनुपूरक अनुदान ले लेती है। यानी सदन से अनुपूरक अनुदान लेने के लिए व्यय विवरणी तैयार करते समय सरकार अपनी मांगों की उपयोगिता – अनुपयोगिता के औचित्य पर विचार नहीं करती है। इन अनुदानों की मांगों के बारे में सरकार गम्भीरता पूर्वक से मंथन नहीं करती है।

पिछले 4–5 वर्षों की अनुपूरक मांगों, मूल बजट उपबंधों, वास्तविक व्यय और बचत का अध्ययन करने पर पता चलता है कि एक ओर सरकार 1996–97 से लेकर 1999–2000 तक के वर्षों में क्रमशः 1251.89 करोड़ रुपया, 2773.37 करोड़ रुपया, 2442.95 करोड़ रुपया, 5147.27 करोड़ रुपये की अनुपूरक मांग करती है तो दूसरी ओर 1996–97 से लेकर 1999–2000 तक के इन्हीं वर्षों में क्रमशः 1769.28 करोड़ रुपये, 25.95.04 करोड़ रुपये, 5470.94 करोड़ रुपये, 3107.98 करोड़ रुपये की बचत भी होती है । वास्तविक व्यय का आंकड़ा आने पर ये अनुपूरक मांगें अनावश्यक साबित हुई हैं । वास्तविक व्यय तो मूल बजट प्रावधान से भी कई मदों में कम हुआ है । सरकार को इसपर ध्यान देना चाहिए । इन्हें विस्तार से पढ़ने के बदले प्रासंगिक आकड़ों को सदन के सामने रख देना चाहता हूँ।

	1996-97	1997-98	1998-99	1999-2000
(क) मूल अनुदान	10716.22	12121.60	16533.78	18503.50
(ख) पूरक	1251.89	2773.37	2412.95	5147.27
योग (क+ख)	**11967.4**	**14854.97**	**18946.73**	**23650.77**
वास्तविक व्यय	10198.83	19259.93	13475.79	20542.79
बचत	**1769.28**	**2595.04**	**5470.94**	**3107.98**

इस अनुपूरक के पृष्ठ 82 एवं पृष्ठ 83 पर दिये गये आंकड़ों के बारे में तथा और भी अनेक ऐसे मामले हैं जिनके बारे में सरकार को स्पष्टीकरण देना चाहिये, पर वह नहीं दे रही है । 1993–94 में ऐसे 793 मामले थे जिनमें महालेखाकार द्वारा सरकार से स्पष्टीकरण पूछा गया । इनमें से 177 मामलों में यानी मात्र 25 प्रतिशत मामलों में, ही सरकार ने आज तक स्पष्टीकरण दिया है । इसी तरह से 1994–95 में 74 प्रतिशत मामलों में, 1995–96 में 70 प्रतिशत मामलों में, 1996–97 में 68 प्रतिशत मामलों में, 1997–98 में 86 प्रतिशत मामलों में सरकार ने स्पष्टीकरण नहीं दिया है । विडम्बना तो यह है कि सदन की संवैधानिक समिति लोक लेखा समिति को भी राज्य सरकार वांछित स्पष्टीकरण नहीं देती है । सी.ए.जी. को भी स्पष्टीकरण नहीं देती है। आखिर इनमें ऐसा कौन–सा व्यय है, किस तरह का अधिकाई व्यय है जिसके बारे में सरकार तथ्य को छुपाना चाहती है और इसके लिये संविधान, नियम, कानून की कोई

परवाह नहीं करती है ? किस तरह का बजट है यह जिसमें एक तरफ बचत भी हुई है और दूसरी तरफ अधिकाई व्यय भी हुआ है? ऐसे मामलों के बारे में सरकार जबतक सदन के सामने अपना स्पष्टीकरण नहीं रखती है तबतक ऐसे अनुपूरक व्यय विवरणी को पारित करना सदन के लिए उचित नहीं होगा।

इसी तरह से इन वर्षों में बजट और अधिकाई व्यय के आंकड़े भी काफी अधिक हैं, जिनको मैंने एकत्र किया है। इन्हें भी मैं सदन के पटल पर जस का तस रख देना चाहता हूँ। ये आँकड़े स्वतः स्पष्ट हैं।

वर्ष	कुल बचत (करोड़ रु.)	कुल आधिक्य (करोड़ रु.)	मामलों की संख्या जिनके स्पष्टीकरण अपेक्षित थे	मामलों की संख्या जिनके स्पष्टीकरण अप्राप्त थे	प्रतिशत
1993-94	2123	702	793	677	85
1994-95	2819	318	1024	761	74
1995-96	2601	409	865	604	70
1996-97	2026	256	823	556	68
1997-98	2607	12	771	664	86

आधिक्य और बचत का स्पष्टीकरण देने में सरकार क्यों अपना पैर पीछे खींच रही है ? ये आंकड़े मूल बजट, अनुपूरक और व्यय की वस्तुस्थिति की पोल खोल रहे हैं और अनुपूरकों की उपयोगिता पर प्रश्न चिन्ह खड़ा कर रहे हैं।

संविधान की धारा 205 के अन्तर्गत जो भी अधिकाई व्यय होते हैं उनको सदन के सामने रखना और उनको विनियमित कराना राज्य सरकार का संवैधानिक दायित्व है। परन्तु यह सरकार विगत कई वर्षों से इस दायित्व का पालन नहीं कर रही है। संविधान के प्रासंगिक प्रावधान का निरंतर उल्लंघन हो रहा है। ऐसे व्यय 1977-78 से लम्बित चले आ रहे हैं जिनके बारे में सरकार ने न तो कोई स्पष्टीकरण दिया है, न सदन के सामने तथ्य ही रखा है और न इनका विनियमन ही कराया है।

1999-2000 तक यानी 21वीं सदी के आरम्भ होने के समय तक 6251.89 करोड़ रुपये का ऐसा व्यय है जिसे सरकार ने विधानमंडल से विनियमित कराना उचित

नहीं समझा है। इससे लगता है कि सरकार द्वारा किये जानेवाले खर्च पर नियंत्रण के बारे में संविधान में या राज्य के बजट मैनुअल में जो प्रावधान रखे गये हैं वे इस सरकार के लिये बेमानी हैं। सरकार उनमें से किसी का भी पालन नहीं करना चाहती है। राज्य का ट्रेजरी कोड है, फाइनान्सियल रूल्स हैं, सरकार इनका भी पालन नहीं करती है। आंतरिक वित्तीय अंकेक्षण का प्रावधान तो शिथिल ही कर दिया गया है। इसका नतीजा होता है कि भ्रष्टाचार के मामले आते हैं, सरकारी खजाना से कपटपूर्ण निकासी के मामले आते हैं, अधिकाई व्यय के माध्यम से घोटालों के मामले आते हैं। इनकी संख्या बढ़ रही है। सरकारी कार्य प्रणाली में ये दीमक की तरह लग गये हैं। इसके बाद भी सरकार चेत नहीं रही है। मैं सदन के सामने कुछ ऐसे कागजातों को रख देता हूँ जिसमें प्रत्येक वर्ष के आय-व्यय का आकड़ा दिया हुआ है और जिससे साबित होता है कि बिहार सरकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 205 के अनुसार अनुदान एवं विनियोग की मांगों से अधिक व्यय करती रही है। वर्ष 1977-78 से वर्ष 1999-2000 तक के कुल 8017.89 करोड़ रुपये के अधिकाई व्यय को विधानमंडल द्वारा अभी तक विनियमित नहीं कराकर सरकार अपने संवैधानिक दायित्व का निर्वाह करने में विफल साबित हो रही है। इससे संबंधित अधिकाई व्यय के वर्षवार आंकड़ों को मैं एक तालिका के रूप में सदन पटल पर रख दे रहा हूँ और माननीय सभापति महोदय से अनुरोध करता हूँ कि इन्हें मेरे भाषण का अंग बनाने की कृपा की जाय।

वर्ष	अनुदानों/ विनियोग की संख्या	अनुदान/ विनियोग सं.	अधिकाई व्यय की राशि जिसके लिए राज्य सरकार ने लोक रेखा समिति को स्पष्टीकरण (करोड़ रुपये में) नहीं दिया है
I	II	III	IV
1977-78	4	4,5,9,24	14.51
1978-79	4	4,9,17,27	31.11
1979-80	4	3,4,6,17	34.50
1980-81	7	4,6,8,10,12,16,17	27.92
1981-82	14	1,3,4,8,9,10,11,12 13.15.16,17,21,24	80.30
1982-83	5	6,8,12,16,22	5.25

I	II	III	IV
1983-84	4	6,9,11,12	227.36
1984-85	4	3,4,8,14	2.66
1985-86	4	4,8,10,13	15.17
1986-87	3	4,6,13	87.43
1987-88	13	1,4,5,9,12,14,18 19,2,5,31,38,42,48	420.66
1988-89	6	4,9,12,18,25,38	166.92
1989-90	6	4,18,25,27,38,45	228.65
1990-91	8	12,18,36,37,38 42,43,47	330.07
1991-92	8	1,4,6,11,12,18 38,43	1228.67
1992-93	6	1,4,12,18,25,38	1462.10
1993-94	4	12,18,25,37	702.17
1994-95	2	12,37	318.23
1995-96	5	4,12,25,36,37	405.08
1996-97	4	4,12,20,23,36,37	256.38
1997-98	4	4,7,12,15	12.19
1998-99	1	30	0.33
1999-00	5	10113,14,40,50	1960.23
		कुल योग	**8017.89**

जब सरकार पिछले दस, बारह, पन्द्रह वर्षों के अधिकाई व्यय को विनियमित करने का प्रयत्न नहीं कराती है तो फिर इस तरह से अनुपूरक अनुदान लाने को सरकार का कोई नैतिक दायित्व नहीं बनता है। यह महज एक खानापूर्ति है। संविधान के प्रावधानों के साथ सदन में किया जा रहा हास्यास्पद मजाक है। जनता और जनहित के साथ धोखाधड़ी है। इसलिये मैं सदन से आग्रह करता हूँ कि इस अनुपूरक मांग को खारिज करे और इसे अपनी स्वीकृति प्रदान नहीं करे।

☐ 26 जुलाई 2002
बिहार विधान परिषद

• • •

राष्ट्रीय विकास में बिहार की पेंच

आज सदन में वर्ष 2003-2004 के आय-व्ययक पर और विनियोग विधेयक पर हमलोग एक साथ विचार कर रहे हैं। माननीय सदस्य पी. के. सिन्हा ने और इसके पहले तनवीर हसन साहब ने विस्तार से सरकार के विभिन्न विभागों में होने वाले व्यय से संबंधित तथ्यों के बारे में, अनुदान की मांगों के बारे में तथा राज्य सरकार के कार्यकलापों के बारे में अपना विचार रखा है। अभी कुछ देर के लिए माननीया मुख्यमंत्री जी सदन में आयी थीं। सदन द्वारा उनको इसके लिए बधाई दी गयी कि उन्होंने आज अपने कार्यकाल का 6 वर्ष पूरा कर लिया है। यानी 6 वर्षों से एक स्थायी सरकार इस राज्य में है। इन 6 सालों से पहले भी 7 वर्षों तक बिहार में इसी दल के मुख्यमंत्री थे, इसी दल की सरकार थी, जिस दल की सरकार अभी है।

इन पिछले 13 वर्षों में इस राज्य में अराजकता, भ्रष्टाचार और घोटालों की एक कपटी और विकृत संस्कृति कायम हुई है। ऐसा लगता है कि राज्य सरकार का वर्तमान बजट भी इस अतीत से अपना पीछा नहीं छुड़ा पाया है। बजट के साथ विभिन्न विभागों के खर्च के लिए अनुदान की मांगे सरकार ने सदन के सामने रखी है। इन मांगों को देखने से और पिछले 13 वर्षों के बजट के प्रावधानों का अध्ययन और विश्लेषण करने से ऐसा लगता है कि इस राज्य की आर्थिक प्रगति में लगातार गिरावट आती जा रही है। हम सभी जानते हैं कि 1990 में सातवीं पंचवर्षीय योजना पूरी हुई थी। उस समय करीब 4.44 प्रतिशत प्रतिवर्ष का विकास दर बिहार राज्य ने हासिल किया था। इसके बाद 1990-91 और 1991-92 के लिये दो वार्षिक योजनाओं को इसी सरकार ने पूरा किया। फिर जब आठवीं पंचवर्षीय योजना इसी पार्टी की सरकार ने तैयार की तो उसमें प्रति वर्ष 5.5 प्रतिशत विकास दर का लक्ष्य रखा। विकास दर का यह लक्ष्य इसलिये रखा गया कि इसके पहले करीब 4.5 प्रतिशत विकास का दर इस राज्य में हासिल हो चुका था।

परन्तु करीब 13,600 करोड़ रुपया उद्व्यय की आठवीं पंचवर्षीय योजना का जो हश्र हुआ, उससे राज्य का विकास दर फिर काफी नीचे आ गया। इसके बाद

की नौवीं पंचवर्षीय योजना में भी जितना व्यय योजना मद में होना था वह नहीं हो पाया। यह पूरा धन राज्य के विकास के काम में खर्च हो गया होता तो यह राज्य आगे बढ़ता, यहां की आर्थिक विकास की दर और तेज हुई होती। तब जिस तरह से केन्द्र की सरकार ने आठ प्रतिशत प्रति वर्ष विकास का लक्ष्य रखा है उसके आलोक में आज हम भी इस सदन में विचार करते कि क्या यह बिहार राज्य भी आठ प्रतिशत या उसके आसपास विकास की दर हासिल करने की स्थिति में आ गया है? परन्तु हुआ यह कि उल्टे हमारे विकास की दर घट गयी। पिछले तेरह वर्षों में राज्य का विकास दर घटकर आज तीन प्रतिशत से भी नीचे आ गया है। यह राज्य सातवीं पंचवर्षीय योजना काल के विकास दर से भी पीछे चला गया है। इतना कम विकास दर बिहार का 1970 के बाद कभी नहीं रहा।

चूंकि विगत योजनाओं की उपलब्धियों के ही आधार पर राज्य सरकार ने इस वर्ष का बजट बनाया है और इस वर्ष के अपने बजट भाषण में माननीया मुख्यमंत्री जी ने कहा भी है कि पिछला साल दसवीं पंचवर्षीय योजना का पहला साल था और यह वर्ष दूसरा साल है। इसलिये इस पृष्ठभूमि में दसवी पंचवर्षीय योजना के इन दो आरंभिक वर्षों की उपलब्धियों पर हम विचार करेंगे। इन दो वर्षों के दौरान प्राप्त अनुभव से यह स्पष्ट हो जाना चाहिए था कि योजना एवं विकास के मद में जो राशि आवंटित हो रही है, सरकार उसको इस राज्य के विकास में सुनिश्चित और सुचिंतित ढंग से खर्च क्यों नहीं कर पा रही है। परन्तु इस बजट से यह आभास नहीं मिल रहा है।

बिहार राज्य की दसवीं पंचवर्षीय योजना भी संसाधनों और उद्व्यय की उन्हीं अवधारणाओं पर आधारित है जो आठवीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिपत्र के मुख्य अंश थे। एक तरह से दसवीं पंचवर्षाय योजना आठवीं पंचवर्षीय योजना की ही नकल है। नकल असल से अधिक आकर्षक प्रतीत होती है। इस योजना उद्व्यय में केन्द्र सरकार का कितना अंश होगा और राज्य का कितना अंश होगा, कितना अंश निजी वित्तीय संस्थानों का होगा इस बारे में सब के सब आंकड़े वही हैं जो आठवीं पंचवर्षीय योजना दस्तावेज में थे। राज्य सरकार योजना व्यय का 47

प्रतिशत खर्च वहन करेगी यह आठवीं पंचवर्षीय योजना दस्तावेज में भी दर्ज था, नौवीं पंचवर्षीय योजना दस्तावेज में भी दर्ज था और यही दसवीं पंचवर्षीय योजना दस्तावेज में भी दर्ज है। 27 प्रतिशत योजना उद्व्यय केन्द्र से आएगा और 26 प्रतिशत निजी क्षेत्र के लोग यहां पूंजीनिवेश करेंगे। यही लक्ष्य 8वीं एवं 9वीं पंचवर्षीय योजनाओं के दस्तावेजों में भी था और यही आंकड़े 10वीं पंचवर्षीय योजना के आधार पत्र में भी दर्ज है। अभी कल ही यहां के एक स्वनामधन्य मंत्री जी सरकार की तरफ से सदन में कह रहे थे कि राज्य में पूंजी का निवेश करना राज्य सरकार का काम नहीं है। यह केन्द्र सरकार का दायित्व है कि अन्य प्रदेशों में जो सीधे पूंजी निवेश हो रहा है, वह बिहार की तरफ भी आए।

यहां यह उल्लेख अप्रासंगिक नहीं होगा कि पिछले तेरह वर्षों में एक पैसे का भी पूंजी निवेश बिहार में नहीं हुआ है। राज्य में पूंजी निवेश लाने के लिए यहां की सरकार के पूर्व मुख्यमंत्री स्वनामधन्य श्री लालू प्रसाद राज्य सरकार के कई अधिकारियों की टीम लेकर विदेश गये, दुनिया के कई देशों में गये, यात्राएँ की, एम.ओ.यू. साइन किया। वहाँ से आकर एन.आर.आई सम्मेलन पटना में कराया। उन्होंने विदेश में भी और विदेश से लौटने के बाद पटना में भी कहा कि विदेश से भारी पूंजी बिहार में आएगी, यहां का विकास होगा। पर पिछले तेरह वर्षों में एक पैसे की पूंजी नहीं आयी। तो फिर अब इस दसवीं पंचवर्षीय योजना में हमारे कुल निवेश की 26 प्रतिशत पूंजी विदेशों से अथवा देश के निजी क्षेत्र से आएगी, यह अनुमान लगाने का क्या औचित्य है? अफसोस है कि पिछले दस वर्ष की वस्तुस्थिति से हम कोई सबक नहीं ले रहे हैं। इसलिए मैं कहने के लिये विवश हूँ कि आज सरकार को चाहिए था कि वह योजना और बजट दस्तावेजों में वास्तविकता का परिचय देती, पारदर्शिता का परिचय देती, पूर्णतः नहीं तो अंशतः ही देती। पर ऐसा इनमें कहीं भी दिखाई नहीं पड़ रहा है। इसलिए पिछले तेरह वार्षिक बजटों की तरह ही यह बजट भी हमारे राज्य के विकास दर को और नीचे ले जाने वाला साबित होगा। महोदय, मैं सरकार की आलोचना नहीं करना चाहता हूँ। मगर आज जैसी स्थिति है इस राज्य में, हम सभी को सोचना होगा, पीछे मुड़कर देखना होगा कि यह राज्य

पिछले डेढ़ दशक के अपने अतीत से पीछा कैसे छुड़ाएं, हम इस राज्य को आगे कैसे ले जाएं। इसके अनुरूप कोई प्रावधान होना चाहिए था, इस ओर स्पष्ट संकेत होना चाहिये था इस बजट में। परन्तु ऐसा दिशा संकेत 10वीं पंचवर्षीय योजना दस्तावेज में भी नहीं है, वार्षिक योजना में भी नहीं है और इस बजट में भी नहीं है।

यह बजट तैयार करते समय सरकार को क्या करना चहिए था ? इस बजट में यह स्पष्ट होना चाहिए था कि जब झारखंड बिहार से अलग हो गया तो शेष बिहार के विकास के लिये प्राथमिकता के क्षेत्र कौन होंगे ? चिह्नित किया जाना चाहिए था कि कोर सेक्टर क्या होगा ? इस आधार पर विकास के उपाय किये जाने चाहिए थे। आज सभी मानते हैं कि झारखंड अलग होने पर शेष बिहार के लिये कृषि ही प्राथमिकता का क्षेत्र रह गई है। तनवीर साहब ने इस बारे में विस्तार से बताया है। इसलिए मैं उन बातों में नहीं जाना चाहूंगा। परन्तु इस ओर सदन का ध्यान जरूर खींचना चाहूँगा कि इस बजट में विनियोग के लिए सदन के सामने प्रस्तुत विधेयक में अनुदान की जो मांगें रखी गयी हैं वे कुल कितने की हैं और उनमें कृषि क्षेत्र के लिये बजट एवं योजना उद्व्यय का उपबंध कितना रखा गया है ? महोदय, पूरे बजट में इस वर्ष लगभग 20,735 करोड़ रुपये खर्च किये जा रहे हैं और कुल केवल 205 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है कृषि क्षेत्र के लिये यानी बजट का एक प्रतिशत से भी कम राशि कृषि क्षेत्र में खर्च होगी। यह सरकार इस वर्ष एक प्रतिशत से भी कम खर्च करने जा रही है कृषि के क्षेत्र में, जो यहां के लिए प्राथमिकता का क्षेत्र है।

कृषि के क्षेत्र में निवेश के द्वारा हम इस राज्य को हरियाणा और पंजाब की श्रेणी में खड़ा कर सकते हैं। बिहार में गंगा नदी के उत्तर में जो मैदानी क्षेत्र है, उसका क्षेत्रफल उतना ही है, जितना पंजाब का है और गंगा के दक्षिण में बिहार का जो मैदानी क्षेत्र है, उसका क्षेत्रफल करीब उतना ही है जितना हरियाणा का है। इसलिए हरियाणा और पंजाब दोनों के क्षेत्रफल के जोड़ के बराबर हमारे यहां कृषि विकास की संभावना युक्त समतल मैदानी क्षेत्र है। शेष बिहार का कुल क्षेत्रफल करीब 94 लाख हेक्टेयर है इसमें कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल 64 लाख हेक्टेयर से अधिक है और कृषि के क्षेत्र में बजट का एक प्रतिशत से भी कम खर्च कर रही है सरकार।

यह साइंस–टेक्नोलॉजी का युग है। अभी हाल में महामहिम राष्ट्रपति अब्दुल कलाम साहब यहां आए थे। उन्होंने बताया था कि कृषि तकनीक का विकास करके हम कैसे इस राज्य को उन्नत बना सकते हैं। परन्तु साइंस–टेक्नोलॉजी के लिये कितने खर्च का प्रावधान बजट में रखा गया है ? मात्र 45 करोड़ रुपये का। केवल 45 करोड़ रुपया, वह भी राजस्व मद से खर्च होगा। पूंजीगत खर्च का एक नया पैसा प्रावधान भी साइंस–टेक्नोलॉजी के विकास में सरकार ने नहीं रखा है इस बजट में। इसी तरह से उद्योग के क्षेत्र में भी अत्यल्प बजट प्रावधान है। उद्योग विभाग के लिये बजट में कुल मिलाकर 45 करोड़ रुपये का डिमांड सरकार सदन से कर रही है। 45 करोड़ रुपया में क्या होगा औद्योगिक विकास के लिये ? मुझे तो लगता है कि 45 करोड़ से ज्यादा की फिरौती यहाँ के लोगों ने अपहरण के उद्योग में दे दी होगी और 45 करोड़ रुपये सरकार मांग रही है कि सदन से कि राज्य में उद्योगों के विकास के लिए खर्च करेगी। यह सरकार कृषि के क्षेत्र में खर्च करेगी नहीं, उद्योग के क्षेत्र में खर्च करेगी नहीं, साइंस–टेक्नोलॉजी के क्षेत्र में खर्च करेगी नहीं, तो आखिर किस क्षेत्र में खर्च करेगी? फिर इतना पैसा सरकार मांग रही है, इसका क्या मतलब है ? इसके पीछे क्या तर्क है ? इन सवालों का उत्तर सरकार को देना चाहिये।

इसलिए जरूरी है कि हाल–फिलहाल अतीत से हम पीछा छुड़ाएं। ऐसा नहीं कि यहां किसी क्षेत्र में वृद्धि हुई ही नहीं है। वृद्धि हुई है यहां, कई चीजों में वृद्धि हुई है यहां, कई क्षेत्रों में वृद्धि हुई है। मैं उसकी चर्चा बाद में करूंगा। परन्तु, आज हमारे यहां जो स्थिति है, पिछले 12–13 वर्षों में विकास दर घटने के जो कारण हैं, उनकी भी मीमांसा करनी होगी। आज हमारे यहां बैंकों की चर्चा करते हुये सरकार कहती है कि बैंक सरकारी कार्यक्रमों को लागू करने में सहयोग नहीं दे रहे हैं। परन्तु बैंक निवेश के सही प्रस्ताव के बिना अपना पैसा यहां पानी में तो फेंक नहीं देंगे। यहाँ सी. डी. रेशियो, ऋण–जमा अनुपात काफी कम है, केवल 21 प्रतिशत है। देश में सबसे कम सी.डी. रेशियो है। हमलोगों को इस पर ध्यान देना चाहिए कि ऐसा क्यों है ? हमारी राज्य सरकार का योगदान इसमें वृद्धि करने में क्या हो सकता है ? क्या सरकार ने अपने पास विविध क्षेत्रों में बैंकों के निवेश हेतु परियोजनाओं की

श्रृंखला तैयार कर रखी है? नहीं रखी है तो केवल बैंकों को दोष देने से क्या होगा? इस राज्य के हजारों करोड़ रुपये बाहर चले जाते हैं बैंकों के माध्यम से। परन्तु काम नहीं चलेगा केवल बैंकों को दोष देने से। इसके बदले में अगर सरकार अपने यहां सांस्थिक वित्त विभाग को सक्रिय करती, अपने सहकारी बैंकों को मजबूत करती, अपने लिये कोई सलाहकार आर्थिक संस्था खड़ी करती, उसके माध्यम से निवेश का प्रस्ताव आकर्षित करती, यहां के लिये निवेश लाने का प्रयास करती तो निश्चित रूप से हालात बदलता है। पर ऐसा हुआ ही नहीं पिछले 13 वर्षों में और आगे भी ऐसा करने का सरकार का कोई इरादा नहीं दिख रहा है।

इस राज्य में प्रति व्यक्ति आय 3128 रुपया है। यह हमारे देश में प्रतिव्यक्ति आय का जो औसत है, राष्ट्रीय औसत है, उससे 40 प्रतिशत कम है। आज अगर कोई बच्चा पैदा हो रहा है बिहार में तो उस पर 2800 रुपये का कर्ज लदा रहता है। आज इस राज्य पर इतना कर्ज है कि 2800 रुपये का कर्ज लेकर हर बच्चा पैदा हो रहा है और मुख्यमंत्री जी अपने बजट भाषण में कह रही हैं कि हमने यह व्यवस्था की है कि हम और अधिक कर्ज लें ताकि जो कर्ज पहले लिया गया है उसको लौटा सकें। अगर ऐसा हो जाय तो यह राज्य के लिए बेहतर होगा। कम ब्याज पर कर्ज लेकर अधिक ब्याज पर पहले लिये गए कर्ज को जरूर लौटाना चाहिए। परन्तु इस बजट में ऐसा कुछ प्रावधान दिखायी नहीं पड़ता है। महोदय, आज जितनी केन्द्रीय सहायता राज्य को प्राप्त होती है, उस केन्द्रीय सहायता का एक तिहाई भी हम विकास के मद में खर्च नहीं कर पाते हैं। दो तिहाई पैसा बिना खर्च हुये ही वापस लौट जाता है।

शहरीकरण भी विकास का एक मानक माना जाता है। शहरीकरण की स्थिति हमारे यहां क्या है ? यहाँ शहरीकरण की दर 10 प्रतिशत है। जबकि इस देश में यह दर औसतन 28 प्रतिशत है। वैसी ही साक्षरता की स्थिति है, वैसी ही गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों को स्थिति है। हर नियामक में, सभी मानकों में हम पीछे हैं और दिन पर दिन पीछे की ओर चले जा रहे हैं। केवल कुछ ही चीजों में यह राज्य आगे जा रहा है। वह है हत्या, अपराध, अपहरण, फिरौती, चोरी, डकैती। सवाल

उठता है कि साढ़े चार प्रतिशत की विकास दर जो इस राज्य ने सातवीं पंचवर्षीय योजना में प्राप्त कर ली थी उस तक पुनः कैसे पहुँचा जा सकता है ? आखिर ऐसा क्या है कि आर्थिक विकास की दर के हिसाब से यहाँ पर प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि की दर नहीं बढ़ रही है ? जब हमने साढ़े चार प्रतिशत विकास की दर प्राप्त की थी तब भी प्रतिव्यक्ति आय की वृद्धि दर 1.37 प्रतिशत के आसपास थी। इसका एक मात्र कारण है कि हमारी जनसंख्या बेलगाम बढ़ती जा रही है और जनसंख्या बढ़ना ही प्रतिव्यक्ति आय की वृद्धि दर नहीं बढ़ने का मुख्य कारण है। 1980 से 1990 के बीच में जनसंख्या की वृद्धि दर में थोड़ी कमी जरूर हुई थी। परन्तु 2001 की जनगणना बताती है कि 1990 से 2000 के बीच में हमारी जनसंख्या वृद्धि की रफ्तार फिर बढ़ी है। बिहार में जनसंख्या की वृद्धि दर पुनः 23.38 प्रतिशत हो गयी है। जबकि इसका राष्ट्रीय औसत 21.34 प्रतिशत है। 1990 में बिहार की जनसंख्या वृद्धि दर राष्ट्रीय औसत के बराबर थी। विगत 10 वर्षों में जनसंख्या वृद्धि दर में इजाफा हुआ है। जब हम जनसंख्या वृद्धि की दर को बढ़ाएंगे, परन्तु अपने विकास दर की वृद्धि को कम करेंगे तो इस राज्य की उन्नति कैसे हो सकती है ? यहाँ प्रति व्यक्ति आय कैसे बढ़ सकती है ? यहां की जनता कैसे खुशहाल हो सकती है ?

यह सही है कि बिहार में गुणवत्ता युक्त कृषि योग्य जमीन का क्षेत्रफल काफी है। परन्तु यहां की 78 प्रतिशत जनता और कामगार कृषि क्षेत्र पर ही आश्रित हैं और केवल 8 प्रतिशत लोग उद्योग के क्षेत्र में कार्यरत हैं। कृषि क्षेत्र में लगे कामगारों और इस पर आश्रित लोगों की संख्या को कम करना और उद्योग के क्षेत्र में लगे कामगारों की संख्या को बढ़ाना बिहार के लिये जरूरी है। यह स्थिति जबतक कायम नहीं होगी, तबतक इस राज्य का विकास नहीं हो सकता है। बजट और विनियोग के जो प्रस्ताव हमारे सामने रखे गए हैं, उनमें कहीं भी इस बारे में ऐसा जिक्र नहीं है कि सरकार ने इस दिशा में कोई कदम उठाने के लिये प्रयास किया है अथवा करेगी। हम अगर अतीत से सीख लेना चाहते हैं तो 1990 के पहले के कई वर्ष ऐसे हैं जिनकी गतिविधियों से नीतिगत और कार्यक्रम आधारित सीख हम ले सकते हैं।

महोदय, प्रथम पंचवर्षीय योजना से लेकर आज तक कम–से कम तीन पंचवर्षीय योजनायें ऐसी रही हैं, जिनमें बिहार का विकास दर, राष्ट्रीय विकास दर के औसत से अधिक रहा है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में करीब–करीब दोनों का विकास दर बराबर था 3.06 प्रतिशत। तृतीय पंचवर्षीय योजना में बिहार का विकास दर 2.4 प्रतिशत था जबकि शेष देश का विकास दर 2.20 प्रतिशत था। पांचवीं पंचवर्षीय योजना में भी बिहार 5.39 प्रतिशत विकास दर पर था जो राष्ट्रीय औसत के समकक्ष था। अतीत में 1980 के पहले हम कई बार विकास दर में राष्ट्रीय औसत से आगे रह चुके हैं। परन्तु 1990 के बाद से बिहार का विकास दर लगातार घटते जा रहा है। इसका कारण क्या है? इसके पीछे कौन लोग हैं? विकास दर कम होने के लिये केवल नौकरशाही को दोष देकर इस मामले से छुटकारा नहीं पाया जा सकता है। नौकरशाही हमारा तंत्र है। एक कहावत है कि 'चले न जाने अंगनवे टेढ़'। कहावत की तरह सरकार अपनी कमियों पर ध्यान देने की बजाय हमेशा अपने तंत्र को ही दोष देती रहती है। तंत्र में जो दोष व्याप्त है उसका मुख्य कारण भी हमारी राजनैतिक धारा में व्याप्त दोष ही है। आज इसका जिक्र मैं नहीं करना चाहूंगा कि 1990 के बाद जो लोग यहां सरकार में आये उनके द्वारा कपटपूर्ण तरीके से सरकारी खजाने से सीधे पैसा किस प्रकार निकाल लिया गया। इसके लिये नौकरशाही जिम्मेवार नहीं है। भ्रष्टाचार के नये–नये कीर्तिमान कायम किये गये हैं बिहार में। घोटालों का सिरमौर कहा जाने वाला पशुपालन घोटाला इसी राज्य में हुआ है। इस सरकार के पूर्व मुख्यमंत्री की सांठगांठ से हुआ है।

अगर हम अपने निकटस्थ अतीत से पीछा छुड़ाना चाहते हैं तो हमको इन सब से पीछा छुड़ाना पड़ेगा और हम अपने दूरस्थ अतीत को गौरवान्वित बनाना चाहते हैं तो इसके लिये नयी राह बनानी होगी। पीछे जा करके हमको देखना पड़ेगा कि हम अपने बजट में, अपनी योजना में, अपने विकास के कार्यक्रमों में किस तरह से प्रावधान करते रहे हैं। महोदय, प्राथमिकता के क्षेत्रों को हमने आजतक चिह्नित नहीं किया है, यह अफसोस की बात है, दुर्भाग्यपूर्ण है। औद्योगिक विकास के लिए हमने कोई उपाय नहीं किया है। इसी तरह से नारी शिक्षा, नारी सशक्तिकरण का क्षेत्र

है। सामाजिक सरोकार के अन्य क्षेत्र हैं। ये ऐसे काम हैं जो हमारे विकास के रूप–स्वरूप का निर्धारण करने में भागीदार बन सकते हैं। महोदय, इस बजट में इन क्षेत्रों के बारे में भी कोई प्रावधान नहीं है। सबसे बड़ी विचित्र बात तो यह है कि सरकार ने पिछले 12–13 वर्षों में रोजगार सृजन के लिए कोई प्रयत्न ही नहीं किया है और इस वर्ष भी नहीं किया है। हमारे यहां बचत की दर गांवों में, गरीबों में, कम आय वर्ग के लोगों में, किसानों में काफी है। परन्तु उस बचत का भी सदुपयोग करें, उस बचत का ऐसा निवेश करायें, ताकि जमीनी स्तर पर पूंजी निर्माण की एक सशक्त प्रक्रिया प्रारम्भ हो, पूंजी निर्माण शुरू हो, यह काम भी सरकार नहीं कर रही हैं और जहां यह सरकार चूकती है वहां केन्द्र सरकार को दोष देती है कि केन्द्र सरकार के सहयोग नहीं करने के कारण इस राज्य का विकास नहीं हो रहा है।

परन्तु दूसरी ओर आज विकास के जो भी न्यूनाधिक काम दिखाई पड़ रहे हैं इस राज्य में चाहे वे शिक्षा के क्षेत्र में हैं, स्वास्थ्य के क्षेत्र में है, ग्रामीण विकास के क्षेत्र में हैं, वे सब के सब केन्द्रीय अनुदान पर आधारित विकास कार्य है। कोई पूछे कि इसमें राज्य सरकार का कितना योगदान है ? तो हर कोई बतलायेगा कि यह सरकार विगत दो पंचवर्षीय योजनाओं में, आठवीं और नौवीं पंचवर्षीय योजनाओं में, आवंटित निधि में से करीब 14000 करोड़ रुपये खर्च नहीं कर सकी है। (व्यवधान)

पिछले 12–13 वर्षों में जो स्थिति बनी है उसमें विकास दर बहुत कम हो गया है बिहार में, शेष भारत की तुलना में। बिहार का योगदान इस देश के आर्थिक विकास दर में बहुत ही कम हो गया है। भारत सरकार ने इसका लक्ष्य रखा है सभी राज्यों के लिए। अगर राष्ट्रीय विकास की दर 8 प्रतिशत से उपर नहीं पहुंच पायी है तो इसमें बिहार का ऋणात्मक योगदान भी एक कारण है। अगर बिहार का ऋणात्मक योगदान ऐसे ही बना रहेगा, 3 प्रतिशत से कम रहेगा, तो राष्ट्रीय औसत को 8 प्रतिशत से उपर ले जाने के लिए कई अन्य राज्यों को इसमें काफी अधिक योगदान देना पड़ेगा।

आज बिहार भी विकसित नहीं तो कम से कम विकासोन्मुख राज्य की श्रेणी

में होता, देश के अन्य विकसित राज्यों की तरह विकास की दिशा में उतरोत्तर गतिमान रहता तो हम देश की आर्थिक समृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान कर सकते थे। इसलिए विकास बिडम्बना की जो परिस्थितियां बिहार में निर्मित हुई हैं, ये परिस्थितियां विकास के मामले में इस राज्य को तो नीचे ले ही जा रही हैं, पूरे देश को भी विकास के रास्ते पर तीब्र गति से गतिमान होने में कामयाब नहीं होने दे रही है। यह कहना अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं होगा कि देश की विकास गति में बिहार ब्रेक का काम कर रहा है। जिस स्थिति में हमलोग इस बजट पर और विनियोग पर विचार कर रहे हैं, उसमें ऐसा नहीं लगता है कि राज्य सरकार को इस तरह बेतरतीब और मनमाना खर्च करने की अनुमति दी जानी चाहिए। इसलिए महोदय, विनियोग के इस प्रस्ताव का मैं विरोध करता हूँ। राज्य सरकार द्वारा वर्तमान स्थिति में सुधार का प्रयत्न करने के लिए जब तक कोई ठोस योजना नहीं बनाई जाती है, जब तक कोई ठोस कार्यक्रम नहीं बनाये जाते हैं और उन कार्यक्रमों के लिए जिम्मेवार ढंग से निधि का आवंटन नहीं किया जाता है, तब तक ऐसे बजट पर और इस तरह के विनियोग के प्रस्ताव पर सहमति देना, मेरे लिए, मेरे दल के लिए संभव नहीं है। इसलिए, मैं इस सदन में सरकार द्वारा पेश इस बजट और विनियोग विधेयक का विरोध करता हूँ।

□ 25 जुलाई 2003
बिहार विधान परिषद्

•••

असंवैधानिक अनुपूरक

वित्तीय वर्ष 2003-2004 के लिए सरकार ने सदन के सामने प्रथम अनुपूरक व्यय विवरणी रखी है। अनुपूरक व्यय विवरणी पेश करना कोई असामान्य घटना नहीं है। परम्परा के तौर पर भी, बजट मैनुअल के अनुसार भी और संविधान के प्रावधान के अनुसार भी राज्य सरकार को अधिकार है कि वह अनुपूरक व्यय विवरणी सदन के समक्ष रखे। परन्तु, वह विवरणी तथ्य परक और आवश्यकता के अनुरूप होनी चाहिये, न कि इसका इस्तेमाल वित्तीय अनियमितताओं को संरक्षण देने वाली ढाल के रूप में होना चाहिये। मैने इस अनुपूरक व्यय विवरणी का सरसरी तौर पर अध्ययन किया है और उसके आधार पर कह सकता हूँ कि इस अनुपूरक व्यय विवरणी के कतिपय प्रावधान संविधान में वर्णित अनुपूरक व्यय विवरणी संबंधी वित्तीय प्रक्रिया की भावना के अनुरूप नहीं हैं।

कुल 394 करोड़ 85 लाख 77 हजार 108 रुपये की यह अनुपूरक व्यय विवरणी है। इस अनुपूरक व्यय विवरणी में करीब 5 करोड़ 13 लाख रुपये का प्रावधान ऐसा है जिसे सरकार ने आकस्मिकता निधि से अग्रिम लेकर खर्च किया है। आकस्मिकता निधि से अग्रिम लेकर किये गये इस व्यय के समंजन के लिए अनुपूरक व्यय विवरणी सदन में प्रस्तुत की गयी है। इसके अलावा इस अनुपूरक व्यय विवरणी में कतिपय व्यय ऐसे हैं, जिन्हें काफी पहले, कई वर्ष पहले किया जा चुका है। अनुपूरक व्यय विवरणी के माध्यम से सदन की स्वीकृति भूतलक्षी प्रभाव से लेने के लिये इन्हें भी सदन पटल पर सरकार द्वारा रखा गया है। संविधान की धारा-205 (ख) में जो प्रावधान है, उसके अनुसार किसी वित्तीय वर्ष के दौरान किसी सेवा पर उस वर्ष और उस सेवा के लिए अनुदान की रकम से अधिक कोई धन व्यय हो रहा है'' तो उसका समावेश अनुपूरक व्यय विवरणी में किया जाना चाहिए। 'हो गया है', यानी जो व्यय किसी भी वर्ष में पहले हो चुका है और उस वर्ष के और उसके आगे वाले वर्ष की व्यय विवरणी में उसे सम्मिलित नहीं किया जा सका है तो उसको फिर से अनुपूरक व्यय विवरणी में रखा जा सकता है। परन्तु जो व्यय हुआ ही नहीं है, जितना प्रावधान है उतना व्यय नहीं हुआ है, उस व्यय को सामान्यतः

संविधान के इस अनुच्छेद के मुताबिक अनुपूरक व्यय विवरणी में नहीं रखा जाना चाहिये। परन्तु सरकार ने ऐसे व्यय को इसके बड़े हिस्से को इस अनुपूरक व्यय विवरणी में रखा है जो संविधान के प्रासंगिक प्रावधान का उल्लंघन है। संविधान के अनुच्छेद–206 में लेखानुदान, प्रत्यानुदान, अपवादानुदान आदि कई अनुदानों के प्रावधान हैं। सरकार को चाहिए था कि ऐसे व्यय को पहले आकस्मिकता निधि से कर देती और आकस्मिकता निधि से हुये इस व्यय के अनुपूरक व्यय विवरणी का अंग बनाकर उस पर सदन की अनुमति ले लेती। परन्तु ऐसा नहीं किया गया है। यह संविधान के प्रासंगिक प्रावधान का उल्लंघन है। इस तरह अनुपूरक व्यय विवरणी का एक बहुत बड़ा हिस्सा असंवैधानिक है। ऐसी असंवैधानिक व्यय विवरणी को सदन की अनुमति नहीं मिलनी चाहिए।

अभी हाल ही में इस सदन के सामने सरकार ने वर्ष 2003–04 का बजट पेश किया है। वह बजट 191 करोड़ रुपये घाटे का है। इसके बावजूद अतिरिक्त व्यय हेतु सरकार सदन से 394 करोड़ 85 लाख 77 हजार 108 रुपये मांग रही है अनुपूरक व्यय विवरणी के माध्यम से, जिसमें मात्र 5 करोड़ 13 लाख रुपये आकस्मिकता निधि से हुए व्यय का सामंजन है। इस अनुपूरक व्यय को जोड़ देते हैं तो इस साल का बजट घाटा करीब 580 करोड़ रुपये हो जाता है। अभी द्वितीय एवं तृतीय अनुपूरक व्यय विवरण आने बाकी है। यह तो अभी प्रथम अनुपूरक बजट है। बजट मैनुअल के अनुसार दिसंबर में दूसरा और मार्च में तीसरा अनुपूरक बजट सरकार पेश कर सकती है। केवल 3.13 करोड़ रुपये ही व्यय होने के कारण अभी भी आकस्मिकता निधि में 146.87 करोड़ रूपये बचे हुये हैं। यह अनुपूरक बजट पेश करते समय सरकार ने यह नहीं बताया कि इसके कारण राज्य का बजट घाटा बढ़कर चालू वित्तीय वर्ष में 585 करोड़ रुपये का हो जायेगा तब सरकार यह घाटा पूरा करने के लिए धन कहां से लायेगी ? सरकार इस घाटा को कैसे पूरा करेगी ? इस कारण राज्य पर जो अतिरिक्त वित्तीय भार आयेगा, सरकार उसे कैसे वहन करेगी? क्या इसके लिये सरकार अतिरिक्त संसाधन जुटायेगी? अगर हाँ तो कैसे, किस प्रकार, इसकी कोई योजना नहीं दी गई है अनुपूरक व्यय विवरणी के साथ। या तो सरकार यह अतिरिक्त व्यय भार वहन करने के लिये अलग से टैक्स लगाकर

अतिरिक्त संसाधन जुटायेगी या इस बजट व्यय में चिन्हित योजना उद्व्यय में बाद में कटौती करेगी। ऐसा हुआ तो राज्य की कई चालू योजनायें बाद में मारी जायेंगी, इन्हें बन्द करने के लिये सरकार को विवश होना पड़ेगा। ऐसे ही कारणों से पिछले 10–12 वर्षों से हर साल सरकार बजट में योजना व्यय का जितना प्रावधान करती है उतना खर्च नहीं हो पाता है। योजना और विकास के मद में उससे काफी कम खर्च होता है। इस मद के खर्च में भारी कटौती करनी पड़ती है। यह अनुपूरक व्यय विवरणी न केवल संविधान के प्रावधान का उल्लंघन करती है बल्कि यह संकेत भी देती है कि अभी कुछ दिन पहले सरकार ने योजना मद में व्यय के लिए इसी सदन से जो अनुमति ली है बजट घाटा बढ़ जाने के कारण उनमें से कई योजनायें पूरी नहीं होंगी। सरकार को सदन में यह स्पष्ट करना चाहिए कि कहां से यह अतिरिक्त संसाधन जुटाये जायेंगे। इस घाटा को सरकार कहां से पूरा करेगी। घाटा पूरा नहीं हुआ योजना उद्व्यय में कटौती करनी होगी तो योजना व्यय में कटौती का राज्य के विकास पर क्या असर होगा ?

मार्च में राज्य का वार्षिक बजट सदन में पेश करते समय बजट सत्र में ही इसे विधान सभा से पारित नहीं करा लेने और इसके बदले वित्तीय वर्ष के आरंभ के कुछ महीनों के लिये सदन से लेखानुदान प्राप्त करने की मजबूरी के पक्ष में तर्क प्रस्तुत करते हुये सरकार यही कहती है कि पूरा बजट जुलाई महीने में इसलिये पारित कराया जाता है क्योंकि केन्द्र सरकार से आनेवाली कई योजनाओं में राज्य को प्राप्त होने वाले हिस्से का सही ब्यौरा उसके पहले नहीं मिल पाता है। सरकार को यह पता नहीं चलता है कि केन्द्र सरकार किस मद में कितना मदद देगी। परन्तु इस अनुपूरक व्यय विवरणी से पता चलता है कि पिछले वित्तीय वर्ष में केन्द्र सरकार द्वारा दी गयी वैसी निधियां खर्च नहीं हो पाई हैं, जिनमें से किसी में 90 प्रतिशत पैसा केन्द्र सरकार का होता है, दस प्रतिशत राज्य का होता है और किसी में 75 प्रतिशत केन्द्र का होता है, केवल 25 प्रतिशत राज्य का होता है। ऐसी योजनाओं में केन्द्र से प्राप्त राशि को भी सरकार ने अबतक खर्च नहीं किया है और अब इस अनुपूरक व्यय विवरणी के माध्यम से सरकार मांग कर रही है कि उसे खर्च करने के लिये मैचिंग ग्रांट की अनुमति सदन दे।

महोदय, केवल नौ करोड़ रुपये ऐसे हैं इस अनुपूरक व्यय विवरणी में जो केन्द्र प्रायोजित योजनाओं और केन्द्रीय योजनाओं के मद में है। इसका अर्थ यह है कि ऐसी योजनाओं के लिए राज्य हिस्से की समतुल्य निधि का प्रावधान सरकार मूल बजट में कर चुकी है। अन्यथा केन्द्रीय योजना और केन्द्र प्रायोजित योजना मद का राज्य हिस्सा इस अनुपूरक बजट में काफी अधिक होता। इसलिये सरकार द्वारा पूरा बजट मार्च माह में पारित नहीं कराकर जुलाई माह में पारित कराने के लिये यह तर्क दिया जाना आधारहीन प्रतीत होता है।

इस अनुपूरक व्यय विवरणी में व्यय हेतु इतनी बड़ी राशि की मांग का औचित्य सरकार को बताना चाहिये। राज्य के विकास के लिये, गांव के विकास के लिये, टेरिटोरियल डेवलपमेंट के लिये, कल्याण मद आदि ऐसे अन्य कार्यों के लिये अगर राज्य सरकार धन खर्च करती, इन मदों में धन की मांग करती तो बात अलग होती। पर ऐसे कार्यों के लिये सरकार ने इस अनुपूरक व्यय विवरणी में प्रावधान नहीं रखा है, इनके लिये निधि नहीं मांगा है, यह आश्चर्यजनक है। अगर मोटर कार का उपबंध करना है तो मोटर कार आकस्मिकता निधि से खरीदी जा सकती है। उसके बाद दूसरे अनुपूरक में उसे सामंजन के लिये लाया जा सकता है। मार्च, 1994 से अप्रैल 2003 तक जो राशि खर्च होनी थी और अगस्त, 2002 से जो राशियां बकाया थीं उनका सामंजन हो जाना चाहिये था। वामपंथी उग्रवादियों के प्रत्यर्पण की नीति के अनुरूप व्यय की जो राशि बकाया थी, उसका प्रावधान इसके पहले ही मूल बजट अथवा अनुपूरक बजट के माध्यम से हो जाना चाहिये था। मगर ऐसा प्रावधान पूर्व में नहीं किया गया। अब अनुपूरक के माध्यम से ऐसा प्रावधान किया जा रहा हैं। अनेकों ऐसे विषय है जैसे बंधुआ पुनर्वास की नीति है, विकलांग सहायता निधि है, विज्ञान प्रौद्योगिकी का विकास कार्यक्रम है, पर्यावरण संरक्षण के कार्यक्रम हैं, ऐसे विषयों के सम्बन्ध में कोई प्रावधान सरकार ने इस अनुपूरक बजट में नहीं किया है। फिर भी सरकार इस बजट के क्रांतिकारी होने, इस बजट के विकासोन्मुख होने का ढिंढोरा पीट रही है और कह रही है कि यह सब इस बजट की विशेषताएं हैं।

सैनिकों की विधवाओं की सहायता जैसे मदों के लिए, उनके कल्याण के लिए जो राशि रखी जानी चाहिए थी बजट में सरकार ने उस राशि को नहीं रखा है और

सचिवालय के सामान्य खर्चे के बारे में, उपस्कर आदि खरीदने के बारे में, कागज खरीदने के बारे में, लेखन सामग्रियां खरीदने के बारे में, प्रावधान अनुपूरक बजट में रखा है। आश्चर्य है कि विभिन्न सरकारी विभागों के नियमित खर्चों के मद, जिन्हें मूल बजट का अंग होना चाहिए था, वह सब अनुपूरक व्यय विवरणी में है। अगर किसी पद पर कोई पदस्थापित नहीं है, एक साल तक और आज पदस्थापना हो रही है और वह पद सरकार ने सरेंडर नहीं किया है तो बजट में पहले ही उस पद पर वेतन भत्ते के मद में जो खर्चे होते हैं, उनका प्रावधान शामिल रहना चाहिए था। मगर इस प्रकार का व्यय करने के लिये भी इस अनुपूरक व्यय विवरणी के माध्यम से सरकार सदन की अनुमति मांग रही है। वित्तीय कुप्रबन्धन का इससे अधिक ज्वलंत उदाहरण और कुछ नहीं हो सकता है।

सरकार की वित्तीय व्यवस्था न केवल जर्जर हो गई है, बल्कि सरकार अपने वित्तीय प्रबंधन कुशलता का भी किसी मायने में परिचय नहीं दे रही है। सरकार के जो संसाधन हैं, राज्य की जो आमदनी है, राज्य की जो परिसंपत्ति है उसके साथ खिलवाड़ हो रहा है। राज्य की जो परिसंपत्ति होती है, सरकारी खजाने में करों या अन्य मदों में जो पैसा जमा होता है, वह किसी एक व्यक्ति की संपत्ति नहीं होती है। वह किसी एक पार्टी की या किसी एक सरकार की संपत्ति नहीं होती है, वह पूरी जनता की संपत्ति होती है। जनता द्वारा दिये गये करों के माध्यम से यह आमदनी आती है, केन्द्र सरकार के द्वारा दी गयी वित्तीय सहायता एवं अनुदान तथा सरकार जो कर्ज ले रही है, वह भी इस आमदनी का हिस्सा होती हैं। इस आमदनी से परिसंपत्ति सृजित होती है। परन्तु इस आमदनी से व्यय करने के बारे में सरकार इतनी लापरवाह है कि संविधान के प्रावधानों के अनुसार, जो कंडिकाएं, जो शीर्ष, जो उपशीर्ष बजट की तालिकाओं में इनके लिए निर्धारित किये गये हैं, उनमें जिस प्रकार के व्यय का उल्लेख सामान्य बजट में होना चाहिए ऐसा अक्सर नहीं होता है। बाद में कभी किसी ने ध्यान दिलाया कि ऐसा उल्लेख नहीं होता है तो सरकार इस हेतु अनुपूरक व्यय विवरण के साथ सदन में उपस्थित हो जाती है।

आखिर हम किस प्रकार से राज्य का वित्तीय प्रबंधन चला रहे हैं ? हम अपने विकास की दिशा के बारे में क्या सोचते हैं? गरीबों के कल्याण के बारे में, अल्पसंख्यकों

के कल्याण के बारे में ऐसी कई योजनाएं हैं जिनका सरकार अपने बजट में समावेश नहीं करती है। दो–एक महीने के बाद सरकार जब बजट पास कराती है तो बजट के साथ–साथ विधान सभा के समक्ष अनुपूरक व्यय विवरणी भी लेकर आती है। यह समझ में नहीं आता है कि महामहिम राज्यपाल से इस अनुपूरक व्यय विवरणी में उल्लिखित व्यय के लिए सरकार ने जो सम्मति मांगी होगी वह सम्मति किस रूप में मांगी होगी? संचिकाएं सदन के सामने नहीं आती हैं। मगर ऐसे विवरणों के लिए, सरकार ने संचिका में ऐसे आवश्यक तर्क अवश्य दिए होंगे जिनके आलोक में महामहिम द्वारा विधान सभा के सामने अनुपूरक व्यय का प्रस्ताव रखने की अनुमति सरकार को दी गइ होगी।

महोदय, यह अनुपूरक व्यय विवरणी संविधान में वर्णित वित्तीय प्रक्रियाओं की भावना के प्रतिकुल है, इसे असंवैधानिक कहना गैर मुनासिक नहीं होगा। यह व्यय विवरणी राज्य सरकार की गलत वित्तीय सोच का परिचायक है। यह व्यय विवरणी ऐसे प्रावधानों से युक्त है जिन्हें व्यय विवरणी का हिस्सा नहीं होना चाहिए। इसलिए मैं सदन से अनुरोध करता हूँ कि इस व्यय विवरणी को खारिज किया जाय और सरकार से कहा जाय कि इसके बारे में तथ्यपरक प्रतिवेदन के साथ वह अपना पक्ष प्रस्तुत करे। सरकार बताये कि इस अनुपूरक बजट के फलस्वरुप राज्य की समेकित निधि से होने वाले कुल व्यय में जितनी वृद्धि होगी और इसके कारण बजट घाटा जितना बढ़ेगा उसे सरकार किस प्रकार पूरा करेगी ? क्या सरकार इसके समतुल्य अतिरिक्त संसाधन जुटायेगी या इसके लिये योजना मद में कटौती करेगी ? वैसे व्यय को अनुपूरक व्यय विवरणी का अंग क्यों बना दिया गया है, जिन्हें संविधान के अनुच्छेद 205 के अनुसार अनुपूरक व्यय विवरणी में शामिल नहीं किया जाना चाहिये था? उन्हें क्यों इस भांति सदन के समक्ष रखा गया सरकार को इस बारे में सदन के समक्ष स्पष्टीकरण देना चाहिए। मैं उम्मीद करता हूँ कि मंत्री महोदय सदन को इस बारे में संतुष्ट करेंगे। मैं सदन से अनुरोध करता हूँ कि ऐसे अनुपूरक व्यय विवरणी को निरस्त किया जाय, खारिज किया जाय और यह व्यय करने की अनुमति सरकार को नहीं दी जाय।

☐ 29 जुलाई 2003
बिहार विधान परिषद्

• • •

लचर वित्तीय प्रबंधन

भारतीय संविधान की धारा 205 के अंतर्गत विधानमंडल में अनुपूरक व्यय विवरणी उपस्थापित करने का प्रावधान इसलिये किया गया है कि अगर सरकार को लगता है कि किसी सेवा के लिए बजट में जो उपबंध किये गये हैं, वे पर्याप्त नहीं हैं और उन उपबंधों के अलावे हमको और अधिक खर्च करने की जरूरत आ गयी है या सरकार अपनी कृत सेवा पर आवंटित राशि खर्च कर चुकी है और इसे पूरा करने के लिये उसे अतिरिक्त धनराशि की आवश्यकता है या अकस्मिकता निधि से अग्रिम लेकर किये गये व्यय का समंजन करना है या वित्तीय वर्ष के मध्य में किसी नई योजना को लागू करना आवश्यक हो गया है तो सरकार अनुपूरक बजट के माध्यम से सदन के सामने अतिरिक्त निधि के लिये मांग का प्रस्ताव लेकर आ सकती है। अगर सरकार चालू वित्तीय वर्ष में अथवा पूर्व के किसी वित्तीय वर्ष में आकस्मिकता निधि से व्यय कर चुकी है और उसका समंजन नहीं हुआ है तो सरकार ऐसे व्यय के समंजन हेतु भी अनुपूरक व्यय विवरणी के माध्यम से सदन के समक्ष समंजन का प्रस्ताव लेकर आती है।

अभी हम चालू वित्तीय वर्ष 2003–04 के दूसरे अनुपूरक व्यय विवरणी पर विचार कर रहे हैं। इसके पहले सदन के समक्ष प्रथम अनुपूरक व्यय विवरणी रखी जा चुकी है। इन दोनों अनुपूरक व्यय विवरणियों को देखने से लगता है कि जिस बड़े पैमाने पर सरकार विधान मंडल से अपने मूल वार्षिक बजट में किये गये प्रावधानों के अतिरिक्त धन की माँग कर रही है, वह चिंता का विषय है। केवल इसी वर्ष नहीं, इसके पहले के वर्षों में भी यही स्थिति रही है। तीन–चार वर्ष पहले की अनुपूरक व्यय विवरणियों से संबंधित कागजात को देखा जाय तो स्पष्ट हो जाता है कि कुछ वर्षों में तो पांच हजार करोड़ रुपये तक की मांग प्रथम अनुपूरक, द्वितीय अनुपूरक और तृतीय अनुपूरक के माध्यम से सरकार द्वारा की गई है।

अभी तो यह द्वितीय अनुपूरक है, जिस पर हम विचार कर रहे हैं। दो माह के बाद सरकार तृतीय अनुपूरक लेकर सदन के समक्ष आयेगी। एक तरफ तो स्थिति यह है कि बजट में जो उपबंध किसी शीर्ष के अंतर्गत किये जाते हैं, उनका व्यय नहीं हो पाता है, उनमें बचत हो जाती है, सरकार यह व्यय करने में अक्षम हो जाती है। तो दूसरी ओर उसी शीर्ष के अंतर्गत लघु अथवा उपशीर्षों की किसी सेवा के कार्यक्रमों पर सरकार आकस्मिकता निधि से अग्रिम लेकर व्यय कर देती है और इसके बाद अपनी सुविधानुसार अनुपूरक बजट के माध्यम से व्यय की जा चुकी निधि के समंजन की मांग लेकर सदन के समक्ष उपस्थित हो जाती है।

इसके पहले प्रथम अनुपूरक बजट द्वारा 394.86 करोड़ रुपये व्यय करने की अनुमति सरकार सदन से ले चुकी है। इसके बाद द्वितीय अनुपूरक व्यय विवरणी के माध्यम से 167.34 करोड़ रुपये की मांग सरकार विधान मंडल से कर रही है जिसमें 66.40 करोड़ रुपये का व्यय गैर योजना मद का है। प्रथम अनुपूरक में गैर योजना मद का व्यय 218.91 करोड़ रुपये था। वित्तीय वर्ष पूरा होने में अभी 3 माह से अधिक समय बाकी है। प्रथम और द्वितीय अनुपूरक मिलाकर सरकार अब तक करीब 563 करोड़ रुपये वार्षिक बजट के अतिरिक्त व्यय करने की अनुमति विधान मंडल से ले चुकी है। अगर यही रफ्तार रही तो निश्चित रूप से सरकार दो माह बाद इसी तरह का तीसरा अनुपूरक भी सदन के सामने लेकर आयेगी।

महालेखाकर का पिछले कई वर्षों के अंकेक्षण प्रतिवेदन पर नजर डालने से पता चलता है कि एक ओर कुछ सेवाओं में वर्ष के अंत में सात हजार करोड़, आठ हजार करोड़ रुपयों तक की बचत सरकार दिखाती है तो दूसरी तरफ कुछ सेवाओं में सरकार काफी मात्रा में अधिकाई व्यय भी दिखाती है। पिछले कई वर्षों के विनियोग लेखा पर हम विचार करते हैं तो लगता है कि सरकार की ऐसी मानसिकता हो गयी है कि बजट बेमन से बना दीजिए, बजट बनाने की प्रक्रिया का पालन नहीं कीजिये, इसके लिये जरूरी अभ्यास मत कीजिये, बजट मैनुअल के प्रावधानों को

धत्ता बताते रहिये, पिछले वित्तीय वर्ष के बजट के विभिन्न शीर्षों में कुछ प्रतिशत राशि बढ़ाकर या घटाकर विभिन्न सेवाओं के लिये अनुदान की मांग तैयार कर दीजिये, योजना विभाग से उसे स्वीकृत करा लीजिये और बजट के नाम पर उन अनुदानों की मांगों को सदन के सामने रखकर बहुमत से पारित करा लीजिये। उसके बाद अनुपूरक बजट के माध्यम से फिर सदन के सामने आइये कि हमें कई योजनाएं नये सिरे से क्रियान्वित करनी हैं और चूँकि बजट में इनका समावेश नहीं हो सका है, इसलिये सदन इन नई योजनाओं की मांगों को स्वीकृति प्रदान कर दे। आकस्मिकता निधि से अनाप-शनाप व्यय सरकार कर देती है और फिर सदन के सामने रखे अनुपूरक बजट में समावेश कर उनका समंजन करा लेती है।

अगर यही स्थिति है, तो सरकार का योजना विभाग क्या कर रहा है? सरकार का योजना बोर्ड क्या कर रहा है? वार्षिक बजट तैयार करने के समय तो संबंधित विभाग अपनी नई-पुरानी योजनाओं के लिये उचित एवं आवश्यक व्यय विवरणी या सी.ओ.बी.टी. निर्धारित समय पर तैयार नहीं करता है ताकि इसको समय पर बजट में सन्निहित किया जा सके। जब कि बजट में गैर योजना मद का भारी खर्चा समाहित रहता है। ऐसे व्यय के लिये किसी केन्द्रीय सहायता या किसी योजना आयोग की अनुमति की आवश्यकता नहीं है। साल के आरम्भ में सरकार सदन के सामने वार्षिक बजट रखती है और बजट रखने के दो महीना के भीतर ही प्रथम अनुपूरक व्यय विवरणी लेकर सदन के सामने आती है, उसके चार महीने के बाद द्वितीय अनुपूरक के साथ सदन के सामने आती है, वित्तीय वर्ष समाप्त होने लगता है तो पुनः तीसरे अनुपूरक के माध्यम से सदन के सामने एक व्यय विवरणी लाती है और बड़े पैमाने पर गैर योजना मद में व्यय हेतु अतिरिक्त निधि की मांग सदन से की जाती है। सरकार द्वारा उन अनुपूरकों के माध्यम से गैर योजना मद में बेतहाशा खर्च किया जाना बजट प्रक्रिया में खोट का द्योतक है।

संविधान के अनुच्छेद-205 में अनुपूरक, अतिरिक्त या अधिक अनुदान का

प्रावधान है जिसके अनुसार ''किसी विशिष्ट सेवा पर चालू वित्तीय वर्ष के लिए व्यय किए जाने के लिए प्राधिकृत रकम अगर उस वर्ष के प्रयोजनों के लिए अपर्याप्त मानी जाती है या उस वर्ष के वार्षिक वित्तीय विवरण में अनुस्यात न की गई किसी नई सेवा पर अनुपूरक या अतिरिक्त व्यय की चालू वित्तीय वर्ष के दौरान आवश्यकता पैदा हो गई है, या किसी वित्तीय वर्ष के दौरान किसी सेवा पर उस वर्ष और उस सेवा के लिए अनुदान की गई खर्च से अधिक कोई व्यय हो गया है तो सरकार राज्यपाल के माध्यम से राज्य विधान मंडल के समक्ष उस व्यय की प्राक्कलित रकम को दर्शित करने वाला दूसरा विवरण रखवाएगी या ऐसे आधिक्य के लिए मांग प्रस्तुत करवाएगी ।'' विधान मंडल के समक्ष अनुपूरक व्यय विवरण रखने के पीछे यही भावना काम करती है । परन्तु जब वित्तीय वर्ष समाप्त हो जाता है, वर्ष भर के आय–व्यय का लेखा–जोखा होने लगता है और उसके बाद अंकेक्षण होता है तो पता चलता है कि बजट आवंटन की कुल राशि में तो बचत हो गयी । जिस अनुदान के मद में सरकार ने अतिरिक्त राशि मांगी थी, प्रथम, द्वितीय या तृतीय अनुपूरक के माध्यम से अतिरिक्त व्यय हेतु मांग की थी उस अनुदान के मद में बचत हो गयी और बचत का काफी पैसा सरेंडर हो गया । इसके अतिरिक्त कई अन्य ऐसे मदों में सरकार ने अधिकाई व्यय कर दिया है, बजट में आवंटित राशि से काफी अधिक व्यय कर दिया है, परन्तु उनके लिये अनुपूरक व्यय की मांग नहीं की गयी है । आखिर इसका मतलब क्या है ?

प्रथम, द्वितीय, तृतीय अनुपूरक के व्यय प्रावधानों के बाद भी और बजट में किये गये पर्याप्त प्रावधानों के बाद भी अधिकाई व्यय के काफी मामले हर वर्ष सामने आते हैं । सी.ए.जी. की रिपोर्ट में इस बार दिया गया है कि करीब 6694 करोड़ रुपया से अधिक का अधिकाई व्यय पिछले कई वर्षों से चला आ रहा है । मगर आजतक उसे समंजन के लिये सदन के सामने नहीं रखा जा सका है, उसके लिए सदन की अनुमति नहीं ली जा सकी है । तो एक तरफ तो यह स्थिति है कि सरकार

अनेक मदों में बचत दिखाती है तो दूसरी तरफ अनुपूरक व्यय–विवरणी के माध्यम से सदन के सामने आती है कि हमको अतिरिक्त पैसा दीजिए ।

इसका एक ही अर्थ है कि सरकार का वित्तीय प्रबंधन चरमरा गया है। सरकार की वित्तीय व्यवस्था को देखने वाले लोगों में विजन नहीं है, उनमें दूरदृष्टि नहीं है । वे एक साल आगे भी नहीं देख पाते हैं कि जब हम बजट बना रहे हैं, जब हम योजना बना रहे हैं, तो इसमें क्या प्रावधान रखें। हमारी प्राथमिकताएं क्या हों, यह वे सुनिश्चित नहीं कर पाते हैं। आगे आनेवाली आकस्मिकताओं को नजर अन्दाज कर आकस्मिकता निधि से अनाप–शनाप बेतहाशा निकासी होती है, विभिन्न शीर्षों में और इसके बाद सरकार सदन के सामने आती है अनुपूरक बजट लेकर ऐसे व्यय के समंजन के लिये और इसके बाद जब सी.ए.जी. की ऑडिट रिपोर्ट आती है तो उसमें विभिन्न प्रकार की अनियमिततायें उजागर होती हैं । इन अनियमितताओं से संबंधित कंडिकाओं एवं ऑडिट पैरा को लोक लेखा समिति के हवाले कर दिया जाता है । लोक लेखा समिति भी इस बारे में गंभीर नहीं रहती है । उसके बाद मामला खत्म हो जाता है, ठंडे बस्ते में चला जाता है । बजट प्रावधानों पर और अनुपूरक प्रावधानों पर कोई कृत कार्य प्रतिवेदन नहीं रखा जाता है । फिर पहले की तरह बजट आता है, अनुपूरक आते हैं, अधिकाई व्यय होता है, यह सिलसिला चलता रहता है ।

इसलिए, मैं चाहूँगा कि पिछले तीन–चार वर्षों में सरकार ने सदन के सामने अनुपूरकों के माध्यम से जो व्यय विवरणी रखी है, वह कितनी आवश्यक थी, उस व्यय को किन मांगों के संबंध में लिया गया था, जिन मांगों के विरुद्ध में लिया गया था, जिन सेवाओं के विरुद्ध में लिया गया था, क्या उनकी परिकल्पना बजट बनाते समय, योजना बनाते समय सरकार नहीं कर सकती थी ? और अगर नहीं कर सकती थी तो आखिर वित्त विभाग में इतने बड़े तंत्र की जरूरत क्या है ? इतना भारी–भरकम तंत्र वित्त विभाग में बैठा हुआ है यह तंत्र आम जनता के खून –पसीने की गाढ़ी कमाई पर चल रहा है । यह तंत्र क्या कर रहा है, यह तंत्र किसलिये है,

इसकी उपयोगिता क्या है ? इसलिए आवश्यक है कि पिछले तीन, चार, पांच वर्षों की अनुपूरक व्यय विवरणी में दी गयी मांगों की आवश्यकता और उपयोगिता की आवंटित राशि की जांच करायी जानी चाहिए।

इस वर्ष भी सरकार ने जिन विभिन्न मदों में व्यय विवरणी सदन के सामने रखा है उसका उल्लेख मैं विस्तार से इसलिए नहीं करना चाहता हूँ कि प्रायः सभी अनुपूरकों में एक ही तरह का व्यय विवरण समाहित रहता है। कभी किसी विभाग में कार खरीदने के लिए, तो कभी हाई कोर्ट से कोई निर्णय हो गया उसके क्रियान्वयन के लिए, तो कभी कोई नई योजना किसी विशेष व्यक्ति के प्रभाव क्षेत्र में ले ली गई है या किसी व्यक्ति या व्यक्ति समूह विशेष को प्रभावित करने के लिए नई योजना चलाने की बात रहती है। चूँकि मूल बजट बनाते समय बजट में उसका प्रावधान नहीं किया रहता है इसलिए अनुपूरक के रूप में उसे सदन के सामने लाया जाता है। मैं विगत चार वर्षों के अनुपूरक बजट के आंकड़ों से सदन को अवगत कराना चाहता हूँ।

वर्ष 1998-99 में सरकार ने 2412.75 करोड़ रुपये, 1999-2000 में 2877.14 करोड़ रुपये, 2000-01 में 5911.07 करोड़ रुपये और 2002-03 में 2147.58 करोड़ रुपये का अनुपूरक व्यय विवरण विधान मंडल के समक्ष रखा है। इसमें से 9000 करोड़ रुपये से अधिक का व्यय नई योजनाओं के लिए है और बाकी आकस्मिकता निधि से लिये गये अग्रिम का समंजन है।

परंतु इस वर्ष की अनुपूरक व्यय विवरणी और इसके पूर्व के तीन-चार वर्षों की अनुपूरक व्यय विवरणियों पर एक नजर डालने से स्पष्ट हो जाता है कि राज्य सरकार अपनी कमियों को छुपाने के लिए, अपनी वित्तीय अराजकता पर पर्दा डालने के लिए और बजट की अवास्तविक स्थिति से विधान मंडल का ध्यान हटाने के लिए संविधान के प्रावधान का दुरूपयोग कर रही है। महोदय, अनुपूरक के नाम पर यह सरकार पिछले कुछ वर्षों से वार्षिक बजट के अतिरिक्त जितने बड़े पैमाने पर धन ले

रही है उससे राज्य के बजट की गरिमा और गंभीरता तो कम होती ही है सरकार के वित्तीय प्रबन्धन का खोखलापन भी उजागर होता है।

बजट भाषण के समय मुख्य मंत्री महोदया कहती हैं कि उनकी सरकार वास्तविक बजट बना रही है, वित्तीय प्रबंध में सुधार कर रही हैं। परन्तु जिस हिसाब से राज्य सरकार का दायित्व बढ़ रहा है, जिस हिसाब से राज्य की परिसम्पत्तियों की वृद्धि दर में कमी हो रही है, अनुपूरक बजट के माध्यम से चाहे जितनी राशि सरकार ले ले अगर वित्तीय प्रबंधन ठीक नहीं है, सरकार के सामने कोई स्पष्ट वित्त नीति नहीं है, सरकार के सामने प्राथमिकता स्पष्ट नहीं है, तो आगे भी राज्य सरकार के वार्षिक बजटों का और अनुपूरकों का यही हाल होने वाला है, यही हश्र होने वाला है।

इसलिए सदन के माननीय सदस्यों से मैं आग्रह करूंगा कि अपना मत व्यक्त करते समय इस वस्तुस्थिति पर विचार करें। अगर सरकार संतुष्ट नहीं करती है तो यह अनुपूरक व्यय विवरणी जिसे सरकार द्वारा सदन के सामने लाया गया है उसको खारिज किया जाना चाहिए। यही मेरी सदन से गुजारिश है।

□ 18 दिसंबर 2003
बिहार विधान परिषद

•••

वास्तविकता से परे लेखानुदान

माननीय सदस्य अरूण बाबू द्वारा इसे अनावश्यक बताये जाने के बावजूद मैं धृष्टता कर रहा हूँ कि सरकार द्वारा सदन के सामने प्रस्तुत लेखानुदान के बारे मे कुछ बातें रखूं। मुझे उम्मीद है कि सरकार इस बारे में मेरी जिज्ञासा के अनुरूप आवश्यक तथ्यों से सदन को अवगत करायेगी । महोदय, एक ही दल की सरकार पिछले 13–14 वर्षों से बिहार राज्य में चल रही है यानी लम्बे समय से राज्य में एक स्थायी सरकार है । स्थायित्व होने के बाद भी इस लम्बी अवधि में केवल एक बार, संभवतः वित्तीय वर्ष 2001–02 के लिये, इस सरकार ने 31 मार्च के पहले अपना पूरा बजट सदन से पारित कराने का प्रयास किया है । जिस समय वह बजट पास हुआ था उस समय सरकार के अंदर इतना विश्वास देखा गया था मानो ऐसा कर सरकार ने बहुत बड़ी उपलब्धि हासिल कर ली है और आनेवाले वर्षों में सरकार अब लेखानुदान नहीं लेने जा रही है बल्कि हर वर्ष 31 मार्च के पूर्व राज्य का पूरा बजट विधान मंडल से पारित करा लिया करेगी ।

एक वर्ष के अपवाद के बाद फिर से लेखानुदान का सिलसिला शुरु हुआ तो थमने का नाम नहीं ले रहा है । इस बार तो लेखानुदान के लिए बुलाये गये इस बजट सत्र के अंत में ऐसी अफरा–तफरी मची है कि विधान मंडल के बजट सत्र को सरकार दो–तीन दिनों के भीतर ही समेट रही है । मैं बहुत पीछे तो नहीं जाऊंगा, लेकिन हाल के दो–तीन वर्षों के बजट की ओर संकेत अवश्य करना चाहूँगा । अब तक सदन में जो बजट पेश किए जाते रहे हैं, उनमें अंकित विवरणों के बारे में सरकार से जानना चाहूंगा कि आखिर इस तरह के अविश्वसनीय आंकड़े जब बजट दस्तावेज में मौजूद रहेंगे और ऐसे आंकड़ों के विरुद्ध लेखानुदान लेते रहेंगे तो ऐसा लेखानुदान कितना उचित कहा जायेगा । इस बार चार महीने के लिए सरकार लेखानुदान लेने जा रही है । इस अवधि में व्यय का जो अनुमान लगाया गया है, वह अनुमान किसी तर्क पर आधारित नहीं है । यह अनुमान सामान्य गणित के आधार पर लगाया गया है कि पूरे 12 महीने के लिए जितनी राशि का बजट बनाया गया है, उसका एक

तिहाई व्यय चार महीनों के लिए होगा। इसलिये कुल बजट अनुमान का एक तिहाई भाग लेखानुदान के रूप में अगले चार महीनों में खर्च करने की अनुमति विधान मंडल द्वारा इस बीच पूरा बजट पारित कराने की प्रत्याशा में सरकार को दे दिया जाय ।

इस बजट में, जिसके विरुद्ध लेखानुदान लिया जा रहा है, जैसे आंकड़े दर्ज हैं उसके पहले वाले वित्तीय वर्ष यानी 2002–03 में जो बजट पेश किया गया था इसी सदन में, उसमें भी कुछ ऐसे ही आंकड़े दर्ज थे । इसकी चर्चा यहाँ किया जाना मुझे प्रासंगिक प्रतीत हो रहा है । बिहार सरकार द्वारा सदन के समक्ष प्रस्तुत वर्ष 2004–05 के जिस बजट के विरुद्ध सरकार लेखानुदान लेने जा रही है, उसमें वित्तीय वर्ष 2002–03 के आय–व्यय के वास्तविक आंकड़े दिए गए हैं । ये आंकड़े राज्य सरकार द्वारा उस वित्तीय वर्ष के दौरान किये गये व्यय के संबंध में हैं । जब हम 2002–03 का बजट उलट कर देखते हैं, तो लगता है कि इस वित्तीय वर्ष के बजट अनुमान में, बजट के पुनरीक्षित अनुमान में और जो वास्तविक व्यय हुआ है इस वित्तीय वर्ष के अंतर्गत किसी भी मद में, उनमें कोई तालमेल नहीं है । महोदय, जब सदन के समक्ष वित्तीय वर्ष 2002–03 के लिये वार्षिक बजट रखा गया था तो उसमें अनुमान किया गया था कि इस वर्ष में कुल राजस्व प्राप्तियाँ, सभी तरह के मदों को मिलाकर, कुल 12015.48 करोड़ रुपये होंगी । यह बात वर्ष 2002–03 के बजट अनुमान में कही गयी थी ।

अगले वर्ष जब सदन में वर्ष 2003–04 का वार्षिक बजट सरकार ने पेश किया तो उस बजट दस्तावेज में वर्ष 2002–03 के बजट अनुमान के विरूद्ध हुई प्राप्तियों का वर्ष के अंत में पुनरीक्षित अनुमान दिया हुआ था । वर्ष 2002–03 के बजट में प्राप्तियों का अनुमान और इसी वित्तीय वर्ष के अंत तक हुई प्राप्तियों का पुनरीक्षित अनुमान, जो वर्ष 2003–04 के बजट में शामिल था, करीब–करीब एक ही है । स्पष्ट है कि इस वित्तीय वर्ष में हुई प्राप्तियों के आकड़ों का वस्तुतः कोई पुनरीक्षण किया ही नहीं गया । वित्तीय वर्ष के आरम्भ में दिये गये प्राप्तियों के बजट अनुमान के आंकड़ों को ही वित्तीय वर्ष के अंत में पुनरीक्षित अनुमान के स्थान पर रख दिया गया ।

अब सदन के सामने वर्ष 2004–05 का जो वार्षिक बजट रखा गया है और जिसके विरुद्ध लिये जा रहे लेखानुदान पर सदन में चर्चा हो रही है, उसमें वर्ष 2002–03 में हुये बजट व्यय का वास्तविक आंकड़ा दर्ज है। यह कितना है ? यह है केवल 5842 करोड़ रुपये। इसका मतलब साफ है कि बजट तैयार करते समय सरकार द्वारा अनुमानित आय–व्यय के बारे में आवश्यक अभ्यास नहीं किया गया। वाहवाही लूटने के लिये अंकित कर दिया गया कि वर्ष 2002–03 में। 12015.48 करोड़ रुपये सरकार विभिन्न स्रोतों से प्राप्त करेगी। एक वर्ष तक यह भ्रम बना रहे इसलिये पुनरीक्षित अनुमान में भी यही आंकड़ा रख दिया गया। अर्थात वर्ष 2002–03 का बजट सदन में रखे जाने के दो वर्ष बाद, जब 2004–05 का वार्षिक बजट सदन के सामने रखा गया और उसमें वर्ष 2002–03 में हुई वास्तविक प्राप्तियों का आंकड़ा रखा गया तो पता चला कि सरकार ने वित्तीय वर्ष 2002–03 के दौरान बजट पेश करते समय 12015.48 करोड़ रुपये की प्राप्ति होने का जो लम्बा–चौड़ा डींग हांका था और जिसे अपनी उपलब्धि बताकर वाहवाही लूटने की कोशिश की थी वह सही नहीं था। सरकार इसके अनुरूप संसाधन नहीं जुटा सकी और राजस्व प्राप्ति का यह अनुमान वास्तव में 5842.13 करोड़ रुपये पर सिमट गया। यह सिलसिला कोई एक, दो या तीन वित्तीय वर्षों तक ही सीमीत नहीं है। 1990 के बाद के सभी वित्तीय वर्षों के बजट अनुमान, पुनरीक्षित अनुमान और वास्तविकता के साथ आंकड़ों का ऐसा ही मनमाना खेल खेला जा रहा है। यह एक अलग अध्ययन और शोध का विषय है। इसमें सरकार के गैरजिम्मेदाराना आचरण की झलक मिलती है। अगर हम वास्तव में राज्य का विकास करने के लिये इच्छुक है तो वादाफरोशी द्वारा जनता को बरगलाने और बजट आंकड़ों के साथ बाजीगरी का यह खेल बन्द होना चाहिये।

इस पृष्ठभूमि में सदन में वितरित वर्ष 2004–05 के बजट में अंकित आय और व्यय अनुमानों के विरुद्ध हम यदि लेखानुदान ले रहे हैं तो सवाल उठता है कि यह लेखानुदान कितना वास्तविक है। इसी तरह की स्थिति पूंजीगत और राजस्व व्यय के बारे में भी है। वित्तीय वर्ष 2002–03 के बजट अनुमान में कहा गया था

और पुनरीक्षित अनुमान में भी करीब–करीब यही आंकड़ा दर्ज था कि करीब 14025.34 करोड़ रुपये इस वर्ष सरकार विभिन्न बजट उपबंधों पर खर्च करेगी। पर वास्तविक राजस्व खर्च हुआ केवल 7342.13 करोड़ रुपये। इसी बजट में जिसके विरुद्ध हम लेखानुदान ले रहे हैं वर्ष 2002–03 के वास्तविक व्यय का यह आंकड़ा दिया हुआ है। प्रश्न है कि जब सरकार दो साल पहले या एक साल पहले अपने बजट में व्यय शीर्ष के विभिन्न मदों में केवल 7342.13 करोड़ रुपये ही वास्तव में खर्च कर रही है तो इस वर्ष 16341.49 करोड़ रुपये कैसे खर्च कर सकेगी और यह धन आखिरकार कहां से आयेगा ?

प्रत्येक वार्षिक बजट की तरह इस वर्ष भी मूल बजट दस्तावेज के साथ ही 'बजट का सार' नामक एक पुस्तिका वितरित की गई है। इसमें दिया गया है कि बजट का पैसा कहां से आता है और कहां जाता है। ये आंकड़े वास्तविकता से कोसों दूर हैं। अगर सदन के सामने इस तरह का पाखंड रचा जायेगा और इस तरह के गलत आंकड़े परोसे जायेंगे तो सवाल उठता है कि यह सदन की अवमानना है या नहीं है? ठीक है कि विधान परिषद के पास वित्तीय अधिकार नहीं है, परन्तु सच्चाई है कि सदन के सामने आय और व्यय के इस तरह के असत्य आंकड़े, अवास्तविक आंकड़े सत्य से परे परोसे जाते हैं और साल दो साल के बाद वास्तविक आय–व्यय के आंकड़ों के रुप में वस्तुस्थिति सामने आती है तो स्थिति हास्यास्पद हो जाती है।

इस वार्षिक बजट की प्राप्तियों के कॉलम में अंकित राजस्व प्राप्तियों और पूंजीगत प्राप्तियों के वास्तविक आंकड़ों को जोड़ दें तो वर्ष 2002–03 में कुल प्राप्तियों का वास्तविक आंकड़ा 15640.59 करोड़ रुपये होता है। जबकि वर्ष 2002–03 का वार्षिक बजट सदन में रखते समय सरकार ने कहा था कि इस वर्ष विभिन्न मदों में वार्षिक प्राप्तियाँ कुल 30353.65 करोड़ रुपये की होगी। अब इस वर्ष 2004–05 के बजट में राज्य सरकार कह रही हैं कि राजस्व प्राप्तियों और पूंजीगत प्राप्तियों को मिलाकर विभिन्न मदों में इस वर्ष कुल 40,205.77 करोड़ रुपये प्राप्त होंगे। महोदय, यह कहां से संभव है ? कैसे संभव है ? बजट तैयार करने में और सदन के सामने बजट रखने में आंकड़ों को संजोने का कौन सा तिलिस्म रचा

जा रहा है ? जब 2002–03 का बजट सदन के समक्ष रखा गया तो बताया गया था कि उस वर्ष कुल 32,419.96 करोड़ रुपये का व्यय योजना और गैर योजना मद मिलाकर किये जायेंगे । मगर वास्तविक व्यय हुआ है केवल 16,972.86 करोड़ रुपया । यानी मुश्किल से कुल बजट अनुमान का आधा ही व्यय हो पा रहा है। अब सरकार सदन के समक्ष विचाराधीन वित्तीय वर्ष 2004–05 के बजट में कह रही है कि इस वर्ष कुल मिलाकर विभिन्न मदों में 47,755.29 करोड़ रुपये व्यय करेगी। कहां से व्यय करेगी ? कैसे व्यय करेगी ? यही प्रशासनिक मशीनरी है, यही व्यवस्था है तो राज्य सरकार अतिरिक्त संसाधन कहाँ से लायेगी इसका कहीं कोई जिक्र इस बजट में नहीं है । सभी मदों के विभिन्न शीर्षों में आय और व्यय के आंकड़ों में अवास्तविक और काफी हद तक काल्पनिक बढ़ोत्तरी दिखाकर सरकार द्वारा यह वार्षिक बजट तैयार कर दिया गया है । इस संदर्भ में मूल सवाल यह उठता है कि यह बढ़ोतरी वास्तविक है, काल्पनिक है या कृत्रिम है ?

जगदानन्द सिंह (मंत्री) : महोदय, किस किताब से यह आंकड़े बतलाये जा रहे हैं, जरा ये भी बता दें ?

सरयू राय : ये आंकड़े मैं बजट दस्तावेजों से बता रहा हूँ। आपकी सरकार जो पीली कवर वाली बजट की किताब हर साल सदन में बांटती है, उसी में दिये हुए हैं ये आंकड़े । कहिए तो इस किताब को पूरा का पूरा पढ़ दूं। वित्तीय वर्ष 2004–05 का बजट सदन के सामने है, इसे देख लीजिये और वर्ष 2003–04 और 2002–03 की वार्षिक बजट पुस्तिका को आप पुस्तकालय से मंगा लीजिये ।

2004–05 की बजट पुस्तिका में इस वर्ष के लिये राजस्व प्राप्तियों, पूँजीगत प्राप्तियों और कुल प्राप्तियों का अनुमान अंकित है । वर्ष 2003–04 के लिये इनका पुनरीक्षित बजट अनुमान भी दिया गया है और वर्ष 2002–03 का वास्तविक व्यय भी है इसमें । इनको आप देख लीजिए, इन आंकड़ों को मिला लीजिए, इसके लिये बहुत बड़ी कसरत नहीं करनी पड़ेगी । वर्ष 2002–03 के वार्षिक बजट में उस वर्ष के लिये राजस्व प्राप्तियों का बजट अनुमान 12,015.48 करोड़ रुपये है और वर्ष

2003–04 के बजट में इसका पुनरीक्षित अनुमान दिया गया है जो 11,568.76 करोड़ रुपये। वित्तीय वर्ष 2004–05 के बजट में इन राजस्व प्राप्तियों का वास्तविक आंकड़ा मौजूद है जो 5842.13 करोड़ रुपये है । यह सब जो है सो आपके सामने है, मंत्री जी और ये सभी आंकड़े आपकी ही सरकार द्वारा छापी गयी बजट पुस्तिकाओं में दर्ज है। आँख खोलकर इन्हें ठंढे दिमाग से देख लीजिये । इनमें जो है, सो है और वही मैं भी कह रहा हूँ कि सदन में वर्ष 2002–03 की वार्षिक बजट रखते समय बजट में कुल प्राप्तियों का अनुमान 12,015.48 करोड़ रुपये है, वित्तीय वर्ष के अन्त में इसी का पुनरीक्षित अनुमान 11,568.76 करोड़ रुपये है और जब प्राप्तियों के वास्तविक आंकड़े सामने आते है तो पता चलता है कि वास्तव में उस वर्ष प्राप्ति मात्र 5842.13 करोड़ रुपये की ही हुई ।

जगदानंद सिंह (मंत्री) : यह वास्तविकता नहीं है ।

सरयू राय : वास्तविकता यही है । सदन में यह बजट दस्तावेज सभी सदस्यों के बीच बांटा गया है, आपको भी मिला होगा । वर्ष 2004–05 के बजट में वर्ष 2003–04 के बजट का पुनरीक्षित अनुमान है और वर्ष 2002–03 में हुये वास्तविक व्यय का आंकड़ा है । ऐसा विवरण सभी वर्ष के बजट में दिया होता है । वार्षिक बजट का यही फार्मेट केन्द्र में भी होता है और सभी राज्यों में भी होता है । इस पर कृपया गौर करिये ।

श्री जगदानंद सिंह (मंत्री) : वही खर्चा है?

श्री सरयू राय : जी हाँ, वही खर्चा है । अगर कुछ दूसरा है तो जरा खड़ा होकर बोलिये ताकि हमको भी पता चले और पूरे सदन को भी पता चले कि आप अपना वक्तव्य अधिकारिक रूप से सदन के रिकार्ड में दर्ज करा रहे हैं। ऐसे गंभीर विषय पर सदन में अपनी सीट पर बैठे हुए बोलना और चुटकी लेना आप जैसे काबिल मंत्री के लिये शोभा नहीं देता है। तथ्य वही है और सबके सामने है। भ्रम हो तो इसके बाद समय ले लीजिए, आधा घंटा अध्ययन करके आइये । इस बजट की किताब में अंकित तथ्य में और मेरे कहने में कोई अंतर हो तो आप सदन को बतला दीजिए।

मैं तो इतना ही कह रहा हूँ कि आंकड़ों का पाखंड, आंकड़ों का तिलिस्म, आकड़ों की जालसाजी यह सरकार वर्षों से करती आ रही है, केवल इसी वर्ष के बजट में ऐसा नहीं हुआ है ।

इसके पहले भी मैंने दो–तीन बार इस विषय को सदन में उठाया है । मगर जब सरकार की तरफ से उत्तर होता है तो इस विषय पर मौन साध लिया जाता है। इस बार भी वैसा ही एक उत्तर होगा । विपक्ष जो कहता है, जो बताता है, वह सही नहीं होता है और सरकार जो कहती है, बोलती है, वही सही होता है । सही नहीं भी होगा तो बहुमत है, सही हो जायेगा । मैं इसलिए यह तथ्य रख रहा हूं कि सरकार सीना ठोक कर कहती है कि उसने अपना वित्तीय प्रबंधन बेहतर कर लिया है। मैं तो सरकार को आइना दिखा रहा हूँ। उसकी ही कसौटी पर खड़ा कर उसे दिखाना चाह रहा हूँ, ताकि सरकार सबक ले । बार–बार इस बात को मैं दुहराता हूँ, सदन के भीतर भी और बाहर भी जब रस्सी के आवागमन से पत्थर पर निशान पड़ जाता है तो एक न एक दिन यह सरकार भी इन बातों को जरूर समझेगी और इन पर गौर करेगी ।

आपने बजट भाषण में अन्य कई विषयों को भी रखा है । उनमें कुछ सही भी हैं । ठीक भी हैं, कतिपय सही कदम भी उठाया है आपकी सरकार ने । आप चाह रहे हैं कि ऋण के सूद का भार कम हो, आपका चाहना ठीक है । मगर यह कितना कम होगा और कितना बढ़ेगा, जब इस तरह के बजट आंकड़े वास्तविक नहीं होंगे तो सी.ए.जी. का अंकेक्षित आंकड़ा आयेगा तो बजट में दिये गये इन आंकड़ों में काफी अंतर आ जायेगा । यह सब मैं माननीय मंत्री जी से इसलिए नहीं कर रहा हूँ कि मैं उनको लाजवाब करना चाहता हूं या मैं सरकार को कठघरे में खड़ा करना चाहता हूँ। मैं सदन के सभी सदस्यों की तरफ से यह कह रहा हूँ कि इस पर सरकार को ध्यान देना चाहिए । वित्तीय प्रबंधन आप चुस्त कर रहे हैं, तो इस पर भी ध्यान दीजिए । यही आश्वासन दीजिए सदन को कि आगे हम समुचित ध्यान देंगे । अगर आप ध्यान नहीं देंगे तो जो आपके लेखानुदान के आंकड़े हैं, वे आंकड़े भी वास्तविकता पर आधारित नहीं माने जायेंगे । इसलिए ऐसे लेखानुदान विधेयक का समर्थन करना

मुझे कहीं से भी वाजिब प्रतीत नहीं होता है ।

वार्षिक बजट के बारे में मैं केवल यही कहना चाहता हूँ कि हमारे संविधान ने केन्द्र सरकार के लिए भी और राज्य सरकारों के लिए भी वैसी सारी व्यवस्थाएँ की हैं कि किसी भी सूरत में यहां का वित्तीय प्रबंधन गड़बड़ न हो । इसीलिए लेखानुदान, प्रत्यानुदान एवं अन्य कई तरह के अनुदान और अनुपूरक बजट की व्यवस्था संविधान में की गयी है। मगर महोदय, मैं एक बात केवल कहना चाहूंगा कि सरकार पंचवर्षीय योजना बनाती हैं, दीर्घकालीन योजना बनाती है, वार्षिक योजनाएं बनाती हैं । वार्षिक बजट तैयार करते समय किसी वर्ष के आरम्भ में आय और व्यय का बजट अनुमान लगाया जाता है और वर्ष के अन्त में इसका पुनरीक्षित अनुमान तैयार किया जाता है । ये दोनों ही अनुमान अपवाद स्थिति को छोड़कर वास्तविक व्यय के अधिक से अधिक नजदीक होने चाहिये। अगर कहीं अन्तर होता है, भारी अन्तर दिखता है तो बजट दस्तावेज के साथ कारण सहित इसकी व्याख्या भी की जानी चाहिये । बजट के प्रासंगिक आंकड़ों का वार्षिक एवं पंचवर्षीय योजना उद्व्ययों के साथ भी तालमेल रहना चाहिये ।

जब माननीय मंत्री महोदय के पास वित्त विभाग का प्रभार है तो निश्चित रूप से इन्होंने बजट मैनुअल देखा होगा । किसी वित्तीय वर्ष का बजट तैयार करने के बारे में 1 अप्रैल से 31 मार्च के बीच वित्त विभाग को क्या–क्या काम करना है बजट मैनुअल में उसका विस्तार से जिक्र है । अप्रैल महीने में क्या करेंगे, मई में क्या करेंगे, जून में क्या करेंगे, अप्रैल से जुलाई के बीच में क्या करेंगे, जुलाई–सितम्बर के बीच में क्या करेंगे, हर महीने के कार्य का जिक्र है इसमें । मुझे बड़े खेद के साथ कहना पड़ रहा है कि हमारे मंत्री जी लोग इस पर ध्यान नहीं देते हैं। साल भर में कभी तो मंत्री जी यह पता करने की कोशिश करते कि उनका विभाग बजट मैनुअल में दिये हुये प्रावधानों के कार्यान्वियन के बारे में सचेष्ट है या नहीं ? कभी तो इन्होंने विभागीय अधिकारियों से पूछा होता कि इस संदर्भ में बजट मैनुअल में ऐसा कोई निर्देश है कि नहीं ? आय–व्यय के प्रासंगिक आकड़ों के संबंध में, महालेखाकार कार्यालय से जरूरी जानकारियां मंगायी गयी हैं कि नहीं और बजट में दिये जा रहे सारे आंकड़े

सही हैं कि नहीं ? अगर यह सब जानने और करने की कोशिश हुई होती तो मुझे लगता है कि बजट के आय–व्यय विवरणों में गुणात्मक परिवर्त्तन हुआ होता और ये वास्तविकता के अधिक निकट होते ।

मगर यह तो चुनाव का साल है, इसलिए सरकार गफलत में है और सदन को भी गफलत में रखना चाहती है । मैं यह तो नहीं कहूंगा कि यह सरकार का अपराध है, मगर जब पिछले 10–11 वर्षों से लगातार ऐसा ही घटनाक्रम चला आ रहा है, बजट मैनुअल के प्रावधानों को कोई तवज्जो नहीं दिया जा रहा है तो स्वभाविक रूप से ऐसी आशंकायें जन्म लेती हैं कि सरकार राज्य हित के इन मामलों में सचेष्ट नहीं है, मंत्रीगण लापरवाह हैं । मंत्री लोग तो मान लेते हैं कि यह काम विभागीय सचिवों का है, फाइनान्स कमिश्नर का है । इस बारे में कुछ देखना–परखना मंत्री का दायित्व नहीं है । वस्तुस्थिति भी यही है । वित्तीय प्रबंधन की असलियत का पर्दाफाश इससे खुद–ब–खुद हो जाता है ।

□ 23 मार्च 2004
बिहार विधान परिषद्

•••

सामाजिक न्याय का मुखौटा

राज्य सरकार द्वारा इस सदन के सामने वर्ष 2004–05 के लिये वार्षिक बजट रखे जाने के उपरान्त प्रथम अनुपूरक व्यय विवरण रखा गया है। इस वर्ष का कुल बजट प्रावधान 23825 करोड़ रुपये है । इस प्रथम अनुपूरक व्यय की राशि 192.38 करोड़ रुपये की है । कायदे से अभी और दो अनुपूरक आयेंगे, दूसरा और तीसरा । उन अनुपूरकों में भी जैसा कि हर वर्ष बजट के बाद प्रस्तुत अनुपूरकों में होता है, कुछ न कुछ व्यय की जाने वाली राशि रहेगी ही और मुझे अनुमान है कि वह राशि इससे कम नहीं रहेगी । इसे आशंका कहा जाये, अनुमान कहा जाये या प्रसन्नता की बात कही जाये कि एक संभावना यह भी हो सकती है कि दूसरा या तीसरा में से कोई एक या दोनों ही अनुपूरक बजट बहुत भारी आकार का आये क्योंकि, आज ही अखबारों में छपा है माननीय मुख्यमंत्री का बयान छपा है कि 11,166 करोड़ रुपया केन्द्र सरकार ने विभिन्न मदों में राज्य को देना स्वीकार किया है ।

अब हमलोग दो ढाई वर्षों से सुनते आ रहे हैं सदन में कि 1 लाख 79 हजार करोड़ रुपये का एक विशेष पैकेज राज्य की सरकार ने सन् 2000 में केन्द्र से उस समय मांगा था, जब बिहार का विभाजन हुआ था और बिहार का एक हिस्सा झारखंड बन गया था। परन्तु आज लगता है कि केवल 11,166 करोड़ रुपये की केन्द्रीय सहायता पाकर यह सरकार प्रसन्न हो रही है, संतुष्ट हो गयी है । कहीं भी यह जिक्र नहीं हो रहा है कि इसके अलावे भी राज्य को कोई विशेष पैकेज चाहिए । तो 1 लाख 79 हजार करोड़ रुपये की मांग थी विशेष पैकेज की और संतुष्ट हो गयी सरकार केवल 11,166 करोड़ रुपये की विशेष सहायता लेकर ।

केन्द्र में श्री अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली एन. डी. ए. सरकार ने पिछले दो वर्षों में कुल मिलाकर 57,685 करोड़ रुपये की योजनाएं इस राज्य में लागू की है । जब 57,685 करोड़ रुपये की योजनाएं लागू हुईं तो उसके बारे में कहीं भी सरकार ने कोई जिक्र नहीं किया, प्रसन्नता नहीं व्यक्त की, केन्द्र की सरकार को धन्यवाद नहीं दिया। अब केन्द्र से प्राप्त हो रहे 11,166 करोड़ रुपये की सहायता का ढिंढोरा पीटा जा रहा है ।

महोदय, मैं इसके विस्तार में नहीं जाना चाहता हूँ। मेरे पास उन सारी परियोजनाओं की सूची है और उन परियोजनाओं में जितने रुपये वाजपेयी सरकार ने राज्य सरकार को व्यय करने हेतु दिया हैं, उनकी भी सूची मेरे पास है। महोदय अटल बिहारी वाजपेयी जी की सरकार ने एक मुश्त 32,185 करोड़ रुपये का पूँजी निवेश किया है जो अपने आप में हाल के दिनों में बिहार में हुआ सबसे बड़ा पूँजी निवेश है। इसकी सूची मैं सदन के पटल पर एक तालिका के रुप में रख देना चाहता हूँ ताकि सनद रहे और आगे भी लोग इसके बारे में पढ़ें और जानें।

I	क्रमांक	केन्द्र सरकार द्वारा स्वयं शुरू की गई प्रमुख परियोजनाओं में पूंजी निवेश	करोड़ रुपये
	1.	कहलगांव, बाड़, व नवीनगर में राष्ट्रीय ताप बिजली निगम (एनटीपीसी) के मेगा पावर प्लांट (कुल क्षमता 4480 मेगावाट)	18700
	2.	नयी लाइनों, पटना में गंगा पर, मुंगेर में गंगा पर व निरमली में कोसी पर तीन मेगा पुलों, अमान परिवर्तन तथा विद्युतीकरण के लिए रेलवे द्वारा मंजूरी।	6437
	3.	बरौनी रिफाइनरी का अधुनिकीकरण व विस्तार	1800
	4.	पूर्व-पश्चिम कारीडोर के अंतर्गत 517 कि. मी. तथा राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या-2 के 206 कि.मी. का विकास	3821
	5.	155 एम.एम. फील्ड गन के गोला-बारूद के उत्पादन के लिए नालंदा में राजगीर में आयुद्ध फैक्टरी तथा दो सैनिक स्कूल	950
	6.	अखिल भारत आयुर्विज्ञान संस्थान की स्थापना	280
	7.	दूरदर्शन व आकाशवाणी में निवेश	110
	8.	नागर विमानन में निवेश	87
		कुल योग	**32185**

बिहार की दयनीय हालत के बारे मे हम सभी को जानकारी है। सभी जानते हैं कि बिहार राज्य गरीब है, यहां आधारभूत संरचनाओं की दशा काफी खराब है। मगर, स्वास्थ्य, शिक्षा, गरीबी उन्मूलन, बाढ़ नियंत्रण, गरीबों के लिए अनाज, ग्रामीण अंचल में सड़कों एवं अन्य आधारभूत संरचनाओं जैसे आम जनहित के मामलों में जो भयंकर पतन विगत एक दशक में हुआ है, उसे देखकर मानवीय संवेदना हिल जाती है। राज्य सरकार की इस घोर निष्क्रियता के बावजूद केन्द्र की वाजपेयी जी की सरकार ने उसे उदारता पूर्वक सहायता दी है। इसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं।

महोदय, बिहार सरकार को केन्द्र से विभिन्न मदों में भारी केन्द्रीय सहायता प्राप्त हुई है। श्री अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में केन्द्र सरकार ने बिहार के विकास के लिए अपने नियंत्रण वाले केन्द्र सूची के विषयों के अलावा राज्य की योजनाओं में भी अपने हिस्से के बारे में गहरी प्रतिबद्धता दिखायी है। राज्य में चलायी गयी कुछ परियोजनाओं का तथा प्रस्तावित परियोजनाओं के लिए केन्द्रीय सहायता का विवरण मैं सदन पटल पर एक तालिका के रूप में रख दे रहा हूँ।

क्रमांक	राज्य योजनाओं में केन्द्रीय सहायता	करोड़ रुपये
1.	15400 करोड़ की नौवीं पंचवर्षीय योजना में केन्द्रीय हिस्सा	10800
2.	21000 करोड़ रुपये की दसवीं पंचवर्षीय योजना में केन्द्रीय हिस्सा	14700
3.	राष्ट्रीय सम विकास योजना के अंतर्गत दसवीं पंचवर्षीय योजना में शत-प्रतिशत केन्द्र प्रायोजित योजनाएं	2630
4.	राज्य में नौवीं व दसवीं योजना (1+2) में केन्द्रीय सहायता व निवेश का कुल भाग	57685 करोड़ रुपये

योजना के अपेक्षाकृत छोटे आकार के बावजूद पूरी राशि को भी खर्च नहीं करना और हमेशा धन की कमी की शिकायत करते रहना बिहार सरकार की आदत बन गई है। तथ्य यह है कि योजनाओं में चाहे वह केन्द्रीय हों, केन्द्र प्रायोजित हों

या राज्य योजना हो, लगातार निर्धारित कोष का उपयोग नियमित रूप से करने में राज्य सरकार विफल रही है। नौवीं पंचवर्षीय योजना के बारे में स्थिति का उदाहरण आँखें खोलने वाला है। महोदय, आपकी अनुमति से योजना आयोग के स्रोत से प्राप्त इन आकड़ों को एक तालिका के रूप में सदन पटल पर रख रहा हूँ।

वर्ष	अनुमोदित प्रावधान	खर्च (वर्तमान मूल्य)	खर्च नहीं हुई योजना राशि
1997-1998	2268.42	1711.43	556.99
1998-1999	3768.74	2424.65	1344.09
1999-2000	3630.00	2675.68	954.32
2000-2001	3100.00	1638.22	1461.78
2001-2002	2644.00	1471.40	1172.60
कुल योग	**15411.16**	**9921.38**	**5489.78**

इससे स्पष्ट है कि राज्य सरकार नवीं पंचवर्षीय योजना में लगभग 5490 करोड़ रुपये व्यय नहीं कर सकी। दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-07) के प्रथम वर्ष में भी स्थिति ऐसी ही है। इस अवधि में 2964 करोड़ रुपये के वार्षिक योजना प्रावधान में से राज्य सरकार ने केवल 2227 करोड़ रुपये ही खर्च किए हैं। अर्थात् 737 करोड़ रुपये बिना व्यय किए पड़े रह गये। अन्य राज्यों की तुलना में बिहार की योजना का आकार छोटा है जो राज्य के विकास की दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति की अपनी अलग कहानी कहता है।

ग्रामीण विकास व गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों जैसे कि आई.आर.डी.पी., एस.जी.एस.वाई., ई.ए.एस. तथा आई.ए.वाई. के लिए पिछले वर्षों में केन्द्र से प्राप्त अनुदान एवं सहायता निधि का व्यय नहीं करने तथा राज्य सरकार द्वारा केन्द्रीय एवं केन्द्र प्रायोजित योजनाओं में अपने हिस्से के बराबर की राशि न देने के कारण राज्य सरकार को काफी बड़ी मात्रा में केन्द्रीय सहायता राशि से हाथ धोना पड़ा है। इस कारण नौवीं पंचवर्षीय योजना में गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के अंतर्गत बिहार को जितनी केन्द्रीय राशि मिल सकती थी, उतनी राज्य सरकार नहीं ले सकी क्योंकि

राज्य सरकार ने पूर्व में प्राप्त केन्द्रीय सहायता राशि का पूरा उपयोग नहीं किया और न ही इसके व्यय का उपयोगिता प्रमाण पत्र ही केन्द्र के पास भेजा। यह स्थिति स्पष्ट करने वाली तालिका जिसे तैयार करने का स्रोत भारत के योजना आयोग के आंकड़े हैं, वह आपकी अनुमति से मैं सदन पटल पर रख रहा हूँ और अनुरोध करता हूँ इसे मेरे भाषण का अंग बनाने की कृपा की जाये।

वर्ष	केन्द्रीय आवंटन (करोड़ रु.)	केन्द्र से प्राप्त राशि (करोड़ रु.)	आवंटित राशि के उचित उपयोग के अभाव में प्राप्त कम आवंटन (करोड़ रु.)
1997-1998	829.93	729.93	100.03
1998-1999	1084.84	729.93	228.53
1999-2000	1232.07	856.32	278.90
2000-2001	721.11	953.17	278.44
2001-2002	780.00	442.67	162.76
कुल योग	**4647.97**	**9921.38**	**1048.64**

इस प्रकार स्पष्ट है कि बिहार सरकार द्वारा नवीं पंचवर्षीय योजनावधि में चार गरीबी-उन्मूलन कार्यक्रमों के अंतर्गत केन्द्र से प्राप्त धन का पूरा व्यय नहीं करने के कारण बिहार राज्य को 1048.64 करोड़ रुपये के आवंटन से हाथ धोना पड़ा।

महोदय, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना पूरी तरह से केन्द्र सम्पोषित योजना है। इस योजना के लिए सारा धन केन्द्र सरकार देती है। इस योजना के अंतर्गत 1000 से अधिक आबादी वाले प्रत्येक गांव को तीन वर्ष के अंदर तथा 500 से अधिक आबादी वाले प्रत्येक गांव को वर्ष 2007 तक सड़कों से जोड़ने का लक्ष्य है। यह योजना दिसम्बर, 2000 में शुरू की गई थी। बिहार में इस योजना पर काम अत्यंत धीमा है इसमें यह राज्य फिसड्डी साबित हुआ है। वर्ष 2000-01 में 149.90 करोड़ रुपये की निर्धारित राशि केन्द्र द्वारा जारी की गई। लेकिन इसमें से केवल 81.27 करोड़ रुपये ही बिहार सरकार द्वारा खर्च किये गये तथा 298 सड़क कार्यों में से केवल 62 ही पूर्ण हुये। वर्ष 2001-02 के लिए 302.98

करोड़ रुपये के अनुमोदित प्रस्ताव में से 150 करोड़ रुपये केन्द्र द्वारा जारी किये गये। परंतु इसमें से केवल 43.37 करोड़ रुपये बिहार सरकार द्वारा खर्च किए गए।

सबसे दुर्भाग्यपूर्ण तथ्य तो यह है कि वर्ष 2003-04 में केन्द्र से सहायता प्राप्त करने के लिये राज्य सरकार द्वारा राज्य की ओर से कोई प्रस्ताव ही नहीं भेजा गया। इसलिए कोई सहायता राशि केन्द्र द्वारा जारी नहीं की गई । यहाँ यह उल्लेख करना चाहूँगा महोदय कि बिहार में सड़कों का घनत्व देश में सबसे कम है। प्रति दस लाख आबादी के लिए राज्य में सड़क अनुपात 9.20 किलोमीटर है। जब कि आंध्र प्रदेश में यह अनुपात 24.25 कि. मी., उत्तर प्रदेश में 15.90 कि.मी., राजस्थान में 25.43 कि.मी. महाराष्ट्र में 14.98 कि. मी. है । पड़ोसी और नवसृजित राज्य झारखंड ने भी इस योजना का प्रशंसनीय इस्तेमाल किया है, जबकि बिहार की सरकार ने घोर लापरवाही का परिचय दिया है।

महोदय, इसके अलावा शिक्षा एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ इस राज्य से बाहर जानेवाले विद्यार्थी तो बहुत अच्छा करते हैं, जबकि राज्य के अन्दर इसकी स्थिति डांवाडोल है । साक्षरता योजना पूरी तरह नकारा साबित हुई है। बिहार में साक्षरता दर सन् 2001 में 47.53 प्रतिशत थी जोकि देशभर में सबसे कम है । यही नहीं, राज्य में साक्षरता वृद्धि दर भी देश में सबसे न्यूनतम है। इसे प्रदर्शित करने वाली तालिका मैं आपकी अनुमति से सदन के समक्ष रखना चाहता हूँ। इसमें दिये गये आंकड़ों का स्रोत राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट है । इस तालिका में बिहार एवं अन्य राज्यों के बीच में साक्षरता दर में वृद्धि की तुलना की गई है। आपकी अनुमति से इसे मैं सदन पटल पर रख रहा हूँ।

क्रमांक	राज्य का नाम	साक्षरता % 1991	साक्षरता % 2001	10 वर्ष में प्रतिशत वृद्धि
1.	बिहार	38.48	47.53	9.05
2.	कर्नाटक	44.09	61.11	17.02
3.	राजस्थान	38.55	61.03	22.48
4.	उत्तर प्रदेश	41.60	57.36	15.76

महोदय, देश में शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े जिलों की संख्या 295 है और इनमें बिहार के सभी 37 जिले शामिल हैं । इन सभी 37 जिलों में साक्षरता दर राष्ट्रीय औसत से नीचे है। विशेषकर महिला साक्षरता का तो अत्यन्त बुरा हाल है। देश में सबसे कम महिला साक्षरता, 33.57 प्रतिशत, बिहार में है । साक्षरता में इतनी दयनीय स्थिति के बावजूद सर्वशिक्षा अभियान का कामकाज अत्यंत लचर और सोचनीय है । वर्ष 2003-04 में 764.74 करोड़ रुपया की योजना इस मद में स्वीकृत हुई । मगर इस योजना आकार के विरुद्ध दिसम्बर 2003 तक व्यय हुआ मात्र 166 करोड़ रुपया जो कि उद्व्यय का मात्र 22 प्रतिशत है । वर्ष 2003-04 के लिए 1828 विद्यालय भवनों के निर्माण का लक्ष्य था मगर इसके विरुद्ध 30 सितम्बर, 2003 तक मात्र 68 भवनों में कार्य चल रहा था। इसी वर्ष में 19 हजार नौ सौ चौसठ अतिरिक्त क्लास रूम निर्माण के लिए केन्द्र ने धन दिया मगर इस लक्ष्य के विरुद्ध 30 सितम्बर, 2003 तक मात्र 1982 क्लास रूम का कार्य ही प्रगति पर था। यह प्रगति भी आरंभिक स्तर पर थी ।

महोदय, सामाजिक आर्थिक विकास का एक अन्य नियामक क्षेत्र है स्वास्थ्य सेवा। बच्चों का टीकाकरण राज्य द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली स्वास्थ्य सेवाओं का एक महत्वपूर्ण संकेत चिह्न है। 12 से 23 वर्ष की आयु वर्ग के ऐसे बच्चों की संख्या जिन्हें सभी प्रकार के सारे टीके जैसे बी.सी.जी. का सेवन, चेचक टीका, डी.पी.टी. के तीन टीकों सहित पोलियो वैक्सीन के टीके लग चुके हों, ऐसे बच्चों की संख्या का प्रतिशत बिहार में 10.6 है जो देशभर में सबसे कम है । सच्चाई तो यह है कि यह संख्या वर्ष 1992-93 में पूर्णतः टीकाकृत बच्चों की प्रतिशत संख्या से भी कम है। अन्य राज्यों के ऐसे बच्चों की प्रतिशत संख्या जिनके टीकाकरण का काम पूरा हो चुका है, से जरा बिहार की तुलना की जाय महोदय तो बिहार की स्थिति कितनी शर्मनाक है यह इन आंकड़ों से पता चल जाता है, जिन्हें मैं तालिका के रूप में सदन के सामने रख रहा हूँ।

क्रम सं0	राज्य का नाम	1992-93	1998-99	6 वर्षों के दौरान परिवर्तन (प्रतिशत में)
1.	बिहार	10.7	10.6	-01
2.	आंध्रप्रदेश	45.0	52.0	7.2
3.	कर्नाटक	52.2	60	7.8
4.	महाराष्ट्र	64.1	78.2	14.1

बाढ़ नियंत्रण के बारे में बिहार की स्थिति पर आजादी से पहले 1895-96 से ही चिंतन चलता आ रहा है। उत्तरी बिहार के विकास के लिए सबसे महत्वपूर्ण कार्यक्रमों में से एक बाढ़-नियंत्रण का कार्यक्रम है। परन्तु बाढ़-नियंत्रण कार्यक्रम के अंतर्गत हुई वास्तविक प्रगति बड़ी अफसोस जनक है। नौवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान 52.74 किलोमीटर बाढ़ नियंत्रण तटबंध निर्माण का जो लक्ष्य रखा गया था उसकी तुलना में वास्तविक प्रगति शून्य रही। वर्ष 2002-2003 के दौरान राज्य सरकार ने 36 किलोमीटर बाढ़ नियंत्रक तटबंध के निर्माण का लक्ष्य रखा था जिसमें-त्रिमुहानी, कुरसेला और पुनपुन आदि परियोजनाएं शामिल थीं। यहां भी प्रगति शून्य रही। वर्ष 2003-2004 के प्रस्ताव में बाढ़ नियंत्रण के लिये आवंटित राशि में भी कटौती कर दी गई। गत वर्ष में यह राशि 133.35 करोड़ रुपया थी इस वर्ष का आवंटन 117.65 करोड़ रुपया है। अब केवल एक कुरसेला तटबंध के निर्माण का ही प्रस्ताव है। अन्य योजनायें शिथिल कर दी गई हैं। राज्य सरकार के ऐसे रवैया को राज्य विरोधी अथवा जन विरोधी कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

महोदय, एक अन्य महत्वपूर्ण कार्यक्रम की चर्चा करना चाहता हूँ। यह है सार्वजनिक वितरण प्रणाली। सार्वजनिक वितरण प्रणाली एक ऐसा कार्यक्रम है, जिसके साथ राज्य के गरीब-गुरबा का भाग्य जुड़ा हुआ है। सामाजिक न्याय का मुखौटा पहनने वाली राज्य सरकार ने गरीबी-रेखा से नीचे रहने वाले लोगों और अत्यंत गरीब लोगों को वितरित किए जाने वाले खाद्यान्न के उठाव में जो उदासीनता दिखाई है, वह प्रदेश के गरीबों के साथ घोर अन्याय है और सरकार की बदनीयत

का पर्दाफाश करने वाला है। ज्यादा समय न लेकर महोदय मैं इस बारे में वस्तुस्थिति को दर्शाने वाले आंकड़े आपके सामने तालिका के रूप में रख रहा हूँ। सत्तापक्ष के माननीय सदस्यों की आँखें इससे खुल जानी चाहिये।

वर्ष	श्रेणी			
	गरीबी रेखा के नीचे के लोगों के लिये (लाख टन)		अंत्योदय अन्न योजना में (लाख टन)	
	आवंटन	उठाव	आवंटन	उठाव
2002-03	22.44	4.38	04.20	03.33
2001-02	18.20	3.78	1.5	1.08
2000-01	18.77	6.02	00.00	00.00

खाद्यान्न आपूर्ति से जुड़ी तीन महत्वपूर्ण योजनायें आजकल पूरे देश में चल रही हैं और इस राज्य में भी चल रही हैं। ये योजनायें हैं-अन्नपूर्णा योजना, संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना और स्कूली छात्रों के लिये मध्याह्न भोजन योजना। तीनों ही योजनाओं में श्री अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार ने पर्याप्त खाद्यान्न विद्यालयों में आपूर्ति हेतु स्वीकृत किया था। परन्तु राज्य की यह निकम्मी सरकार आवंटित खाद्यान्न की मात्रा को उठा नहीं सकी और उठाये गये खाद्यानों का समुचित वितरण नहीं कर सकी।

उदाहरण के लिये महोदय, वर्ष 2003-2004 के लिये अन्नपूर्णा योजना मद में केन्द्र सरकार ने जो अनाज दिया उसका मात्र 1.53 प्रतिशत ही बिहार सरकार उठा सकी। इसी तरह संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के तहत 5 लाख टन और मध्याह्न भोजन योजना के तहत एक करोड़ पैंसठ लाख टन अनाज जिसे केन्द्र सरकार ने तो आवंटित कर दिया पर राज्य की सरकार उसे उठाकर लाभुकों के बीच बाँट नहीं सकी। सरकार के इस नकारापन को भी महोदय मैं तालिका के रूप में सदन पटल पर रख दे रहा हूँ। आप स्वयं देख लीजिये और आश्वस्त हो लीजिये।

योजना का नाम	वार्षिक आवंटन (लाख टन)	उठाव की मात्रा (लाख टन)
अन्नपूर्णा योजना (सितंबर 2003 तक)	0.19	0.02
संपूर्ण ग्रामीण योजना (अक्टूबर 2003 तक)	0.58	0.50
मध्याह्न भोजन की योजना	2.45	0.80

इसी तरह अन्य मामलों में भी बिहार काफी पीछे है जैसे – देशभर में बिहार में प्रति व्यक्ति विद्युत खपत सबसे कम है । गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले लोगों का राष्ट्रीय औसत 26 प्रतिशत है। इसके विरूद्ध बिहार में यह अनुपात 53 प्रतिशत है। इन सबका सीधा असर प्रति व्यक्ति आय के बिहार की चिंताजनक स्थिति को दर्शाता है । 1993–94 में बिहार में प्रतिव्यक्ति आय 3037 रुपये थी, जबकि इसका राष्ट्रीय औसत उस समय 7690 रुपये था । वर्ष 2000–2001 में प्रतिव्यक्ति आय का राष्ट्रीय औसत 10,754 रुपये हो गया, जबकि बिहार के लिये इसमें मामूली वृद्धि हुई । इस अवधि में यह बढ़कर मात्र 3399 रुपये हुई।

इस प्रकार आठवीं और नौवीं पंचवर्षीय योजना के आठ वर्षों की इस अवधि के दौरान जहां शेष भारत में प्रति व्यक्ति आय 4.2 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से बढ़ी, वहीं बिहार में यह वृद्धि मात्र 1.3 प्रतिशत प्रतिवर्ष पर रूकी रही । इससे यह बिलकुल साफ है कि राज्य सरकार विकास के हर मोर्चे पर पूरी तरह से विफल रही है । इसका मूल कारण यह है कि इस राज्य में किसी भी प्रकार के उत्तरदायी शासन व्यवस्था का पूरे तौर पर घोर अभाव रहा है ।

इस परिप्रेक्ष्य में राज्य सरकार के रवैये से यह स्पष्ट हो जा रहा है कि इनकी रूचि इसमें नहीं है कि इस राज्य के लिए कौन कितना भला कर रहा है, किससे कितना भला हो रहा है, किस मात्रा में हो रहा है बल्कि इनकी रूचि का विषय केवल यह है कि इसे कौन कर रहा है, यही इनकी प्राथमिकता है । अगर एन.डी.ए. की सरकार ने 57 हजार करोड़ रुपये से अधिक धन राशि विभिन्न मदों में राज्य की सहायता के लिये दिया तो उस समय राज्य सरकार द्वारा यह मांग होती रही कि हमें तो 1 लाख 79 हजार करोड़ रुपये का विशेष आर्थिक पैकेज ही चाहिये,

इससे कम कुछ भी नहीं । अब राज्य की मुख्यमंत्री महोदया केवल 11,186 करोड़ रुपये की सहायता राशि पर ही संतुष्ट हो जा रही हैं क्योंकि केन्द्र में अब यू.पी.ए. की सरकार आ गई है, जिसमें इनकी भी हिस्सेदारी है। मुझे तो यही लगता है कि सरकार का रवैया वस्तुनिष्ठ नहीं है, बल्कि सरकार की सोच पार्टीनिष्ठ है, व्यक्तिनिष्ठ है ।

महोदय, अगर केन्द्र सरकार द्वारा प्रस्तावित योजनाओं की यह सहायता राशि इसी वित्तीय वर्ष में आयेगी और इसके लिये चिन्हित योजनायें कार्यान्वित की जायेंगी तो संभव है कि दूसरे अथवा तीसरे अनुपूरक बजट में इनका जिक्र हो। राज्य के अंशदान के रूप में इसके लिये धन की व्यवस्था करनी पड़ेगी तो अनुपूरक बजट के माध्यम से ही यह संभव होगा । इसीलिए इसके अतिरिक्त और भी बड़े आकार के अनुपूरक बजट आने की संभावना का जिक्र मैने पहले किया है ।

इस राज्य में सरकार द्वारा तैयार अनुपूरक बजटों की एक विडम्बना रही है कि अनुपूरकों की व्यय विवरणी बनाते समय और उनकी मांग को सदन में रखते समय राज्य सरकार इसके पूर्व सदन में रखे गये बजट के प्रावधानों के बारे में, ऐसे बजट में जो योजनायें दी गई हैं उनके बारे में, विचार नहीं करती है । अनुपूरक का एक पक्ष यह होता है कि आपात स्थिति में कोई ऐसा खर्च करना पड़ा जिसका प्रावधान बजट में नहीं है परन्तु कोई ऐसी परिस्थिति अचानक आ गयी जिसमें वह खर्च करना पड़ा तब आकस्मिकता निधि से अग्रिम लेकर हो चुके ऐसे व्यय को अनुपूरक व्यय विवरणी के रुप में समंजन के लिये सदन के सामने लाया जाता है। इसलिए अनुपूरक बजट को कभी–कभी विलोम बजट भी कहा जाता है क्योंकि बजट में सरकार बहुत चिंतन और मंथन कर के तैयार योजनाओं के लिये धन का उपबंध करती है । विभागों से सलाह मशविरा करती है और उसके बाद वह योजनाओं के लिये निर्धारित व्यय का समावेश बजट में करती है। परन्तु अनुपूरक के संदर्भ में यह होता है कि सरकार आकस्मिकता निधि से अग्रिम लेकर व्यय पहले कर देती है, सदन की अनुमति के बिना व्यय हो जाता है और उस व्यय को सरकार बाद में सदन के सामने लाती है समंजन के लिये ।

अब यह ध्यान नहीं रखा जाता है अनुपूरक में कि सरकार जितना व्यय करने की अनुमति सदन से मांग रही है, उसका उपयोग भी वह कर सकती है या केवल सदन में अनुपूरक बजट और इसका विनियोग विधेयक रखने की महज खानापूर्ति करना और किसी स्वार्थ या दबाव को पूरा करना सरकार का उद्देश्य है। पिछले 8–10 वर्षों की अनुपूरक मांग विवरणों को मैने देखा है, उनका अध्ययन और विश्लेषण किया है, तब यह बात कह रहा हूँ । उदाहरण के लिए एक वर्ष का ब्यौरा इस बारे में सदन के सामने देना चाहूंगा । यह वर्ष 2001–2002 का है । यह मैं इसलिए कह रहा हूं कि सी.ए.जी. की जो रिपोर्ट पिछले सत्र में सदन में रखी गयी थी, उसमें इसका उल्लेख है। 2001–02 में 50 ऐसी मांगें थीं जिन मांगों में अनुपूरक बजट के माध्यम से सदन से अतिरिक्त राशि खर्च करने के लिये अनुमति ली गयी थी, परन्तु उस अनुपूरक बजट प्रावधान का उपयोग नहीं हुआ। इतना ही नहीं प्रासंगिक शीर्षक में उस वर्ष के मूल बजट के अन्दर जितना प्रावधान रखा गया था व्यय करने का उतना भी खर्च नहीं हुआ। परन्तु अनुपूरक बजट सदन के सामने रखकर अतिरिक्त धन व्यय करने के नाम पर सदन से अनुमति ली गयी और वह धन राशि 464 करोड़ 83 लाख रुपये की है । यानी इतनी भारी राशि व्यय करने का प्रस्ताव सदन के सामने विभिन्न मांगों के रूप में रखा जा रहा है, अनुपूरक बजट में प्रावधान किया जा रहा है, पर वह राशि खर्च नहीं होती है। इतना ही नहीं इसी व्यय शीर्ष में बजट का जो मूल आवंटन है वह भी पूरा खर्च नहीं होता है ।

सवाल उठता है कि जब सरकार सदन के सामने अनुपूरक बजट लाती है तो क्या मूल वार्षिक बजट के प्रावधानों पर सम्यक रूप से विचार करती है ? क्या कोई भी प्रावधान करते समय सरकार की योजना और बजट में तालमेल का प्रयास होता है ? यह सवाल मैं सदन के माध्यम से सरकार के सामने खड़ा कर रहा हूँ और इस अनुपूरक व्यय विवरणी पर चल रही बहस का उत्तर देते समय सरकार को मेरे सवाल का उत्तर देना चाहिये । इस सवाल पर गहन विचार विमर्श होना चाहिए ।

अक्सर यह भी देखा जा रहा है कि जिस मद के योजना व्यय में भारी कटौती हो जाती है, उस मद के संबंध में भी अनुपूरक व्यय हेतु सरकार सदन के सामने मांग रख दे रही है । हाल ही में प्राप्त सी.ए.जी. रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2001–02 के बजट की 3100 करोड़ रुपये की उन योजनाओं के लिये भी अनुपूरक बजट लिया गया था, जिन योजनाओं के लिये आवंटित व्यय में 49 प्रतिशत की कटौती हो गई थी । इनके लिये वार्षिक बजट में किये गये आवंटन में से 1558 करोड़ रुपया खर्च ही नहीं हो पाये । उस वर्ष ऐसे विभिन्न योजना मदों में अनुपूरक मांगें रखी गईं और इन पर सदन से अनुमति प्राप्त कर ली गयी। जो राशि खर्च नहीं हुई उसमें 1263 करोड़ रुपये कर्ज मद का है जिसे सरकार ने इन योजनाओं के कार्यान्वयन हेतु लिया था । अनुपूरक और बजट की तैयारी में पूरी तरह से दिमाग नहीं लगाने के कारण, गम्भीरता पूर्वक विचार नहीं करने के कारण ऐसा प्रतिफल हो रहा है । इसका फलाफल है कि अनियंत्रित व्यय भार तेजी से बढ़ रहा है । सरकार के ऊपर देनदारियां बढ़ रही है, कर्जे बढ़ रहे हैं। पिछले दो वर्षों में देनदारियों में वृद्धि की रफ्तार 11 प्रतिशत है । दूसरी ओर सरकार को जो राजस्व प्राप्त होता है, सरकार जो राजस्व वसूलती है, उसमें कमी आ रही है और इस कमी की दर 12 प्रतिशत प्रतिवर्ष है । एक तरफ राजस्व घट रहा है, वसूली घट रही है, दूसरी ओर देनदारियां बढ़ रही हैं । लगता है कि अनुपूरक बजट रखते समय या बजट तैयार करते समय सरकार इसपर कभी भी विचार नहीं करती है ।

सरकार द्वारा सदन में रखे गये इस अनुपुरक को देखकर मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इसके पहले सदन में अनुपूरकों पर विचार करते समय हमने जो बाते और विचार रखे थे उन पर भी सरकार ध्यान नहीं देती है । ऐसा लगता है कि सदन में जो विचार माननीय सदस्यों द्वारा रखे जाते हैं उन विचारों को सरकार गंभीरता से नहीं लेती है । पिछले सत्र में जब लेखानुदान लिया जा रहा था तब भी मैंने इसका उल्लेख किया था। उस समय मैंने सरकार के विभिन्न वर्षों के बजट दस्तावेजों से हवाला दिया था। उनका विश्लेषण कर और उनमें अंकित आंकड़ों

को उद्धृत कर मैंने बताया था कि सरकार वार्षिक बजट में योजना और गैर योजना मद को जोड़कर आय–व्यय मद में जितनी राशि का आंकड़ा देती है, वह वास्तविकता से परे होता है। बजट अनुमान की राशि और बजट की पुनरीक्षित राशि का कोई ताल्लुकात बजट की वास्तविक व्यय की राशि से नहीं रहता है। जैसे कि इस वर्ष में सरकार ने 23 हजार करोड़ रुपये से अधिक खर्च करने का लक्ष्य वार्षिक बजट में रखा है। परन्तु दो साल के बाद जब सरकार सदन के सामने वार्षिक बजट पेश करेगी और उसमें इस साल जितनी धन राशि व्यय करने का प्रावधान बजट में किया गया है उसमें से कितना वास्तविक खर्च हुआ है, इसका आंकड़ा सदन के सामने रखेगी तो हम पायेंगे कि वास्तविक व्यय की राशि इसके आधा से भी कम हो गयी है। इस बार जो बजट पेश किया गया है सरकार द्वारा इससे दो साल पहले वर्ष 2002–03 के बजट में करीब 12015 करोड़ रुपये का आकलन अनुमानित व्यय किया गया था उसमें से हुए वास्तविक व्यय की स्थिति इस वर्ष के बजट में दी गई है। दोनों में भारी अंतर है। 2002–03 में वास्तविक व्यय मात्र 5842 करोड़ रुपये ही हुआ है। इस ओर मैं पहले भी सदन का ध्यान आकृष्ट कर चुका हूँ।

वितीय वर्ष के आरम्भ में रखा जाने वाला अनुमानित बजट प्रावधान और वित्तीय वर्ष के अंत में इसके पुनरीक्षित अनुमान का भी वास्तविक व्यय से कोई लेना देना नही रहता है। इस राज्य के अर्थ प्रबंधन और बजट प्रणाली के ऊपर यह रिफ्लेक्शन है कि हम जो प्रणाली और परम्परा चला रहे हैं बजट बनाने की, जो प्रणाली हमने अपना रखा है अपने आर्थिक संरचना को सुदृढ़ एवं व्यवस्थित रखने की, क्या वह प्रणाली मुकम्मल काम कर रही है ? दो साल पहले यह कहा गया था कि सरकार ''सिंकिंग फंड'' बनाएगी और उस सिंकिंग फंड में पर्याप्त राशि डालेगी ताकि राज्य के दायित्वों का, देनदारियों का भुगतान उससे किया जा सके। यह भी कहा था सरकार ने कि हम डेब्ट स्वैप करेंगे, यानी कम सूद पर कर्ज लेंगे, और पीछे अधिक सूद पर जो कर्ज लिया गया है, उस कर्ज को उससे लौटा देंगे, ताकि ब्याज अदायगी के मामले में कम भुगतान करना पड़े।

परन्तु असलियत क्या है? तीन–चार वर्षों के ऋण विवरण का मैंने अध्ययन किया है। जो दो–तीन तरह के ऑप्शन हैं, सरकार के सामने कर्ज लेने के, उसमें एक बाजार ऋण का है। बाजार ऋण के कर्जे पर सूद की दर 8.79 प्रतिशत है। दूसरा लघु बचत से ऋण लेने का है। उसमें सूद की दर साढ़े ग्यारह प्रतिशत है और तीसरा है केन्द्र सरकार से लिया जाने वाला सहायता अनुदान के अन्तर्गत कर्ज इसमें ब्याज की दर बारह प्रतिशत है। राज्य सरकार ने पिछले दो–तीन वर्षों में इस पर ध्यान नहीं रखा है कि जिस स्रोत से कर्ज पर हमको अधिक ब्याज देना पड़ता है, उससे हम कर्ज नहीं लें अथवा कम मात्रा में लें। परन्तु सरकार है कि बाजार ऋण के रूप में बहुत कम कर्ज ले रही है। दूसरी तरफ लघु बचत तथा केन्द्रीय सहायता से जिनकी ब्याज दर साढ़े ग्यारह और बारह प्रतिशत है, सरकार उससे ज्यादा कर्ज ले रही है। आखिर सरकार की ऐसी करनी का बोझ किस पर पड़ेगा ? विगत साल लघु बचत से 1532 करोड़ रुपये कर्ज लिया गया है और केन्द्रीय ऋण के रूप में 1670 करोड़ रुपये कर्ज लिया गया है। सरकार इतना बड़ा कर्ज ले रही है और अधिक सूद पर कर्ज ले रही है, जबकि बजट पेश करने के दौरान हमारे माननीय मंत्री भाषण देते हैं कि हम डेब्ट स्वैप करा रहे हैं, ताकि कम सूद पर हम कर्ज लेकर अधिक सूद पर लिया गया कर्ज लौटा दें। यह एक विरोधाभास है, बजट में भी और अनुपूरक की जो मांगें हमारे सामने रखी गई हैं, उनमें भी।

हर साल सरकार द्वारा यह कहा जाता है कि सी.ए. जी. हमारा एकाउंट रखता है, राज्य का वित्त विभाग हमारा एकाउंट रखता है, बैंक भी हमारा एकाउंट रखते हैं। साल के अंत में इसका मिलान होता है। दो साल पहले सी.ए.जी. के और राज्य सरकार के बीच विभागों के व्यय के आंकड़ों का मिलान हुआ। इनमें 7290 करोड़ रुपये का फर्क है। अभी तक इसका निदान नहीं हुआ है। ये बातें सी.ए.जी. की रिपोर्ट, जो सदन में रखी गयी है, उसमें उल्लिखित है। तो महोदय सदन को इस पर विचार करना चाहिए कि राज्य सरकार बजट और अनुपूरक रखते समय अपने भाषणों अथवा अपने उत्तरों में इन बातों को हमारे समक्ष क्यों नहीं

रखती है ? क्या सरकार उस दिशा में कोई काम कर भी रही है या काम नहीं कर रही है? यह महत्वपूर्ण सवाल है। इसका उत्तर सदन को चाहिये। इस बारे में सरकार को स्पष्टीकरण देना चाहिये ।

जब 15 नवम्बर 2000 को बिहार और झारखंड पृथक राज्य हुए, उस समय बिहार राज्य पर 31580 करोड़ 83 लाख रुपये का कर्ज था और पिछले वर्ष अप्रैल माह के जो आंकड़े आ रहे हैं, रिजर्व बैंक के द्वारा, उनके मुताबिक यह कर्ज बढ़कर 40,309 करोड़ 51 लाख रुपये हो गया है। कर्ज का यह बढ़ता बोझ राज्य की वित्त व्यवस्था के लिये खतरे का संकेत है। आज बिहार के ऊपर जो कर्ज है, वह इसके सकल घरेलू उत्पाद का 61 प्रतिशत है । सकल घरेलू उत्पाद राज्य की वित्तीय स्थिरता को और वित्तीय सुदृढ़ता को दर्शाता है । राज्य के पास कितनी आर्थिक क्षमता है उसका संकेत होता है उस राज्य का सकल घरेलू उत्पाद। बिहार राज्य द्वारा अब तक लिया गया कर्ज इस घरेलू उत्पाद का 61 प्रतिशत है। हम कह सकते हैं कि बिहार के उपर कर्ज का भार राज्य की कुल आमदनी का 61 प्रतिशत हो गया है। एक तरफ यह स्थिति है और दूसरी तरफ मंत्री महोदय कहते हैं कि सरकार डेब्ट स्वैप करा रही है ।

सूद का भार हमारे राज्य के उपर कितना पड़ रहा है? अब तक जो कर्ज राज्य सरकार ने लिया है, उसके सूद के रूप में एक साल में 3417 करोड़ रुपये का भुगतान करना पड़ रहा है । हर साल सरकार राजस्व वसूली करती है, जिसे हम राज्य की राजस्व आय कहते हैं। यह कुल बजट राशि का मात्र 26.15 प्रतिशत है। बजट के साथ हमलोगों को जो एक पृष्ठ का आंकड़ा दिया जाता है सरकार द्वारा उसमें सूचना रहती है कि बजट का पैसा कहाँ से आ रहा है और कहां जा रहा है । उसमें भी अंकित है कि बिहार की सरकार वार्षिक प्राप्तियों का 26.15 प्रतिशत सूद की अदायगी पर खर्च करती है। अपने कुल राजस्व से ब्याज अदायगी मद में व्यय करने की यह स्थिति विगत कई वर्षों से है।

1980-90 के दशक में हमारे सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि की दर 4.6

प्रतिशत थी और 1990 से 2000 के बीच का जो दशक है, उसमें यह घटकर 2.88 प्रतिशत हो गई । इतनी गिरावट है सकल घरेलू उत्पाद वृद्धि की दर में, जो कि चिन्ताजनक है यह स्थिति की गम्भीरता को प्रतिबिम्बित करती है कि आखिर किस स्थिति में हमारा राज्य है ? इस राज्य की आर्थिक स्थिति कैसी है? वैसे ही हम प्रति व्यक्ति घरेलू उत्पादन के आंकड़ों को लेते हैं तो 80 के दशक में यह वृद्धि दर 2.45 प्रतिशत थी और उसके बाद नब्बे के दशक में घटकर यह 1.27 प्रतिशत हो गयी क्यों?

1990 से पहले राज्य का कुल योजना व्यय राज्य के सकल घरेलू उत्पाद का 6.2 प्रतिशत था । 1990 से 2000 के बीच यह घटकर 2.8 प्रतिशत हो गया है । एक ही दल की सरकार रही है इस बीच बिहार में । इसलिए यह नहीं कह सकते हैं कि राजनीतिक अस्थिरता इसका कारण हो सकती है। वास्तव में इस बीच के काल खंड में कतिपय कुछ ऐसी शक्तियाँ सरकार पर हावी हो गई हैं जिसने राज्य की आर्थिक प्रगति की रफ्तार को धीमा कर दिया है । इस राज्य को विकास के विपरीत दिशा में ले जाने का प्रयास किया है । एक ही तरह की राज्य सरकार है, एक ही पार्टी शासन कर रही है इस अवधि में इसके बावजूद ऐसी विषम स्थिति है तो इसके लिये वर्त्तमान राज्य सरकार के सिवाय और कौन जिम्मेवार है।

रिजर्व बैंक के और भारत सरकार के योजना विभाग के दस्तावेजों में मौजूद प्रासंगिक आंकड़ों के विश्लेषण से बिहार के सकल घरेलू उत्पाद में गिरावट की प्रवृति साफ झलकती है । 1990 से 2000 के बीच इसकी वृद्धि दर में 2.8 प्रतिशत की कमी आई है जबकि इसका राष्ट्रीय औसत 3.4 प्रतिशत की दर से बढ़ा है। ये सारे लक्षण चिन्ता का विषय हैं। इसके अलावा कतिपय अन्य चिन्ताजनक स्थितियां भी इन आंकड़ों में प्रतिबिम्बित होती हैं, जैसे प्रतिव्यक्ति घरेलू व्यय में कमी । हमारे राज्य का प्रति व्यक्ति घरेलू व्यय 414 रुपया है । केवल उड़ीसा ही 410 रुपया के घरेलू व्यय के साथ इससे नीचे है । अन्य सारे राज्य इससे ऊपर हैं और काफी ऊपर हैं। उसी तरह से अगर हम पिछले तीन साल के आंकड़ों

को आधार बनायें तो बिहार का विकास व्यय 3 हजार 206 करोड़ रुपया आ रहा है जो देश में सबसे कम है । इतना ही नहीं हम अपनी योजनाओं के लिए जहां–जहां से संसाधन का इन्तजाम करते हैं, उसमें राज्य का कंट्रीब्युशन होता है । इसके अलावा केन्द्र का कंट्रीब्युशन भी होता है । कई ऐसी योजनाएं होती है–जो विदेशों से सहायता पर आधारित हैं । विदेशों से सहायता प्राप्त की हुई ऐसी योजनाओं की कुल राशि यहां प्रतिव्यक्ति केवल 35 रुपये है, जबकि इनका अखिल भारतीय औसत 188 रुपया है । बिहार राज्य ने आठवीं और नौवीं पंचवर्षीय योजना में आवंटित विकास व्यय का आधार खर्च करने लायक भी संसाधन नहीं जुटाया है । नतीजतन इसके दसवीं पंचवर्षीय योजना का आकार कम से कम 40 हजार करोड़ रुपये होने की जगह मात्र 21 हजार करोड़ रुपया पर सिमट गया है । स्पष्ट है कि राज्य की योजनाओं के लिए धन इकट्ठा करने हेतु सरकार कोई सार्थक प्रयास नहीं कर रही है ।

महोदय, बिहार एक कृषि प्रधान राज्य है । यहाँ की 78 प्रतिशत जनसंख्या आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है । परंतु इस राज्य में योजना और बजट व्यय के दृष्टिकोण से कृषि क्षेत्र की क्या स्थिति है ? छठवीं पंचवर्षीय योजना काल में बिहार में प्रति एकड़ बोये गए क्षेत्र पर 232 रुपये व्यय होता था । सातवीं पंचवर्षीय योजना में यह व्यय घटकर 227 रुपये हो गया और आठवीं पंचवर्षीय योजना में केवल 79 रुपये रह गया । नौवीं पंचवर्षीय योजना में भी यही स्थिति है । योजना व्यय में राज्य का योगदान घट रहा है । सातवीं पंचवर्षीय योजना में यह योगदान 78 प्रतिशत था । आठवीं योजना में यह शून्य के समीप आ गया और नौवीं पंचवर्षीय योजना में राज्य का योगदान ऋणात्मक हो गया । नतीजा है कि बेरोजगारी 29 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से बढ़ रही है । 1993–94 में बेरोजगारी का आंकड़ा बिहार राज्य में 29 प्रतिशत था, जो 2001–02 में बढ़कर 53 प्रतिशत हो गया।

महोदय, मेरी यह तथ्यपरक धारणा विश्वसनीय आंकड़ों के वस्तुपरक विश्लेषण पर आधारित है । आकड़ों की फेहरिस्त लम्बी है । स्त्रोत विश्वसनीय

हैं । इनका विश्लेषण करने लगूं तो सदन का बहुत समय जाया होगा । इसलिये विस्तार में जाने के बदले महोदय आपकी अनुमति से आंकड़ों का यह पुलिन्दा सदन के पटल पर रख देना चाहता हूँ ।

तालिका – 1

बिहार एक नजर में

क्षेत्रफल	:	94,163 वर्ग किलोमीटर
कुल आबादी	:	8,28,78,796
प्रमंडल	:	9
जिला	:	38
अनुमंडल	:	101
सामुदायिक विकास प्रखंड	:	533+
पंचायत	:	8,471
पंचायत समिति	:	529 (सदस्य)
जिला परिषद्	:	37
नगर निगम	:	5
नगर परिषद्	:	32
नगर पंचायत	:	80
शहर	:	130

स्त्रोत : बिहार सूचना एवं जनसंपर्क विभाग

तालिका – 1 (क)

बिहार एक नजर में

पुरुष : महिला अनुपात	:	1000 : 921
शिक्षित आबादी (साक्षरता)	:	3,16,75,607
शिक्षित पुरुष (साक्षरता)	:	2,09,78,955–(60.32%)
शिक्षित महिलायें (साक्षरता)	:	1,69,66,552–(33.57%)
सर्वाधिक शिक्षित जिला	:	पटना (52.17%)
राजस्व ग्राम	:	45,103
विश्वविद्यालयों की संख्या	:	11
विधान सभा क्षेत्रों की संख्या	:	243
विधान परिषद् सदस्य	:	75
लोकसभा क्षेत्र	:	40
राज्यसभा सदस्य	:	16

स्रोत : बिहार सूचना एवं जनसंपर्क विभाग

तालिका – 2

राज्य	क्षेत्रफल कि.मी.	जनसंख्या जनगणना 2001 हजार में	साक्षरता दर	खाद्यान्न उत्पादन (हजार टन)	बिजली का सकल उत्पादन जी डब्ल्यू एम	राज्य प्रति व्यक्ति घरेलू उत्पादन 1998–99
आन्ध्र प्रदेश	275045	75728	54	14395	30.896	13853
असम	78438	26639	75	3434	939	8700
बिहार	94163	82879	49	12909	4232	5923
गुजरात	196024	50597	68	5567	34483	18792
हरियाणा	44212	21082	65	12123	8279	19773
हिमाचल प्रदेश	55673	6078	77	1491	1484	12692
कर्नाटक	191791	52733	58	9977	17150	15889
केरल	38863	31839	93	691	7602	17756
मध्यप्रदेश	443446	60386	56	19798	20562	10147
महाराष्ट्र	307713	96752	74	12753	56627	23849
उड़ीसा	155707	36707	51	5807	6358	8719
पंजाब	50362	24290	67	22907	20880	21863
राजस्थान	342239	56473	55	12934	11965	9215
तमिलनाडु	130058	62111	70	10141	23279	12989
उत्तर प्रदेश	294411	166052	56	40145	24938	7263
पश्चिम बंगाल	88752	80221	72	14367	15990	10636
अखिल भारतीय	3287263	1027015	62	203043	448563	10191

स्रोत : सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय के केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन द्वारा प्रकाशित वर्ष 2000 के आंकड़ों के अनुसार।

तालिका – 3

प्रतिव्यक्ति शुद्ध राज्य घरेलू उत्पादन

(1993-94 के मूल्य पर)

वार्षिक औसत			विकास दर
राज्य	**1990-91**	**2000-01**	**1990-91 to 2000-01**
विकसित राज्य			
पंजाब	11779	15390	2.7
महाराष्ट्र	10248	15172	4.0
हरियाणा	11125	14331	2.6
गुजरात	8788	12975	3.9
प0 बंगाल	6013	9778	5.0
कर्नाटक	6629	11910	6.0
केरल	6851	10712	4.6
तमिलनाडु	7872	12779	4.9
आन्ध्र प्रदेश	6873	9982	3.8
पिछड़े राज्य			
मध्यप्रदेश	6321	7003	1.0
असम	5574	6157	1.0
उत्तर प्रदेश	5342	5770	0.8
राजस्थान	6771	7937	1.6
उड़ीसा	4300	5187	1.9
बिहार	4476	3345	-2.8
भारत	7321	10254	3.4
अधिकतम एवं न्यूनतम प्रतिव्यक्ति शुद्ध घरेलू राज्य उत्पादन	2.9	2.74	4.60

स्त्रोत : वित्त मंत्रालय, भारतीय लोक वित्त सांख्यिकी (2001–2002)

तालिका – 4

भारत के बड़े राज्यों के चुनिन्दा नियामक

राज्य का नाम	जनसंख्या (लाख में) (2001)	प्रतिव्यक्ति औसत घरेलू व्यय (रु. प्रतिमाह)	प्रतिव्यक्ति वास्तविक घरेलू उत्पाद का विकास द्वारा (प्रतिशत प्रतिवर्ष)	
			1980-81	1990-91
आन्ध्र प्रदेश	760	541	3.5	3.5 (3.9)
असम	270	475	NA	1.0 (1.0)
बिहार	1100	414	2.6	0.0 (1.6)
गुजरात	510	678	3.2	6.2 (5.3)
हरियाणा	210	771	4.0	2.2 (3.1)
हिमाचल प्रदेश	60	740	NA	4.0 (4.6)
जम्मू–कश्मीर	100	745	NA	NA (NA)
कर्नाटक	530	640	3.4	5.7 (6.1)
केरल	320	810	2.3	5.1 (5.0)
मध्यप्रदेश	810	475	2.4	2.7 (2.6)
महाराष्ट्र	970	699	3.7	5.4 (5.1)
उड़ीसा	370	410	2.5	3.0 (3.1)
पंजाब	240	795	3.4	2.5 (2.9)
राजस्थान	560	607	4.1	2.5 (2.9)
तमिलनाडु	620	715	2.8	1.6 (2.1)
प0 बंगाल	800	571	2.5	4.7 (5.0)
भारत	10270	589	3.3	4.0 (4.4)

स्त्रोत : भारत विकास और सहयोगिता – 1992–93 से 1998–99 के बीच विकास दर

तालिका – 5
वर्ष 2000–01 में वास्तविक जी.डी.पी. एवं जनसंख्या

राज्य	वास्तविक जी. डी. पी. (करोड़ रुपये में)	जनसंख्या (करोड़ में)	प्रति व्यक्ति जी.डी.पी. (रुपये में)
आन्ध्र प्रदेश	85522.0	7.6	11293.4
असम	17596.0	2.7	6605.5
बिहार	30249.0	8.3	3649.8
गुजरात	76102.0	5.1	15040.8
हरियाणा	33125.0	2.1	15711.7
हिमाचल प्रदेश	7635.0	0.6	12563.3
कर्नाटक	68912.0	5.3	13067.9
केरल	38444.0	3.2	12074.6
मध्यप्रदेश	49482.0	6.0	8194.4
महाराष्ट्र	155875.0	9.7	16110.7
उड़ीसा	23974.0	3.7	6531.2
पंजाब	41106.0	2.4	16923.5
राजस्थान	51937.0	5.6	9196.8
तमिलनाडु	90638.0	6.2	14592.9
उत्तर प्रदेश	109156.0	16.6	6573.6
पश्चिम बंगाल	85796.0	8.0	10694.9
समस्त भारत	1193922.0	182.7	11625.2

स्त्रोत : भारत की जनगणना, 2001, द इकोनॉमिक टाइम्स, 26 जनवरी, 2004 एवं राष्ट्रीय लेखा सांख्यिकी, 2002

तालिका – 6
विकास व्यय (करोड़ रुपये में)

राज्य	2000–01	2001–02	2002–03	कुल	प्रति व्यक्ति संचय (रुपये में)
आन्ध्र प्रदेश	18380.3	20146.2	21926.0	60452.8	7982.9
असम	4627.1	6570.0	6350.4	17547.5	6587.3
बिहार	10089.3	7898.8	8582.6	26570.7	3206.0
गुजरात	19643.1	21551.8	19763.0	60957.9	12047.7
हरियाणा	5701.1	6862.7	7507.5	20071.3	9520.1
हिमाचल प्रदेश	3263.3	3213.8	3399.6	9876.7	16251.9
कर्नाटक	12922.3	14036.2	16261.8	43220.3	8195.9
केरल	7157.2	6326.2	9005.8	23489.2	7377.6
मध्यप्रदेश	10514.9	13001.9	11304.4	34821.2	5766.5
महाराष्ट्र	27071.2	24411.7	22240.2	73723.1	7619.8
उड़ीसा	6061.6	6260.7	7615.0	19937.3	5431.5
पंजाब	6722.8	7706.1	8568.0	22996.9	9467.9
राजस्थान	10212.9	11040.7	13099.8	34353.4	6083.1
तमिलनाडु	14217.8	14944.1	17802.4	46964.3	7561.4
उत्तर प्रदेश	18865.2	22619.2	21388.2	62872.6	3786.3
पश्चिम बंगाल	15555.2	16730.8	16611.9	48897.9	6095.4
समस्त भारत	210543.0	236384.3	246150.3	693077.6	6748.5

स्त्रोत : राज्य वित्त – वर्ष 2002–03 के बजट का एक अध्ययन, भारतीय रिजर्व बैंक (आर.बी.आई)

तालिका – 7

आठवीं योजना का स्वरूप (1992–1997)

वर्ष	अनुमोदित लागत (करोड़ रुपये में)	वास्तविक व्यय (करोड़ रुपये में)
1992–93	2202.73	1149.18
1993–94	2300.00	808.48
1994–95	2400.00	916.18
1995–96	2522.70	981.86
1996–97	2143.91	1549.28
	11569.14	5404.98

नौवीं योजना का स्वरूप (1997–2002)

Year	Approved Outlay	Expenditure (Current Prices)	Plan amount unspent
1997–98	2228.42	1711.43	556.99
1998–99	3768.74	2424.65	1344.09
1999–2000	3630.00	2675.68	954.32
2000–01	3100.00	1638.22	1461.78
2001–02	2644.00	1471.40	1172.60
TOTAL	15411.16	9921.38	5489.78

Source : Planning Commission

तालिका – 8

दसवीं पंचवर्षीय राज्य योजनायें (करोड़ रुपये में)

वर्ष	अनुमोदित लागत (करोड़ रुपये में)	वास्तविक व्यय (करोड़ रुपये में)
आन्ध्र प्रदेश	46614.0	6155.5
असम	8315.2	3121.5
बिहार	21000.0	2533.8
गुजरात	47000.0	9289.1
हरियाणा	10285.0	4878.3
हिमाचल प्रदेश	10300.0	16948.5
कर्नाटक	43558.2	8260.0
केरल	24000.0	7538.0
मध्यप्रदेश	25737.3	4262.2
महाराष्ट्र	66632.0	6886.9
उड़ीसा	19000.0	5176.1
पंजाब	18657.0	7681.2
राजस्थान	27318.0	4837.3
तमिलनाडु	40000.0	6440.1
उत्तर प्रदेश	49708.0	3595.7
पश्चिम बंगाल	28641.0	3570.3
समस्त भारत	59748.7	5817.7

स्त्रोत : योजना आयोग

तालिका – 9

राज्य योजनाओं में वैदेशिक सहायता प्राप्त परियोजनाओं के लिए अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता (करोड़ रुपये में)

राज्य	1998–99	1999–00	2000–01	कुल	प्रति व्यक्ति संचय (रुपये में)
आन्ध्र प्रदेश	624.7	1440.5	1442.3	3507.6	463.2
असम	33.2	41.2	78.3	152.6	57.3
बिहार	112.8	130.4	63.7	306.9	37.0
गुजरात	267.7	512.3	891.2	1671.2	330.3
हरियाणा	165.0	280.9	296.7	742.5	352.2
हिमाचल प्रदेश	–	15.6	56.4	72.0	118.4
कर्नाटक	316.5	456.7	579.5	1352.7	256.5
केरल	40.9	41.6	77.2	159.6	50.1
मध्यप्रदेश	163.3	598.7	172.7	934.6	154.8
महाराष्ट्र	597.1	245.4	318.7	1161.2	120.0
उड़ीसा	415.8	391.6	516.3	1323.7	360.6
पंजाब	171.1	106.4	187.2	464.6	191.3
राजस्थान	225.2	188.1	248.4	661.7	117.2
तमिलनाडु	305.2	591.4	775.1	1671.7	269.1
उत्तर प्रदेश	465.1	431.2	1697.9	2594.2	156.2
पश्चिम बंगाल	886.2	819.7	636.1	2342.0	291.9
समस्त भारत	4824.9	6341.1	8093.2	19259.2	187.5

स्त्रोत : बजट खर्च, खंड–1 (विभिन्न मुद्दे)

तालिका – 10

केन्द्रीय करों में राज्यों की भागीदारी (करोड़ रुपये में)

राज्य	2000–01	2001–02	2002–03	कु ल	प्रति व्यक्ति संचय (रुपये में)
आन्ध्र प्रदेश	3979.3	4049.0	4575.0	12603.3	1664.3
असम	1679.7	1760.0	1972.1	5411.8	2031.6
बिहार	6574.0	6168.0	7139.9	19881.9	2398.9
गुजरात	1573.8	1492.5	1672.3	4738.6	936.5
हरियाणा	344.9	499.0	559.2	1403.1	665.5
हिमाचल प्रदेश	330.3	389.0	468.0	1187.3	1953.7
कर्नाटक	2573.8	2520.9	2925.0	8019.7	1520.8
केरल	1585.6	1895.5	2123.9	5605.0	1760.4
मध्यप्रदेश	4783.3	3700.8	4146.8	12630.9	2091.7
महाराष्ट्र	2783.7	2465.5	2856.9	8106.1	837.8
उड़ीसा	2604.0	3003.4	3473.6	9081.0	2473.9
पंजाब	719.3	611.3	707.7	2038.3	839.2
राजस्थान	2836.6	2882.4	3342.1	9061.1	1604.5
तमिलनाडु	2783.8	2855.3	3199.3	8838.4	1423.0
उत्तर प्रदेश	9045.5	10189.6	11807.1	31042.2	1869.4
पश्चिम बंगाल	4235.6	5054.6	5000.5	14290.7	1781.4

स्त्रोत : राज्य वित्त – वर्ष 2002–03 के बजट का एक अध्ययन, भारतीय रिजर्व बैंक (आर.बी.आई)

तालिका – 11

वित्तीय संस्थानों से प्राप्त प्रति व्यक्ति वित्तीय सहायता (रुपये में)

राज्य	1996-97	1997-98	1998-99	1999-00	2000-01	मार्च 2001 के अन्त तक संचय
आन्ध्र प्रदेश	361.3	540.4	396.8	544.1	499.3	4083.4
असम	104.3	38.7	38.6	65.0	83.1	706.1
बिहार	18.9	22.5	20.8	60.8	20.7	551.6
गुजरात	1379.5	2206.0	1516.0	1764.9	957.2	12727.0
हरियाणा	606.4	654.6	676.4	725.3	823.0	5752.7
हिमाचल प्रदेश	606.4	654.6	676.4	725.3	823.0	5752.7
कर्नाटक	648.6	774.0	740.8	798.0	948.1	6258.1
केरल	282.1	243.7	265.4	307.4	351.0	2644.2
मध्यप्रदेश	224.7	200.8	260.4	174.6	192.1	2187.1
महाराष्ट्र	1014.0	1345.2	1747.3	1778.6	2069.4	12224.1
उड़ीसा	146.8	184.0	328.8	303.7	286.4	2213.4
पंजाब	338.3	541.4	552.9	569.2	772.2	4930.3
राजस्थान	312.4	258.0	293.4	271.2	300.4	2963.5
तमिलनाडु	607.7	5173	680.3	721.3	755.2	6122.5
उत्तर प्रदेश	233.2	180.0	148.6	158.0	156.0	1692.1
पश्चिम बंगाल	174.7	317.2	412.0	425.7	492.7	492
समस्त भारत	456.2	565.4	592.9	677.4	704.1	4828.8

स्त्रोत : वर्ष 2000-01 में भारत में बैंकिंग के विकास पर रिपोर्ट आई. डी. बी. आई.

बिहार की सामाजिक और राजनीतिक परिस्थिति जिस संकट के दौर में पहुँच गई है उसका कटु अनुभव हम सभी को अपनी जिन्दगी में रोजाना हो रहा है। हम सभी इसके भुक्तभोगी हैं। आर्थिक बदहाली, दैनन्दिन जीवन में असुरक्षा और आतंक का बोलबाला, राजनीति और शासन–प्रशासन में फैला भ्रष्टाचार, आम आदमी के जीवन स्तर में उत्तरोत्तर गिरावट, ग्रामीण और शहरी गरीबी, संसाधनों का अभाव और इनका दुरुपयोग, केन्द्रीय सहायता में कमी, अल्प व्यय, अत्यल्प पूंजी निवेश, ऋणात्मक विकास दर, राजनेताओं में अकूत सम्पति जमा करने की होड़ आदि का एक ऐसा कुचक्र इस राज्य में सृजित हो गया है, जिससे उबरना बिहार के लिए असंभव नहीं तो कठिन जरूर है। राजनीतिक दलों और नेताओं पर से आम जनता का भरोसा उठ गया है। इस सरकार की सोच है कि ''लाठी पकड़ो कलम छोड़ो, प्राइमरी स्कूल के बदले चरवाहा विद्यालय चलो, आई. टी. भाइटी में क्या रहता है, साइंस टेक्नोलॉजी क्या बला है'' । इस सोच और इस प्रवृति में परिवर्तन आवश्यक है । निश्चित रूप से बिहार एक अंधकारमय भविष्य की ओर अग्रसर हो रहा है। हम सभी को मिलकर दलीय प्रतिबद्धता से ऊपर उठकर यह सोचने की जरूरत है कि समय रहते इसे उबरने के लिए क्या किया जा सकता है।

महोदय, आज यह स्थिति हमारी हो गई है। यह कोई पार्टी विशेष की बात नहीं है, किसी सरकार विशेष तक सीमित नहीं है। आज हम किस दिशा में आगे बढ़ रहे हैं ? परंतु इन प्राथमिकताओं के अन्दर स्थानीय उपक्रमों की घोर उपेक्षा हो रही है । स्थानीय उपक्रमों को प्राथमिकता में नीचे के पैमाने पर रखा जा रहा है । यह चिंता का विषय है । मुझे लगता है कि अगर हम सही मायने में ग्रामीण क्षेत्र की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करना चाहते हैं, राज्य की जनता का जीवन स्तर सुदृढ़ करना चाहते हैं तो हमको अपने संघीय ढांचे में नीतिगत परिवर्तन करना चाहिए। जो काम स्थानीय निकायें नहीं कर सकती हैं, पंचायतों और जिला पर्षदों के लिये जो काम संभव नहीं है, वही काम राज्य सरकार करे और जो काम राज्य सरकार के बूते का नहीं है वह काम केन्द्र की सरकार करें। जो कर एवं गैरकर राजस्व इकट्ठा होता है उसके वितरण में भी हमको यही प्राथमिकता रखनी चाहिए कि जितना राजस्व

आता है स्थानीय निकायों, पंचायतों, जिला पर्षदों और राज्य एवं केन्द्र के बीच इसका संवितरण इस प्रकार हो कि नीचे की इकाइयों को उससे अधिक हिस्सेदारी मिले ।

जैसा कि हम लोग भारतीय जनता पार्टी में करते हैं, सदस्यता से जो भी निधि एकत्र होती है उसमें से एक रुपया में 40 पैसा नीचे की स्थानीय इकाइयों को जाता है, 25 पैसा जिला इकाई को जाता है और 25 पैसा का हिस्सा राज्य इकाई के पास रहता है और केन्द्र की इकाई को इसमें से मात्र 10 पैसा ही जाता है । संसाधनों के वितरण का वैसा ही फार्मूला यहाँ भी लागू होना चाहिए । हमारे संसाधनों का भी संवितरण भी कुछ इसी प्रकार होना चाहिए । पंचायती राज संस्थाओं के लिए, जो वित्त निगम बना है, उसको यह विचार करना चाहिए और राज्य सरकार को भी, जो बारहवां वित्त आयोग की टीम आ रही है, उसके सामने इस विषय को रखना चाहिए । केन्द्रीय राजस्व में हम अपने राज्य के लिए अधिकाधिक हिस्सेदारी कैसे ले सकते हैं ? यदि हम आज के स्थापित पैमानों के आधार पर लेना चाहेंगे तो महोदय हम सिर पटककर रह जायेंगे पर यह कदापि संभव नहीं होगा । विगत दस–बारह वर्षों की स्थिति इसका प्रमाण है । केन्द्रीय राजस्व में राज्य की समुचित हिस्सेदारी तब तक संभव नहीं होगी जब तक हम इस संघीय ढांचा की आधारभूत प्राथमिकताओं में नीतिगत परिवर्तन करने की बात न करें और नीचे से ऊपर तक हम इस बात को नहीं उठायें । उसके बिना यह संभव नहीं है ।

महोदय, आज हमलोग पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन की बात करते हैं । उसके आधार पर हमारे शासन–प्रशासन का ढांचा खड़ा है । देश और दुनिया के आर्थिक एडमिनिस्ट्रेशन और बिजनेश मैनेजमेंट के बीच का विरोधाभास खत्म करना होगा। हमको पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन की जगह पब्लिक मैनेजमेंट की बात करनी होगी कि हम पब्लिक मैनेजमेंट के माध्यम से हम आम जनता को अधिक से अधिक राहत और सुविधायें किस प्रकार प्रदान कर सकें । इस दृष्टिकोण से महोदय चाहे राज्य का मूल बजट हो या यह अनुपूरक बजट हो, उसको बनाते समय उसका कार्यान्वियन करते समय हमको केवल यही नहीं देखना चाहिए कि हम कितना पैसा खर्च कर रहे हैं

बल्कि यह भी देखना चाहिए कि वह पैसा हम किस तरह खर्च कर रहे हैं। उस पैसे का कितना उत्पादक व्यय हो रहा है । जब तक हम यह नहीं देखेंगे तब तक न हम रोजगार का सृजन कर पायेंगे, न हम अपने यहाँ गरीबी कम कर पायेंगे, न शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी आधार भूत संरचनाओं के साथ न्याय कर पायेंगे । इसलिए आज जरूरत है कि दुनिया जिस तरह विकास कर रही है उससे और जो स्थानीय प्राथमिकतायें है उनके बीच बिठाया जाय । ग्लोबलाइजेशन में और लोकलाईजेशन में समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया जाए । इस समन्वय में लोकलाइजेशन को प्राथमिकता दी जाए । लोकलाइजेशन के संदर्भ में हम ग्लोबलाइजेशन को देखें और इसके बीच में यथासंभव समन्वय स्थापित करने की चेष्टा करें । इस तरह की हम अर्थ रचना करें, जिससे कि हम जो व्यय करते हैं वह परिमाणात्मक व्यय नहीं होना चाहिए । वह गुणात्मक व्यय होना चाहिए । अगर हम ये प्राथमिकतायें रखेंगे तो शायद आगे आने वाले दिनों में हम अपने बजट में वैसे प्रावधान करने में सफल हो सकेंगे, जिससे सरकार को अनावश्यक अनुपूरक व्यय के लिए व्यय को सांप–सीढ़ी का जैसा खेल लम्बे समय से चला आ रहा है वह कभी खत्म नहीं होगा। 1977 से आज तक के आंकड़े हमलोगों के पास है और हमलोग देखते हैं कि अनुपूरक व्यय की जो परंपरा चली आ रही है वह हमारी अर्थव्यवस्था में घून की तरह लग गई है। लगता है कि जैसे 'बिना मेह' के दौनी में जो स्थिति में होती है, उसी तरह से बिहार राज्य की वित्त व्यवस्था भी बिना मेहनत की हो गई है। अनुपूरक व्यय विवरणी के माध्यम से मूल बजट के अतिरिक्त जो भारी धन राशि सरकार ले रही है उस प्रवृति को दूर करने की दिशा में विचार किया जाना आवश्यक है। जैसे पिछले 8–10 वर्षों में जो अनुपूरक व्यय लिए गए हैं उन अनुपूरकों की राशि तो नहीं ही खर्च हो पाती है, संबंधित शीर्षों में मूल बजट के आवंटन का बड़ा भाग भी सरेंडर हो जा रहा है । इस अनुपूरक व्यय विवरणी के साथ भी ऐसा ही होने वाला है । इसलिए मैं इसका विरोध करता हूँ और सदन से आग्रह करता हूँ कि इस अनुपूरक बजट की मांगों को अस्वीकार करें ।

□ 25 जून 2004
बिहार विधान परिषद्

• • •

अनुपूरक का औचित्य

वर्ष 2005–06 के तृतीय अनुपूरक बजट पर पक्ष और विपक्ष के माननीय सदस्यों ने अपने बहुमूल्य सुझाव दिये हैं और अपने विचार रखे हैं। मुझे उम्मीद है कि सरकार इन सुझावों पर गौर करेगी। मैं केवल दो–तीन बिन्दुओं की ओर सरकार का ध्यान खींचना चाहता हूँ। यह प्रश्न उठ रहा है कि इस अनुपूरक बजट का औचित्य क्या है ? मैं निवेदन करना चाहूँगा कि हम अनुपूरक बजट के माध्यम से एक संवैधानिक वित्तीय प्रक्रिया पर विचार कर रहे हैं। संवैधानिक प्रक्रिया में वार्षिक बजट के अलावे कई अन्य प्रावधानों का भी उल्लेख है, उनमें से एक प्रावधान सरकार द्वारा सदन के समक्ष आवश्यकतानुसार अनुपूरक व्यय विवरणी रखने का भी है। झारखण्ड के बजट मैन्युअल में और इसके पहले बिहार के बजट मैन्युअल में भी यह जिक्र किया गया है कि कोई भी सरकार एक वित्तीय वर्ष में तीन अनुपूरक बजट लायेगी। वर्तमान समय तीसरा अनुपूरक बजट प्रस्तुत करने का होता है। इसलिये अनुपूरक बजट रखने के औचित्य पर सवाल खड़ा करना कहीं से भी उचित नहीं लगता है।

कुछ ऐसी बातें आई हैं कि सरकार ने कितना खर्च किया है और बजट में कितना प्रावधान किया गया है। इस सिलसिले में तीन–चार वर्षों के बजट प्रावधानों का जिक्र हुआ है। इस अनुपूरक बजट को देखने से एक चीज स्पष्ट होती है कि चार वर्षों के अनुभव से सरकार ने काफी कुछ सीखा है। अपने वित्तीय प्रबंधन की क्षमता को बढ़ाया है। इसलिये मैं सदन के माध्यम से सरकार के वित्तीय प्रबंधन देखने वाले अधिकारियों को और इससे संबंधित माननीय मंत्री महोदय को धन्यवाद देना चाहूँगा। इस अनुपूरक बजट को देखने से पता चलता है कि यह राज्य सरकार के वित्तीय कौशल में उतरोत्तर सुधार का एक नमूना है। मैं इस वित्तीय वर्ष के तृतीय अनुपूरक बजट को सदन में बैठे–बैठे सरसरी तौर पर देख रहा था। इसके दो भाग हैं। खण्ड–एक, भाग–एक और खण्ड–एक, भाग–दो। खण्ड–एक, भाग–एक में जो विवरण है उसमें शून्य अंकित है। सरकार ने अपने वार्षिक बजट में जिन योजनाओं

को रखा है, जिन कार्यक्रमों को रखा है उसके अतिरिक्त सरकार अगर कोई नया कार्यक्रम ले रही है तो उसके लिये अतिरिक्त निधि की मांग खण्ड–एक, भाग–एक के माध्यम से सदन के सामने रखी जाती है। इस भाग में शून्य अंकित रहने का मतलब है कि सरकार ने इसके पहले जो वार्षिक बजट बनाया था और बजट के माध्यम से जिन योजनाओं पर व्यय हो रहा है, वह व्यय बजट में निर्धारित सीमा के अन्तर्गत है और वह योजना इस वित्तीय वर्ष के लिये पर्याप्त है। सरकार की योजना बनाने वालों ने ऐसी दूरदर्शिता प्रकट की है कि कोई नई योजना लेने का, व्यय के नये स्रोत खड़े करने का कोई अवसर नहीं आया है।

अब रही बात खण्ड एक, भाग दो की तो खण्ड–एक, भाग–दो के व्यय विवरण को देखने से साफ लगता है कि उस में दिया हुआ एक भी व्यय अनुचित नहीं है। इस विवरण में जो व्यय प्रदर्शित किये गये हैं, वे या तो माननीय राज्यपाल से संबंधित हैं या माननीय न्यायालय के किसी आदेश से संबंधित हैं या माननीय मुख्य न्यायाधीश के लिये किये गये प्रावधानों के बारे में हैं। इसके अलावे इसमें कतिपय ऐसे व्यय का उल्लेख है जो केन्द्रीय योजनाओं के लिये राज्य के अंश से संबंधित हैं। केन्द्रीय, केन्द्र प्रायोजित और केन्द्रीय योजनागत योजनाओं के संबंध में आमतौर पर होता यह रहा है कि दिसम्बर के महीने से राज्य की योजनाओं पर केन्द्र की सरकार या केन्द्र सरकार का योजना आयोग विचार आरम्भ करता था और राज्य सरकार जब अपना बजट विधानसभा में प्रस्तुत करती थी, उस समय तक यह स्पष्ट हो जाता था कि राज्य में इनके माध्यम से केन्द्र राज्य की योजनाओं में कितना धन लगायेगा। अगले वित्तीय वर्ष में अनुमानित सहायता की कितनी राशि राज्य को केन्द्र से मिलेगी। उसके हिसाब से पूरे वित्तीय–वर्ष के हर चौथाई में केन्द्र से मिलनेवाली यह सहायता प्राप्त हो जाया करती थी। परन्तु, आज पिछले एक, डेढ़ साल से केन्द्र सरकार में प्रक्रियात्मक वित्तीय प्रबंधन में कुशलता का अभाव हो गया है। मैं केन्द्र सरकार के वित्त मंत्री, पहले के वित्त मंत्री, और वर्त्तमान प्रधानमंत्री अत्यंत कुशल और जाने माने लोग हैं। परन्तु, जो प्रकियात्मक त्रुटियाँ दिखाई दे रही हैं, उनके कारण से केन्द्र की सहायता का समुचित भाग राज्यों के पास समय

पर नहीं आ पा रहा है। राज्य में जब केन्द्र की सहायता समय पर नहीं आ पाती है तो केन्द्रीय सहायता का जो मैचिंग ग्रान्ट राज्य की सरकार को देना होता है, उसका प्रावधान भी राज्य सरकार अपने वार्षिक बजट में पूरी तरह से नहीं कर पाती है। इस कारण से ऐसा व्यय प्रावधान अनुपूरक बजट के माध्यम से किया जा रहा है। इस तृतीय अनुपूरक में भी केन्द्रीय सहायता के वैसे अंशों का मैचिंग प्रावधान किया गया है। इसलिए मैं कह रहा हूँ, जिन्होंने भी यह तृतीय अनुपूरक बजट विवरण तैयार किया है, इस वित्तीय–वर्ष में वित्तीय प्रबन्धन किया है, वे तारीफ के काबिल हैं।

अध्यक्ष महोदय, मैं एक बात और कहना चाहूँगा कि अनुपूरक व्यय विवरण में सरकार वैसे ही व्यय को समाहित करती है, जिनका प्रावधान वह मूल्य बजट में नहीं कर सकी है अथवा कोई ऐसा आकस्मिक व्यय करने की परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है, जैसा सूखा की स्थिति हो गयी या कोई नई नियुक्तियाँ हो गईं, या राज्य सरकार को न्यायालय ने किसी भुगतान का आदेश कर दिया या राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री का दौरा हो गया हो तो इस तरह की परिस्थितियों में जो व्यय होते हैं, जिनका अनुमान बजट तैयार करते समय नहीं लगाया जा सका है तो उन्हें सरकार अनुपूरक व्यय विवरणी में रखती है। राज्य के वार्षिक बजट में एक कंटिन्जेन्सी फंड का प्रावधान होता है। राजस्व लेखा और पूंजीगत लेखा के अलावे एक आकस्मिकता निधि का प्रावधान वार्षिक बजट में होता है और उस आकस्मिकता निधि में से सरकार इस प्रकार के आकस्मिक व्यय करती है और उसके बाद जब विधानसभा का सत्र होता है, तो वैसे व्यय को विधानसभा में लाकर विधानसभा की संस्तुति उस पर ली जाती है। इसके बाद फिर से कन्टीन्जेन्सी फण्ड का आकार पूर्ववत हो जाता है। वित्तीय वर्ष के अन्त में तृतीय अनुपूरक के माध्यम से सरकार ने यह प्रयास किया है कि एक अप्रील से जो हमारा नया वर्ष प्रारम्भ हो रहा है, उस वर्ष के प्रारम्भ में राज्य की कन्टीन्जेन्सी फंड का आकार 150 करोड़ रुपये बरकरार रहे ताकि सरकार नया वित्तीय वर्ष का आरम्भ होते ही फिर से ऐसे आकस्मिक परिस्थिति में व्यय करने के काबिल हो जाये।

महोदय व्यय संबंधी जो भी सूचनाएं अनुपूरक में दी गई हैं, अगर माननीय सदस्य इन सूचनाओं पर गौर करें, अंकित विवरणों पर गौर करें, तो कहीं से भी आलोचना का कोई स्वर नहीं उभरेगा क्योंकि इसमें एक–एक विवरण बहुत बारीकी से और सफाई से दिया हुआ है। मूल बजट में किस माँग का आकार कितना था, वह अनुदान की मांग के कितने पृष्ठ पर है; प्रथम अनुपूरक और द्वितीय अनुपूरक को मिलाकर अब तक इस माँग के अंतर्गत कितने व्यय का उपबंध हो गया है, इस तृतीय अनुपूरक में सरकार इस मद में कितना व्यय लेना चाह रही है। इस सबका उल्लेख बहुत बारीकी से इस अनुपूरक व्यय विवरणी दस्तावेज में किया गया है। इसलिए मैं सदन से अनुरोध करूंगा कि इन अनुपूरक मांगों को सर्वसम्मति से पारित करे और कटौती का प्रस्ताव जिन माननीय सदस्य ने रखा है, वे उस कटौती प्रस्ताव को वापस ले लें। मुझे लगता है कि कुशल प्रबन्धन की दिशा में सरकार भी सचेष्ट है और विपक्ष भी इसके लिए सचेष्ट है। सदन के भीतर कतिपय मुद्दों पर आम सहमति बननी चाहिए। ऐसे मुद्दों पर सरकार कुशलता से काम कर रही है तो विपक्ष की ओर से भी तारीफ के स्वर उभरने चाहिए।

□ 29 मार्च 2005
झारखंड विधान सभा

• •

भारत के पूर्वी राज्यों की उपेक्षा

इस वर्ष झारखंड सरकार ने लगातार अपना पांचवां बजट इस सदन में प्रस्तुत किया है। जब वित्त मंत्री अपना बजट भाषण पढ़ रहे थे उस समय विपक्ष के लोगों ने व्यवधान डालने की कोशिश की। उन्होंने चेष्टा की कि वित्तमंत्री सदन में बजट भाषण नहीं पढ़ सकें। उनके बहिर्गमन के बाद राज्य के वित्त मंत्री ने अपना बजट भाषण पूरा पढ़ा। इसमें उन्होंने जिन बिन्दुओं को रखा है वे लिखित रूप में हमसबों के सामने है। बजट भाषण में वर्णित तथ्यों से स्पष्ट है कि झारखंड राज्य उत्तरोतर प्रगति की दिशा में आगे की ओर बढ़ने का प्रयास कर रहा है।

किसी राज्य का बजट केवल राज्य सरकार के आय–व्ययक के निर्जीव आंकड़ों का पुलिंदा ही नहीं होता है बल्कि यह राज्य की विकास नीति को भी प्रतिबिम्बित करता है। माननीय वित्त मंत्री ने अपने बजट भाषण में कहा है कि राज्य की स्थापना के समय इस राज्य का विकास दर 5 प्रतिशत प्रतिवर्ष था। इस बजट से उन्होंने उम्मीद की है कि राज्य 6.25 प्रतिशत का विकास दर इस वित्तीय वर्ष में हासिल कर लेगा। वास्तव में 5 प्रतिशत और 6.25 प्रतिशत के विकास दर में कोई बहुत बड़ा अंतर नहीं है। हमारे देश के पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने देश के लिये 8 प्रतिशत वार्षिक विकास दर हासिल करने का लक्ष्य रखा था। उनके शासनकाल में कई क्षेत्रों की आर्थिक गतिविधियों में लक्ष्य से अधिक विकास की दर हासिल की गयी। वर्तमान केंद्र सरकार भी विकास ऊँचा दर हासिल करना चाहती है। गुजरात ने विकास दर का लक्ष्य राष्ट्रीय औसत से काफी ऊंचा रखा है। करीब 10.5 प्रतिशत विकास का दर गुजरात के लिए रखा गया है। अगर गुजरात जैसे राज्य इस तेजी से विकास करेंगे तो जो राज्य सामाजिक आर्थिक रूप से पिछड़े हैं, जिन राज्यों की विकास की गति काफी धीमी है, उनकी प्रगति की रफ्तार को विकसित राज्यों के विकास दर के साथ जोड़कर औसत निकालने पर भी विकास दर का राष्ट्रीय औसत 8 से 8.5 प्रतिशत तक प्राप्त किया जा सकेगा। अगर विकास का इतना दर झारखंड हासिल कर ले तो शायद अगले 20 वर्षों में यह राज्य भी

विकसित राज्यों की श्रेणी में आ जायेगा। झारखंड के अंदर विकास की प्रबल संभावनाएं हैं। परन्तु विकास के लिए आधारभूत संरचना की घोर कमी है। मुख्य रूप से यही कारण है कि हमारी आकांक्षा में और हमारी उड़ान में कोई तालमेल नहीं रहता है। झारखंड एक संसाधन समृद्ध राज्य है, मगर यहाँ के अधिकांश लोग गरीब हैं। जहाँ कहीं भी इस राज्य की चर्चा होती है वहाँ कहा जाता है कि यह राज्य ''संपन्नता के बीच में विपन्नता'' का एक विचित्र उदाहरण है। Poverty in the midst of Plenty झारखंड की पहचान बन गई है।

प्राकृतिक संसाधनों के मामले में झारखंड एक समृद्ध राज्य जरूर है, मगर प्रति व्यक्ति आय के मामले में या राष्ट्रीय आय में हिस्सेदारी के मामले में यह राज्य इसके अनुरूप नहीं दिखाई दे रहा है। निश्चित रूप से विरासत में इस राज्य को एक ऐसी अर्थव्यवस्था मिली थी जिसके कुप्रभाव आज भी विद्यमान है। बजट पर जब सदन में विस्तार से चर्चा होगी, अनुदान की मांगों पर हमलोग विचार करेंगे तो ये बातें सामने आएंगी कि आज भी इस राज्य के उपर कर्ज का बहुत बड़ा बोझ है। मैं कहना चाहता हूँ राज्य सरकार से कि राज्य सरकार डेब्ट स्वैप पर ध्यान दे। केन्द्र की सरकार से या अन्य वित्तीय संस्थानों से अधिक सूद पर जो कर्जे पूर्व में हासिल किये गये हैं, उन्हें कम सूद पर मिलने वाले कर्ज लेकर चुका दिया जाय। आज सूद की दर बाजार में पहले से काफी कम हो गयी है। अगर सरकार बाजार से आज की ब्याज दर पर अधिक कर्ज ले ले और पहले के अधिक ब्याज दर पर लिये गये कर्जों को चुका दे तो इससे राज्य की आर्थिक व्यवस्था में सुधार की बहुत बड़ी गुंजाइश होगी।

मैने पिछले चार–पांच वर्षों के झारखंड राज्य के बजट का अध्ययन किया है। मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि इस बार जो बजट सदन के सामने रखा गया है, वह बजट पिछले चार बजटों के अनुभवों के आधार पर तैयार किया गया प्रतीत होता है। इसमें वित्तीय प्रबंधन की कुशलता तो दिखायी पड़ती है, परन्तु सरकार द्वारा विकास का, विकास की दर का जो लक्ष्य रखा गया है, वह महत्वाकांक्षी नहीं है। राज्य का योजना दस्तावेज भी मैं देख रहा था। उस योजना दस्तावेज से भी यह बात साफ नहीं हो पाती है कि सरकार अपने वार्षिक विकास की दर क्यों

6.5 प्रतिशत ही रख रही है ? क्यों हम यह लक्ष्य और अधिक नहीं रख रहे हैं? पंचवर्षीय योजनाओं में जहाँ से हमको बड़ी सहायता राशि आनी चाहिए वह राशि पाने के लिए प्राथमिकता के क्षेत्रों के अनुसार हम पर्याप्त प्रयास कर रहे हैं कि नहीं? यह इस बजट से पता नहीं चलता है ।

यह राज्य की पंचवर्षीय योजना से भी पता नहीं चलता है । क्योंकि जब हम राज्य की पंचवर्षीय योजना बनाते हैं तो आमतौर पर वह पंचवर्षीय योजना एक दीर्घकालीन योजना का अंग होनी चाहिए । पहले एक बार बिहार में भी 1974–75 में 25 वर्षों के आगे की दीर्घलक्षी योजना बनायी गयी थी । वर्ष 2000 तक की योजना बनायी गयी थी । उस समय बिहार में यह प्रयास होता था, आज भी विकसित राज्यों में यह प्रयास होता है कि 20–25 वर्ष आगे की दीर्घलक्षी योजनाएँ सरकार बनाये । उन योजनाओं के लक्ष्य के अनुरूप पंचवर्षीय योजना बनाए । पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य हासिल करने के लिए प्रत्येक वर्ष की वार्षिक योजना बनाए और प्रत्येक वर्ष की वार्षिक योजना की जो सफलता होती है या विफलता होती है, उसका आकलन करके आगे के वर्षों के लिये निर्धारित पंचवर्षीय या दीर्घलक्षी योजनाओं के लक्ष्यों में संशोधन करे । कहीं कमी दिखे तो उनकी भरपाई करने का प्रयास करे ताकि राज्य योजनाबद्ध तरीके से उत्तरोत्तर विकास की दिशा में आगे बढ़ सके और महत्वाकांक्षी विकास दर का निर्धारित लक्ष्य हासिल किया जा सके ।

झारखंड राज्य के पास जितने प्राकृतिक संसाधन हैं, उसके बारे में हम सभी जानते हैं । उनका जिक्र करना यहाँ प्रासंगिक नहीं होगा । उन सभी संसाधनों को यदि हम परिष्कृत करें, उनका मूल्य संवर्द्धन करें और मूल्य संवर्द्धन का लाभ इस राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में समानुपातिक एवं न्यायिक रूप से वितरित करते हुए क्षेत्रीय विषमता को दूर करने का प्रयास करें और यह कोशिश करें कि हमारी जितनी भी परियोजनाएँ चल रही हैं, वे चाहे गैर योजना क्षेत्र की हों, कल्याण के क्षेत्र की हों या योजनात्मक विकास के क्षेत्र की हों, सभी परियोजनाओं का लक्ष्य यह होना चाहिए कि जमीनी स्तर पर पूंजी निर्माण हो । राज्य के चहुँमुखी विकास की दिशा में यह एक ठोस कदम होगा ।

अध्यक्ष महोदय, यहाँ के बैंकों का आँकड़ा भी मैं कई वर्षों से देख रहा हूँ। यहाँ के कई क्षेत्र ऐसे हैं जो काफी पिछड़े हुये हैं इनमें गुमला जिले का चैनपुर तथा चतरा एवं अन्य जिलों के भी कई क्षेत्र हैं । ऐसे क्षेत्र तो पिछड़े हैं, पर वहाँ के स्थानीय बैंकों में काफी राशि जमा दिखाई पड़ती है । अगर हम केवल उस राशि के आधार पर आकलन करेंगे तो पता चलेगा कि उस क्षेत्र में, उस जिले में जो बैंक हैं वे काफी पैसा इकट्ठा करते हैं। प्रथम दृष्टया तो लगता है कि शायद यह लघु बचत का पैसा हो सकता है या मजदूर किसान अपना पेट काटकर आगे के अपने कार्यक्रमों के लिए जो पैसा बचाता है वही पैसा हो सकता है। परन्तु वास्तव में ऐसा है नहीं । इसका विश्लेषण करने पर पता चलता है कि वहाँ के बहुत सारे लोग बाहर रहते हैं, बाहर में कमाकर वहाँ से अपने यहाँ पैसा भेजते हैं। वही पैसा वहाँ के बैंकों में जमा के रूप में परिलक्षित होता है। जो ऑडिटर ऑडिट करने जाते हैं, वे पता नहीं इसको देखते हैं या नहीं । वे तो केवल एक रिपोर्ट दे देते हैं। जिस तरह से चीन में या भारत में जहाँ के बहुत सारे प्रवासी नागरिक देश के अन्य हिस्सों में या विदेशों में रहते हैं और वे अपनी कमाई का एक बहुत बड़ा हिस्सा अपने देश में भेजते हैं उसका उपयोग वहाँ की उन्नति में होता है । इस राज्य के भी कई क्षेत्र ऐसे हैं कि जहाँ के लोग सेना या अन्य नौकरियाँ और धंधों के सिलसिले में बाहर रहते हैं और वहाँ से कमाकर धन यहाँ भेजते हैं । इस कारण ऐसे क्षेत्रों के बैंकों में यह पैसा तो दिखता है, परन्तु यह उन्नति वास्तविक उन्नति नहीं कही जाएगी । वास्तविक उन्नति तब होगी जब हम यहाँ उन आए हुए पैसों का सही उपयोग अपने बजट में करें, लघु बचत की हिस्सेदारी के रूप में करें , बैंकों की साख जमा अनुपात को ध्यान में रख कर करें और जमीन पर पूंजी का निर्माण करें । मैं सरकार से यह कहना चाहूँगा कि....

अध्यक्ष : माननीय सदस्य सरयू राय जी, गुजरात का जो विकास दर है उसका अधिक होने का कारण विभिन्न देशों से वहाँ के आप्रवासी भारतीयों द्वारा पैसा भेजा जाना भी एक बहुत बड़ा फैक्टर है ।

सरयू राय : महोदय, वह भी एक बहुत बड़ा कारण है । वह समुद्र के किनारे का एक तटवर्ती राज्य है । बन्दरगाह की सुविधा उनको है । उनके पास जो निकटवर्ती

बंदरगाह हैं वे सक्रिय हैं। हमलोगों का राज्य एक लैन्ड लॉक स्टेट है। हमारे यहाँ से 250-200 किलोमीटर की दूरी पर जो बंदरगाह हैं-वे बंदरगाह उतने सक्षम नहीं हैं। इसलिए पिछले पाँच वर्षो से भारतीय जनता पार्टी की केन्द्र की सरकार ने, एन. डी. ए. की सरकार ने प्रयास किया था, दक्षिण एशिया के समृद्ध देशों के साथ व्यापार बढ़ाने का उन देशों के साथ लेन-देन बढ़ाने का ताकि भारत व्यापार के लिये केवल यूरोपीय देशों और अमेरिका पर ही निर्भर न रहे। इसलिए वाजपेयी जी अपने पिछले पाँच वर्ष के कार्यकाल में तीन बार दक्षिण एशियाई देशों की यात्रा पर गये और आठ बार दक्षिण एशिया और भारत के व्यापारिक संगठनों ने एक-दूसरे के यहाँ अपनी बैठकें की, अपना सम्मेलन किया। हमारे समीप जहाँ बंदरगाह हैं उस क्षेत्र को ''बे आफ बंगाल रिम'' कहते हैं। अगर हम भारत का नक्शा देखें तो भारत और म्यांमार के बीच एक रिम जैसा इलाका बना हुआ दिखता है। उसके दूसरी तरफ दक्षिण पूर्वी एशिया के देश हैं। आज उन तीन-चार देशों को 'एशियन टाइगर' देश कहा जाता है। जब भारत आजाद हुआ था 1947 में तो उनकी उन्नति और उनकी आर्थिक प्रगति भी उसी स्तर पर थी जहाँ भारत की थी। परन्तु वे देश आज हमसे बहुत आगे बढ़ गये हैं। 'एशियन टाइगर' देशों की एक श्रेणी बन गई है दुनिया में। इन देशों को लेकर हम भी कल्पना करते हैं कि हमारा भारत देश भी एशिया में प्रगति के उनके स्तर को छू सके।

जब इन 'एशियन टाइगर' देशों और दक्षिण पूर्व एशिया के अन्य देशों के साथ भारत का व्यापार बढ़ेगा और झारखंड राज्य के निकटस्थ पश्चिम बंगाल और उड़ीसा में जो बंदरगाह हैं, वे बंदरगाह सक्षम और सक्रिय नहीं रहेंगे तो उन देशों के साथ भारत का व्यापार विशाखापत्तनम, त्रिवेन्द्रम, चेन्नई होते हुए कांडला तक के बंदरगाहों से होगा। आज भी विदेश व्यापार का जो माल इन बंदरगाहों पर उतरता है वह सड़क अथवा रेल मार्ग से हमारे यहाँ आता है। अभी दो दिन पहले हमलोग झारखंड के मुख्यमंत्री श्री अर्जुन मुण्डा के साथ अहमदाबाद गये थे। गुजरात के मुख्यमंत्री ने हमलोगों से कहा कि झारखंड भी चाहे तो हमारे यहाँ बंदरगाह की सुविधा ले ले। हम कैप्टिव पोर्ट, डेडिकेटेड पोर्ट झारखंड को दे सकते हैं। नेशनल

हाईवे आज जिस तरह की गुणवत्ता के साथ बन रही है उसे देखते हुए गुजरात के बंदरगाह पर उतरनेवाले माल को झारखंड आने में बहुत समय नहीं लगेगा। मैंने उनसे कहा कि आपकी यह पहल और आपका यह कथन बहुत सराहनीय है परंतु झारखंड से मात्र ढाई-तीन सौ किलोमीटर की दूरी पर पश्चिम बंगाल और उड़ीसा में दो-दो बंदरगाह हैं। अगर ये बंदरगाह आर्थिक और व्यापारिक रूप से सक्रिय और सक्षम हो जायें तो इसका लाभ झारखंड और पड़ोसी राज्य आसानी से उठा सकेंगे और दक्षिण-पूर्वी एशिया के कई देशों से भारत के संभावित व्यापार का बहुत बड़ा लाभ झारखंड को सीधा मिल सकता है। आज जरूरत है कि केन्द्र सरकार से वार्ता कर इस दिशा में शीघ्र आवश्यक कदम उठाया जाय।

महोदय, झारखंड पूर्वी भारत के चार-पाँच राज्यों के विकास का केन्द्र बन सकता है। इसके चारों तरफ बिहार, बंगाल, उड़ीसा और छत्तीसगढ़ जैसे राज्य हैं। अभी हाल ही में पूर्वोत्तर क्षेत्रीय परिषद की बैठक दिल्ली में हुई है। वह बैठक भी मेरी समझ से झारखंड के आर्थिक हितों के मामले में उतनी कामयाब नहीं रही है। अध्यक्ष महोदय, 1983 में रिजर्व बैंक द्वारा एक एस.आर. सेन कमिटी बनायी गई थी। एस.आर. सेन देश के एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री हैं, उनकी अध्यक्षता में यह कमिटी इसलिए बनायी गयी थी कि बिहार, बंगाल, उड़ीसा, पूर्वी उत्तरप्रदेश आदि भारत के पूर्वी राज्य कृषि विकास के क्षेत्र में क्यों पीछे जा रहे हैं इसकी पड़ताल हो सके। हमारे देश के दूसरे क्षेत्रों में पिछले चार दशकों से कृषि क्षेत्र में हरित क्रांति हो रही है और पूर्वी भारत के ये राज्य पीछे जा रहे हैं। 1984 में इस कमिटी ने अपनी रिपोर्ट सौंप दी थी। आज तक वह रिपोर्ट लागू नहीं हुई। उसकी अनुशंसाओं पर अमल नहीं हुआ। उस रिपोर्ट का एक चैप्टर ट्राईबल फार्मिंग भी है जो झारखंड के लिये अति प्रासंगिक है। इस रिपोर्ट का आठ-दस पन्ना मैंने फोटो-कॉपी कराकर काफी दिनों पहले मुख्यमंत्री जी को दिया था कि इसके आधार पर सरकार को यह प्रयास करना चाहिए कि किस तरह से इस राज्य में औद्योगिक विकास के साथ कृषि क्षेत्र का भी विकास किया जा सकता है।

यह निवेदन करने का मेरा एक ही तात्पर्य है कि पूर्वी भारत का क्षेत्र ऐतिहासिक

रूप से आर्थिक और ढांचागत पिछड़ापन का शिकार रहा है । इसके पिछड़ेपन के कई कारण हैं । इनमें से एक मुख्य कारण यह है कि इस क्षेत्र की लगातार उपेक्षा होती रही है। आज भी जब हम अपने राज्य का पिछले पाँच वर्षों का बजट देखते हैं तो केन्द्रीय करों में इस राज्य के हिस्से की क्या स्थिति है इसका पता चल जाता है । स्पष्ट हो जाता है कि इस राज्य की प्रगति की ओर से केन्द्र सरकार किस प्रकार आंख मुंदे हुई है । किस प्रकार इस राज्य की उपेक्षा की जा रही है । इस राज्य के हर वर्ष के बजट के सभी शीर्षों के अंतर्गत व्यय और आय मद में बढ़ोत्तरी हो रही है । योजना मद के आय-व्यय में भी बढ़ोत्तरी हो रही है । परंतु इस हिसाब से केन्द्रीय करों में राज्य का जो हिस्सा है उसमें लगातार कमी आती जा रही है । 2001-02 के बजट में राज्य की कुल आय में केन्द्रीय करों का हिस्सा कुल बजट का 26.69 प्रतिशत था। अगले वर्ष 2002-03 में यह घटकर 25.41 प्रतिशत हो गया । उसके बाद 2003-04 में केन्द्रीय करों का हिस्सा घटकर 23.27 प्रतिशत हो गया । 2004-05 के बजट में यह और घटा और घटकर 22.73 प्रतिशत हो गया। माननीय वित्त मंत्री ने अभी जो बजट सदन के सामने रखा है उसमें केन्द्रीय करों का हिस्सा घटकर 21.16 प्रतिशत हो गया है। यानी प्रतिशत के अनुसार देखा जाय तो पिछले चार वर्षों में केन्द्रीय करों में इस राज्य की हिस्सेदारी काफी घटी है। 5 प्रतिशत से ज्यादा घटी है, उत्तरोत्तर घटती जा रही है । मेरा यह कहना है कि यह राज्य उन्नति कर रहा है, यह राज्य अपने राज्य करों के संग्रह में वृद्धि कर रहा है, राज्य बनने के बाद से राज्य के कर राजस्व में 42 प्रतिशत की वृद्धि हुई है । इस अवधि में गैर-कर राजस्व में भी 29 प्रतिशत की वृद्धि हुई है । विडम्बना है कि एक ओर नवगठित झारखंड राज्य अपने संसाधनों में वृद्धि कर रहा है तो दूसरी ओर केन्द्र सरकार से केन्द्रीय करों एवं केन्द्रीय अनुदानों के रूप में जितनी राशि इस राज्य को मिलनी चाहिये थी उसमें उत्तरोत्तर कमी हो रही है । इस राशि में से इस राज्य को समुचित हिस्सेदारी नहीं मिल रही है । इसमें लगातार हो रही कमी चिन्ता का विषय है। मुझे लगता है कि माननीय वित्त मंत्री को और माननीय मुख्य मंत्री को केन्द्र के साथ इस बारे में बातचीत करनी चाहिए । अपने यहाँ ऐसी आर्थिक क्षमता बढ़ानी चाहिए जिससे जमीनी स्तर पर पूंजी का निर्माण हो सके ।

आज हम अपने राज्य की विकास दर की बात करते हैं या अपने यहाँ के प्रति व्यक्ति आय की बात करते हैं तो यह प्रति व्यक्ति आय भी बहुसंख्यक जनता की वास्तविक आय को प्रतिबिम्बित नहीं करती है। क्योंकि इस राज्य का एक बहुत बड़ा हिस्सा केन्द्रीय उपक्रमों और निजी औद्योगिक उपक्रमों से आच्छादित है । वह चाहे सी.सी.एल, बी.सी.सी.एल. जैसी खनन की कंपनियाँ हों या टाटा जैसे उद्योग हों या केन्द्र सरकार के अन्य उपक्रम हों, इस तरह का एक अलग इलाका है झारखण्ड में जहाँ प्रति व्यक्ति आय काफी अधिक है और अन्यत्र आम जनता की आय इससे काफी कम है । यह सब मिलाकर राज्य के लिये हम एक औसत राष्ट्रीय अथवा प्रतिव्यक्ति आय निकालते हैं । इस मामले में यह प्रयास होना चाहिए कि जो क्षेत्रीय विषमता है हमारे विभिन्न जिलों में, विभिन्न प्रखंडों में, हम उनका आकलन करें और उसके अनुसार हम अपने आने वाले उद्योगों का, आर्थिक गतिविधियों का राज्य के विविध क्षेत्रों में विवेकपूर्ण संवितरण करें, पूँजी का न्यायपूर्ण वितरण करें ताकि इस राज्य में समृद्धि चारों तरफ फैले । उत्पादन का फल सर्वत्र पहुँचे ।

हमारे संविधान में भी जो नीति निदेशक तत्व हैं उसमें लिखा हुआ है कि जो हमारी आमदनी है, जो हमारा उत्पादन है उसका न्याय पूर्ण वितरण सुनिश्चित होना चाहिए और यह कराना राज्य का दायित्व है । यह सरकार इस दिशा में प्रयास कर रही है । जो विभिन्न सामाजिक कार्यक्रम हैं, कृषि के कार्यक्रम हैं, सहकारिता के कार्यक्रम हैं, शिक्षा और स्वास्थ्य के कार्यक्रम हैं उन कार्यक्रमों के माध्यम से सरकार अपने संसाधनों का न्यायपूर्ण वितरण करने का प्रयास कर रही है । परंतु जब तक केन्द्र सरकार ऐसे प्रयत्नों के साथ पर्याप्त सामंजस्य नहीं करेगी, तालमेल नहीं करेगी या कई मामलों में हम उनको बाध्य नहीं करेंगे तब तक यह राज्य अपेक्षित उन्नति नहीं कर सकता है । हमारे जो प्राकृतिक संसाधन हैं उन प्राकृतिक संसाधनों को विकसित करने के लिए निजी क्षेत्र से बहुत बड़ी पूँजी आने की उम्मीद है । उस पूंजी को लाने में केन्द्र सरकार राज्य सरकार का सहयोग नहीं करेगी तो राज्य के विकास की गति उस रूप में आगे नहीं बढ़ेगी । मुझे लगता है कि झारखंड सरकार को भी अगले पाँच वर्ष का एक महत्वाकांक्षी लक्ष्य तय करना चाहिए । जिस तरह से भारत

की सरकार ने गुजरात को राष्ट्रीय औसत से अधिक विकास दर का लक्ष्य दिया है उसी तरह से झारखंड राज्य को भी आर्थिक विकास की दर राष्ट्रीय औसत से अधिक रखनी चाहिए। इसके लिए केन्द्र सरकार नहीं मानती है तो हमें केन्द्र सरकार पर भांति-भांति का दबाव देना पड़ेगा। यहाँ के केन्द्रीय उपक्रम पुराने नियम-कानून पर आधारित हैं। आज केन्द्र सरकार ने बिजली ऐक्ट में परिवर्तन कर दिया है, परंतु कोल बियरिंग ऐक्ट वैसे का वैसा है। यह हमारे लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, जब तक इसमें बदलाव नहीं होगा और राज्य सरकार की भी इसमें पर्याप्त हिस्सेदारी नहीं होगी तब तक हम अपनी खनिज क्षमता का विकास, इस पर आधारित ऊर्जा का विकास अपने राज्य के सर्वांगीण विकास के लिये नहीं कर सकेंगे।

आज ही सदन में सवाल आ रहे थे कि सरकार ने कई ऐसे काम किये हैं जो उपयोगी नहीं हैं। विशाल भवनों को वहाँ बना दिया गया है जहाँ जरूरत नहीं है। मुझे लगता है कि इन सबकी समीक्षा होनी चाहिए कि हमारे कल्याण के क्षेत्र में जो धन आ रहा है केन्द्र से या अन्य जगहों से उनको भी हम इस तरह से लगायें कि वह उत्पादक सिद्ध हों। गैर योजना मद का हमारा खर्च भी हमारे उत्पादन को बढ़ाने में सहयोग करे। पिछले पाँच वर्षों में बहुत अधिक सड़कें बनी हैं। इनको और भी अच्छा बनाने की गुंजाइश है। ये सड़कें विकास को और हमारी आर्थिक उन्नति को पूरे राज्य में वितरित करने का एक बहुत बड़ा साधन सिद्ध होंगी। इसके पहले भी मैंने कहा था और आज भी कहता हूँ कि हमारी जो दसवीं पंचवर्षीय योजना 2002 से 2007 के लिये बनी है इस सरकार को इसकी पुनर्समीक्षा करनी चाहिए उसमें और अधिक बड़े लक्ष्य रखने चाहिए। उसका जो सेक्टोरल डिस्ट्रीब्यूशन है उसमें बदलाव करना चाहिए। क्या हम यह कर सकेंगे ?

पिछले कई वर्षों से राज्य की योजना औेर बजट में तालमेल का अभाव दिख रहा था। इस वर्ष योजना और बजट में कुछ हद तक तालमेल दिखायी पड़ रहा है। इस प्रक्रिया को मुकम्मल करना चाहिए। हमारी जो योजनाएं बने उन्हीं के अंतर्गत हमारा बजट भी बने। हमारा योजना उद्व्यय और बजटीय प्रावधान समरूप होना चाहिये। जितना योजना उद्व्यय निर्धारित है-अगर बजट में उसको बढ़ाने की

गुंजाइश होती है तो केन्द्र सरकार से बात करके अपनी योजनाओं को और अधिक महत्वाकांक्षी लक्ष्य के लिए समर्पित करने हेतु उनमें आवश्यक फेर-बदल की तैयारी की जानी चाहिए।

झारखण्ड एक नया राज्य है। विकास के कदम को पीछे खींचने वाली जो परंपरागत कार्य संस्कृति इस नये राज्य को विरासत के रूप में मिली है, जो कठिनाइयाँ मिली हैं, जो दिक्कतें मिली हैं, उनपर पार पाना भी हमारे लिए परम आवश्यक है। इन पर पार पाने के लिए, इन चुनौतियों का सामना करने के लिये हमको शक्ति एवं संसाधन संचय करने की दिशा में आवश्यक प्रयत्न करना होगा। मुझे लगता है इस बजट की राशि अगर पूरी तरह से खर्च हो जाती है तो अगले वर्ष सरकार और भी महत्वाकांक्षी बजट बना सकेगी। जिस तरह से हम अपने कर और गैर कर प्राप्तियों में बढ़ोत्तरी कर रहे हैं उसके मद्देनजर जरूरत है कि योजना आयोग के साथ केवल पंचवर्षीय और वार्षिक योजना का आकार निर्धारण करने के समय ही नहीं बल्कि निरंतर तालमेल रखा जाय और बताया जाय कि हम अपनी क्षमता का उपयोग किस भांति बेहतर तरीके से कर रहे हैं और इस क्षमता में वृद्धि के लिये आगे हम क्या करना चाहते हैं। अगर झारखंड की संसाधन क्षमता के विकास में केन्द्र सरकार अपेक्षित सहयोग करती है तो इससे राज्य का विकास दर बढ़ेगा, राष्ट्रीय विकास दर भी बढ़ेगा और देश की शान भी दुनिया भर में ऊंची होगी। देश के विकास में झारखंड सराहनीय योगदान करने की स्थिति में आ जायेगा। इसलिए न केवल झारखंड प्रदेश की प्रगति के लिए बल्कि राष्ट्रीय विकास दर बढ़ाकर देश का मस्तक दुनिया में ऊँचा उठाने के लिए भी यह जरूरी है कि झारखंड तेजी से विकास करे और केन्द्र सरकार इसमें भरपूर सहयोग करे।

□ 16 जून 2005
झारखण्ड विधान सभा

• • •

वयं पंचाधिकम् शतम्

राज्य सरकार ने सदन के सामने इस वर्ष 2005-06 के वार्षिक बजट पर विनियोग विधेयक रखा है। इस सत्र में हमलोग अभी तक विभिन्न विभागों की मांगों पर विचार करते आये हैं। अनुदान की मांगों पर चर्चा के दौरान दोनों ही पक्षों से सदन में राज्य की बेहतरी के लिए सुझाव आये हैं। वे सभी सुझाव सरकार के सामने हैं। इस विनियोग विधेयक में सरकार ने 12,423 करोड़ रुपया के विनियोग का प्रस्ताव सदन के सामने रखा है और इसे राज्य की संचित निधि से व्यय करने की अनुमति मांगी है। इस विनियोग विधेयक पर सरसरी नजर डालने से पता चलता है कि राज्य सरकार को एक बहुत बड़ी राशि अनुत्पादक कार्यों पर खर्च करने के लिए बाध्य होना पड़ रहा है। इसमें ब्याज अदायगी पर 923 करोड़ रुपये, ऋण शोधन पर 332 करोड़ रुपये, पेंशन पर 774 करोड़ रुपये इत्यादि शामिल हैं। सब मिलाकर करीब 2030 करोड़ रुपये की राशि ऐसी है जिसे सरकार को इसलिए खर्च करनी पड़ रही है कि राज्य बनने के पहले की सरकारों द्वारा लिये गये अविवेकपूर्ण निर्णयों के कारण यह बोझ नवगठित झारखंड राज्य के ऊपर आ गया है। विरासत में मिला यह वित्तीय बोझ इतना भारी है कि वार्षिक बजट के कुल बारह हजार चार सौ तेईस करोड़ रुपये में से करीब दो हजार करोड़ रुपये ऐसे अनुत्पादक गैरयोजना मदों के ऊपर खर्च करना पड़ रहा है।

इसके बाद प्राथमिकता के क्षेत्रों जैसे ग्रामीण विकास पर साढ़े पंद्रह सौ करोड़ रूपये, शिक्षा पर साढ़े चौदह सौ करोड़ रुपये और कल्याण कार्यक्रमों पर भी करीब साढ़े छः सौ करोड़ रुपये खर्च करने का प्रावधान सरकार ने इस विनियोग विधेयक में रखा है। इन सबों को मिला दें तो व्यय की यह राशि करीब करीब 3639 करोड़ रुपये होती है। राज्य सरकार को विरासत में मिले वित्तीय भार और सेवा क्षेत्र की प्राथमिकताओं पर होने वाले व्यय को हम जोड़ते हैं तो इस बजट और विनियोग की करीब आधी राशि ऐसे मदों में खर्च हो रही है। शेष बची आधी राशि सरकार उन प्राथमिकताओं पर खर्च करने जा रही है जिनकी चर्चा हमलोग इस सत्र में बजट पर वाद-विवाद के दौरान करते आये हैं।

मैं विनियोग विधेयक के पक्ष में बोलने के लिए खड़ा हुआ हूँ। मैं सदन को यह बताना चाहता हूँ कि पिछले चार वर्षों में और इस वर्ष भी लगातार सरकार ने अपने वित्तीय संसाधनों में बढ़ोतरी की है और राजस्व एवं पूँजीगत व्यय में भी उत्तरोत्तर बढ़ोतरी कर रही है। गैरयोजना मद के व्यय में भी बढ़ोतरी हुई है और योजना मद में भी। गैर योजना मद के अंतर्गत गैर योजना उत्पादक मद के व्यय भी बढ़े हैं। राज्य योजना मद के और केन्द्रीय योजनागत योजना तथा केन्द्र प्रायोजित योजनाओं के व्यय में भी वृद्धि हुई है। इसके बावजूद पिछले तीन-चार वर्षों से राज्य सरकार जितना योजना उद्व्यय निर्धारित करती थी और बजट में उसके लिये जितना प्रावधान करती थी वह पूरा का पूरा खर्च नहीं कर पाती थी। इस बार सरकार के सामने यह चुनौती है कि जितना महत्वाकांक्षी लक्ष्य सरकार ने अपने सामने रखा है उसे प्राप्त करने के लिये सरकार इस वर्ष के योजना उद्व्यय की पूरी राशि खर्च करे और उपयोगी तरह से खर्च करे।

जबसे आम चुनाव के बाद द्वितीय झारखंड विधान सभा का गठन हुआ है और काफी जद्दोजहद के बाद यह नयी सरकार बनी है तबसे इस सदन के सदस्य के रूप में मैं बड़ी बारीकी से इस सरकार की कार्य संस्कृति को देख रहा हूँ। विरासत में मिली किसी चीज से पीछा छुड़ा पाना बड़ा कठिन होता है। जिस तत्परता के साथ इस सरकार ने पुरानी कार्य संस्कृति से छुटकारा पाने का प्रयास किया है, एक नयी कार्य संस्कृति और विकास की नई राह कायम करने का काम शुरू किया है, उसको देखकर ऐसा लगता है कि इस बार के बजट के आधार पर सरकार जो विनियोग सदन से हासिल करने जा रही है निश्चित रूप से उसमें व्यय का प्रस्तावित लक्ष्य पूरा होगा। इस सरकार में विकास कार्यों को अंजाम देने की जैसी रफ्तार है उससे लगता है कि वित्तीय वर्ष के बीच में ही अनुपूरक व्यय विवरणी लाकर सरकार को सदन से अतिरिक्त धन की याचना न करनी पड़े ताकि विकास के जिस महत्वाकांक्षी लक्ष्य को पूरा करने और उसे सरजमीन पर उतारने का संकल्प सरकार ने लिया है और सदन के सामने सरकार ने विकास की जैसी प्रतिबद्धता व्यक्त की है उसे वाकई सरजमीन पर उतारा जा सके।

मुख्यमंत्री जी हाल ही में कुछ राज्यों के दौरे पर गये थे । सौभाग्य से मैं भी उनके साथ उत्तर प्रदेश और गुजरात राज्यों में गया था। वहाँ की सरकारों द्वारा विकास के कार्यों में जितनी रूचि ली जा रही है और जिस तरह से वहाँ शासन–प्रशासन द्वारा विकास का कार्य योजनाबद्ध ढंग से किया जा रहा है, उसी प्रकार से अपने विकास कार्यक्रमों को यह सरकार अपने यहाँ भी लागू कर सकती है । मुझे लगता है कि इस बारे में पूरा सदन एकमत होगा । कई बार ऐसे अवसर आते हैं जब सदन में पक्ष और विपक्ष की सीमा रेखा मिट जाती है । ऐसे अवसरों को बढ़ाना और इनका सदुपयोग करने की कला विकसित करना भी सरकार की कार्य संस्कृति का एक अंग होना चाहिये । प्रसन्नता की बात है कि हमारे माननीय मुख्यमंत्री ने इसे स्वीकार किया है । उनका मानना है कि राज्य के विकास कार्यों को एकांगी दृष्टि से नहीं देखा जाय । जितनी कठिन चुनौतियां इस राज्य में सरकार के सामने हैं, उनके समाधान के प्रयासों में विपक्ष को भी सम्मान पूर्वक साथ लिया जाय, विपक्ष का रचनात्मक सहयोग प्राप्त किया जाय । जितनी गम्भीर चुनौतियां राज्य के सामने हैं उन पर पार पाना किसी एक दल और एक सरकार के बूते की बात नहीं है । मुझे लगता है कि सदन को इस पर एकमत होना चाहिए कि हमारे सामने विकास की जो चुनौतियाँ हैं, उनका हम मिलजुल कर सामना करें, विभिन्न मुद्दों पर परस्पर सहमति के बिन्दुओं और परस्पर अनुकूलता के क्षेत्र को बढ़ायें । पक्ष और विपक्ष दोनों ही राज्य के विकास की गाड़ी को आगे बढ़ाने के लिए दो पहिये की तरह हैं । इन दोनों पहियों को संतुलित होना चाहिये । बहस के दौरान कई बार विपक्ष ने सरकार पर बड़े धारदार तरीके से आक्रमण किया है और सरकार ने भी ऐसे आक्रमणों की नोटिस ली है और उनके प्रति संवेदनशीलता प्रदर्शित किया है । इसे परस्पर सहयोग की मिसाल के रूप में देखा जाना चाहिये ।

सरकार की रचनात्मक आलोचना सत्ता पक्ष से भी हो रही है और धारदार आलोचना विपक्ष से भी हो रही है । परन्तु इनके बीच संतुलन बनाने का काम सरकार जिस तरह से कर रही है वह मार्के की बात है । मुझे तो लगता है कि इस देश के 55–56 वर्षों के संसदीय इतिहास में हम एक नयी धारा विकसित कर रहे हैं कि

विकास का काम केवल सरकार का ही नहीं है, बल्कि विकास के काम में विपक्ष की भी उतनी ही हिस्सेदारी होनी चाहिये । महोदय, अभी हाल ही में दिल्ली में राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक हुई है । मैं कह सकता हूँ कि मुझे इससे अधिक खुशी शायद इसके पहले कभी नहीं हुई होगी, जब मुझे जानकारी मिली कि मुख्यमंत्री अपने साथ राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में नेता प्रतिपक्ष को भी लेकर गये हैं । महोदय, राष्ट्रीय विकास परिषद देश की एक सर्वोच्च संस्था है । भारत सरकार का प्लानिंग कमीशन देश के विकास के लिये पंचवर्षीय योजनाएं बनाता है और विकास कार्यक्रमों का दीर्घकालीन लक्ष्य तय करता है । उस पर स्वीकृति की अंतिम मुहर राष्ट्रीय विकास परिषद लगाती है । उस राष्ट्रीय विकास परिषद में अगर हम अपने राज्य का पक्ष रख रहे हैं तो वह पक्ष केवल किसी एक सरकार का या एक दल का नहीं है, बल्कि वह पूरे सदन का है, राज्य की आम जनता का है और विपक्ष का भी है । वह हमारी स्वस्थ राजनीतिक प्रक्रिया का अंग है ।

अध्यक्ष : गिरिनाथ जी, आप समझ रहे हैं ?

श्री गिरिनाथ सिंह : अध्यक्ष महोदय, यह लाल बंडी का कमाल है ।

अध्यक्ष : थोड़ी–थोड़ी लाली आपके कुर्ते में भी आ रही है । लाली मेरे लाल की....।

श्री गिरिनाथ सिंह : अध्यक्ष महोदय, वे लाल चीज से भड़क जाते हैं । मगर उनकी इस भड़कनेवाली क्षमता का भी हमलोग इस्तेमाल पॉजिटिव दिशा में कर सकते हैं। महोदय, जो भड़कता है, उसके अंदर भी काफी ऊर्जा होती है ।

अध्यक्ष : सरयू राय जी, मैंने आपके भाषण में इसीलिए व्यवधान किया है कि आप जिस चीज को इतना महिमा मंडित कर रहे हैं, उसे हम गिरिनाथ जी को याद करायें, उनका पक्ष भी सुन लें ।

सरयू राय : अध्यक्ष महोदय, मैं इसका जिक्र इसलिए कर रहा हूँ कि जिस तरह से राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में मुख्यमंत्री गये, नेता प्रतिपक्ष को साथ लेकर गये, इससे पूरे राज्य की जनता में एक मेसेज गया है कि अपना अधिकार लेने के लिए, विकास की जो चुनौतियाँ हैं उनका सामना करने के लिए हम सभी एकजुट हैं।

महोदय, आपको महाभारत की एक कथा की जानकारी होगी। जब पाण्डव अज्ञातवास में थे और उनके खिलाफ ही षडयंत्र करने के लिए दुर्योधन, उनके भाई और उनके सैनिक पांडवों को तलाशते हुए उस स्थान पर पहुँच गये । वहाँ सरोवर में स्नान करते समय इन सबों को किन्नरों ने पकड़ लिया, बांध दिया । यह खबर पाकर युधिष्ठिर को छोड़ अन्य पाण्डवों को बड़ी प्रसन्नता हुई कि चलो इन्हें अपने किये की सजा मिली । परन्तु युधिष्ठिर ने कहा कि नहीं आप सब वहां जाकर कौरव मंडली की सहायता करो, उन्हें किन्नरों से छुड़ाओ । क्योंकि हम अपनी जगह अपने अधिकार के लिये एक दूसरे से लड़ रहे हैं बाहर की चुनौती के समय तो हम एक हैं। महोदय, प्रसिद्ध उक्ति है युधिष्ठिर की उस परिस्थिति में–''वयं पंचाधिकम् शतम्। यानी सौ कौरव पुत्र और पाँच पांडव पुत्र आपसी संघर्ष में तो सौ और पाँच है। पर बाहर की किसी भी चुनौती के लिये वे एक सौ पाँच है। यह युधिष्ठिर नीति है। हमारी सरकार राज्य के विकास के लिये इसी नीति पर चल रही है ।

इसी तरह हम अपनी जगह अपनी लड़ाई लड़ेंगे, पक्ष और प्रतिपक्ष के रूप में भिड़ेंगे। मगर जहाँ राज्य के लिये विकास की चुनौतियों की बात आती है, वहाँ हम सभी एक हैं। जब केन्द्र से संघर्ष करना है, राज्य का हक लेना है, राज्यहित में राज्य के विकास के लिये चुनौतियों का सामना करना है तो उस समय हम एक हैं। ऐसी स्थिति में हम केवल सत्तापक्ष नहीं हैं और वे केवल प्रतिपक्ष नहीं हैं। बल्कि उस समय हम भी मिलकर एक सौ पाँच की तरह एक हैं । वयं पंचाधिकम् शतम् की भावना के अनुरूप । मुझे लगता है कि माननीय मुख्यमंत्री ने इस प्रयास से पूरे देश को यही संदेश दिया है । राज्य के भीतर हम पक्ष–विपक्ष हैं, मगर बाहर राज्यहित और जनहित के लिये हम सभी एक हैं । मुझे तो लगता है कि इस सदन को सर्वसम्मति से मुख्यमंत्री के इस प्रयास के पक्ष में प्रशंसा का प्रस्ताव लाना चाहिए । मुख्यमंत्री की सराहना करनी चाहिये कि झारखंड ने पूरे देश के लिए एक संदेश दिया है कि नेता प्रतिपक्ष और मुख्यमंत्री दोनों ही मिलकर जाते हैं राष्ट्रीय विकास परिषद के पास राज्य की भलाई के लिये । मुझे तो लगता है कि जितने भी प्लान डिस्कशन होते हैं, एनुअल प्लान हों या फाइव इयर प्लान का डिस्कशन हो, उन सबों में मुख्यमंत्री को

प्रतिपक्ष के नेता को भी लेकर जाना चाहिए। अधिकारियों को ऐसे मामलों में प्रतिपक्ष के नेताओं से भी सलाह लेनी चाहिए। ताकि हम ऐसी योजनाएँ बना सकें जिनके आधार पर राज्य के विकास के अपने लक्ष्य को सरकार शीघ्र हासिल कर ले।

अगर मुख्यमंत्री विदेश दौरा में जा रहे हैं तो विदेश दौरा में मुख्यमंत्री जी इसलिए नहीं जा रहे हैं कि उन देशों का उनको भ्रमण करना है, सैर सपाटा करना है, वहाँ की सीन–सीनरी देखनी है बल्कि इसलिए जा रहे हैं कि विदेशों में तकनीकी उन्नति हुई है, विदेशों में हमारे यहाँ के निवासी हैं और वे बहुत धनवान हैं, उनके पास पैसा है, पूँजी है और हमको जरूरत पूंजी की है। जब पूंजी आएगी तभी हम अपने यहाँ के खान खनिज का, अयस्कों का, रॉ मेटेरियल का मूल्यसंवर्द्धन कर सकते हैं, इसके आधार पर राज्य का विकास कर सकते हैं, जन सुविधाओं का विस्तार कर सकते हैं। हमारे यहाँ आधारभूत संरचना के विकास की जो चुनौती है उसका सामना करने के लिए हमें बहुत बड़ी पूंजी की जरूरत है । वह पूँजी किसी एक वर्ष के बजट से या एक वर्ष के विनियोग से या पाँच वर्षो के बजट से या पाँच वर्ष के विनियोग से नहीं हासिल हो सकती है । क्योंकि सरकार को भी और सदन को भी पता है कि हर साल हम कितने संसाधन इकट्ठा कर सकते हैं। हमारे जो संसाधन स्रोत हैं, उनसे साल भर में हम जितना धन इकट्ठा करते हैं, उसी के आधार पर हम राज्य का वार्षिक बजट बनाते हैं । उसी के आधार पर सरकार सदन में बजट के विरुद्ध विनियोग के लिए आती है। मगर झारखंड में विकास की जितनी चुनौतियाँ हैं मुझे लगता है कि उनके मद्देनजर हमें कई गुना और अधिक धन चाहिए। यह धन सरकारी क्षेत्र के बाहर है – निजी क्षेत्र में है, वित्तीय संस्थानों के पास है, इस देश में भी है, इस देश के बाहर भी है। देश के अंदर या बाहर सरकार उन स्थानों पर जाती है–जहाँ पूंजी है, जहाँ मेधा है, वहाँ से लोगों को आमंत्रित करती है। हमें विदेश से भी सहायता की जरूरत है, पूंजी की जरूरत है । वहां की तकनीक को देखने परखने की जरूरत है। वहाँ की विकास संस्कृति को देखने की जरूरत है। इसी उद्देश्य से सरकार के मुखिया विदेश जा रहे हैं। मैंने अखबारों में पढ़ा है कि मुख्यमंत्री जी ने आग्रह किया है कि नेता प्रतिपक्ष भी साथ में विदेश चलें और हमलोग केवल इस देश

में ही नहीं बल्कि दुनिया में झारखंड का नाम ऊँचा करें और मुझे लगता है कि प्रतिपक्ष... ।

श्री दुलाल भुइयाँ : मुख्यमंत्री जी के साथ सरयू राय जी भी जायें ।

अध्यक्ष : अभी तो नेता प्रतिपक्ष की ही बात चल रही है । मैं सरयू राय जी को धन्यवाद देना चाहता हूँ कि इन्होंने विनियोग विधेयक पर चर्चा को एक मिनिंगफूल आयाम दिया है ।

सरयू राय : मैं तो प्रतिपक्ष के सभी दलों के नेताओं से आग्रह करूँगा कि उनको लगे कि नेता प्रतिपक्ष के अलावा और भी किसी को जाना चाहिए तो वे तय कर लें। (हंसी) देश के साथ दुनिया को भी लगे कि झारखंड से विकास की सामूहिक तस्वीर आ रही है। एक ऐसा प्रयास हो रहा है जो अन्यत्र कहीं नहीं हुआ है ।

महोदय, मैं यह बात केवल आज के संदर्भ में नहीं कह रहा हूँ। जब झारखण्ड नया राज्य बना था, 15 नवम्बर 2000 को जब झारखंड की पहली सरकार बनी थी, तब भी तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री बाबूलाल मरांडी जी को मैंने यह सलाह दी थी। मैंने उनसे कहा था कि अभी विधान सभा की अवधि पूरी होने में चार साल बाकी है, चार साल के बाद आम चुनाव होने वाले हैं । एक साल या कम से कम छः महीना हमलोग आम सहमति की सरकार चलायें । पक्ष और प्रतिपक्ष एक होकर यह तय करें कि राज्य के विकास रथ को आगे बढ़ाने के लिए किन चीजों की जरूरत है, किस नियम कानून में परिवर्तन करना है, किस आधारभूत संरचना को महत्व देना है, राज्य के दीर्घकालीन विकास के लिये कौन सी प्राथमिकतायें तुरंत तय करनी हैं, त्वरित एवं अक्षय विकास के लिये कौन–कौन संस्थायें गठित करनी हैं । इसके लिए हमलोग अगले 25 वर्षों की एक दीर्घलक्षी योजना प्रारूप पर विचार करें, और कार्यक्रम बनायें, एक सर्वस्पर्शी दृष्टिपत्र बनायें। एक साल के अंदर हमलोग यह सब कर लें और इसके बाद फिर तीन साल तक हमलोग पक्ष–विपक्ष की राजनीति करें । एक दूसरे की जितना हो सके बखिया उधेड़ें ।

जब यह राज्य बना और राज्य की पहली सरकार बनी तो मैने तत्कालीन

मुख्यमंत्री श्री बाबूलाल मरांडी जी के सामने यह प्रस्ताव रखा था । प्रथमदृष्टया उन्होंने यह प्रस्ताव स्वीकार किया और मुझसे कहा कि आप प्रतिपक्ष के कुछ नेताओं से इस पर बात कीजिए । सबसे पहले मैंने कामरेड महेन्द्र सिंह से संपर्क किया जो भारतीय जनता पार्टी की विचारधारा के प्रबल विरोधी थे और अपनी कर्मठता से सदन के भीतर और बाहर उन्होंने एक अलग व्यक्तित्व बनाया था । वे अब स्वर्गीय हो चुके हैं। बातचीत के लिये मैने पहले उनका चयन किया और मेन रोड स्थित काली मंदिर के पास उनके कार्यालय में गया । इस बारे में मेरी दो दिनों तक लगातार उनसे वार्ता हुई। यह वार्ता सी.पी.आई. माले के कार्यालय में हुई । आज माननीय सदस्य विनोद सिंह जी इस सदन में उनकी जगह प्रतिनिधि हैं, उनके वारिस हैं, योग्य पिता के सुयोग्य पुत्र हैं । उस समय सी.पी.आई. एम.एल. के कार्यालय में दो दिनों तक उनसे बातचीत के बाद वे इसके लिये तैयार हुये कि हमारे बीच जो सहमति के बिन्दु हैं उनको हम निर्धारित करें और उन सहमति के बिन्दुओं पर आगे बढ़ें । छः महीना एक साल तक उतना ही काम करें, जितना कि सभी मिलकर सर्वसम्मति से तय करते हैं कि हमको इतना ही काम करना है । उसके बाद राजनीति चलेगी । सत्ता पक्ष अलग रहेगा, विपक्ष अलग रहेगा । इस दरम्यान राज्य में विकास का एक ठोस आधार बन जाएगा । उनके साथ हुई सफल वार्ता के बाद मैंने प्रतिपक्ष के कुछ और मित्रों से भी इस बारे में वार्ता की । प्रायः सभी लोगों की सहमति थी इस बारे में । मगर उसके बाद महोदय, 1 जनवरी, 2001 को ईद के दिन एक दुखदायी घटना हो गयी। पुलिस के ट्रक से दुर्घटनाग्रस्त होकर एक बच्ची, जो अल्पसंख्यक समुदाय की थी, का देहान्त हो गया। साम्प्रदायिक तनाव का वातावरण बन गया । इस मुद्दे पर पक्ष विपक्ष में तलवारें खींच गईं । इसके पूर्व बोकारो जिला के एक विद्यालय में पढ़ाने वाली ईसाई समुदाय की एक नन के साथ हुए दुर्व्यवहार ने भी आग में घी का काम किया । मेरा वह प्रयास अधूरा रह गया। यह उस समय सफलीभूत नहीं हो सका।

इस प्रसंग में सदन में भाषण करते समय आज मुझे वह समय याद आ रहा है। संतोष की एक सुखद अनुभूति हो रही है कि आज इस विषय पर एक सार्थक

पहल हो रही है। यह राज्य के लिए शुभ संकेत है कि विकास के विभिन्न आयामों के बारे में विपक्ष की सहभागिता की प्रासंगिकता चर्चा का केन्द्र बिन्दु बन रही है। मुझे तो लगता है कि राज्य सरकार को हर विभाग में एक अनुश्रवण समिति या सलाहकार समिति बनानी चाहिए जिसमें पक्ष और विपक्ष दोनों के ही लोग रहें। वे सलाह भी दें कि किस विभाग में क्या होना चाहिए और अनुश्रवण भी करें, मॉनिटरिंग भी करें कि उसमें कितना काम हो रहा है और अधिक काम कैसे हो सकता है क्योंकि कोई भी सरकार रहे, किसी भी पार्टी की सरकार रहे कार्यपालिका की मशीनरी वहीं रहने वाली है। यह मशीनरी अगर बहुत सक्षम होगी, दक्ष एवं प्रवीण होगी, नियमानुगामी होगी तो कोई भी सरकार इससे उपयोगी काम करा लेगी, अपनी नीतियां इससे लागू करा लेगी। इसलिए शासन प्रशासन की क्षमता बढ़ाने और कार्यपालिका के लिये एक स्वस्थ कार्य संस्कृति और परंपरा स्थापित करने का भी हमलोग प्रयास करें। आलोचनायें अपनी जगह हैं, प्रतिस्पर्द्धा अपनी जगह है और रहेगी परन्तु सहयोग की भी अपनी एक जगह होनी चाहिए। विपक्ष के द्वारा विकास के कार्यों में और राज्य के हक के मामलों में सरकार को भरपूर राजनीतिक सहयोग मिलना चाहिये।

मैं एक बार फिर सदन से आग्रह करना चाहता हूँ कि सर्वसम्मति से मुख्यमंत्री जी के इस सफल प्रयास की सराहना करें कि वे राष्ट्रीय विकास परिषद् की बैठक में प्रतिपक्ष के नेता को भी अपने साथ लेकर गए। इस आशय का एक सर्वसम्मत प्रस्ताव भी पारित होना चाहिये। इससे सरकार राज्य हित में पक्ष और विपक्ष को साथ लेकर चलने की स्वस्थ कार्यसंस्कृति बनाने का जो प्रयास कर रही है उसे मजबूती मिलेगी और आगे भी पक्ष विपक्ष मिलकर महत्वपूर्ण विषयों पर अपनी एक राय बनाने की कोशिश कर सकेंगे।

☐ 1 जुलाई 2005
झारखण्ड विधान सभा

•••

स्वस्थ वित्तीय परम्पराओं का पालन जरूरी

राज्य सरकार द्वारा वित्तीय वर्ष 2005–06 का तृतीय अनुपूरक बजट सदन के समक्ष रखा गया है। कल से इस पर वाद–विवाद हो रहा है। विपक्ष के कई माननीय सदस्यों ने और सदन के कतिपय युवा सदस्यों ने अपने भाषण के क्रम में काफी महत्वपूर्ण बातें रखी हैं। साथ ही उनके द्वारा कतिपय ऐसे विचार भी आये हैं, जिनसे सहमत होना मेरे लिये ही नहीं संसदीय परम्परा की जानकारी रखने वाले किसी भी व्यक्ति के लिए संभव नहीं होगा। आसन द्वारा कही गयी बातों का और दिये गये निर्देशों का प्रतिवाद सदन में इस तरह से नहीं होना चाहिए। यह अच्छी परंपरा नहीं है।

कल से आज तक जितनी बातें सदन में रखी गयी हैं उनमें हमारे प्रतिपक्ष के कतिपय सदस्यों ने, जो वरीय सदस्य हैं उन्होंने भी, सदन के अंदर अनुपूरक बजट रखने की प्रासंगिकता पर ही सवाल उठा दिया है। उन्होंने सीधे यह प्रश्न उठाया है कि सदन में अनुपूरक बजट क्यों रखा जाता है ? जब मूल बजट की पूरी राशि ही खर्च नहीं होती है तो अनुपूरक बजट क्यों रखा जाता है? इस तरह की बातें आयी हैं। एक और विचित्र बात आयी है सदन के एक उत्साही युवा सदस्य द्वारा। उन्होंने कहा है कि एक ही सत्र में दो अनुपूरक बजट नहीं रखा जाना चाहिए। ऐसी बातें सदन के सामने आयी हैं जिनसे सहमत होना मेरे लिये संभव नहीं है।

माननीय सदस्य रामचंद्र चंद्रवंशी जी ने अपना कटौती प्रस्ताव पेश करते हुए यह अहसास दिलाया है कि उन्होंने इस अनुपूरक बजट के प्रावधानों का गहन अध्ययन किया है। उन्होंने अनुपूरक के कतिपय सूक्ष्म विवरणों को विस्तार से चिन्हित किया है और त्रुटियों को उजागर भी किया है। महोदय, अनुपूरक बजट में भाषा की त्रुटियाँ हो सकती हैं, आकड़ों की त्रुटियां हो सकती हैं, किसी शीर्ष या उपशीर्ष से संबंधित मांग को उचित स्थान पर नहीं रखे जाने की बात भी इसमें हो सकती हैं। परंतु इससे अनुपूरक बजट अप्रासंगिक हो जा रहा है या अनुपूरक बजट में वित्तीय अनियमितता है या इसकी जिम्मेवारी अपने ऊपर लेकर किसी को त्यागपत्र दे देना

चाहिए, किसी को मांफी मांगनी चाहिए, इसका सवाल ही नहीं उठता है।

महोदय, वार्षिक बजट भी संविधान के प्रावधानों के अनुसार रखा जाता है और अनुपूरक बजट भी संविधान के ऐसे ही प्रावधान के अनुसार रखा जाता है। सरकार चुनी हुई हो या राष्ट्रपति शासन हो अथवा किसी भी प्रकार की आकस्मिकता आ जाय फिर भी राज्य का वित्तीय प्रबंधन या देश का वित्तीय प्रबंधन गड़बड़ाये नहीं और सुचारू रूप से चलता रहे, इसके लिए हमारे संविधान में वित्तीय मामलों के बारे में पर्याप्त उपाय किये गये हैं, कई तरह के उपाय किये गये हैं। उनमें से ही एक उपाय अनुपूरक बजट का भी है।

जिस साल का वार्षिक बजट सदन में पेश किया जाता है उससे पहले के वित्तीय वर्ष के अंत में उस साल के बजट का प्रारूप राज्य सरकार सदन के समक्ष रखती है। संबंधित बजट वर्ष के 365 दिनों में बहुत सारी ऐसी घटनायें हो सकती हैं जिनका पूर्वानुमान सरकार बजट बनाते समय नहीं लगा सकती है। इसलिए संविधान के निर्देश पर वार्षिक बजट में एक आकस्मिकता निधि का प्रावधान किया गया है। इसके अतिरिक्त बजट में संचित निधि का प्रावधान भी है, लोक लेखा का प्रावधान भी है। परन्तु कोई ऐसी आकस्मिकता की स्थिति आ जाय, अचानक कोई ऐसी स्थिति आ जाय, जिसका अनुमान बजट तैयार करते समय सरकार को नहीं था इसलिये राज्य की संचित निधि में ऐसे व्यय का प्रावधान किसी भी शीर्ष में नहीं किया गया तो ऐसी स्थिति से निपटने के लिये संविधान द्वारा मूल बजट में संचित निधि के साथ ही अलग से एक आकस्मिकता निधि का प्रावधान किया गया है। ऐसी आकस्मिक स्थिति आने पर इस निधि से व्यय करने का अधिकार सदन द्वारा बजट पारित करते समय ही सरकार को दे दिया जाता है। झारखण्ड में आकस्मिकता निधि का आकार 150 करोड़ रुपये है। सदन जब बजट की आकस्मिकता निधि और इसके बाद अनुदान की मांगों पर आधारित विनियोग विधेयक पारित करता है तो इस 150 करोड़ रुपये में से सरकार नियमानुसार जहाँ जितना उचित समझे वहाँ उतना खर्च करे यह अधिकार भी दे देता है। मगर शर्त यही रहती है कि सरकार आकस्मिकता निधि से जो भी खर्च करेगी उसके सामंजन के लिए फिर से हिसाब

लेकर सदन के पास आयेगी और बताएगी कि आकस्मिकता निधि का खर्च हमने कहाँ कर दिया है, किस प्रकार कर दिया है। इस निधि का सामंजन होना चाहिए ताकि आकस्मिकता निधि के माध्यम से बजट में जो प्रावधान रखा गया है वह फिर से हमारी संचित निधि का हिस्सा हो जाय और आकस्मिकता निधि का आकार पुनः अनुपूरक बजट और इस पर विनियोग विधेयक पारित हो जाने के बाद 150 करोड़ रुपये का हो जाय ताकि आगे और कोई आकस्मिक व्यय होने की स्थिति उत्पन्न हो जाय तो इसका सामना करने में और इसके लिए व्यय करने में सरकार सक्षम हो जाय। इसलिए कहीं से भी आकस्मिकता निधि से सरकार द्वारा किये गये व्यय को अनुचित व्यय नहीं ठहराया जा सकता है। यह लेखा-जोखा सरकार अनुपूरक आय-व्यय विवरणी के माध्यम से सदन के समक्ष रखती है। इसलिए सदन के समक्ष अनुपूरक आय-व्यय विवरणी रखे जाने की प्रासंगिकता पर सवाल उठाया जाना कतई उचित नहीं है।

इसके अतिरिक्त किसी वित्तीय वर्ष के भीतर ऐसी स्थिति भी उत्पन्न हो सकती है कि सरकार को कोई नयी आवश्यक योजना लेनी पड़े। न्यायालय के किसी निर्देश के अनुरूप किसी बजट शीर्ष में व्यय का उपबंध करना पड़े या केन्द्र के निदेशानुसार किसी केन्द्रीय योजनागत योजना या केन्द्र प्रायोजित किसी योजना में अंशदान के लिये व्यय का उपबंध करने की स्थिति बन जाय या आकस्मिकता की स्थिति में किये गये व्यय को समंजित करना पड़े तो इस तरह के व्यय का प्रस्ताव अनुपूरक बजट के अन्तर्गत लेकर सरकार सदन के समक्ष आती है और ऐसी निधि स्वीकृत करने और स्वीकृत निधि को विनियोग विधेयक के माध्यम से व्यय करने की अनुमति प्राप्त करती है। इसलिये यह तर्क बेमानी है और संविधान की भावना के अनुरूप नहीं है कि बजट की मूल राशि अगर पूरा खर्च नहीं हो पाती है, तो सरकार को अनुपूरक बजट सदन के समक्ष नहीं रखना चाहिये। ऐसी सोच का कोई औचित्य नहीं है। हाँ, यह जरूर है कि बजट बनाते समय, जैसा आसन की तरफ से भी संकेत हुआ है, जितनी गंभीरता सरकार की तरफ से रहनी चाहिए, उतनी गंभीरता नहीं रह पा रही है। अब अनुपूरक के बारे में हमारे संविधान में स्पष्ट कहा गया है कि

अगर लगता है कि वित्तीय वर्ष के दौरान कोई नई योजना लागू करना आवश्यक हो गया है और बजट तैयार करते समय सरकार ने इसका अनुमान नहीं लगाया है तो उस नई योजना के लिये भी सदन अनुपूरक के माध्यम से धन दे सकता है। इसलिए महोदय, हर अनुपूरक में दो खण्ड होते हैं। खण्ड–1, भाग–1 और खंड–1 भाग–2। खण्ड–1 के भाग–1 में मुख्य रूप से वैसी योजनायें रहती हैं जिनके लिए सरकार निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार सीधे अनुसूची से व्यय कराना चाहती है। खंड–1 के भाग–2 में आकस्मिकता निधि से पहले किये हुए व्यय को सदन के सामने रखने और समंजित करने का प्रावधान रहता है। भाग–1 और भाग–2 में किये जा चुके व्यय का विवरण सरकार अनुपूरक बजट के माध्यम से सामंजन के लिए सदन के समक्ष रखती है। मेरा यह सुझाव होगा कि सरकार को केवल ऐसे व्यय का विवरण ही सदन के सामने नहीं रखना चाहिए बल्कि साथ में सदन को यह भी बताना चाहिए कि इस व्यय के लिये अतिरिक्त संसाधन कहाँ से आयेगा। सरकार इसके लिए कहीं से अतिरिक्त संसाधन जुटायेगी या मूल बजट के किन्हीं प्रावधानों में बराबर की कटौती करेगी।

आकस्मिकता निधि के भाग–1 और भाग–2 में वर्णित कई प्रावधानों में त्रुटियों की तरफ माननीय चंद्रवंशी जी ने इशारा किया है। अनुपूरक में ये त्रुटियाँ मौजूद हैं, सरकार को इन्हें सुधार लेना चाहिए। भाषा को भी सुधारने का प्रयास होना चाहिए। गलतियां हैं तो सरकार को इसे स्वीकार करनी चाहिये। वित्तीय प्रक्रिया की मान्य पद्धतियों का अनुसरण हर हाल में होना चाहिये। जिस तरीके से सरकार द्वारा सदन से अग्रिम की मांग अनुपूरक में की गई है उस तरह अग्रिम की मांग भविष्य में नहीं की जानी चाहिये। अगर अग्रिम पहले लिया जा चुका है आकस्मिकता निधि से तो सरकार को साफ–साफ बताना चाहिये कि इस अग्रिम पर सदन की अनुमति प्रार्थित है। इस तरह की भाषा होनी चाहिए अनुपूरक बजट दस्तावेज में। कहीं कहीं भूलवश अनुपूरक में कतिपय स्थानों पर अनुपूरक व्यय विवरण सही भाषा, सही भावना और सही रूप में अभिव्यक्त होने से रह गया है। मुझे लगता है कि यह सदन सरकार को निदेशित कर सकता है कि इस भाषा को अमूक प्रकार से

सुधार दिया जाय। सरकार इस सुधार को स्वीकार करे और इसके अनुरूप अनुपूरक विवरणी की व्याख्या में बदलाव करे।

बजट तैयार करने के बारे में बजट मैनुअल में वार्षिक कैलेंडर दिया हुआ है। एक अप्रील से शुरू होकर 31 मार्च के बीच बजट तैयार करने में सरकार को क्या–क्या करना चाहिए, किस महीने में क्या–क्या करना चाहिए, किस तिथि को क्या करना चाहिए, किस महीने से लेकर किस महीने के बीच क्या करना चाहिए, यह विस्तार से दिया हुआ है। वित्त विभाग के अन्तर्गत बजट तैयार करने वाला जो अनुभाग है, जिस पर बजट बनाने की जिम्मेदारी होती है, वह अगर बजट मैनुअल कैलेंडर का ठीक से पालन करे, तो मुझे नहीं लगता है कि आगे से किसी को भी कटौती का प्रस्ताव रखते समय इस तरह की बातों को सामने लाने की जरूरत पड़ेगी।

महोदय, मैं एक और बात बताना चाहूँगा अनुपूरक बजट के संबंध में। हमारे बजट मैनुअल के बजट कैलेंडर में उल्लेख है कि हर वर्ष तीन अनुपूरक बजट आने ही आने हैं। चूंकि विधानसभा के दो सत्रों के बीच 6 माह से अधिक का अंतराल नहीं हो सकता है, इसलिए विधान सभा का कम से कम तीन सत्र होना एक वित्तीय वर्ष में जरूरी है। सत्र छोटा हो या बड़ा हो यह अलग बात है, लेकिन तीन सत्र तो होना ही पड़ेगा। इसलिए तीनों सत्रों के लिए एक–एक अनुपूरक बजट सदन के समक्ष रखने की व्यवस्था की गई है। भारतीय संविधान में भी और बजट मैनुअल में भी अनुपूरक व्यय विवरणी का स्पष्ट प्रावधान है।

प्रथम अनुपूरक के बारे में कहा गया है कि यह अनुपूरक बजट जुलाई से सितम्बर के बीच में सदन का जो सत्र होगा उसमें आयेगा और इसकी निश्चित तिथि विधानसभा के कार्यक्रम के अनुसार तय होगी। इसी तरह से दूसरे अनुपूरक के बारे में बजट मैनुअल में कहा गया है कि दूसरा अनुपूरक नवम्बर–दिसम्बर माह में विधान सभा का जो सत्र होता है उस सत्र में आना चाहिए और उसकी सही तिथि भी विधानसभा अपने कार्यक्रम के अनुसार तय करेगी। इसी तरह तीसरा अनुपूरक बजट

फरवरी से मार्च के बीच में आना चाहिए, विधान सभा का जो बजट सत्र होता है उसके दरम्यान आना चाहिए। यह सब बजट मैनुअल के वार्षिक कैलेंडर में साफ-साफ लिखा हुआ है । इसके अतिरिक्त एक-एक बजट विषयक गतिविधियों और कार्यक्रमों का जिक्र है कि कब कंट्रोलिंग ऑफिसर एप्वाइंट होगा, कब बजट स्लीप मांगा जायेगा, कब ए.जी. से खर्च का विवरण मांगा जायेगा, व्यय विवरण की सारिणी किस रूप में होगी । यह और ऐसे ही अन्य कई छोटे-मोटे विवरण बजट मैनुअल में दिये गये हैं ।

जिस सी.ओ.बी.टी. की चर्चा सदन में अक्सर हास-परिहास के रूप में भी और कभी कभी गंभीरता से भी होती है। उसके बारे में भी बजट मैनुअल में संकेत है। सी.ओ.बी.टी. यानी 'कंट्रोलिंग ऑफिसर्स बजट टेबुल्स' । यह बजट टेबुल यानी बजट सारिणी भी किस स्तर पर किस भांति तैयार होगी, इसका प्रारूप क्या होगा, इसका विवरण बजट मैनुअल में मौजूद है । हमारी वित्तीय नियमावली के प्रावधान इसके अतिरिक्त हैं । एक ट्रेजरी कोड भी है, जिसमें अनेक प्रकार के विवरण और निर्देश अंकित हैं । हो सकता है कि पहले जितनी गंभीरता से बजट मैनुअल को, वित्तीय नियमावली कोषागार संहिता को लिया जाता रहा है उतनी गम्भीरता से अधिकारियों के द्वारा अब इसे नहीं लिया जाता। इसमें भी पर्याप्त सावधानियाँ बरती जानी चाहिये, स्पष्ट निर्देश होना चाहिये । लेकिन अफसोस है कि सरकार और अधिकारियों द्वारा इस बजट निर्माण प्रक्रिया को गंभीरता से नहीं लिया जा रहा रहा है। इसीलिए अनुपूरक पर कटौती प्रस्ताव के दौरान ऐसे कई सवाल उठाये जा रहे हैं जो सही हैं, जो बाजिव हैं और मेरा सुझाव है कि सरकार द्वारा ऐसे सवालों पर गौर करके पीछे जो त्रुटियाँ हुई हैं उनमें सुधार करना चाहिए। ऐसी आलोचना का स्वागत किया जाना चाहिये । क्योंकि जहाँ कहीं भी प्रक्रिया में त्रुटि हुई है, उन्हें इंगित किये जाने पर ही उनमें सुधार संभव है । सदन वित्तीय मामलों में सुधार और सकारात्मक आलोचना का उपयुक्त स्थान है। जहाँ कहीं भी प्रक्रिया में त्रुटि हुई है, उसे पहचानकर उसमें सुधार कर लेना राज्यहित में है। वित्तीय अनुशासन कायम रखने के लिये यह आवश्यक है । इसलिए इस अनुपूरक बजट के भाग-1, खंड-1 और भाग-1,

खंड-2 की कतिपय प्रविष्टियों के बारे में जो भी बातें उठायी गईं, उनके आलोक में आवश्यक सुधार का निर्देश सदन द्वारा सरकार को दिया जाना चाहिये ।

होना तो यह चाहिए था कि इसके पहले जो बजट सत्र हुआ था और जिस सत्र में बजट पास किया गया था, उसी सत्र में सरकार द्वारा सदन में पहला अनुपूरक लाया जाना चाहिए था। क्योंकि वित्तीय वर्ष के आरम्भ से ही, एक अप्रैल से ही कुछ न कुछ आकस्मिकता निधि से खर्च हुआ होगा। पिछले वित्तीय वर्ष के तृतीय अनुपूरक के बाद भी कतिपय व्यय हुये होंगे । परन्तु, उस समय भी एक विचित्र स्थिति उत्पन्न हुई थी । सरकार ने पूरा बजट पारित करने के बदले लेखानुदान लिया था और वह लेखानुदान बजट दस्तावेज सदन पटल पर रखे जाने के पहले ही ले लिया गया था। अलग से एक लेखानुदान का विवरण तैयार कर सदन में रखा गया था और यह बजट का अनुमान लगाये बिना किया गया था। मेरे विचार से यह स्वस्थ प्रक्रिया नहीं थी। यह गाड़ी को घोड़ा के आगे रखने जैसी स्थिति थी । आमतौर पर संसद में भी और विधानसभाओं में भी यही होता है कि पूरा बजट सरकार सदन पटल पर रख देती है, और उस बजट में से जितने महीने का लेखानुदान लेना होता है, पूरे साल के दौरान संचित निधि से अनुमानित व्यय के अनुपात के हिसाब से, उतना धन उन शीर्षों में खर्च करने के लिए सरकार ले लेती है । इस वर्ष अगर बजट का ज्यादा हिस्सा खर्च नहीं हो पाया है, तो इसका भी एक बहुत बड़ा कारण यही है कि बजट अनुमान के बिना ही बजट पूर्व लेखानुदान ले लिया गया था । लेकिन लेखानुदान में विभिन्न शीर्षों का जिक्र नहीं होने के कारण विभिन्न मद के खर्चों को किस प्रकार से किया जाय, यह स्पष्ट नहीं हो सका, क्योंकि लेखानुदान पहले आया और बजट उसके बाद में आया, काफी समय बाद में आया । इसलिए आगे यह सावधानी रखी जानी चाहिए कि लेखानुदान लेना हो तब भी सदन के पटल पर पहले वार्षिक बजट का प्रारूप रख दिया जाय। उसके बाद उसमें से लेखानुदान लिया जाय । इस बार भी अगर कोई मुझसे पूछता, तो मैं यही कहता कि अगर सरकार सदन में बजट दस्तावेज रखने की तिथि बढ़ा रही हैं, आगे कर रही है, तो उतने दिनों का अवकाश कर देना चाहिए । उतने दिन सदन स्थगित रहता, और जब सरकार बजट तैयार कर

उसे सदन के सामने रखने की स्थिति में हो जाती तब पुनः सत्र आरम्भ होता और फिर आवश्यक चर्चा के उपरांत कम से कम 21 दिनों के कार्य दिवस के अन्तर्गत विभिन्न विभागों की मांगों पर बहस करने के बाद बजट पास किया जाता। बजट प्रारूप सदन पटल पर रखकर सरकार एक महीने के लिए लेखानुदान ले लेती। सदन का बजट सत्र जारी रहता और अप्रैल में बजट पास कर दिया जाता। किसी को कहीं आलोचना का स्थान नहीं मिलता। संसद में हर वर्ष ऐसा किया जाता है। बजट पारित कराने की प्रक्रियाओं का संविधान एवं वित्तीय नियमावली में विस्तार से जिक्र किया हुआ है। बजट बनाने वाले अधिकारियों को यह सब ध्यान में रखना चाहिए, ताकि सरकार को सदन के अंदर किसी आलोचना का शिकार नहीं होना पड़े। संविधान, नियम, परम्परा के अनुसार ही सरकार को चलना चाहिये। किसी अस्वस्थ परम्परा का निर्माण कर अपने माथे पर कलंक लेने से बचना चाहिये।

सदन से मेरा अनुरोध होगा कि अनुपूरक व्यय विवरणी में जो मांगे रखी गई हैं और विनियोग विधेयक के माध्यम से सरकार ने सदन से उन मांगों की शीर्षों के अनुसार व्यय करने की जो इजाजत मांगी है, वह इजाजत सदन को दे देनी चाहिए। इसके साथ ही बहस के दौरान अनुपूरक बजट में जिन त्रुटियों का उल्लेख किया गया है उन्हें सुधारने का निर्देश भी सदन द्वारा सरकार को दिया जाना चाहिये। प्रतिपक्ष के सदस्यों को भी इसका पूरी तरह से खुले मन से स्वागत करना चाहिए। कई सदस्यों ने आलोचना किया है कि अनुपूरक में पेयजल के बारे में जिक्र नहीं है, अन्य कई शीर्षों के बारे में जिक्र नहीं है। जब मूल बजट में उनके लिये पर्याप्त प्रावधान होगा, पर्याप्त राशि होगी तो सरकार क्यों अनावश्यक उन शीर्षों में भी अतिरिक्त मांग पेश करे और ऐसे विभागों का अनावश्यक जिक्र करें। इसलिए जिन शीर्षों के बारे में अनुपूरक मांगे नहीं रखी गई हैं, उनके लिये आलोचना किया जाना या उन्हें भी रखने का सुझाव दिया जाना इस संदर्भ में कतई प्रासंगिक नहीं है। यह बात भी कतिपय माननीय सदस्यों ने उठाया है कि विनियोग विधेयक में मांग के कई शीर्षों में शून्य मांग रखी गई है। यह एक प्रक्रिया है कि सभी मांगों का उल्लेख विहित प्रपत्र में करना पड़ता है। किसी विभाग की मांग शून्य होने के बावजूद विनियोग विधेयक में इसे

अंकित किया जाता है। यह प्रक्रिया का अंग है। जिन मांगों के संबंध में अनुपूरक निधि की जरूरत सरकार को नहीं है, सदन के सामने प्रस्तुत विनियोग विधेयक में उनका उल्लेख भी शून्य मान के साथ रखना पड़ता है। इसलिए ऐसा होना आलोचना का कारण नहीं हो सकता है। जिस लघु शीर्ष के बारे में, मुख्य शीर्ष के बारे में, उप शीर्ष के बारे में सरकार ने सदन से कोई अनुपूरक की माँग नहीं की है तो यह माना जाना चाहिए कि सरकार के पास प्रासंगिक शीर्ष में पर्याप्त धन है। इन शीर्षों में पर्याप्त बजट उपबंध किया हुआ है और सरकार इस बजट उपबंध से आवश्यक खर्च करेगी, अपने दायित्व का निर्वाह करेगी।

इस अनुपूरक में जो भी मांगें शामिल की गई हैं, वे सभी जायज मांगें हैं। इसमें कोई भी मांग अनुचित अथवा गैरजरूरी नहीं है। कतिपय मांगों को अनुपूरक व्यय विवरणी के अन्दर किसी एक उचित भाग में रखने की जगह उन्हें दूसरे भाग में रख दिया गया है। अगर अनुपूरक में कोई त्रुटि है तो इतना ही भर है। इसमें एक भी मांग ऐसी नहीं है, जिसमें कटौती की कोई जरूरत पड़े। इस आलोक में मैं अनुपूरक बजट और विनियोग विधेयक का समर्थन करता हूँ और मांग करता हूँ कि सदन इन्हें सर्वसम्मति से पारित करे और इन पर सहमति प्रदान करे।

□ 7 मार्च 2006
झारखंड विधान सभा

• • •

सी. ओ. बी. टी. एक बजट प्रक्रिया

सदन में वर्ष 2006–07 का प्रथम अनुपूरक व्यय विवरण रखा गया है। मैं उसके पक्ष में और विपक्ष द्वारा इसके विरूद्ध लाये गये कटौती प्रस्ताव के विपक्ष में बोलने के लिए खड़ा हुआ हूँ। सरकार द्वारा सदन में प्रथम अनुपूरक व्यय विवरण लाने पर कतिपय माननीय सदस्यों ने औचित्य का प्रश्न खड़ा किया है और कहा है कि अनुपूरक व्यय विवरण लाने का कोई औचित्य नहीं है। हम सभी जानते हैं कि संविधान के अनुच्छेद 205 में अनुपूरक व्यय विवरण का प्रावधान है। बजट मैनुअल में भी प्रावधान है कि राज्य सरकार एक वित्तीय वर्ष में तीन अनुपूरक व्यय विवरण सदन के समक्ष ला सकती है। इसलिए अगर सरकार ने सदन में प्रथम अनुपूरक व्यय विवरण रखा है तो कोई अनुचित कार्य नहीं किया है। इस अनुपूरक व्यय विवरण में जिन माँगों को इंगित किया गया है उनके औचित्य पर प्रश्न अवश्य खड़ा किया जा सकता है।

इस अनुपूरक व्यय विवरण में दो भाग हैं। एक में सीधे अनुसूची से किये जाने वाले व्यय का उल्लेख है और दूसरे में आकस्मिकता निधि से किये जा चुके व्यय की प्रतिपूर्ति के लिए सरकार ने सदन से अनुमति मांगी है। आकस्मिकता निधि से इस बीच में हुये प्रतिपूर्ति मद में सरकार ने केवल सवा पाँच करोड़ रुपये का व्यय दिखाया है। इसके लिए सरकार की प्रशंसा होनी चाहिए कि वर्ष 2006–07 का बजट पेश होने और वित्तीय वर्ष आरंभ होने के 6 महीने बाद भी आकस्मिकता निधि का सरकार ने कम–से–कम उपयोग किया है। दूसरी ओर सीधे अनुसूची से लिये जाने वाले करीब 523 करोड़ रुपये के बारे में सरकार ने विस्तार से स्पष्टीकरण दिया है। इस बारे में सरकार ने पारदर्शिता बरता है। जिन आवश्यकताओं के लिए सरकार यह धन लेना चाह रही है उन आवश्यकताओं का विस्तृत विवरण इसमें दिया है। इस विवरण को देखने से लगता है कि सरकार ने केवल एक नयी योजना ली है जिसके लिये योजना विभाग की अनुमति सरकार को प्राप्त है और जिसका उल्लेख सी.ओ.बी.टी. में पहले से है। बाकी अधिकांश ऐसे विवरण हैं जो बजट बनाते समय

या तो छूट गए थे या उनमें राशि अंकित नहीं हुई थी और अगर हुई थी तो जरूरत से कम अंकित हुई थी। यह एक चिन्ता का विषय है। बजट बनाते समय सरकार को और अधिक सचेत रहने की जरूरत है।

हालांकि राज्य सरकार का बजट बनाने की प्रक्रिया में पहले से काफी सुधार हुआ है। परन्तु इस अनुपूरक से यह संदेश तो निकलता ही है कि सरकार को और भी सचेत रहना चाहिए। आखिर कैसे बजट के किसी लघु शीर्ष में निधि का आवंटन छूट जाता है? आखिर किस कारण से बजट के किसी शीर्ष में उपयुक्त आवंटन नहीं हो पाता है? जबकि सरकार कहती है कि हम सी.ओ.बी.टी. के आधार पर बजट बना रहे हैं, सी.ओ.बी.टी. में इसका उपबंध है और योजना विभाग की अनुमति भी सरकार को प्राप्त है। फिर भी इस मद की आवश्यक राशि का बजट में उल्लेख नहीं होता है। इसका कोई भी स्पष्टीकरण संतोषजनक नहीं हो सकता है।

एक स्वागत योग्य कदम सरकार ने इस बीच उठाया है। झारखण्ड पशुपालन घोटाले के जो मुकदमें यहाँ के आठ विशेष न्यायालयों में चल रहे हैं, उनमें गवाहों की पेशी के लिए अभी तक धन आवंटित नहीं किया गया था। अब तक की किसी भी सरकार ने इस हेतु धन की व्यवस्था बजट में नहीं किया था। इन विशेष न्यायालयों के कार्यकलाप को सुचारू रूप से चलाने के लिए और उच्चतम न्यायालय के निर्देश पर इन मुकदमों के त्वरित निष्पादन के लिए झारखंड राज्य में जो विशेष अदालतें गठित की गयी हैं उनमें गवाहों की पेशी के लिए सरकार ने पाँच लाख रुपये का प्रावधान अनुपूरक व्यय विवरणी के माध्यम से किया है। इसके लिए सरकार की प्रशंसा की जानी चाहिए।

अब अनुपूरक बजट 529 करोड़ का है या 1029 करोड़ का है, इससे फर्क नहीं पड़ता है अगर सरकार इसके लिये अतिरिक्त निधि की उपलब्धता सुनिश्चित करती है। आमतौर पर सरकार की वित्तीय स्थिति को आंकने के लिए कुछ पैमाने सुनिश्चित किये गए हैं। इन पैमानों के आधार पर एकाउन्टिंग होती है, अंकेक्षण होता है। इस आधार पर देखना यह है कि सरकार अपनी आर्थिक गतिविधियों को

कायम रखने की स्थिति में है या नहीं ? सरकार के वित्तीय स्रोत किस हद तक सुदृढ़ हैं ? अगर गैर योजना के बढ़ते हुए खर्च के बाद भी सरकार के वित्तीय स्रोत सुदृढ़ हैं, अतिरिक्त व्यय प्रावधानों के लिये निधि की उपलब्धता सुनिश्चित है तो ऐसे अनुपूरक व्यय विवरण चिंता के कारण नहीं हो सकते । माननीय सदस्यों ने कहा है कि सरकार कर्ज ले रही है । यह तो सरकार के वित्तीय प्रणाली में नम्यता का द्योतक है । लोगों का जीवन स्तर सुधारने के लिये जन सुविधायें बढ़ाने के लिये, अधारभूत ढाँचा सुदृढ़ करने के लिये, राज्य को विकास की ओर ले जाने के लिए, सरकार जनता से जो वायदे करती है उन्हें पूरा करने के लिए सीमित विकल्प है या तो सरकार अपना राजस्व बढ़ाये या राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय स्रोतों से ऋण लेकर अपनी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने के उपाय करे । सरकार ऐसे कार्यकलाप कर सकती है । राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों एवं अन्य वैधानिक स्रोतों में से जहाँ से भी ऋण लिया जाए सरकार अगर वचनबद्धता पूरा करने की स्थिति में है तो इससे राज्य पर वित्तीय बोझ नहीं बढ़ता है बल्कि इससे वित्तीय स्थिति में सुधार संभव है, इससे विकास की गति तेज होती है । क्योंकि गैर योजना व्यय के माध्यम से राज्य अपनी विकास गतिविधियों, आर्थिक गतिविधियों को कायम भी रख रहा है, और योजना व्यय के माध्यम से राज्य अपने आर्थिक गतिविधियों के स्तर को बढ़ा भी रहा है ।

महोदय, इसके अतिरिक्त सुदृढ़ता भी एक मापदंड होता है जिससे पता चलता है कि सरकार जो कार्यक्रम चला रही है, उन कार्यक्रमों को कितना कायम रख पा रही है, उन्हें कितना स्थायित्व प्रदान कर रही है । अपने कार्यकलापों में सरकार की पारदर्शिता कितनी है यह भी देखा जाना चाहिये । आय–व्यय के जो आँकड़े दिए जाते हैं, उनका अंकेक्षण सरकार समय पर कर रही है या नहीं, बजट विवरण को बढ़िया से रख रही है या नहीं और वित्तीय प्रणाली में सुधार हो रहा है या नहीं। इन पारामीटर्स के आधार पर हम देखें तो सरकार की आर्थिक स्थिति अच्छी है। सरकार अगर अनुपूरक के माध्यम से वैसी नई योजना लेकर आती है जिसका उल्लेख बजट में छूट गया हैं तो यह आलोचना का विषय नही होना चाहिये । जैसा माननीय

सदस्य श्री राधाकृष्ण किशोर जी कह रहे थे कि जो काम अधूरे पड़े हुये हैं, निश्चित रूप से सरकार को इनकी तरफ में देखना चाहिए, इन्हें पूरा करना चाहिये ।

मैं सरकार को संक्षेप में कुछ सुझाव देना चाहता हूँ । एक तो मैं सरकार से कहना चाहता हूँ कि जिस तरह से केन्द्र की सरकार करती है, उसी तरह प्रत्येक वर्ष राज्य सरकार को भी बजट पूर्व आर्थिक समीक्षा सदन के सामने पेश करना चाहिए । कई राज्य सरकारें ऐसा कर रही हैं । पड़ोसी राज्य बिहार की सरकार भी ऐसा कर रही है । इस वर्ष हमारी क्या आर्थिक गतिविधियां रहीं और हमारे आर्थिक विकास की दर क्या है, हम अपना सामाजिक दायित्व किस सीमा तक निभा पा रहे हैं इसके बारे में हर साल बजट के पहले सरकार को एक आर्थिक समीक्षा सदन के समक्ष रखनी चाहिए । मेरा दूसरा सुझाव है कि सरकार को यथासम्भव शून्य आधारित बजट प्रक्रिया लागू करने की दिशा में प्रयास करना चाहिये । लम्बे समय से शिथिल पड़ी हुई आधी अधूरी योजनाओं के लिए प्राथमिकता के आधार पर धन आवंटित किया जाना चाहिये ताकि वे समय सीमा के भीतर पूरी हो जायें । क्योंकि हर बजट में योजनाओं का अम्बार लगा देने और एक पंचवर्षीय योजना से दूसरी पंचवर्षीय योजना में उन्हें स्थानांतरित करते रहने और ऊंट के मुंह में जीरा जैसा बजट दर बजट उनके लिये निधि आवंटित करते रहने से राज्य पर वित्तीय बोझ भी बढ़ता है और कार्य की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है । इसलिए सरकार को शून्य आधारित बजट के बारे में प्रयास करना चाहिए । मैं जोर देकर यह कहना चाहता हूँ कि जिन कामों की चर्चा हो रही है, जो योजनायें आधी अधूरी पड़ी हुई है, जिनकी गुणवत्ता असंतोषजनक है उनके मुतल्लिक मेरा सरकार से आग्रह होगा कि सचिव स्तर से लेकर संयुक्त सचिव स्तर तक के जो भी अधिकारी राज्य सरकार के पास हैं, राज्य सरकार महीने में उन अधिकारियों को अगर दो बार नहीं तो कम से कम एक बार प्रखंड स्तर पर निरीक्षण के लिए दौरा पर भेजे । कार्यक्रमों के क्रियान्वयन एवं प्रगति का विश्लेषण करने के लिए वे कार्यस्थल का दौरा करे । वे अधिकारीगण ऐसी योजनाओं की समीक्षा गुणवत्ता के आकलन एवं प्रखंड मुख्यालय जायं और वहाँ से किसी भी गाँव में चले जायं जहाँ के लिए कोई योजना वर्तमान अथवा पूर्व के किसी वित्तीय

वर्ष में ली गई है। वह योजना पूरी हुई कि अधूरी है, उसकी गुणवत्ता कैसी है, इनकी मरम्मत एवं रख-रखाव इसके बारे में वह तहकीकात करें। यह एक काम सरकार को आरंभ करना चाहिए। ऐसा होगा तो जो शिकायतें आज सदन में आ रही हैं माननीय सदस्यों के माध्यम से वे शिकायतें यथाशीघ्र दूर हो जायेंगी। जो काम पूरे हो गए हैं, अगर उनके बारे में भी सरकार साल में एक बार विभागवार और योजनावार विवरण सदन के सामने रखे उनपर होने वाले गैर योजना व्यय से अवगत कराये तो और भी अच्छा होगा।

एक सुझाव मैं सी.ओ.बी.टी. आधारित बजट के बारे में भी देना चाहूँगा। सी.ओ.बी.टी. तो बजट तैयार करने की सालाना प्रक्रिया का एक आवश्यक अंग है जिसे हर हालत में करनी होती है। इसको 'कंट्रोलिंग ऑफिसर्स बजट' टेबुल कहा जाता है। बजट तैयार करने के क्रम में ऐसा टेबुल तो बनना ही बनना है। यह तो बजट प्रक्रिया का एक आवश्यक अभ्यास कार्य है। यह बजट का आधार नहीं है। यह बजट की विशेषता नहीं है। इसका उल्लेख एक उपलब्धि के तौर पर किया जाना मुझे मुनासिब नहीं लगता है। सरकार को शून्य आधारित बजट की तरफ बढ़ना चाहिए। ऐसी घोषणाएं जब सदन का सत्र चल रहा है तो सदन के बाहर नहीं की जानी चाहिये। इस नीतिगत मर्यादा का हर हालत में पालन होना चाहिये कि जब सदन का सत्र चल रहा हो तो कोई नीतिगत घोषणा सदन के बाहर नहीं की जाय। इन सबों को मिलाकर एक ऐसा परिदृश्य कायम होना चाहिये, जिससे स्पष्ट हो सके कि राज्य सरकार अपने वित्तीय संसाधनों के आधार पर अपनी आर्थिक गतिविधियों को अच्छी तरह आगे बढ़ा रही है और सुदृढ़ बना रही है, सरकार पैसा भी खर्च कर रही है और राज्य की वित्तीय स्थिति को सुदृढ़ भी बना रही है। राज्य को संपन्न भी बना रही है। अगर राज्य पर वित्तीय बोझ बढ़ रहा है, देनदारियां बढ़ रही हैं तो राज्य की परिसंपत्तियां भी बढ़ रही हैं। नये उद्योग लग रहे हैं, देश-विदेश के निजी एवं सार्वजनिक संस्थानों से पूंजी निवेश के लिये समझौता हो रहा है। आज ही मैं पढ़ रहा था महोदय, टेलीग्राफ अखबार में कि अमेरिका से कोई सज्जन आये हैं जो पहले भारतीय प्रशासनिक सेवा में थे, आई. ए.एस. थे और अब

वहाँ प्राध्यापक हैं। उन्होंने स्वास्थ्य के क्षेत्र के लिए एक योजना प्रस्तुत की है जो अनोखी योजना है, विलक्षण योजना है। सरकार इस योजना को अपने राज्य में लागू करना चाह रही है।

आम जनता की क्षमता को बढ़ाने के लिए उनका जीवन स्तर उंचा उठाने के लिये, लोगों तक हर तरह की आवश्यकता की चीजें पहुँचाने के लिये यह सरकार पर्याप्त प्रयास कर रही है।

जन स्वास्थ्य ठीक रहे, शिक्षा में सुधार हो यह प्रयास भी सरकार कर रही है। इसके बाद भी सरकार को अगर इसका यश नहीं मिल रहा है और काम आधा अधूरा रूक जा रहा है, प्रयत्नों के लाभ से आम-जन वंचित है तो सरकार को अपनी डेलिवरी सिस्टम की मॉनिटरिंग बढ़िया से करनी चाहिए। इसके लिये हर महीने प्रखंड के दो-चार, पाँच-दस गांवों में अधिकारियों को सीधे जाना चाहिए। विधायकों को तथा विधान सभा की समितियों को भी सरकार इस प्रक्रिया में शामिल कर ले तो प्रभावशाली मॉनिटरिंग हो सकती है। ऐसा होगा तो सरकार जितना अच्छा काम कर रही है उन सभी कामों के लिये सरकार को यश भी मिलेगा और विकास की रफ्तार भी तेज होगी।

□ 21 अगस्त 2006
झारखंड विधान सभा

• •

अराजक वित्तीय प्रबंधन

अनुपूरक बजट राज्य के वार्षिक बजट का ही एक हिस्सा माना जाता है। सरकार को अधिकार है और भारतीय संविधान ने अपने अनुच्छेद 205 में यह प्रावधान भी किया है कि जब भी सरकार को लगे कि वार्षिक बजट में कोई ऐसा प्रावधान छूट गया है जिसे रहना चाहिए था और जिसका समावेश बजट तैयार करते समय नहीं किया जा सका अथवा किसी माँग के विरूद्ध अधिक खर्च हो गया है अथवा पूर्व में हुये किसी व्यय का समंजन नहीं हो सका है, और अब सरकार ऐसा करना चाह रही है तो सरकार ऐसा कर सके इसके लिए अनुपूरक बजट का प्रावधान संविधान में है।

संविधान के अनुच्छेद 267(2) में एक आकस्मिकता निधि का प्रावधान किया गया है। यह निधि राज्यपाल के पास संरक्षित रहती है। अगर राज्य सरकार के समक्ष कभी आकस्मिक व्यय करने की स्थिति उत्पन्न हो जाय और राज्य सरकार को लगे कि हमारे वार्षिक बजट में कोई ऐसा प्रावधान नहीं है तो ऐसी स्थिति में सरकार इस आकस्मिकता निधि का उपयोग कर सकती है और ऐसा व्यय इस निधि से कर सकती है। इसके लिये शर्त यह है कि सदन की अगली बैठक में अनुपूरक व्यय विवरणी लाकर सरकार सदन को सूचित करेगी कि इस निधि से अमूक व्यय कर लिया गया है, अब सदन इस व्यय के प्रतिपूर्ति की मंजूरी दे। इसलिए आकस्मिकता निधि को कभी–कभी विलोम बजट भी कहा जाता है। क्योंकि बजट पहले बन जाता है और उसके बाद तब सरकार सदन की अनुमति से खर्च करती है, जबकि आकस्मिकता निधि से सरकार पहले खर्च कर लेती है और बाद में संविधान के अनुच्छेद 267(2) के प्रावधान के अनुसार इस व्यय पर सदन की अनुमति प्राप्त करने के लिए अनुपूरक व्यय विवरण प्रस्तुत करती है। ऐसे ही खर्चों के लिए सरकार ने आज अनुपूरक व्यय विवरणी सदन में रखा है।

संविधान के प्रासंगिक अनुच्छेदों की मूल भावना के अनुरूप अन्य राज्य सरकारों की ही तरह झारखंड सरकार ने भी वित्तीय नियमावली बनाया है, ट्रेजरी

कोड बनाया है, बजट मैनुअल बनाया है। ऐसे सभी नियम, उपनियम सरकार ने इसलिए बनाये हैं ताकि संविधान ने जो अधिकार दिया है, उस अधिकार का नियंत्रित उपयोग हो। उस अधिकार का जनहित में नियमानुसार उपयोग हो। इसलिये अगर ऐसे अधिकार का उपयोग करने में कहीं कोताही हो जाती है, कोई गलती हो जाती है तो सदन के समक्ष सरकार उसको स्वीकार करे, माने और इसे दुरुस्त करने के लिये आवश्यक कदम उठाये। ऐसी स्वीकृति और परिष्कृति संसदीय प्रक्रिया का स्वीकार्य और सराहनीय अंग होना चाहिये।

राज्य सरकार के बजट मैनुअल के नियम 115 में अनुपूरक बजट के बारे में जिक्र है। यह उल्लेख अंग्रेजी में है। इसका सारांश है कि सिद्धांततः अनुपूरक अनुदान एक अवांछित किस्म का अनुदान है। यह साबित करता है कि बजट व्यय के नियंत्रण में सरकार पूरी तरह से कामयाब नहीं है। अंग्रेजी में लिखा है–

Rule-115 : Supplementary demands are undesirable in principle and a free resort to them inevitably leads to laxity in budgetting and control. Their admissibility, apart from the question of the actual provision of funds, will, therefore, be closely scrutinized. The finances of the State can only be framed, allotted when a reasonable forecast of the resources available can be framed together with a comprehensive statement at the time of the budget. The justification of a supplementary demand should therefore rest upon circumstances which are exceptional.

As regards re-appropriation from saving and the possibilities offered by unexpected windfalls under the revenue heads neither of these two contingencies are certain; nor are they be accurately estimated until towards the close of the year, when ordinarily, supplementary grants can with difficulty be spent, even if sanctioned. All departments should, therefore, understand that the proper time for the formulation of demands is when the budget is under preparation and they have an opportunity of stating their fresh requirements. It is not safe for them to count upon supplementary grants in order to make good matters overlooked at the time of the current budget or to anticipate demands which should properly be preferred in connection with the ensuing budget.

यानी सरकार जितनी आकार की अनुपूरक मांग रखती है, उसी के अनुपात में सरकार का उस साल के अपने बजट व्यय पर नियंत्रण नहीं होना साबित होता है। किसी वर्ष विशेष का बजट बनाते समय जब सरकार और इसके अधिकारी उस वित्तीय वर्ष के कार्यक्रमों और योजनाओं के बारे में स्पष्ट नहीं रहते हैं, पिछले वर्षों की वित्तीय स्थिति के विश्लेषण के बारे में वित्त विभाग सावधानी, नहीं बरतता है, बजट तैयार करने की प्रक्रिया से संबंद्ध अधिकारीगण आंकड़ों से समायोजन के प्रति सचेत नहीं रहते हैं तभी अनुपूरक बजट का आकार ऐसा होता है। साल के अंत में अधिक सरेन्डर होना, किसी मद में अधिक खर्च हो जाना, किसी ग्रांट का एक्सेसिव हो जाना भारी भरकम पुनर्विनियोग होना एक त्रुटिपूर्ण बजट की निशानी है। आज हम जिस अनुपूरक पर विचार कर रहे हैं वह इसी श्रेणी में रखे जाने लायक है।

इस अनुपूरक में व्याप्त कतिपय विसंगतियों का उल्लेख मैं करना चाहता हूँ। अगर मेरा उल्लेख सही लगे तो माननीय मंत्री महोदय इसके अनुसार सुधार करना चाहेंगे। इस तृतीय अनुपूरक की मांग 40 की ओर माननीय वित्त मंत्री जी का ध्यान आकृष्ट करना चाहूँगा। अनुपूरक के 40वें पृष्ठ पर मांग संख्या 40 का उल्लेख है और उसके साथ कैफियत का उल्लेख भी है। इसके बाद पृष्ठ 7 और 8 पर भी माननीय मंत्री महोदय ध्यान देंगे। अनुपूरक के सातवें और आठवें पृष्ठ पर तीन तालिकाएं दी गई हैं जो मांग 40 से संबंध रखती है। पहली तालिका में सरकार ने सदन से 1 करोड़ 2 लाख 24 हजार 176 रुपये अनुपूरक अनुदान के रूप में खर्च करने की अनुमति मांगी है मगर उसके नीचे महोदय जो कैफियत है उसमें क्या लिखा हुआ है ? उसमें लिखा हुआ है कि उल्लिखित शीर्ष के अंतर्गत चालू वित्तीय वर्ष में 600 करोड़ 20 लाख 20 हजार रुपये खर्च होने की संभावना है। जब हम इसकी मूल मांग को देखते हैं, मांगों के पृष्ठ 40 पर, तो पाते हैं कि इस शीर्ष के मूल माँग में पूरा बजट ही है 54 करोड़ 18 लाख 63 हजार रुपये का। तो यह है इस मांग का पूरा बजट और इस बजट के विरुद्ध सरकार अनुपूरक ला रही है तो उसके कैफियत में लिख रही है कि इसमें 600 करोड़ रुपया से अधिक खर्च होने का अनुमान है, संभावना है। इतना ही नहीं, आगे यह भी लिखा है कि अतएव इस

मद में 593 करोड़ रुपये के अतिरिक्त राशि की आवश्यकता है, जिसकी प्रतिपूर्ति तृतीय अनुपूरक से करने हेतु यह सूची निधि का उपबंध करती है। इसके लिये विधायिका का मत प्रार्थित है।

अगर कोई सरकार, सरकार के वित्त मंत्री, इस तरह की प्रार्थना करते हैं सदन से, इस तरह का आग्रह करते हैं तो महोदय इसे क्या माना जायेगा ? यही माना जायेगा कि सरकार अपनी वित्तीय जिम्मेवारियों का निर्वहन करने के प्रति लापरवाह है, सचेत नहीं है। यह अनुपूरक बजट कई दिन पहले रखा गया है, सदन के सामने। इसे सदस्यों ने देखा होगा। सदस्यों के देखने के पहले माननीय वित्त मंत्री जी और उनके अधिकारियों ने भी इसे अवश्य देखा होगा। अगर कोई गलती हो गयी थी तो सरकार की तरफ से इसमें सुधार करने के बारे में एक स्पष्टीकरण आना चाहिए था। महोदय, इस सदन से मेरा निवेदन है कि सदन इस तरह की बेतुकी मांग के लिये, इस तरह की गैर जिम्मेदाराना मांग के लिए निधि का उपबंध करने की अनुमति सरकार को नहीं दे।

इस अनुपूरक व्यय विवरणी में प्रायः हर पन्ने पर गैर योजना प्रावधान ही दिखाई देता है। कहीं–कहीं केन्द्रीय, केन्द्र प्रायोजित और केन्द्रीय योजनागत योजना का उल्लेख भी है। 237.99 करोड़ रुपये के तृतीय अनुपूरक अनुदान के लिये सरकार ने सदन से आग्रह किया है। इसमें 122 करोड़ रुपये गैर योजना मद का है जो इसके आधे से अधिक है।

इस अनुपूरक में केवल 117 करोड़ रुपये की मांग योजना मद में है। मैं सरकार से जानना चाहता हूँ कि अभी जनवरी के महीने में आपने निर्णय लिया है कि चालू वर्ष की योजना में 28 प्रतिशत की कटौती करेंगे, केवल 72 प्रतिशत ही खर्च करेंगे। आप एक तरफ वार्षिक योजना में 28 प्रतिशत कटौती की बात करते हैं और दूसरी तरफ सदन के सामने आप अनुपूरक के माध्यम से प्रस्ताव लेकर आते हैं कि हमको 117 करोड़ रुपया योजना मद में चाहिए। यह विरोधाभास सरकार के अपने ही दस्तावेज में है। यह विपक्ष का बयान नहीं है।

इसके तीन महीना पहले भी दिसम्बर माह में द्वितीय अनुपूरक बजट सदन के समक्ष रखा गया था । यह तीसरा अनुपूरक है । मैंने इस वर्ष के इन तीनों अनुपूरकों का विश्लेषण किया है। इसका संक्षिप्त निष्कर्ष मैं सदन के समक्ष रख देना चाहता हूँ ।

पिछले 6 वर्षों से इस नवोदित राज्य का बजट सदन के समक्ष रखा जा रहा है । कुल 52 मांगें बजट में होती हैं। इतनी ही मांगें अनुपूरक व्यय विवरणी में भी होती हैं। इसमें एक मांग है मांग संख्या 45 जिसमें कोई आवंटन नहीं रहता है। यह माँग ''ईख'' से संबंधित है, गन्ना से संबंधित है । संभवतः सरकार की नजर में इस राज्य में गन्ना की खेती की कोई संभावना नहीं है। इसलिए न मूल बजट में इस मद में कोई आवंटन है और न तीनों में से किसी अनुपूरक में ही इस मद में आवंटन का जिक्र है। अगर सरकार समझती है कि इस राज्य में ईख विभाग नहीं रहना चाहिए, इस मद में खर्च की जरूरत नहीं है तो इस माँग को बजट से हटा देना चाहिए। अगर सिंचाई सुविधा में वृद्धि के मद्देनजर इस राज्य में गन्ना उत्पादन की संभावना नजर आती हो तो सरकार को इस शीर्ष में न्यूनाधिक आवंटन करना चाहिए ।

इस अनुपूरक के अंतर्गत अंदर दस विभाग ऐसे हैं जिन्होंने तीनों अनुपूरकों में अपने लिए धन लिया है। योजना मद में भी लिया है और गैर योजना मद में भी लिया है। अब यह बात समझ में नहीं आती है कि जब वार्षिक बजट के किसी शीर्ष में पर्याप्त धन बचा हुआ है, वर्ष के अंत में बजट के इस शीर्ष की निधि सरेंडर हो जानी है, तब फिर इसी शीर्षक में अनुपूरक के माध्यम से अतिरिक्त धन की मांग क्यों की जाती है ? पुनर्विनियोग का विकल्प क्यों नहीं अपनाया जाता ? जब महालेखाकार की रिपोर्ट आती है तो पता चलता है कि अमूक विभाग में आवंटन एक्सेस हो गया, बचत हो गयी या आवंटन की तुलना में काफी कम खर्च हुआ। सरकार के जो दस विभाग लगातार तीनों अनुपूरकों में अपने लिए धन मांग रहे हैं। वे विभाग हैं– मंत्रीमंडल सचिवालय एवं समन्वय विभाग स्वास्थ्य एवं चिकित्सा विभाग, गृह विभाग, उद्योग विभाग, विधान मंडल, निबंधन विभाग, राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग, कल्याण

एवं समाज कल्याण विभाग, नगर विकास विभाग, माध्यमिक, प्राथमिक एवं जन शिक्षा विभाग। इनको हर अनुपूरक में अतिरिक्त आवंटन चाहिए। अब ये सब विभाग क्यों नहीं एक बार अनुमान लगाते हैं प्रथम अनुपूरक में, द्वितीय अनुपूरक में या सदन में बजट रखे जाने के समय कि इनका कुल प्राक्कलित व्यय कितना होगा। बार–बार अनुपूरक के लिए मांग करना कहीं से युक्ति–संगत प्रतीत नहीं होता है। यह त्रुटिपूर्ण बजट प्रक्रिया की निशानी है। इसलिए सरकार का ध्यान मैं इस ओर भी आकृष्ट करना चाहता हूँ ।

कुल मिलाकर इस वर्ष का सालाना बजट करीब 15 हजार 561 करोड़ रुपये का है। इसमें 6500 करोड़ रुपये का योजना मद का व्यय है, बाकी 9061 करोड़ रुपये के आस–पास गैर योजना मद का व्यय है। गैर योजना मद में इतनी राशि रखी हुई है फिर भी सरकार गैर योजना मद में अतिरिक्त व्यय के लिए अनुपुरक बजट सदन के समक्ष रख देती है। बजट मैनुअल के नियम 115 से 145 में अंकित है कि सरकार को किस तरह से पुनर्विनियोग के लिए प्रस्ताव बनाना चाहिए। महोदय, यह महत्वपूर्ण इसलिए है कि अभी मार्च के महीने में तृतीय अनुपूरक बजट पर बात हो रही है। बजट मैनुअल भी कहता है, परम्परा भी है कि फरवरी महीने में, 15 फरवरी तक, सारे विभागों के पुनरीक्षित व्यय के अनुमान सरकार के पास आ जाते हैं ताकि वह अगले वर्ष के लिए बजट में निधि का युक्तिसंगत आवंटन कर सके। इतना ही नहीं एकाउंटेंट जेनरल के ऑफिस से सितम्बर महीने तक के एक्चुअल एक्सपेंडिचर की रिपोर्ट आ जाती है। विभिन्न विभागों में कुल वास्तविक खर्च कितना हुआ इसका पता चल जाता है। जब हमलोगों के सामने वर्ष 2007–08 का बजट आयेगा तब हम देख सकेंगे कि वर्ष 2006–07 के बजट में मूल मांगों में अनुपूरक मांगों को जोड़ देने के बाद जो राशि आती है उसका बजट में वर्णित पुनरीक्षित व्यय अनुमान से कोई ताल मेल नहीं है। सरकार के समक्ष यह स्थिति स्पष्ट है, मगर इसके बावजूद अगले एक महीने के भीतर खर्च करने के लिए 238 करोड़ रुपये सरकार मांग कर रही है। यह मांग कहीं से उचित प्रतीत नहीं होती है। जब एकाउंटेंट जेनरल की ऑडिट रिपोर्ट आती है और उसके साथ बजट आंकड़ों का मिलान होता

है, तब पता चलता है कि बजट में कितनी कमियाँ हैं। माना जाता है कि अनुपूरक बजट, अधिक व्यय अनुमान वाला अनुपूरक बजट, बार–बार अनुपूरक बजट एक त्रुटिपूर्ण बजट की निशानी होती है और यह राज्य की वित्तीय व्यवस्था पर सरकार के त्रुटिपूर्ण नियंत्रण का द्योतक है। अनावश्यक अनुपूरक, अनावश्यक पुनर्विनियोग, बिना खर्च हुए और खर्च होने के बाद राशि का सरेण्डर, पहले किये हुए विनियोग, लंबित आवंटन आदि वित्तीय अनुशासनहीनता की निशानी है।

बजट मैनुअल में स्पष्ट रूप से उल्लेख है कि बजट की तैयारी करने के बाद वित्त विभाग को कब अन्य विभागों को संसूचित करना चाहिए, कब नियंत्री पदाधिकारी की नियुक्ति होनी चाहिए, नियंत्री पदाधिकारी अपनी रिपोर्ट कब भेजेगा आदि–आदि। बजट मैनुअल का वह प्रासंगिक अंश जिसमें बजट तैयार करने के संबंध में 1 अप्रील से 31 मार्च तक का बिन्दुवार वर्णन है, मैं सुलभ संदर्भ हेतु सदन पटल पर रख देता हूँ और इसे मेरे भाषण का अंग बनाने का निवेदन करता हूँ। बजट मैनुअल का नियम 62 इस संदर्भ में उल्लेख है –

Rule - 62 : The Various stages of the examination of the figures have to be completed in a prescribed order, by definite dates in a short space of time. Any departure from the prescribed dates in the submission of a single estimate is calculated to throw the whole process out of gear, and it should, therefore, be clearly understood by all concerned that all matters connected with the budget must be treated as urgent.

Appendix - 5

BUDGET CALENDAR

Where a date falls on a Sunday or holiday the preceding working day should take its place.

April	:	Distribution of grants by administrative department, and controlling officers,
April and May	:	Revision and reprinting of various budget forms [B.T. (P) Series, B.T. (L) Series and B.T. (F) Series] in the Finance Department. Verification in Finance department on currency and Finance to the Director, Monetary Research, Reserve Banks,
April to September	:	(Department on the date of Legislature), - Examination to the Appropriation Accounts (A.G.) in Finance department,
May to July	:	Examination in Finance department of draft Appropriation Accounts (Controlling Officers),
June	:	Intimation by the finance department of the modifications in the State borrowing programme to the Government of India,
June to August	:	Examination in Finance in department of the form of the civil Budget Estimate for the ensuing year,
June to September	:	Examination in Finance department and acceptance of March Final (Consolidated) Accounts.
July	:	Distribution of black budget forms by the Government Press to the Estimating and Controlling Officers.
July to September	:	(Excel dates depend on Assembly programme) First supplementary Statement of Expenditure.
August to September	:	(1) Examination of Performa Accounts of the various funds,

etc., in the Finance department

(2) Two Skeleton proof of the Civil Budget Estimates Preparation of Budget Estimates for heads controlled by the Finance department,

September 15 : Controlling Officer to send forecasts of expenditure to Account - General, administrative department and Finance department.

September 30 : (1) Administrative departments to send to the finance department suggestions regarding changes, if any, on the controlling officers forecasts,

(2) Accountant-General to send to the finance department consolidates forecasts of revised and budget estimate of leave salaries etc. payable in England.

October 1. : (1) Controlling Officers to send budget estimate for ensuing year to the Accountant General, administrative department and Finance department.

(2) Controlling Officers to send list of new schemes to the administrative departments.

October 1 to November 10 : Examination of controlling officers

budget due on the 1st October and issue of Budget Slips by the Finance department.

October 1 to November 30 : Examination of new scheme for the ensuing Budget by the Finance department.

October 1 to December 16 : Examination of draft schemes of the new schemes for budget by the Finance department.

October 6 to December : Accountant-General send consolidated estimates to the finance department.

October 15 : Submission of estimates relating to the central head to the Government of India by the concerned departments.

October to December 16 : Draft Schedules for new demands to be referred to the finance department by the administrative departments.

November and December : Exact dates depend on Assembly Programme Second Supplementary Statements.

Nov. 15 to December 22 : Examination of the consolidated estimates received from the Accountant-General by the finance department.

November 25 : (1) New Schemes and project, if any, intended for inclusion in the budget to be referred to the finance department by the administrative departments.

(2) Proposal of new demands to be referred to the finance

		department by administrative departments.
December 1 to January 10	:	Consolidation of the 1st edition figures for the purposes by the Civil budget estimates by the finance department.
December 15	:	Important corrections in the revised estimates to be reported by the controlling officers and administrative departments to the finance department.
December	:	Estimation of loan requirements for the ensuing year by the Finance Department.
January 2 to 5	:	Compilation of First Edition figures for the purpose of the budget meeting of Government.
January 3 to 6	:	Administrative department to send finally approved schedules with complete list of demands to the finance department so as to reach it positively by the 6th January.
January 6 to 8	:	Compilation of list of new demands of various departments by finance department
January 11 to 31	:	Drafting Financial Statements paragraphs in the finance department
January 15 to 31	:	Collection of material by finance department for the Budget Speech of Finance Minister.
January 20 to February 10	:	Dependent on Assembly Programme - Final printing of Civil

		budget estimates and finance statements.
January	:	Preparations of estimates of recoveries from other Government Departments by finance department.
February	:	Presentation of the budget to the Assembly and council. Exact dates depend on Assembly and Council Programme.
February 5	:	Second revised estimates to be forwarded by the controlling officers to administrative departments and finance department.
February 28	:	Advance intimation of surrender of savings by the controlling officers to the Administrative Departments of Government and to the finance department.
February to March	:	Third Supplementary Statements of Expenditure. Exact dates depend on Assembly Programmes.
March 10	:	Important corrections in the second revised estimates to be reported by controlling officers to administrative departments and finance department.
March 15	:	Final proposals for surrender to be referred to the administrative departments by the controlling officers.
March 25	:	Final Proposals for surrender to be referred to the finance department

		by the administrative departments.
February to March	:	Reappropriations and modifications of grants
March	:	Voting of Demands by the Legislature.
March, Feb. & December	:	Preparatory to appropriation Bills and contingency Funds. Dependent on Assembly Programme.
February to April	:	Distribution of Budget paper by finance department.

इस अनुपूरक को देखने से पता लगता है कि सरकार ने इस बजट के लिए आज तक कोई नियंत्री पदाधिकारी नहीं बनाया है । अगर बनाया होगा तो माननीय मंत्री महोदय उसकी अधिसूचना और तारीख सदन को बता देंगे । विभिन्न विभागों ने अपने किस अधिकारी को अपना नियंत्री पदाधिकारी बनाया है ? विभागों का अपने खर्चे के आकलन करने का क्या तरीका है ? वित्त विभाग कोई आंतरिक अंकेक्षण की व्यवस्था रखता है या नहीं ? काउन्सिलिंग की कोई व्यवस्था वित्त विभाग के पास है या नहीं ? क्या पूरा दायित्व सरकार ने सी.ए.जी. पर छोड़ दिया है ? इन सारी बातों के बारे में मैं चाहूँगा कि माननीय मंत्री महोदय अपना उत्तर देते समय सदन को बतायेंगे । किसी विभाग को अगर लगता है कि इस वर्ष किसी मद में प्राप्त आवंटन से खर्च अधिक होगा तो वह अपने विभाग के अंदर विभिन्न मदों के आवंटन को एक शीर्ष से दूसरे शीर्ष में परिवर्तित कर सकता है । व्यय राशि अथवा समंजन की राशि कितनी होने पर मांग सरकार के पास आनी चाहिए और कितनी होने पर सदन के पास आनी चाहिए, इस बारे में बनाये गये नियमों को बारीकी से देखा जाय तो अनुपूरक में इस तरह की गलतियाँ नहीं होंगी । मैं विस्तार में जाऊँगा महोदय तो बहुत समय लगेगा । क्योंकि एक–एक मांग की जो कैफियत दी गयी है इस अनुपूरक बजट में वह हास्यास्पद किस्म की है । मुझे लगता है कि राज्य सरकार के व्यवस्थापक ने संविधान की धाराओं का या अपनी वित्तीय नियमावली

और कोषागार संहिता के प्रावधानों का गंभीरता से अध्ययन नहीं करते हैं । सरेण्डर कैसे होना चाहिए ? पुनर्विनियोग कैसे होना चाहिए ? विभाग के अंदर विनियोग कैसा होना चाहिए ? इन सब प्रक्रियाओं का राज्य के विभागों द्वारा पालन नहीं होगा, किसी विभाग में पालन नहीं होगा तो इसी तरह का अवास्तविक अनुपूरक बजट हमारे सामने आता रहेगा और हम सभी की स्थिति हास्यास्पद होती रहेगी । मैंने प्रयास किया है कि अत्यंत संक्षेप में अनुपूरक बजट के संदर्भ में अपनी बातें रखूं ।

बजट मैनुअल में भी और वित्तीय नियमावली में भी उल्लेख है कि सरकार को जो भी खर्च करना है उसके लिए सदन से अनुमति लेनी चाहिए और व्यय राशि का आवंटन प्राप्त हो जाने के बाद ही किसी योजना का आरम्भ होना चाहिए । ऐसा नहीं कि योजना आरंभ कर दी गयी और फाइल में लिख रहे हैं कि यह कार्य आवंटन प्राप्त होने की प्रत्याशा में किया जा रहा है । अब माननीय मुख्यमंत्री जी ने हाट गम्हरिया वराई बुरू पथ निर्माण का टेंडर–वेंडर सब कर दिया । मूल बजट में उसके लिए कोई आवंटन नहीं है । बजट अनुपूरक में उसके लिए कोई आवंटन नहीं है । इनकी सरकार में दूसरा और तीसरा अनुपूरक बजट सदन में आया है । दूसरा को तो छोड़ दीजिये इस तीसरे अनुपूरक में भी इसके बारे में कहीं कोई आवंटन नहीं है । एक सौ करोड़ रुपये के ऊपर की योजनाओं का शुभारंभ हो जाता है, टेंडर हो जाता है, पर निधि का अता–पता नहीं रहता है । बजट मैनुअल में भी और वित्तीय नियमावली में भी अंकित किया हुआ है कि विभागों को आदत हो गयी है, 'गो अहेड सिगनल' दे देने की । तकनीकी स्वीकृति नहीं मिलती है, प्रशासनिक स्वीकृति नहीं मिलती है, निधि आवंटित नहीं हुई है पर योजना पर काम शुरू हो गया है । ऐसी सारी वित्तीय अनियमितताओं का जिक्र वित्तीय नियमावली में है, बजट मैनुअल में है। कहीं से भी यह परिलक्षित नहीं हो रहा है कि अनुपूरक बजट में सरकार ने इन पर भी ध्यान दिया है । इस तरह से यह सिलसिला चलता रहेगा, परंपरा चलती रहेगी तो हमारा बजट सुपरफिसियल हो जायेगा। सदन में बहुमत है सरकार का तो सरकार सदन से बजट प्रस्ताव पास करा लेगी। मगर जब कोई भी इस प्रस्ताव का मंथन करेगा इसका विश्लेषण करेगा तो उसका आक्षेप न केवल सरकार पर बल्कि

सदन पर भी होगा। इसलिए सदन के पास सरकार को साफ नीयत के साथ आना चाहिए। अगर सरकार वित्तीय वर्ष के बीच में कोई नयी योजना स्वीकृत करती है, संविधान के अनुच्छेद 205 में तो सरकार की अनुमति से ऐसा कर सकती है। अगर ऐसा कुछ है तो इसे तृतीय अनुपूरक में डालना चाहिए था। मगर सरकार ने नहीं डाला है। इसका मतलब है कि यह बजट केवल एक लोकप्रिय दिखने वाला छलावा है जिसका हमारे जो मापदण्ड हैं वित्तीय व्यवस्था के, वित्तीय प्रबंधन के, वित्तीय नियमावली के, संविधान के, उनके साथ कोई तालमेल नहीं है। मैं माननीय वित्त मंत्री जी की क्षमता पर संदेह नहीं व्यक्त करना चाहता हूँ। ये बहुत अच्छे-भले, शिष्ट व्यक्ति हैं और सदन में प्रश्नों का उत्तर देने में संवेदनशीलता का प्रदर्शन करते हैं। ऐसी सस्ती लोकप्रियता वाली घोषणाओं पर ये अमल नहीं करा पायेंगे। इनका तंत्र इसके प्रति संवेदनशील नहीं है। ऐसी स्थिति में इस अनुपूरक व्यय विवरणी को खारिज करना ही सदन के सामने एकमात्र विकल्प है।

□ 29 मार्च 2007
झारखण्ड विधान सभा

• •

राजकोषीय उत्तरदायित्व की अवहेलना

अभी माननीय वित्तमंत्री ने सदन के सामने वर्ष 2007-2008 के लिए दूसरा अनुपूरक व्यय विवरणी पेश किया है। इसके साथ ही इससे संबंधित विनियोग विधेयक भी उन्होंने सदन के सामने प्रस्तुत किया है। भारत के संविधान में केन्द्र की सरकार के लिये भी और राज्यों की सरकारों के लिये भी वित्तीय प्रक्रिया के विषय में व्यापक प्रावधान मौजूद है ताकि देश और राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था हर परिस्थिति में सुचारू रूप से चलती रहे और विकास कार्यों के लिये वार्षिक बजट में किये गये प्रावधानों को आवश्यकतानुसार लचीला बनाया जा सके। राज्यों के लिए संविधान के अनुच्छेद 202 से 204 तक वार्षिक बजट से लेकर अनुपूरक अनुदान, अधिक अनुदान, प्रत्यानुदान, अपवादानुदान आदि कई तरह की वित्तीय प्रक्रियाओं की व्यवस्था की गयी है। तद्नुसार माननीय वित्त मंत्री जी ने संविधान के अनुच्छेद-203 के तहत सदन पटल पर वित्तीय वर्ष 2007-08 का द्वितीय अनुपूरक बजट रखा है और अनुच्छेद-204 के तहत विनियोग विधेयक रखा है।

इस अनुपूरक बजट पर सरसरी नजर डालने से स्पष्ट हो जाता है कि राज्य सरकार द्वारा विगत मार्च में सदन के समक्ष प्रस्तुत वार्षिक वित्तीय विवरणी यानी राज्य के वार्षिक बजट में जितनी राशि का व्यय करने का उपबंध किया गया था और बाद में प्रथम अनुपूरक बजट द्वारा इसके अतिरिक्त जितना व्यय करने की अनुमति ली गयी थी, पुनः उसके बाद 1472 करोड़ रुपया का अतिरिक्त व्यय करने की अनुमति सरकार द्वितीय अनुपूरक व्यय विवरणी के माध्यम से सदन से लेना चाहती है। इसके पूर्व विधान सभा के विगत सत्र में सरकार ने सदन के समक्ष प्रस्तुत प्रथम अनुपूरक बजट के माध्यम से वार्षिक बजट उपबंध के अतिरिक्त 442 करोड़ रुपया खर्च करने के लिए सदन से मांग की थी।

महोदय, राज्य सरकार की नजर में इसका औचित्य हो सकता है। माननीय वित्त मंत्री जिम्मेवार पद पर हैं और अपनी जिम्मेवारी का निर्वाह करते हुए अगर

उन्होंने सदन के सामने कोई वित्तीय व्यय विवरण रखा है, सदन के सामने कोई माँग रखा है, तो उनकी नजर में निश्चित रूप से इसका कोई न कोई औचित्य होगा। परन्तु जब हम राज्य के सर्वांगीण विकास के दृष्टिकोण से इस द्वितीय अनुपूरक बजट का सम्यक विश्लेषण करते हैं तो लगता है कि इस मांग का कोई औचित्य नहीं है। इसीलिये मैंने इस अनुपूरक बजट पर कटौती का प्रस्ताव पेश किया है। मेरा यह कटौती प्रस्ताव वस्तुतः राज्य सरकार की नीति और नीयत के विरूद्ध एक निन्दा का प्रस्ताव है, अविश्वास का प्रस्ताव है। सवाल है कि 16,603 करोड़ 80 लाख रुपया का व्यय प्रावधान वार्षिक बजट में करने और 442 करोड़ रुपया प्रथम अनुपूरक बजट द्वारा लेने के बाद आखिर राज्य सरकार ने इसमें से अभी तक खर्च कितना किया है ? अभी मैं राज्य सरकार के विभिन्न विभागों द्वारा अब तक किये गये व्यय विवरण का उल्लेख सदन के समक्ष करूँगा तो इसकी असलियत उजागर हो जायेगी।

वर्ष 2007-08 के लिये 6,667 करोड़ रुपये का वार्षिक योजना उदव्यय राज्य सरकार ने भारत के योजना आयोग से परामर्श करके स्वीकृत कराया है। जिस समय इस वार्षिक योजना उद्व्यय की स्वीकृति मिली थी उस समय भी मैंने कहा था कि यह योजना उद्व्यय आकार वास्तविक नहीं है। जो आधार योजना आयोग के सामने राज्य की सरकार ने प्रस्तुत किया था, उस आधार पर योजना आयोग को इस राज्य के लिए 3500 करोड़ रुपये से अधिक की वार्षिक योजना नहीं स्वीकृत करनी चाहिए थी। हम सभी जानते हैं कि जब राज्य सरकार भारत के योजना आयोग के सामने अपने राज्य के संसाधनों का ब्यौरा लेकर जाती है तो अन्य विवरणों के साथ उसमें राज्य के राजस्व अभिशेष का उल्लेख भी रहता है। राज्य का राजस्व अधिशेष अर्थात 'बैलेंस ऑफ करेंट रेवन्यू' कितना है ? यानी राज्य सरकार किसी वित्तीय वर्ष विशेष में जितना राजस्व इकट्ठा करती है, उस राजस्व में से राजस्व व्यय करने के उपरांत कितनी बचत हुई है ? यह 'राजस्व अधिशेष' प्रासंगिक वर्ष के लिये कितना है ? धनात्मक है या ऋणात्मक है ? इस मद में महोदय, राज्य सरकार ने योजना आयोग के समक्ष उपस्थापित दस्तावेज में दिखाया

था कि आलोच्य वर्ष में1600 करोड़ रुपया की बचत हो रही है – यानी राज्य का 'बैलेंस ऑफ करेन्ट रेवेन्यू, अर्थात राज्य का राजस्व अधिशेष इस वर्ष 1600 करोड़ रुपया धनात्मक है। परंतु जब हम पिछले कई वर्षों के और आलोच्य वर्ष के भी 'बैलेंस ऑफ करेन्ट रेवन्यू' पर नजर डालते हैं तो पता चलता है कि वास्तव में यह धनात्मक नहीं है बल्कि यह ऋणात्मक है।

इसीलिए मैंने उस समय कहा था कि 6,676 करोड़ रुपये का यह वार्षिक योजना उद्व्यय गलत आंकड़ों पर आधारित है। इस बारे में राज्य की सरकार ने योजना आयोग के समक्ष सही तथ्य नहीं प्रस्तुत किया है। भारत सरकार के योजना आयोग द्वारा भी जितनी गहन समीक्षा करनी चाहिए थी उन दस्तावेजों की, उन आंकड़ों की, उतना नहीं किया गया है। इसलिए अध्यक्ष महोदय, यह योजना उद्व्यय तो स्वीकृत हो गया, परंतु वास्तव में योजना मद में खर्च कितना हुआ है अक्टूबर 2007 तक ? जो खर्च राज्य सरकार के योजना विभाग ने बताया है और जो विवरण राज्य सरकार के वित्त विभाग ने भी दिया है, उसके मुताबिक 6,676 करोड़ रुपया के योजना उद्व्यय में से केवल 1437.94 करोड़ रुपया 31 अक्टूबर 2007 तक खर्च हुआ है। 30 नवंबर 2007 तक यह व्यय बढ़कर दो हजार उन्नतीस करोड़ रूपया हुआ है। इस बारे में जो अद्यतन आंकड़े सरकार के पास हैं और जो आंकड़े मैं सदन के सामने रख रहा हूँ अगर उनमें तारतम्य नहीं होगा, अगर मेरा आंकड़ा सही नहीं होगा तो मेरा अनुरोध है कि माननीय वित्त मंत्री जी उसमें सुधार कर वस्तुस्थिति सदन के समक्ष उजागर कर देंगे। महोदय, 31 अक्टूबर 2007 तक वार्षिक योजना उद्व्यय का मात्र 21.54 प्रतिशत और 30 नवंबर 2007 तक 30.39 प्रतिशत सरकार ने खर्च किया है। उस योजना उद्व्यय में से, उस निधि में से, जिसकी स्वीकृति इन्होंने योजना आयोग से ली थी और जिसका उल्लेख इन्होंने सदन के समक्ष रखे गये वार्षिक बजट में योजना व्यय के रूप में किया था, उसका एक तिहाई से भी कम व्यय वित्तीय वर्ष का दो तिहाई भाग बीत जाने तक हुआ है।

महोदय, जब योजना व्यय करने की राज्य सरकार की ताकत इतनी कमजोर

है तो मुझे नहीं लगता है कि कोई भी अनुपूरक बजट रखने की, अनुपूरक व्यय राशि सदन से माँगने की, सदन के समक्ष इस हेतु अधियाचना करने की माननीय वित्तमंत्री को या इस सरकार को कोई अधिकार है । इसलिए मैंने इस अनुपूरक बजट के औचित्य पर कटौती का प्रस्ताव दिया है और निवेदन किया है कि इस राज्य की वर्तमान वित्तीय स्थिति को देखते हुए और राज्य सरकार के खर्च करने की सामर्थ्य को देखते हुए सदन के सामने जो अनुपूरक बजट और विनियोग विधेयक माननीय वित्त मंत्री ने रखा है, उस पर सदन द्वारा स्वीकृति नहीं दी जाय ।

महोदय, वित्तीय वर्ष 2006–07 के योजना व्यय के बारे में मैंने सदन के विगत सत्र में एक सवाल किया था । 20 अगस्त 2007 को उसका उत्तर इसी सदन में आया था । मैंने सरकार से जानना चाहा था कि क्या वित्तीय वर्ष 2006–07 के वार्षिक योजना उद्व्यय 6500 करोड़ रुपया में से केवल 3200 करोड़ रुपया ही खर्च हुआ है ? तो माननीय मंत्री महोदय ने अपने उत्तर में सदन को बताया था कि नहीं 3200 करोड़ नहीं 3808 करोड़ रुपया खर्च हुआ है । सरकार ने स्वीकार किया है इसी सदन में कि उसने वर्ष 2006–07 के लिए 6500 करोड़ रुपया का जो वार्षिक योजना उद्व्यय पारित कराया था और वार्षिक बजट एवं विनियोग के माध्यम से जिस पर इस सदन की स्वीकृति ली थी उस 6500 करोड़ रुपया के वार्षिक योजना उद्व्यय में से गत वर्ष केवल 3808 करोड़ रुपया ही यह सरकार खर्च कर पाई है ।

इतना कम व्यय होने के कारणों की व्याख्या भी माननीय वित्त मंत्री के द्वारा की गयी थी । मेरे प्रश्न के उत्तर में माननीय मंत्री जी ने बताया था कि कई ऐसे कार्यक्रम हैं भारत सरकार के, जिन कार्यक्रमों के उपबंध के विरूद्ध केन्द्र सरकार से निधि विमुक्त नहीं हो पायी । इन कार्यक्रमों में वांछित सहयोग केन्द्र की सरकार से नहीं मिल पाया । इसलिए इसका कारण राज्य के आंतरिक संसाधन का अभाव नहीं बल्कि झारखण्ड राज्य के प्रति केन्द्र सरकार की उपेक्षापूर्ण नीति इसका प्रमुख कारण है ऐसा माननीय वित्त मंत्री जी ने सदन में कहा था । अपने उत्तर में उन्होंने यह भी कहा था कि भारत सरकार ने राज्य सरकार को विश्वास में लिये बिना

ए.पी.डी.आर.पी. के दिशानिर्देशों में परिवर्तन कर दिया और वांछित राशि विमुक्त नहीं की, विद्युत संचरण सुदृढ़ीकरण योजना की स्वीकृति दिये जाने में केन्द्र सरकार ने विलंब कर दिया। इसके अतिरिक्त कतिपय अन्य परियोजनाओं के लिए भारत सरकार के वन विभाग से अनापत्ति प्रमाण पत्र नहीं मिला, कतिपय अन्य मामले न्यायालय में लंबित हैं, कतिपय परियोजनाओं के लिये वित्तीय संस्थानों से ऋण मिलने में विलंब हो रहा है। महोदय, यह सब ठीक करना किसका दायित्व है? ऐसी स्थिति के लिये जिम्मेदार कौन है ? इसकी जवाबदेही किस पर है ? वित्त मंत्री महोदय को यह स्पष्ट करना चाहिये ।

अभी माननीय सदस्य गिरिनाथ सिंह जी ने जमशेदपुर की एक घटना का जिक्र किया था । माननीय मुख्यमंत्री पहुँच गये, पेयजल एवं स्वच्छता मंत्री और अपने राजस्व एवं भूमि सुधार मंत्री के साथ 13 दिसंबर 2007 के दिन मेरे विधान सभा निर्वाचन क्षेत्र में कई योजनाओं का शिलान्यास करने के लिये। उस समय मैंने यही सवाल उठाया था कि मुख्यमंत्री जी आज जिन योजनाओं का आप शिलान्यास कर रहे हैं उन योजनाओं में किसी को वन विभाग की स्वीकृति नहीं प्राप्त है, किसी को तकनीकी स्वीकृति नहीं प्राप्त है, किसी को प्रशासनिक स्वीकृति नहीं प्राप्त है, किसी का डिजाइन नहीं तैयार हुआ है, किस पुल की ऊँचाई कितनी होगी यह नहीं निर्धारित हुआ है और कैबिनेट ने केवल यह निर्णय लिया है कि जो पुल बनने वाला है वह समुचित ऊँचाई का पुल होगा .... (व्यवधान)

श्री रामचन्द्र चन्द्रवंशी : माननीय सदस्य सरयू राय जी ऐसा कह रहे हैं कि इसकी स्वीकृति नहीं मिली थी । नेता, प्रतिपक्ष से मैं पूछना चाहता हूँ कि जब वे मुख्यमंत्री थे तब कोडरमा में पेयजल परियोजना का शिलान्यास करने गए थे, क्या यह स्वीकृत था?

श्री सरयू राय : महोदय, नेता प्रतिपक्ष हों या मुख्यमंत्री हों, सरकार अभी की हो या पहले की, किसी सरकार ने अगर कुछ ऐसा कार्य किया है जो उचित नहीं है तो इसे पूर्वोदाहरण बनाकर वैसी ही गलती को पुनः दुहराने को किसी भी सूरत में सही

नहीं ठहराया जा सकता है, इसका कोई औचित्य नहीं है। पूर्वोदाहरण किसी अनपेक्षित कार्य को सही ठहराने के लिए आधार नहीं प्रदान करता है। पूर्व की किसी सरकार द्वारा किया गया कोई कार्य या लिया गया कोई निर्णय इस सरकार के लिए अपने किसी अनुचित कार्य को सही ठहराने का आधार नहीं हो सकता है। इसलिये सरकार को और सरकार के समर्थकों को इस सदन में शर्मिन्दा होना चाहिए कि किसी कार्य को गलत मानते हुए भी, उसे पूर्वोदाहरण मानकर, उसे आधार बनाकर वे कहते हैं कि हम भी वैसी ही गलती करेंगे। महोदय, यही बात जमशेदपुर में हुई थी, मुख्यमंत्री ने, उपमुख्यमंत्री ने और पेयजल एवं स्वच्छता मंत्री ने 13 दिसंबर 2007 को एक गलत कार्य किया था, मेरे द्वारा ध्यान दिलाने के बावजूद उन्होंने यह गलती की थी, जानबूझकर गलती की थी।

मानगो पेयजल परियोजना का समानान्तर शिलान्यास किये जाने की बात माननीय सदस्य गिरिनाथ सिंह जी ने अभी-अभी कहा है। महोदय, इस परियोजना का टेन्डर हुआ था। टेन्डर के अनुसार 41.90 करोड़ रुपया की प्राक्कलित लागत पर यह काम होना था। यह टेन्डर विभागीय मंत्री द्वारा रद्द कर दिया गया। इसकी पुनः निविदा हुई है। पुनः निविदा में शर्तों को बदल दिया गया है। इसके पूर्व न्यूनतम दर पर आने वाली जमशेदपुर की कम्पनी 'जुस्को' को पुनः निविदा प्रक्रिया में भाग नहीं लेने दिया गया। इसके पूर्व टेन्डर रद्द करने का प्रमुख कारण यह था कि न्यूनतम दर पर आनेवाली कम्पनी विभागीय मंत्री को 5 प्रतिशत कमीशन देने पर राजी नहीं हुई। अगर पुनः निविदा के बढ़े दर पर कैबिनेट उसकी स्वीकृति दे देती है तब यह काम अब 56 करोड़ रुपया की लागत पर होगा। महोदय, यह संचिका वित्त विभाग में लंबित है और मुझे लगता है कि कोई भी प्रशासनिक अधिकारी अगर वह संवेदनशील होगा, कर्तव्यपरायण होगा, अगर वह अन्तरात्मा की आवाज सुनेगा, अगर वह नियम, कायदा-कानून का ख्याल रखेगा तो अपनी मुहर उस संचिका पर स्थित मंत्री के गलत आदेश पर नहीं लगायेगा। अगर किसी दबाव में वह ऐसा करता है तो मंत्री के पाप का, मंत्री के गैरकानूनी निर्णय के दोष का भागी वह भी होगा। मेरे पास पेयजल एवं स्वच्छता विभाग की उस संचिका की छायाप्रति

मौजूद है। मानगो पेयजल परियोजना की आंशिक संचिका मेरे पास है। इसे मैंने सूचना अधिकार अधिनियम के तहत वांछित शुल्क देकर प्राप्त किया है। (व्यवधान)

श्री गिरिनाथ सिंह – महोदय मेरी सूचना है। सरकार कोई भी हो, सरकार-सरकार होती है। इस तरह से एन.डी.ए की सरकार ने भी 2001 से लेकर के अब तक चाहे वह ग्रेटर रांची का मामला हो, या मैनहर्ट का मामला हो, शिलान्यास कर दिया। ग्रेटर रांची का माननीय गृहमंत्री और उप प्रधानमंत्री जी ने शिलान्यास कर दिया। अभी तक कहीं अता-पता नहीं है कि कहां ग्रेटर रांची बनेगा, लेकिन शिलालेख लग गया। मेरा कहना है महोदय, सूचना के आधार पर मैं आपसे आग्रह कर रहा हूँ कि यह सरकार की इच्छा शक्ति पर है। अगर माननीय मधु कोड़ा जी ने गत 13 दिसंबर को शिलान्यास किया है तो समय-सीमा के भीतर काम को पूरा कराना उनकी इच्छा शक्ति पर निर्भर है। कोडरमा में उप चुनाव होने वाला था, योजना स्वीकृत नहीं थी और कोडरमा जलापूर्ति योजना का शिलान्यास, रोड का शिलान्यास माननीय नेता प्रतिपक्ष ने कर दिया जो उस समय मुख्यमंत्री थे। अभी कैबिनेट ने कल इस योजना की स्वीकृति दी है। यह जानकारी हम सबों को होनी चाहिए और यह निश्चित रूप से मैं कहूँगा कि सरकार को अधिकार होता है किसी योजना का शिलान्यास करने का या उसकी घोषणा करने का। लेकिन समस्या महोदय यह है कि काम को पूरा कराने की इच्छाशक्ति है या नहीं ? अब मैं वर्तमान सरकार को चुनौती देता हूँ कि आपने शिलान्यास किया है तो निश्चित रूप से जो घोषणा आपने किया है उस काम को पूरा करके दिखाइए ताकि लोगों को मालूम हो जाए कि सिर्फ शिलान्यास ही नहीं यह सरकार काम को भी पूरा कराती है।

श्री सरयू राय : महोदय शर्म की बात है हम सबों के लिए कि एक विधायक के नाते, विधान-सभा की समिति के अध्यक्ष के नाते जो सूचनायें वे सरकार से मांगते हैं वह सूचनायें हमें नहीं प्राप्त होती हैं। उसके लिए दस रुपया जमा करके सूचना के अधिकार में सूचनाएं मांगनी पड़ती है। वैसी ही सूचना मैंने पेयजल एवं स्वच्छता विभाग से मांगा था इस बारे में। परन्तु पूरी सूचना नहीं दिया विभाग ने। संचिका के केवल दो-तीन पन्ने ही मिले हैं। इससे यही लगता है कि इसमें भारी गड़बड़ी

है, वित्तीय अनियमितता है, घोटाला है जिसे सरकार छुपाने का प्रयास कर रही है। मुझे विश्वास है कि अंतरआत्मा की आवाज सुनने वाला कोई भी संवेदनशील अधिकारी मंत्री के ऐसे नियम विरूद्ध निर्णय पर मुहर नहीं लगाएगा।

महोदय, अब मैं मूल विषय की चर्चा पर आता हूँ। विगत अगस्त में सरकार ने मेरे एक प्रश्न के उत्तर में सदन में कहा था कि केन्द्र सरकार के असहयोगात्मक रवैया के कारण वर्ष 2006–07 योजना के उद्व्यय का आधा से अधिक खर्च नहीं किया जा सका। मगर इस वर्ष 2007–08 में भी क्या स्थिति है ? इस वर्ष भी महोदय, जो प्लानिंग कमीशन का दस्तावेज है उसके अनुसार 2007–08 में सड़क निर्माण के मद में व्यय हेतु 3000 करोड़ रुपया कर्णांकित हो गया, 1320 करोड़ रुपया का स्वीकृति आदेश निर्गत हो गया, आवंटन आदेश निकल गया, निधि विमुक्त हो गयी, मगर इसमें से व्यय कितना हुआ? व्यय हुआ शून्य। नाली निर्माण के मद में 2.70 करोड़ रुपया स्वीकृत हुआ, इसमें से भी व्यय कितना हुआ ? व्यय हुआ शून्य। शहरी जलापूर्ति प्रबंधन की 18 योजनाएं है, जिनमें बारहवें वित्त आयोग के तहत राशि मिली है। कर्णांकित उद्व्यय और स्वीकृति आदेश हो जाने के बाद भी इन योजनाओं पर कोई काम नहीं हुआ है। निधि विमुक्त हो जाने के बाद, आवंटन प्राप्त हो जाने के बाद भी सरकार के जो विभाग काम नहीं करते है उन्हीं विभागों के लिये और उन्हीं व्यय शीर्षों में वित्तमंत्री महोदय सदन से अनुपूरक व्यय की अनुमति मांग रहे हैं और कह रहे हैं कि व्यय करने के लिए अतिरिक्त धन चाहिये तो इसके बारे में क्या कहा जा सकता है ? यह विडम्बना नहीं तो और क्या है ? इसका क्या स्पष्टीकरण है मंत्री जी के पास ? मेरा निवेदन है कि वित्त मंत्री जी जब बहस का उत्तर देंगे तो इस बारे में हमलोगों के सामने वस्तुस्थिति स्पष्ट करेंगे।

महोदय, मैंने अनुपूरक बजट रखे जाने के औचित्य के प्रश्न पर कटौती प्रस्ताव दिया है। मैं यह पूछना चाहता हूँ वित्तमंत्री महोदय से कि आपने जो अनुपूरक बजट सदन में रखा है। उस अनुपूरक का वर्ष 2007–08 के बजट पर क्या असर होगा? इसी सदन द्वारा महोदय, झारखंड राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंधन विधेयक 2007 पारित किया गया है। उसमें क्या अंकित है ? मैं इसके विस्तार में नहीं

जाना चाहूँगा। उसकी कंडिका–3 में विधानसभा के पटल पर मध्यावधि राजकोषीय नीति प्रस्तुत किये जाने का जिक्र है। मै इस अधिनियम की कंडिका–3 को सदन पटल पर रख दे रहा हूँ, जो मध्यावधि राजकोषीय नीति के संबंध में है।

विधान सभा के समक्ष प्रस्तुत की गयी मध्यावधि राजकोषीय नीति की कंडिका–3 में कहा गया है कि

(1) राज्य विधान सभा के समक्ष राज्य सरकार प्रत्येक वित्तीय वर्ष में वार्षिक आय–व्ययक के साथ मध्यावधि राजकोषीय योजना प्रस्तुत करेगी,

(2) यह मध्यावधि राजकोषीय योजना अन्तर्निहित पूर्वानुमानों के स्पष्ट निरूपण के साथ विहित राजकोषीय संकेतकों के लिए एक तीन वर्षीय घूर्णन लक्ष्य निर्धारित करेगा।

(3) मध्यावधि राजकोषीय योजना में विशेष रूप से इसकी उप धारा (2) में अन्तर्विष्ट उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना निम्नलिखित से संबंधित वहनीयता का निर्धारण शामिल किया जायेगा :–

(i) राजस्व प्राप्तियों एवं राजस्व व्ययों के बीच संतुलन

(ii) उत्पादक आस्तियों के निर्माण के लिए बाजार से ऋण सहित पूँजीगत प्राप्तियों का उपयोग,

(iii) राज्य सरकार का मध्यावधि राजकोषीय उद्देश्य,

(iv) पूर्व में निर्धारित लक्ष्य के विरुद्ध गत वर्ष के राजकोषीय संकेतकों के कार्यकलापों का मूल्यांकन एवं संशोधित प्राक्कलन के आलोक में चालू वर्ष में अनुमानित प्रदर्शन,

(v) राजकोषीय नीति के रूप में चालू वित्तीय वर्ष के लिए राजकोषीय क्षेत्र में राज्य सरकार की नीतिगत प्राथमिकताएं एवं

(vi) चालू वित्तीय वर्ष के लिए व्यय, उधार एवं अन्य देयताओं, ऋण देने एवं निवेश एवं अन्य कार्यकलापों, यथा गारंटी और सार्वजनिक क्षेत्र के

उपक्रमों की गतिविधियों के लिए राज्य सरकार की राजकोषीय नीतियाँ जिनके लिए संभाव्य बजटीय निहितार्थ है ।

(4) मध्यावधि राजकोषीय योजना ऐसे स्वरूप में होगा जैसा कि विहित किया जाय ।

महोदय, वर्तमान वित्तीय वर्ष विगत अप्रैल माह से शुरू हुआ है । इसकी मध्यावधि बीत गयी, मध्यावधि पार हो गयी ? मगर सदन के पटल पर रखी जाने वाली मध्यावधि राजकोषीय नीति के बारे में माननीय वित्तमंत्री जी मौन साधे हुये हैं। राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंधन अधिनियम के अनुसार इस नीति के बारे में सदन पटल पर खुलासा नहीं किया गया । राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं प्रबंधन अधिनियम की कंडिका–3 में अंकित है कि विधान–सभा के समक्ष राज्य सरकार प्रत्येक वित्तीय वर्ष में वार्षिक आय–व्यय के साथ मध्यावधि राजकोषीय योजना प्रस्तुत करेगी । मैं जानना चाहता हूँ कि क्या वर्ष 2007–08 का वार्षिक बजट रखते समय अथवा रखे जाने के बाद वित्तमंत्री जी ने यह योजना सदन के सामने रखी है ? नहीं रखा है तो इसके बाद पहले अनुपूरक के साथ नहीं तो इसके अनुपूरक बजट को पेश करते समय तो उन्हें इस पर प्रकाश डालना चाहिये था ताकि सरकार की वित्तीय एवं राजकोषीय नीति का पता चल सके । अभी मध्यावधि राजकोषीय योजना के संबंध में इस अधिनियम की कंडिका–3 में अंतर्निहित विवरण को मैंने सदन के समक्ष रखा है । महोदय, अब मैं इसकी कंडिका–5 को भी आपकी अनुमति से सदन पटल पर रख देना चाहता हूँ, क्योंकि इसे हू–ब–हू पढ़ने में सदन का समय जाया होगा ।

राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं प्रबंधन अधिनियम की कंडिका–5 में राजकोषीय प्रबंधन लक्ष्य का उल्लेख है । इसमें कहा गया है कि पूर्ववर्त्ती उपबंधों की व्यापकता पर प्रभाव डाले बिना राज्य सरकार इसे सुनिश्चित करेगी कि,

(क) दिनांक 31 मार्च 2009 की समाप्ति पर राजस्व घाटे को घटाकर शून्य हो सके,

(ख) दिनांक 31 मार्च 2009 की समाप्ति पर राजकोषीय घाटे को अनुमानित सकल राज्य घरेलू उत्पाद का अधिकतम तीन प्रतिशत तक कम किया जा सके,

(ग) प्रत्येक वित्तीय वर्ष में राजकोषीय घाटे को सकल राज्य घरेलू उत्पाद का निर्दिष्ट प्रतिशत की दर से कम किया जाय ताकि उपकंडिका (ख) में निर्दिष्ट लक्ष्य प्राप्त हो सके,

(घ) 31 मार्च, 2008 को समाप्त होने वाले वर्ष तक सकल राज्य घरेलू उत्पाद का 3 प्रतिशत से अधिक बचत तैयार किया जा सके ।

इसके अतिरिक्त राजकोषीय प्रबंधन के कतिपय अन्य महत्वपूर्ण अनुश्रवीय राजकोषीय लक्ष्य भी इस नीति के प्रमुख अंग होंगे जैसे,

(i) 31 मार्च 2008 को समाप्त होने वाले वर्ष तक राज्य राजस्व के अनुपात में वेतन के प्रतिशत को कम करते हुए 80 प्रतिशत तक लाया जाना,

(ii) 31 मार्च 2008 को समाप्त होने वाले वर्ष तक राज्य राजस्व और समदेशित राजस्व के अनुपात में गैर ब्याज वचनबद्ध राजस्व व्यय को 55 प्रतिशत तक लाया जाना, तथा

(iii) 31 मार्च 2009 को समाप्त होने वाले वर्ष तक राजस्व प्राप्तियाँ और राजस्व घाटा के अनुपात को शून्य प्रतिशत तक लाना ।

(च) ऋण स्वपोषित स्तर पर लाने हेतु ब्याज अदायगियों को राजस्व प्राप्तियों का 18 से 25 प्रतिशत तक सीमित रखा जाना ।

(छ) वित्तीय वर्ष 2007–08 के अन्त तक राज्य के कुल ऋण को राज्य के कुल प्राप्तियों का 300 प्रतिशत तक सीमित रखा जाना ।

इसकी शर्त है कि जब प्राकृतिक आपदा के कारण राज्य के वित्त पर अकल्पित

मांग होगी तो राजस्व घाटा एवं राजकोषीय घाटा इस धारा में विनिर्दिष्ट अधिसीमा के अतिरिक्त हो सकेगा लेकिन इन कारणों से जो अधिक व्यय होगा वह वास्तविक वित्तीय लागत से अधिक नहीं होगा । इस शर्त में जिन विशिष्ट उद्देश्यों का उल्लेख है उनके कारण यदि राजकोषीय घाटा वृद्धि होने की संभावना है तथा इस घाटा के निर्दिष्ट अधिसीमा से अधिक होने में इससे संबंधित जो भी अन्य कारण होंगे उन्हें विधान सभा के पटल पर यथाशीघ्र प्रस्तुत किया जायेगा ।

अधिनियम की जिस कंडिका–5 में राजकोषीय प्रबंधन का लक्ष्य निर्धारित किया गया है उसमें एक उपकंडिका भी है जिसमें अन्य महत्वपूर्ण अनुशरणीय राजकोषीय लक्ष्यों का उल्लेख है । इसमें कहा गया है कि 31 मार्च, 2008 को समाप्त होने वाले वर्ष तक राज्य, राजस्व के अनुपात में वेतन के प्रतिशत को कम करते हुए 80 प्रतिशत तक लाया जायेगा । अब माननीय मंत्री जी ने अपने अनुपूरक भाषण में कई मदों में होने वाले खर्चे की वृद्धि का उल्लेख किया है । राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंधन अधिनियम के उद्देश्यों का इससे कहाँ मेल बैठता है। माननीय वित्तमंत्री महोदय अनुपूरक में वेतन मद में वृद्धि के लिए कहीं 50 करोड़ रुपया तो कहीं सौ करोड़ रूपया की मांग करेंगे। मगर इस अधिनियम में, जिसके अनुसार सरकार को राज्य का बजट बनाना है, और जिसके अनुसार अनुपूरक बजट उपस्थापित करना है, लिखा हुआ है कि ऐसे व्यय को कम करना है और इसका लक्ष्य बहुत दूर का नहीं है, इसी वित्तीय वर्ष के अंत तक 31 मार्च, 2008 तक यह करना है ।

उसके बाद महोदय, 31 मार्च 2008 को समाप्त होने वाले वर्ष तक, राज्य, राजस्व और समादेशित राजस्व के अनुपात में गैर ब्याज वचनबद्ध राजस्व व्यय को 55 प्रतिशत तक लाया जाना है । मगर द्वितीय अनुपूरक बजट में अंकित कुल 1,472 करोड़ रुपया के व्यय में से 160 करोड़ रुपया का व्यय योजना मद का है और बाकी गैरयोजना मद का व्यय है । तो कहाँ 31 मार्च 2008 को समाप्त होने वाले वर्ष में राजस्व व्यय के अनुपात को गैर ब्याज वचनबद्धता के हिसाब से 55 प्रतिशत तक लाया जाना है और कहाँ वित्तमंत्री जी द्वारा अनुपूरक बजट में

इसको बढ़ाया जा रहा है । इसमें और भी अन्य बातें हैं–जैसे 31 मार्च, 2009 तक कुल ऋण में स्वपोषित स्तर पर ब्याज अदायगी को राजस्व प्राप्तियों का 18 से 25 प्रतिशत तक सीमित करना । इसके अतिरिक्त महोदय मैं इसका एक और अंश पढ़ना चाहूँगा जो झारखण्ड राजकोषीय उत्तरदायित्व बजट प्रबंधन अधिनियम की कंडिका–8 है । यह कंडिका अनुपालन हेतु कार्रवाई के बारे में है । इसमें उल्लेख है कि

(1) वार्षिक बजट एवं बजट के समय घोषित नीतियाँ, आनेवाले वर्षों के मध्यावधि राजकोषीय योजना के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों के अनुकूल होना चाहिए ।

(2) वित्त विभाग के प्रभारी मंत्री, बजट के संदर्भ में प्राप्तियों एवं व्यय की प्रवृत्तियों तथा बजट में निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु किए जाने वाले अपेक्षित उपचारात्मक उपायों का पुनर्विलोकन करेंगे ।

(3) राज्य सरकार द्वारा लिये गये नीति निर्णयों के अनुसार यदि किसी वर्ष राज्य के राजस्व में घाटा होता है, तो सरकार द्वारा उक्त घाटे को अगले वर्ष या आनेवाले अगले वर्षों में सामंजित किया जायेगा या इस राजस्व घाटे के सामंजित करने के लिए राजस्व प्राप्ति की सकल राशि की वृद्धि के लिए कोई अन्य निर्णय लिया जा सकेगा या उपर्युक्त दोनों पद्धतियों को राज्य सरकार द्वारा अंगीकृत किया जा सकेगा। बशर्त्ते कि इस उप धारा के कोई प्रावधान भारतीय संविधान के अनुच्छेद 202 के खण्ड–(3) के तहत राज्य के संचित निधि पर भारित प्रभृत व्यय पर लागू नहीं होंगे ।

(4) राज्य सरकार के वित्त पर आकलित मांगों के कारण जब राजस्व घाटा और राजकोषीय घाटा बढ़ जायेगा तब सरकार आपदाओं पर होने वाले शुद्ध राजकोषीय व्यय को चिन्हित करेगी तथा ऐसा व्यय विनिर्दिष्ट सीमा के अनुपालन के विस्तार पर रोक लगा सकेगी ।

(5) एक वित्तीय वर्ष में अधिकतम व्यय की एक अनुपूरक विवरणी प्रस्तुत की जायेगी । जब कभी भी ऐसा अनुपूरक अनुमान विधान सभा के समक्ष प्रस्तुत

किया जायेगा, राज्य सरकार व्यय में तदनुसार कटौती करने संबंधी विवरण भी प्रस्तुत करेगी ताकि चालू वर्ष के बजट लक्ष्यों एवं मध्यावधि राजकोषीय योजना के उद्देश्यों के मद्देनजर अनुपूरक अनुमानों का वित्तीय प्रभावपूर्णता निष्प्रभावी हो सके ।

(6) सरकार के वित्त विभाग की अनुमति के बिना वित्तीय वर्ष के बजट प्रावधानों से इतर कोई भी देनदारी सृजित नहीं की जायेगी । इस तरह से सृजित अनधिकृत देनदारी पूर्णतः लापरवाही समझी जायेगी और ऐसे सृजित देनदारी के लिये संबंधित पदाधिकारी या पदाधिकारीगण व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होंगे ।

कंडिका–8 की उप कंडिका–5 में उल्लेख है कि जब कभी भी ऐसा अनुपूरक अनुमांग विधान–सभा के समक्ष प्रस्तुत किया जायेगा, जैसा कि माननीय वित्तमंत्री महोदय ने अभी प्रस्तुत किया है और इसके पहले भी गत अगस्त माह में प्रथम अनुपूरक के रूप में प्रस्तुत किया था तो इसके साथ ही राज्य सरकार बजट व्यय में तदनुरूप कटौती करने संबंधी विवरण भी प्रस्तुत करेगी । उस समय भी हमलोगों ने इस ओर उनका ध्यान दिलाया था और यह कहा था कि जब राज्य सरकार ऐसी अनुपूरक माँग विधान सभा के समक्ष प्रस्तुत कर रही है तो राज्य सरकार को व्यय में तद्नुसार कटौती करने संबंधी विवरण भी इसके साथ प्रस्तुत करना चाहिये, ताकि चालू वर्ष के बजट लक्ष्यों और मध्यावधि राजकोषीय योजना के उद्देश्यों के मद्देनजर अनुपूरक अनुमानों का वित्तीय प्रभाव पूर्णतः निष्प्रभावी हो सके । मैं पूछना चाहता हूँ सदन के माध्यम से माननीय वित्तमंत्री महोदय से कि उन्होंने जो अनुपूरक बजट सदन के समक्ष रखा है, उसके साथ राजकोषीय उत्तरदायित्व बजट प्रबंधन अधिनियम के अनुसार मूल बजट व्यय में कटौती का विवरण क्यों नहीं रखा है ? वित्तमंत्री ने 1432 करोड़ रुपया का द्वितीय अनुपूरक व्यय विवरण तो रखा है, परन्तु उसके साथ उन्होंने सदन के समक्ष यह नहीं बताया है कि वे इसके अनुरूप अपने मूल बजट से कहाँ–कहाँ कटौती करेंगे, किस मद में कटौती करेंगे, यह नहीं बताया है उन्होंने ।

यह सब न केवल राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंधन अधिनियम का उल्लंघन है बल्कि यह घोर अनियमितता भी है। या तो राज्य की सरकार अपना बजट बनाने में सक्षम नहीं है या विभिन्न विभाग अपनी योजनाओं के, अपने राजस्व आय और राजस्व व्यय के, जो आंकड़े सरकार के पास भेजते हैं, वे आंकड़े गलत होते हैं । बजट आंकड़ों के जोड़ घटाव को देख लेना चाहिए । बजट में समेकित निधि और विनियोग विधेयक में अनुदान की मांगों के आंकड़ों के बीच में भारी अंतर है । इस भारी अन्तर को, करीब 2032 करोड़ रूपये के अंतर को, मैंने बजट प्रस्तुत किये जाने के समय ही इंगित किया था । यह अंतर केवल उसी में नहीं था, बजट एक झलक में भी था, बजट के सार में भी था, बजट के व्याख्यात्मक ज्ञापन में भी था। हर जगह ये त्रुटियाँ थीं और अंत में जब सरकार ने इस पर ध्यान नहीं दिया तो मैंने महोदय, आपके समक्ष इसे रखा है । माननीय वित्तमंत्री के विरुद्ध मैंने सदन की अवमानना की नोटिस दिया है । ... (व्यवधान) ... घबराइये मत, उत्तेजित मत होइये, अभी न्यायालय की बात भी करेंगे । आप इस स्थिति को कम करके आँकना चाहते हैं, आसन का अपमान करना चाहते हैं । आप कहते हैं सदन में कि माननीय अध्यक्ष महोदय अगर इसका निदान नहीं कर सकेंगे तो आप न्यायालय चले जाइए। ऐसी बात करते हैं आपलोग सदन में ? आपलोगों को सदन की महत्ता का और प्रतिष्ठा का थोड़ा भी ध्यान नहीं है । माननीय अध्यक्ष महोदय को इसकी नोटिस लेनी चाहिए । यह गंभीर मामला है, संसदीय परम्परा के विरुद्ध आचरण है ।

महोदय, इसके अतिरिक्त ''राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंधन अधिनियम 2007'' यह भी कहता है कि सरकार की वित्त विभाग की अनुमति के बिना वित्तीय वर्ष के बजट प्रावधानों से इतर कोई भी देनदारी सृजित नहीं की जाएगी। मगर प्रथम और द्वितीय अनुपूरक बजट द्वारा देनदारियाँ सृजित हुई हैं । सरकार के जिन विभागों ने अपने यहाँ अतिरिक्त सृजित करने का प्रस्ताव भेजा है तो क्या माननीय वित्त मंत्री महोदय ने उन विभागों द्वारा सृजित होने वाली देनदारियों पर विचार किया है ? क्या उन विभागों से पृच्छा की है कि आप जो प्रस्ताव दे रहे हैं अनुपूरक बजट में रखने के लिए वे प्रस्ताव अतिरिक्त देनदारी सृजित करेंगे । महोदय,

जब अपने ही अधिनियम का यह सरकार पालन नहीं करती है, कदम–कदम पर इसका एवं अन्य नियमों का भी उल्लंघन करती है तो इससे घोर वित्तीय अनियमितता और इससे घोर वित्तीय अराजकता और क्या हो सकती है ।

मुझे लगता है कि लोकसभा और इस देश की समस्त राज्यों की विधान सभाओं के इतिहास में यह पहली घटना है कि जब वर्ष 2007–08 का बजट माननीय वित्त मंत्री महोदय ने 19 मार्च 2007 को इस सदन में प्रस्तुत किया तो उसके आय और व्यय के आंकड़ों में भारी अंतर पाया गया । मुझे नहीं लगता है कि इसके पहले किसी भी बजट दस्तावेज के आंकड़ों में इतना भारी अंतर रहा होगा। सदन से बजट पास हो रहा है 14,400 करोड़ रुपया व्यय का और मंत्री महोदय इसके विरूद्ध विनियोग विधेयक में अंकित अनुदान की माँगों के रूप में सदन से अनुमति माँग रहे है 16,605 करोड़ रुपया व्यय करने के लिये । इस सदन में जब वार्षिक बजट रखा गया था और जिसके विरूद्ध यह अनुपूरक व्यय लिया जा रहा है, उस बजट में व्याप्त विसंगतियों की ओर मैंने उसी समय इशारा किया था। मैंने सार्वजनिक रूप से बजट पर प्रतिक्रिया व्यक्त की थी और कहा था कि झारखंड राज्य का 2007–08 का वार्षिक बजट आंकड़ों की जालसाजी का पुलिंदा है । यह जालसाजी सरकार द्वारा योजना आकार बढ़ाकर दिखाने के लिये की गई है । इसमें योजना आयोग द्वारा स्वीकृत आकड़ों को बदल दिया गया है और बढ़ाकर दिखाया गया है । इसके लिए पूरी तरह से राज्य मंत्रिपरिषद और खासकर मुख्यमंत्री मधु कोड़ा जिम्मेवार हैं । इन्होंने विधान सभा को गुमराह किया है । इसके लिये वे विशेषाधिकार हनन के दोषी हैं ।

मैंने उस समय कहा था कि बजट में राज्य की वार्षिक योजना का आकार 6676 करोड़ रुपया बताया गया है । यह आकार वही है जिसे भारत सरकार के योजना आयोग ने 27 फरवरी 2007 को राज्य सरकार के साथ वार्ता के बाद स्वीकृत किया है । योजना के लिए स्वीकृत 6676 करोड़ रुपया में 1594.72 करोड़ रुपया राज्य का अपना संसाधन बताया गया है और 4002.12 करोड़ रुपया शुद्ध ऋण और 1079.16 करोड़ रुपया केन्द्रीय सहायता का बताया गया

है। राज्य के अपने संसाधन 1954.72 करोड़ में 1440.23 करोड़ रुपया राजस्व अधिशेष बताया गया है । परन्तु राज्य का वार्षिक बजट देखने से पता चलता है कि राज्य का राजस्व अधिशेष 1440.23 करोड़ रुपया धनात्मक नहीं बल्कि 506.87 करोड़ रुपया ऋणात्मक है। इसके मद्देनजर राज्य के अपने संसाधन में कुल 1947.10 करोड़ रुपया की कमी हो जाती है, और यह घटकर 352.38 करोड़ रुपया ऋणात्मक हो जाता है । इसका सीधा प्रभाव यह होगा कि राज्य की योजना 6676 करोड़ रुपया से घटकर 4628.90 करोड़ हो जायेगी ।

इसी तरह भारत सरकार के योजना आयोग ने वित्तीय संस्थाओं से 4002.12 करोड़ रुपया का ऋण लेने की अनुमति राज्य सरकार को दी है। उसकी जगह राज्य सरकार के बजट में 5899 करोड़ रुपया, 4546 करोड़ राजस्व खाता में और 1353 करोड़ पूंजीगत खाता में, का ऋण दिखाया गया है, जो कि वास्तविक प्राप्ति से 1897 करोड़ रुपया अधिक है । इसे भी घटा दिया जाये तो राज्य का वार्षिक योजना उद्व्यय 2731.90 करोड़ रुपया हो जायेगा ।

इसके अलावा योजना आयोग ने केन्द्रीय सहायता के रूप में 1079 करोड़ रुपया का प्रावधान किया है। जबकि राज्य बजट में इस मद में 1667 करोड़ रुपया की प्राप्ति दिखाई गई है। 588 करोड़ रुपया का यह अंतर घटा दिया जाय तो राज्य योजना का आकार घटकर करीब 2144 करोड़ हो जायेगा । यानी राज्य सरकार द्वारा बजट में उल्लिखित और योजना आयोग द्वारा स्वीकृत 6676 करोड़ रुपया की योजना के लिए बजट में कुल संसाधन केवल 2144 करोड़ रुपया ही बचता है, अगर इसे योजना आयोग द्वारा स्वीकृत प्राप्तियों तक सीमित रखा जाये ।

मेरा आरोप है कि योजना आकार बढ़ाकर 6676 करोड़ दिखाने के लिये राज्य सरकार ने प्राप्तियों के शीर्ष में फर्जीवाड़ा किया है और योजना आयोग द्वारा विभिन्न मदों में स्वीकृत राशि को बदल दिया है । चूंकि योजना आयोग विभागवार आवंटन करता है इसलिये किस विभाग पर कटौती की गाज गिरेगी, कहा नहीं जा सकता है । अगर बजट में दिये गये आवंटन के हिसाब से सरकार का खर्च होगा

तो अगस्त का महीना आते–आते सरकारी खजाना पर लाल बत्ती जल जायेगी। वित्तमंत्री और मुख्य मंत्री को इसका स्पष्टीकरण देना चाहिये और राज्य की वित्तीय स्थिति के बारे में विधान सभा को गुमराह करने के लिए क्षमा याचना करनी चाहिए। अन्यथा इनके विरूद्ध सदन की अवमानना की कार्रवाई आरम्भ की जानी चाहिये।

महोदय, मैंने उसी समय इस बारे में आपको भी एक पत्र लिखा था और राज्य के वित्तमंत्री के विरुद्ध विधानसभा के विशेषाधिकार हनन की कार्रवाई चलाने का अनुरोध किया था। उस पत्र को मैं विस्तार से पढ़ देना चाहता हूँ, परन्तु इसमें समय लगेगा। इसलिये मेरा आग्रह है कि इसे हू–ब–हू मेरे भाषण का अंग बना दिया जाय। इस पत्र में मैंने झारखंड विधान सभा प्रक्रिया तथा कार्य संचालन के नियम 186 के अधीन प्रो. स्टीफन मरांडी, वित्त मंत्री, झारखंड सरकार के विरूद्ध विशेषाधिकार हनन की सूचना दी है और कतिपय महत्वपूर्ण बिन्दुओं की ओर आप का ध्यान आकृष्ट किया है तथा निवेदन किया है कि –

1. विधान सभा में वित्तीय वर्ष 2007–2008 की वार्षिक वित्तीय विवरणी (बजट) माननीय वित्त मंत्री प्रो. स्टीफन मरांडी द्वारा दिनांक 19 मार्च 2007 को प्रस्तुत किया गया। इसके साथ ही वर्ष 2007–2008 के लिए अनुदानों की मांगें भी प्रस्तुत की इसके साथ ही आज दिनांक 22 मार्च 2007 को विधि विभाग, झारखंड सरकार द्वारा झारखंड विनियोग (संख्या–2) विधेयक, 2007 सदस्यों के बीच वितरित किया गया है, जिसके भार साधक सदस्य प्रो. स्टीफन मरांडी हैं।

   वार्षिक वित्तीय विवरणी के पृष्ठ 21 पर झारखंड की समेकित निधि से संवितरण 16,400.52 करोड़ रुपया दर्शाया गया है। यानी वित्त मंत्री ने बजट में 16,400.52 करोड़ रुपया व्यय करने के लिए विधान सभा से अनुमति मांगी है। अनुदान की मांगों की पृष्ठ (i), पृष्ठ (ii) और (iii) पर अनुदान की मांगों का सारांश अंकित है, जिसका कुल योग 16603.80 करोड़ रुपया

है। झारखंड विनियोग (संख्या–2) विधेयक 2007 के पृष्ठ 3, पृष्ठ 4 और पृष्ठ 5 पर विभिन्न सेवाओं से संबंधित मांगो के विनियोग के लिए अलग–अलग राशि व्यय करने की अनुमति भार साधक सदस्य ने मांगी है, जिसका महायोग 16,603.80 करोड़ रुपया है।

   बजट के विभिन्न दस्तावेजों में अलग–अलग आंकड़े दिये गये हैं। अगर राज्य की समेकित निधि से केवल 16,400.52 करोड़ रुपया, व्यय करने का बजट जो विधान सभा ने पारित किया है तो 16,603.80 करोड़ रुपया जो बजट प्रावधान से कि 203.28 करोड़ रुपया ज्यादा है, के विनियोग की स्वीकृति विधान सभा से किस आधार पर प्राप्त की जा सकती है ? स्पष्ट है कि वित्त मंत्री द्वारा जानबूझ कर कतिपय अनुदान की मांगों में हेराफेरी की गई है और इसी के अनुरूप विधान सभा से बजट प्रावधान से अधिक विनियोग की मांग की गई है। स्पष्ट है कि वित्त मंत्री ने जानबूझ कर सदन के समक्ष हेराफेरी से निकाले गये आंकड़े पेश कर सदन को और सदस्यों को गुमराह किया है, जो कि सदन की अवमानना है।

2. वित्त मंत्री ने विधान सभा में 19 मार्च, 2007 को दिये गये अपने बजट भाषण के पृष्ठ 27 की कंडिका 66 में उल्लेख किया है कि वित्तीय वर्ष 2005–2006 में राज्य की अनुमानित विकास दर 0.28 प्रतिशत आंकी गई है, जबकि यह दर 7.85 प्रतिशत है। उन्होंने वित्तीय वर्ष 2007–08 के बजट में 13.50 प्रतिशत वृद्धि दर की आशा की है, जबकि किसी भी अधिकृत संस्था ने अभी तक इसका अनुमान नहीं लगाया है। झारखंड सरकार की वार्षिक योजना 2007–2008 भोल्यूम एक के पृष्ठ दस की कंडिका 3.1 और 3.2 पर राज्य सरकार और भारत सरकार का विकास दर उल्लिखित है, जो इससे काफी भिन्न है। स्पष्ट है कि वित्त मंत्री ने इस मामले में सदन को, सदस्यों को और राज्य की जनता को गुमराह किया है, जोकि सदन की अवमानना है।

3. भारत सरकार के योजना आयोग ने राज्य की 2007–2008 वार्षिक योजना के लिए 6676 करोड़ रुपया स्वीकृत किया है। 2007–2008 के वार्षिक आय–व्यय विवरणी यानी वार्षिक बजट में भी योजना मद में 6676 करोड़ रुपया का प्रावधान है। परन्तु वार्षिक योजना के पृष्ठ 38 पृष्ठ 39 और पृष्ठ 40 पर विभिन्न शीर्षों में जो योजना उद्व्यय अंकित है, उससे अलग आकड़े वार्षिक वित्तीय विवरणी में अंकित उन्हीं शीर्षों में योजना उद्व्यय के दिये गये हैं।

स्पष्ट है कि राज्य वार्षिक योजना के उद्व्यय का जोड़ बराबर रखते हुये, बजट में विभिन्न विभागों के योजना उद्व्यय के आंकड़ों को जानबूझ कर वित्त मंत्री द्वारा बदला गया हो एवं सदस्यों को गुमराह किया गया है। इन तथ्यों के आलोक में मैं सदन और सदस्यों को गुमराह करने तथा उनके समक्ष गलत आंकड़े प्रस्तुत करने के लिए झारखंड सरकार के वित्त मंत्री प्रो0 स्टीफन के विरूद्ध झारखंड विधान सभा की प्रक्रिया एवं कार्य संचालन के नियम 186 और नियम 187 के अन्तर्गत विधान सभा और विधान सभा सदस्यों का विशेषाधिकार हनन करने की सूचना दी है और इस बारे में शीघ्र आवश्यक कार्रवाई करने का अनुरोध किया है। इसके साथ ही प्रासंगिक दस्तावेजों की मूल प्रतियाँ और योजना दस्तावेज के प्रासंगिक अंश की छाया प्रति भी अनुलग्नक के रूप में सदन पटल पर रख दिया है।

महोदय, आपको स्मरण होगा कि इस बारे में माननीय वित्त मंत्री पर विशेषाधिकार हनन की सूचना आपके समक्ष मैंने दी थी और कहा था कि माननीय वित्तमंत्री ने इस सदन को गुमराह किया है। इस सदन के सामने उन्होंने न केवल गलत आंकड़ा पेश किया है, बल्कि गलत आंकड़ों को उचित ठहराने का प्रयास भी किया है। इसलिए उनके खिलाफ विशेषाधिकार हनन का मामला बनता है। इसके बाद मेरे पास माननीय वित्तमंत्री का जवाब आया है। उसमें कहा गया है कि उचंत खाता में समायोजन करना है इसलिए ऐसी गड़बड़ियाँ हो गई हैं। परन्तु उनका यह स्पष्टीकरण कत्तई संतोषजनक नहीं है।

मैंने एक अल्प सूचित प्रश्न किया था, विधान सभा के पिछले सत्र में, जिसका जवाब माननीय वित्तमंत्री–सह–उपमुख्यमंत्री ने इस सदन में 17 अगस्त 2007 को दिया था। मैंने पूछा था कि क्या यह बात सही है कि 2007–08 का वार्षिक आय–व्यय विवरण विधान–सभा से पारित हो जाने और अनुदान की मांगों का विनियोग विधेयक भी विधानसभा में पारित हो जाने के बाद सरकार द्वारा बजट और विनियोग के विभिन्न उपबंधों में परिवर्तन और संशोधन किया गया है। मैंने इस फेर बदल के बारे में विशेषाधिकार हनन प्रस्ताव के माध्यम से माननीय अध्यक्ष महोदय को जो सूचनायें दी थीं मंत्री जी के उत्तर से उसकी पुष्टि हो गई। उन्होंने स्वीकार किया है कि वित्तीय वर्ष समाप्त होने के बाद अप्रैल में वित्त विभाग ने बजट के आंकड़ों में संशोधन किया है। उस संशोधन के बारे में स्वीकार किया है और कहा है कि वस्तुस्थिति यह है कि वित्तीय वर्ष 2007–08 के अनुदान की माँग तथा विनियोग विधेयक में कोई परिवर्तन नहीं किया गया है बल्कि टंकण तथा लिपिकीय भूल के कारण योजना एवं गैरयोजना बजट में रह गई विसंगतियों के बारे में शुद्धि–पत्र निर्गत किए गये हैं। इन शुद्धि–पत्रों से अनुदान की माँगों और विनियोग विधेयक के योग पर कोई फर्क नहीं पड़ रहा है, ऐसा माननीय वित्त मंत्री जी का कहना है। परन्तु मेरी दृढ़ धारण है कि माननीय वित्तमंत्री जी के द्वारा सदन को गुमराह करने की कोशिश की गई है। मैं इसलिए यह बात कह रहा हूँ कि माननीय वित्तमंत्री जी राज्य के संसदीय कार्यमंत्री भी हैं। उनको संसदीय प्रावधानों की जानकारी होनी चाहिए कि ऐसी त्रुटियों का निराकरण सरकार अपने स्तर से नहीं कर सकती है। अगर सरकार ऐसी त्रुटियों का निराकरण अपने स्तर से करती है और विधान–सभा को इसकी सूचना नहीं देती है तो ये विधान–सभा की अवमानना है। यह एक भारी गलती है।

माननीय वित्त मंत्री ने स्वीकार किया है कि उन्होंने भूल को सुधारा है, टंकण की भूल थी यह भी इन्होंने स्वीकार किया है। मगर सदन को इन्होंने इस बारे में सूचित नहीं किया है। यह मैं इस आधार पर कह रहा हूँ कि लोक–सभा में इस बारे में जो परम्परा है और जिसके बारे में कौल एंड शकधर ने अपनी पुस्तक संसदीय

प्रक्रिया में लिखी है। कौल एंड शकधर के पृष्ठ 581 पर इस बारे में विस्तार से जिक्र किया गया है जिसका शीर्षक है ''प्रत्यक्ष गलतियों की शुद्धि'' । उसमें कहा गया है कि किसी विधेयक के प्रस्थापित रूप में या किसी प्रवर या संयुक्त समिति के द्वारा प्रतिविदित रूप में सभा द्वारा स्वीकृति संशोधनों के अतिरिक्त कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता है''। परंतु राज्य सरकार के वित्त विभाग ने यह संशोधन किया है, यह गलती वित्त विभाग ने की है। माननीय मंत्री जी को यह स्वीकार करना चाहिये।

श्री स्टीफन मराण्डी (वित्तमंत्री) : अध्यक्ष महोदय, टंकक से जो गलती हुई, टंकण में उसी को सुधारा गया है । राशि में कोई फर्क नहीं आया है वह तो पढ़ ही रहे हैं। आप भी हाउस को गुमराह करने चले हैं। मैं बता रहा हूँ कि वह टंकण की भूल थी हमने कहा है। लेकिन राशि में कोई फर्क नहीं रहा है, फिर वही चीज आप पढ़ रहे हैं जो लोकसभा का है।

श्री सरयू राय : महोदय, यह इनकी समझदारी पर निर्भर है । आप अनुमति देंगे तो मैं इस पर थोड़ा और प्रकाश डाल सकता हूँ ताकि इनकी समझदारी दुरुस्त हो जाय। इस समय ये राज्य के वित्त मंत्री हैं, संसदीय कार्य मंत्री भी हैं, आगे भी राज्य की वित्तीय व्यवस्था का भार संभालेंगे । इसलिये इनकी समझ वित्तीय एवं विधायी प्रक्रिया के बारे में स्पष्ट हो जानी चाहिये। 'काल एन्ड शकधर' की पुस्तक संसदीय प्रक्रिया में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि बिना सदन को बताये बजट विधेयक में किसी भी प्रकार की शुद्धि नहीं की जा सकती है। मैं जानना चाहता हूँ वित्त मंत्री महोदय से कि क्या उन्होंने टंकण की भूल सुधारने की सूचना सदन को दी है ? शुद्धि पत्र को सदन के समक्ष रखा है ? क्या शुद्धि की है ? जब तक यह विवरण सदन के समक्ष नहीं रखा जायेगा और केवल बताया जायेगा कि बजट में टंकण की अशुद्धियाँ थीं जिसे शुद्ध कर लिया है तो अशुद्धियाँ टंकण की है कि आंकड़े की भी हैं यह कैसे पता चलेगा। आंकड़ों की अशुद्धियाँ हैं या टंकण की हर हाल में इसे सदन के सामने लाया जाना चाहिये। मैंने यह कहा है तो क्या गलत कहा है। (व्यवधान)

महोदय, माननीय सदस्य चन्द्रवंशी जी नहीं समझ पा रहे हैं कि मैं किस विषय का जिक्र कर रहा हूँ। मैं मूल वार्षिक बजट में जो गलतियाँ हुई हैं और जिस वार्षिक बजट के विरुद्ध यह अनुपूरक लाया गया है, उसके बारे में चर्चा कर रहा हूँ। टंकण की जिस भूल का जिक्र कर रहे थे अभी माननीय वित्तमंत्री जी और 'कौल एण्ड शकधर' की जिस पुस्तक का जिक्र कर रहे थे उसी पुस्तक के पृष्ठ 581 पर लिखा हुआ है कि वित्त विधेयक 1956 के उपस्थापन के बाद, सरकार ने छपाई की कुछ गलतियों को शुद्ध किये जाने की अलग से लिखित प्रार्थना की । यह लिखित प्रार्थना लोकसभा के माननीय अध्यक्ष महोदय से की गई थी।

'कौल एवं शकधर' की संसदीय पद्धति और प्रक्रिया नामक पुस्तक में अंकित है कि वित्त विधेयक 1956 के पुरःस्थापना के बाद सरकार ने छपाई की कुछ गलतियों को शुद्ध किये जाने के लिए अध्यक्ष से लिखित प्रार्थना की। उसमें छपाई की गलतियाँ थीं। अब टंकण में और छपाई में अगर माननीय वित्त मंत्री बहुत अंतर समझते हैं तो यह उनकी समझदारी की विशेषता है। जब केन्द्र सरकार द्वारा लोकसभा में यह किया जा सकता है तो क्या वित्तमंत्री ने विधान सभा के माननीय अध्यक्ष को इस बारे में सूचित किया कि 2007-08 के वार्षिक बजट दस्तावेजों में टंकण की कुछ गलतियाँ रह गई थीं जिन्हें मैं शुद्ध कर सदन के समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ।

लोक सभा में पुरःस्थापित वित्त विधेयक की एक अन्य गलती का प्रभाव यह था कि कुछ वस्तुओं पर शुल्क 155 प्रतिशत के स्थान पर 55 प्रतिशत लग रहा था। लोक सभा अध्यक्ष ने केन्द्र सरकार के लिखने पर इसको स्वीकार किया और उसके बाद इसको सदन में प्रस्थापित किया गया। लोकसभा अध्यक्ष की अनुमति से केन्द्रीय वित्त मंत्री ने लोकसभा में इस बारे में वक्तव्य दिया जिसमें उन्होंने छपाई की इस गलती की ओर सभा का ध्यान आकृष्ट किया। बाद में विधेयक पर खण्डवार विचार के दौरान वित्तमंत्री ने 55 प्रतिशत के स्थान पर 155 प्रतिशत स्थापित किया ।

मैं पूछना चाहता हूँ इस राज्य के वित्तमंत्री से कि क्या उन्होंने झारखंड

विधान सभा अध्यक्ष को अपने बजट दस्तावेज की अशुद्धियों के बारे में लिखा अथवा सूचित किया ? क्या वित्तमंत्री ने जहाँ-जहाँ टंकण की अशुद्धियाँ थीं, उन्हें शुद्ध कर उनके लिये विधान सभा में संशोधन विधेयक प्रस्तुत किया ? महोदय इसके अलावा कई अन्य मामले भी हैं, लोकसभा के कई अन्य उदाहरण भी हैं। लोकसभा द्वारा किसी विधेयक को पारित किये जाने के बाद भी अध्यक्ष को उसके प्रत्यक्ष गलतियों में शुद्धि करने और उन्हें ऐसा परिवर्तन करने का अधिकार है जो सभा द्वारा स्वीकार किये गए संशोधन के परिणामस्वरूप आवश्यक हो गया है। माननीय वित्तमंत्री को इन सब दृष्टांतों को पढ़ लेना चाहिए और तदनुसार प्रक्रिया अपनानी चाहिये, हठधर्मिता छोड़नी चाहिये।

राज्य सरकार के वित्त विभाग द्वारा संसदीय एवं विधायी प्रक्रिया के अनुरूप आचरण नहीं करने और विधान सभा के सामने गलत तथ्य परोसने के कारण मैंने वित्त मंत्री जी के विरुद्ध विधान सभा और विधायकों के विशेषाधिकार हनन का प्रस्ताव माननीय अध्यक्ष को दिया है। विशेषाधिकार हनन का यह प्रस्ताव आज भी लम्बित है और अध्यक्ष महोदय के द्वारा अभी तक उस पर कोई कार्रवाई नहीं की गई है। मैंने जिन बातों को सदन के समक्ष रखा है उन बातों से स्पष्ट है कि इस सदन के विशेषाधिकार का हनन हुआ है। क्या माननीय अध्यक्ष महोदय वित्त मंत्री जी से कहेंगे कि आज, कल, परसों में अपनी गलती सदन के सामने स्वीकार करें या फिर विशेषाधिकार हनन का सामना करें। इन्होंने विशेषाधिकार का हनन किया है, सदन की अवमानना की है। .... (व्यवधान)

महोदय, इस बारे में मुझे अभी कई बातें कहनी हैं। आसन द्वारा मुझे भाषण समाप्त करने का संकेत हो रहा है। अगर आप नहीं चाहते हैं कि मैं बोलूँ तो ठीक है मैं नहीं बोलूँगा। पर मेरा निवेदन है कि इस संदर्भ में एक और पत्र मैंने माननीय सभा अध्यक्ष महोदय को प्रेषित किया है। उसको पढ़ा हुआ मानकर मेरे भाषण का अंग बना लिया जाय। आपको संबोधित इस पत्र में मैने संविधान में वर्णित वित्तीय प्रक्रिया का जिक्र करते हुए वस्तुस्थिति को स्पष्ट किया है। इस पत्र में मैंने प्रासंगिक विषय में आपको संबोधित मेरे पूर्व के पत्रों जैसे पत्रांक अ.म./327/07 दिनांक

18.05.07 का स्मरण कराया है और प्रासंगिक विषय के संबंध में तथात्मक विवरण प्रस्तुत किया है। इस विषय में कतिपय संवैधानिक प्रावधानों का उल्लेख भी मैने किया है।

संविधान के अनुच्छेद 202 से 207 तक वित्तीय मामलों के निष्पादन की जो प्रक्रिया व्याख्यायित है, उसका जिक्र मैं सदन के समक्ष कर देना चाहता हूँ। अनुच्छेद 202 (1) में उल्लेख है कि राज्यपाल प्रत्येक वित्तीय वर्ष के संबंध में राज्य के विधान मंडल के सदन या सदनों के समक्ष उस राज्य की उस वर्ष के लिये प्राक्कलित प्राप्तियों और व्यय का विवरण रखवायेगा जिसे इस भाग में ''वार्षिक वित्तीय विवरण'' कहा गया है। उल्लेखनीय है कि यह ''वार्षिक वित्तीय विवरण'' ही सामान्य अर्थ में राज्य का वार्षिक बजट कहा जाता है।

वित्तीय विवरण में दिए हुए व्यय के प्राक्कलनों में इस संविधान में राज्य की संचित निधि पर भारित व्यय के रूप में वर्णित व्यय की पूर्ति के लिए अपेक्षित राशियां, और राज्य की संचित निधि में से किए जाने के लिए प्रस्थापित अन्य व्यय की पूर्ति के लिए राशियां, पृथक-पृथक दिखाई जाती हैं और राजस्व लेखे से होने वाले व्यय से भेद किया जाता है।

अनुच्छेद 203 में विधान मंडल में प्राक्कलनों के संबंध में प्रक्रिया का जिक्र करते हुये कहा गया है कि प्राक्कलनों में से जितने प्राक्कलन राज्य की संचित निधि पर भारित व्यय से संबंधित हैं वे विधान सभा में मतदान के लिए नहीं रखे जाएंगे। परन्तु उक्त प्राक्कलनों में से जितने प्राक्कलन अन्य व्यय से संबंधित हैं वे विधान सभा के समक्ष अनुदानों की मांगों के रूप में रखे जाएंगे।

इससे स्पष्ट है कि विधान सभा के समक्ष रखे गये वार्षिक वित्तीय विवरण में व्यय के जो प्राक्कलन दिये गये हैं उन्हीं को अनुदानों की मांगों के रूप में विधान सभा के समक्ष रखा जाएगा। परन्तु वित्त मंत्री द्वारा जो दस्तावेज सदन पटल पर रखे गये हैं, उनमें वार्षिक वित्तीय विवरण में व्यय के कुल प्राक्कलन की राशि 16,400.52 करोड़ रुपया है जबकि अनुदानों की मांगों की कुल राशि 16,603.80 करोड़ रुपया

है। विनियोग विधेयक में भी 16,603.80 करोड़ रुपया का ही जिक्र है ।

संविधान के अनुच्छेद 204 में विनियोग विधेयक का जिक्र है। इसमें कहा गया है कि विधान सभा द्वारा अनुच्छेद 203 के अधीन अनुदान लिए जाने के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र, राज्य की संचित निधि में से विधान सभा द्वारा इस प्रकार किए गए अनुदानों की और राज्य की संचित निधि पर भारित, किन्तु सदन या सदनों के समक्ष पहले रखे गए विवरण में दर्शित रकम से किसी भी दशा में अनधिक व्यय की पूर्ति के लिए अपेक्षित सभी धनराशियों के विनियोग का उपबंध करने के लिए विधेयक पुरस्थापित किया जाएगा।

इस प्रकार किये गये किसी अनुदान की रकम में परिवर्तन करने या अनुदान के लक्ष्य को बदलने अथवा राज्य की संचित निधि पर भारित व्यय की रकम में परिवर्तन करने का प्रभाव रखने वाला कोई संशोधन, ऐसे किसी विधेयक में राज्य के विधान मंडल के सदन में या किसी सदन में प्रस्थापित नहीं किया जाएगा और पीठासीन व्यक्ति का इस बारे में विनिश्चय अंतिम होगा कि कोई संशोधन इस खंड के अधीन अग्राह्य है या नहीं ।

स्पष्ट है कि अनुच्छेद 204 के अनुसार सदन पटल पर रखा जाने वाला विनियोग विधेयक अनुच्छेद 203 के अधीन वर्णित 'अनुदानों की मांग' पर आधारित है और अनुच्छेद 203 के अधीन अनुदानों की मांग अनुच्छेद 202 में वर्णित वार्षिक वित्तीय विवरण अर्थात वार्षिक बजट के अनुरूप होगा । इस प्रकार किये गये अनुदानों और राज्य की संचित निधि पर भारित, किन्तु सदन या सदनों के समक्ष पहले रखे गये विवरण में दर्शित रकम से किसी भी दशा में अनधिक व्यय की पूर्ति के लिये अपेक्षित सभी धन राशियों के विनियोग का उपबंध करने के लिये विनियोग विधेयक पुरस्थापित किया जायेगा । अर्थात ''वार्षिक वित्तीय विवरण'' से ''न कम और न अधिक'' का ही विनियोग विधेयक पुरस्थापित होगा ।

परन्तु 2007-08 के वार्षिक वित्तीय विवरण के पृष्ठ-21 पर उल्लिखित कुल राशि 16,400.52 करोड़ रुपया अनुदानों की मांग की कुल राशि 16,603.81

करोड़ रुपया तथा विनियोग विधेयक की समतुल्य राशि से सर्वथा भिन्न है । माननीय मंत्री ने अपने प्रसंगाधीन पत्र में इस त्रुटि को कबूल करते हुये बजट विषयक कुछ और त्रुटियों का उल्लेख किया है । अनुदानों की मांग के पृष्ठ-3 पर Gross Expenditure और Net Expenditure में 20 लाख रुपया का जो अन्तर दिखाया गया है, उसका व्याख्यात्मक विवरण बजट अभिलेख में कहीं नहीं है । यह ''बजट मैनुअल'' के प्रासंगिक प्रावधानों का उल्लंघन है । यहां माननीय मंत्री पुनः तथ्यों को छिपा रहे हैं।

उचंत खाता की राशि भी वार्षिक बजट का अंग होती है। उसका उल्लेख अनुदानों की मांग के अन्तर्गत किये जाने का पर्याप्त कारण बताया जाना चाहिये, जो बजट दस्तावेज अथवा इसके साथ सदन पटल पर रखे गये अन्य दस्तावेजों में कहीं नहीं है । इस 'वार्षिक वित्तीय विवरण' यानी 2007-08 के मूल बजट के पृष्ठ - 25, 26 एवं 28 पर उचंत खातों से व्यय का विवरण अंकित है । ये समस्त राशियां Public Accounts of Jharkhand - receipt के तहत आती हैं । इनमें कहीं भी 'अनुदानों की मांगों' के पृष्ठ-3 की राशि का उल्लेख नहीं है ।

अनुदानों की मांग के पृष्ठ-39 और 41 पर दिये गये तथ्यों के संदर्भ में मंत्री महोदय द्वारा उदाहरण स्वरूप दिये गये तथ्यों को मैं बजट की अवधारणा के प्रतिकूल मानता हूँ । सकल व्यय और निवल व्यय की आड़ में सरकार त्रुटियों को छिपा रही है । पृष्ठ-39 पर भी सरकार ने घटावें 202.69 करोड़ रुपया की कोई व्याख्या नहीं की है, जो सदन को गुमराह करनेवाला है । यदि ऐसा विशेष वित्तीय उपबंध है तो उसकी स्पष्ट व्याख्या की जानी चाहिये थी । जैसा कि मंत्री जी ने लिखा है, जो राशि भारत सरकार से इस प्रकार प्राप्त होती है उसे केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजना अथवा केन्द्रीय योजनागत योजना के तहत सूचीबद्ध किया जाता है । महालेखाकार के हवाले से दिया गया उदाहरण भी इस राशि के अंतर को परिभाषित करने के लिये अपर्याप्त प्रतीत हो रहा है । बजट के अन्तर्गत हर हाल में आय-व्यय में एकरूपता होती है । नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक द्वारा बजट को सर्वाधिक व्यावहारिक एवं वास्तविक बनाने के लिये बजटीय प्रावधानों को निवल (Net) और सकल (Gross)

आधारित बनाने पर जोर दिये जाने का आशय यह नहीं है कि किसी अव्यावहारिक अन्तर को इनमें शामिल किया जाय। स्पष्ट है कि सरकार बजटीय त्रुटियों को छुपाने के लिये विविध काल्पनिक उदाहरण प्रस्तुत कर रही है, जिसका आशय प्रसंगाधीन बिन्दु से सर्वथा भिन्न है। यह पुनः गुमराह करने की एक प्रक्रिया प्रतीत होती है।

उल्लेखनीय है कि माननीय वित्तमंत्री द्वारा 'बजट ऐट ए ग्लांस' के पृष्ठ–1 पर भी कुल व्यय 16,400.52 करोड़ रुपया ही दिखाया गया है, अनुदानों की मांग और विनियोग विधेयक में उल्लिखित राशि 16,603.81 का इसमें कहीं उल्लेख नहीं है। इसी प्रकार वित्तमंत्री ने योजनागत निवेश अथवा व्यय से संबंधित बिन्दुओं के संदर्भ में कोई स्पष्ट उत्तर न देकर 'भारत के योजना आयोग' से योजना व्यय स्वीकृति की प्रक्रिया का विवरण दे दिया है। जहां एक ओर वर्ष 2007–08 के लिये 6676 करोड़ रुपये का योजना उद्व्यय भारत के योजना आयोग द्वारा कर्णांकित है, वहीं दूसरी ओर ''बजट एक झलक'' सहित राज्य सरकार के वार्षिक योजना अभिलेखों में आयोजना व्यय 7539.86 करोड़ रुपया उल्लिखित है। इस अंतर का संतोषजनक स्पष्टीकरण मंत्री जी नहीं दे पा रहे हैं।

अतः वित्तमंत्री जी ने जानबूझ कर राज्य सरकार के वार्षिक बजट में, जिसे एक संवैधानिक संसदीय प्रक्रिया के तहत महामहिम राज्यपाल की अनुशंसा के उपरांत सदन में प्रस्तुत किया जाता है, त्रुटिपूर्ण विवरण देकर सदन एवं सदस्यों के विशेषाधिकार का हनन किया है, जो स्वतः स्पष्ट है।

मुझे लगता है कि आज नहीं, कल नहीं, परसों नहीं, तो कभी न कभी तो कोई भी व्यक्ति जब विधान सभा में इस समय अपनायी जा रही संवैधानिक वित्तीय प्रक्रिया का और इस पर सदन में हुई बहस का अवलोकन करेगा तो उसके सामने सरकारी पक्ष का गैरजिम्मेदाराना आचरण तो उजागर होगा ही इसका पर्दाफाश भी होगा कि एक समय कितनी वित्तीय अराजकता यहाँ पर व्याप्त रही हैं। इसलिए महोदय इस अनुपूरक बजट में मौजूद गंभीर वित्तीय अनियमितताओं का संज्ञान अगर सदन नहीं लेगा तो और कौन लेगा ? ऐसी स्थिति में तो संविधान के सारे नियम,

सारे प्रावधान बेकार हो जायेंगे। सदन का संचालन संविधान और नियमों से होता है। अगर मंत्रीगण ही नियमों, परिनियमों को नहीं मानेंगे, संवैधानिक प्रावधानों को नहीं मानेंगे, जानबूझकर इनकी अवहेलना करेंगे, इनके अनुरूप आचरण नहीं करेंगे तो राज्य की वित्तीय व्यवस्था का भगवान ही मालिक है।

☐ 13–12–2007
झारखंड विधान परिषद्

• • •

खण्ड - 3

उपलब्धियों का अर्द्धसत्य

वर्ष 1999–2000 के वार्षिक बजट पर चर्चा के दरम्यान बहस एवं विचार विमर्श के लिये सरकार की ओर से आज सदन के सामने सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण विभाग का प्रतिवेदन रखा गया है । बहुत सुंदर कागज पर अच्छी और प्रशंसनीय छपाई है । परन्तु प्रतिवेदन को पढ़ने से यही प्रतीत होता है कि Whatever it reveals is suggestive and whatever it conceals is vital. अत्यंत आकर्षक कागज पर छपा हुआ यह प्रतिवेदन विषय वस्तु के बारे में जिस तरह से तथ्यों का खुलासा हमारे बीच में करना चाहता है वह प्रथम दृष्टया आकर्षक लगता है । परन्तु विभागीय बजट दस्तावेज के मायाजाल में जो महत्वपूर्ण सूचनायें छुपा ली गई हैं और आंकड़ों के जंजाल द्वारा जिस तरह दिग्भ्रमित करने का प्रयास किया गया है, तथ्यों की जिस निर्ममता से हत्या कर दी गई है, उसका विश्लेषण करने पर लगता है कि पिछले 9 वर्षों में सिंचाई के काम में, जल प्रबंधन के काम में, बाढ़ नियंत्रण के काम में केवल कागजी खानापूरी हुई है । वस्तुस्थिति से इस प्रतिवेदन का कोई वास्ता नहीं है ।

इस प्रतिवेदन का जो अंश सर्वाधिक आश्चर्यजनक लगता है वह है इसका उपसंहार । सबसे अंत में, सबसे अंतिम पृष्ठ पर, उपसंहार के रूप में जो बातें कही गई हैं, उनका कोई तालमेल इस प्रतिवेदन की विषय वस्तु के साथ नहीं है । आमतौर पर प्रतिवेदन में दिए गए आंकड़े और वर्णित तथ्य जो कह रहे होते हैं,उन्हीं को उपसंहार में होना चाहिए । पर इस प्रतिवेदन के साथ ऐसा नहीं है । उपसंहार में एक विचित्र बात कही गई है कि विगत कुछ वर्षों में विभाग ने अपने सीमित संसाधनों के अंतर्गत समुचित जल प्रबंधन द्वारा आशातीत सफलता हासिल की है । क्या है यह आशातीत सफलता? क्या लक्ष्य रहा है समुचित जल प्रबंधन का? कितनी उपलब्धियां हासिल हुई हैं इस वर्ष में और पहले के वर्षों में ? क्या कहता है यह प्रतिवेदन इस बारे में ?

इसी सरकार के कार्यकाल में आठवीं पंचवर्षीय योजना लागू हुई है। 1990 में जब सातवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि खत्म हुई तो 1990–91 और

1991–92 में राष्ट्रीय स्तर पर योजना अवकाश रहा था। इस अवधि में दो वार्षिक योजनायें लागू हुईं और उसके बाद आठवीं पंचवर्षीय योजना का कार्यकाल दो वार्षिक योजनाओं की अवधि पूरा होने के बाद 1992 में आरंभ हुआ । 1990–92 के दो वर्षों में साढ़े चार लाख हेक्टेयर भूमि में सिंचाई की अतिरिक्त क्षमता के सृजन का लक्ष्य रखा गया था । कितना सृजन हुआ ? इसके पहले एक पर्सपेक्टिव प्लान बनाया गया था बिहार सरकार के द्वारा जिसके अनुसार 2015 ईस्वी तक अपनी पूरी सिंचाई क्षमता का सृजन कर लेने की बात थी। उसमें भी आठवीं पंचवर्षीय योजना तक सृजन क्षमता का एक लक्ष्य रखा गया था । वह लक्ष्य कितना हासिल हुआ ? इस प्रतिवेदन के आरम्भ में ही सरकार ने आंकड़ा दिया है कि जो भी प्रगति हुई है 27.15 लाख हेक्टेयर भूमि में सिंचाई क्षमता सृजन की, वह 1990 के पहले सृजित की जा चुकी थी । 1997–98 में केवल 4 हजार हेक्टेयर और उसके बाद 1998–99 में 27 हजार हेक्टेयर यानी कुल 31 हजार हेक्टर में अतिरिक्त सिंचाई क्षमता सृजित की गई है ।

इस प्रतिवेदन में योजनाओं का अंबार है । अगर कोई अकेले केवल इस प्रतिवेदन को ही देखेगा तो लगेगा कि बिहार की सरकार बहुत सारी योजनाओं को एक साथ कार्यान्वित कर रही है । शायद इसी भ्रम में हमारे मित्र माननीय सदस्य रामकृपाल यादव जी भी पड़ गये हैं । अभी अपने भाषण में उन्होंने कहा कि बहुत सारी योजनाओं का कार्यान्वयन सरकार कर रही हैं । जब आठवीं पंचवर्षीय योजना तैयार हो रही थी तो कहा गया था कि 16 बड़ी और 28 मंझोली परियोजनाएं, सातवीं पंचवर्षीय योजना से आठवीं पंचवर्षीय योजना में आयी हैं । अब इन योजनाओं का क्या हुआ ? इनमें से केवल एक वृहद एवं मध्यम श्रेणी की परियोजना को सरकार ने अपने हाथ में लिया है, बाकी जस की तस हैं । प्रतिवेदन को देखने से लगता है कि सरकार ने बड़ा काम किया है, तीर मार लिया है । इसमें कहा गया है कि ढाई सौ करोड़ रुपया सरकार ने खर्च किया है, सिंचाई परियोजनाओं पर जो इस साल की हमारी बहुत बड़ी उपलब्धि है, क्योंकि बहुत वर्षों के बाद इतना पैसा हमको खर्च करने के लिए मिला है । इसका मतलब सरकार खुद स्वीकार करती है कि इसके पहले के वर्षों में इसने कोई काम नहीं किया, कुछ खास पैसा नहीं मिला। सिंचाई

विभाग को इतना पैसा पहली बार मिल रहा है, कई वर्षों के बाद मिल रहा है, यह इस प्रतिवेदन में अंकित है। जल–जमाव को खत्म करने के बारे में भी कहा जा रहा है कि बहुत दिनों से निधि के अभाव में काम बंद हो गया था, नहीं हो रहा था। केवल यही एक पंक्ति है प्रतिवेदन में, जल जमाव की अत्यंत गम्भीर समस्या के बारे में। इसीलिए मेरा कहना है कि इस प्रतिवेदन में जिन पहलुओं को दिखाया जा रहा है, वे आकर्षक लग रहे हैं, लेकिन जिन्हें छिपाया जा रहा है, वास्तव में वही वाइटल पोर्शन है, वही महत्वपूर्ण भाग है। सिंचाई और जल प्रबंधन के क्षेत्र की खामियों को बड़ी चालाकी से प्रतिवेदन में छुपा लिया गया है।

उसके बाद उपसंहार का दूसरा बिंदु भी ध्यान देने लायक है। उपसंहार के इस दूसरे बिंदु में कहा गया है कि सिंचाई के बेहतर प्रबंधन का नतीजा है कि आज राज्य खाद्यान्न उत्पादन में न केवल आत्मनिर्भर है बल्कि पूर्वी और पूर्वोत्तर राज्यों के लिये खाद्यान्न आपूर्त्ति में एक प्रभावकारी भूमिका का निर्वाह भी कर रहा है। अब कोई भी इनसे यह पूछे कि खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता का मतलब क्या है ? खाद्यान्न उत्पादन कितना हमारे यहां होगा तो हम मानेंगे कि हम आत्मनिर्भर हो गए ? इंडियन काउन्सिल ऑफ मेडिकल रिसर्च के अनुसार खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता के लिये इतना न्यूनतम अनाज पैदा करना होगा जिससे प्रति व्यक्ति कम से कम 2100 कैलोरी ऊर्जा मिले उन सभी व्यक्तियों को जो शहर में रहते हैं और जो गांवों में रहते हैं उन सभी के लिए प्रति व्यक्ति कम से कम 2400 कैलोरी ऊर्जा मिले। इसी के आधार पर गणना की जाती है कि औसतन अनाज की कितनी मात्रा से एक व्यक्ति को प्रतिदिन यह ऊर्जा प्राप्त होगी। निष्कर्ष है कि प्रति व्यक्ति प्रतिदिन कम से कम 490 ग्राम दाल सहित कुल खाद्यान्न चाहिए एक आदमी को औसतन इतनी ऊर्जा प्राप्त करने के लिये। कम से कम इतना अनाज अगर सभी को मिले तो हम मानेंगे कि खाद्यान्न उत्पादन में राज्य को आत्मनिर्भरता प्राप्त हो गई है।

द्वितीय बिहार राज्य सिंचाई आयोग ने भी इस पर विचार किया था। सिंचाई आयोग के प्रतिवेदन के अनुसार बिहार सरकार मानती है कि प्रति व्यक्ति प्रतिदिन चार सौ ग्राम अनाज से हमारा काम चल जायेगा। सिंचाई आयोग का मानना है कि छः सौ ग्राम खाद्यान्न प्रतिदिन प्रति व्यक्ति को मिले तो अच्छा खाना–पीना हमारे

यहां हो रहा है, ऐसा माना जाएगा, न्युट्रीशन के हिसाब से, हिडेन हंगर दूर करने के लिये। आज बिहार की जनसंख्या 10 करोड़ है। यह केवल मैं नहीं कह रहा हूँ, बिहार सरकार ने भी 1998 में प्रकाशित ''बिहार एक झलक'' में यह कहा है। यह सरकारी प्रकाशन है। इसके मुताबिक 1998 में बिहार की जनसंख्या 10 करोड़ 6 हजार हो गई है। अब, इस जनसंख्या के आधार पर आत्मनिर्भरता के लिए कितना अनाज चाहिए ? अगर प्रतिदिन चार सौ ग्राम अनाज एक व्यक्ति को खाने के लिए देना है तो कुल कम से कम 146 लाख टन अनाज प्रतिवर्ष, यहां की कुल जनसंख्या का पेट भरने के लिए चाहिये। अगर पांच सौ ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन का आधार लेकर चलते हैं तो साल भर में 182 लाख टन और एक व्यक्ति की जरूरत प्रतिदिन छः सौ ग्राम अनाज पर फिक्स करते हैं तो हमारे राज्य की जनता को कुल 219 लाख टन खाद्यान्न चाहिये केवल खाना खाने के लिये, केवल भोजन करने के लिए। इसके अलावे पशुओं के खाने के लिए, मिष्ठान्न–पकवान आदि के लिए, आतिथ्य सत्कार के लिये, हमारे किसान बीज रखते हैं उसके लिए भी अनाज की जरूरत होती है। यह सब भी जोड़ लिया जाए, औसतन कुल खाद्यान्न उत्पादन का 10 प्रतिशत मानकर, तो दो सौ लाख टन से ऊपर का आंकड़ा खाद्यान्न उत्पादन का चला जाता है, आत्मनिर्भर होने के लिये।

अब यहाँ के किसान कुल कितना अनाज पैदा कर रहे हैं ? इस बारे में जो आर्थिक सर्वेक्षण है भारत सरकार का वह कहता है कि 1997–98 में बिहार ने जितना अनाज पैदा किया है कुल मिलाकर, सब तरह का खाद्यान्न मिलाकर, वह है 128.95 लाख टन, यानी करीब 129 लाख टन। तो भारत सरकार के हिसाब से हम पैदा कर रहे हैं केवल 129 लाख टन और बिहार सरकार का यह प्रतिवेदन कह रहा है कि यह राज्य खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर हो गया है और यह हुआ है इस सरकार के प्रयत्नों के कारण, सिंचाई के बेहतर प्रबंधन के कारण।

अगर राज्य सरकार के कृषि विभाग का ही आंकड़ा सच मान लिया जाए तब भी हम कैसे पहुंचते हैं खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता के नजदीक। मगर सरकार कह रही है कि हम भारत के पूर्वी राज्यों को भी और पश्चिम बंगाल को भी खिला रहे हैं, उनके लिए खाद्यान्न की आपूर्ति कर रहे हैं। इस पर जरा गौर फरमाया जाय

महोदय। बंगाल और उड़ीसा दोनों की जनसंख्या बिहार से कम है। 1991 की जनगणना में जब बिहार की जनसंख्या 8 करोड़ थी तब बंगाल की जनसंख्या 6 करोड़ थी और उड़ीसा की सवा तीन करोड़ थी। बंगाल आज पैदा कर रहा है 143 लाख टन खाद्यान्न और हम पैदा कर रहे हैं 129 लाख टन। उसकी जनसंख्या कम, हमारी ज्यादा। उसका उत्पादन अधिक हमारा कम। फिर भी राज्य सरकार के सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण विभाग के प्रतिवेदन में कहा जा रहा है कि हम उनको खिला रहे हैं। उड़ीसा भी 66 लाख टन अनाज पैदा कर रहा है, हम से आधी से भी कम जनसंख्या उसकी है। इसके बावजूद पड़ोस के राज्यों को हम खिला रहे हैं, यह बात कही गई है इस प्रतिवेदन के उपसंहार में, कितना हास्यास्पद है यह दावा।

इसके बाद करीब आधा दर्जन और बातें कही गई हैं राज्य सरकार के इस प्रतिवेदन में। जैसे कि सिंचाई के कुशल प्रबंधन से देश का एक बड़ा भू-भाग हमारे उत्पादित अन्न के लिए बड़ा बाजार साबित हो गया है, कि अधिक अन्न उत्पादन का प्रभाव यह है कि देश के अन्य भागों की तुलना में मूल्य हमारे राज्य में स्थिर रहे और इस बीच महंगाई कम परिलक्षित हुई। प्रतिवेदन के अनुसार खेतों में मजदूरी की बढ़ती मांग का नतीजा है कि कृषि मजदूरों को अधिक समय तक कार्य मिल रहा है और न्यूनतम मजदूरी की समस्या हल हो गई है। यह सब इसलिए हुआ है कि सिंचाई का प्रबंधन बेहतर हो गया है।

न्यूनतम मजदूरी की समस्या सिंचाई विभाग के इस प्रतिवेदन के अनुसार हल हो गई है। इस सरकार को यह बात स्पष्ट करनी चाहिए कि न्यूनतम मजदूरी की समस्या अब इस राज्य में है या नहीं ? कृषि व्यवस्था में सुदृढ़ीकरण हुआ है, औद्योगिक उत्पादन की खपत बढ़ गई है, भूख और अकाल से करीब-करीब हम मुक्त हो गए हैं यह सारी बातें इस प्रतिवेदन में कही गई हैं। परन्तु इसका आधार नहीं बताया गया है कि इस निष्कर्ष पर इस प्रतिवेदन का उपसंहार कैसे पहुंचा यह जानने की उत्सुकता हम सभी को होगी।

जब भी राज्य सरकार कोई परियोजना बनाती है और उस परियोजना को केन्द्र के सामने स्वीकृति हेतु रखती है या सिंचाई विभाग अपनी कोई परियोजना

बिहार सरकार के सामने रखता है या विश्व बैंक अथवा किसी अन्य की सहायता के लिए कोई परियोजना प्रस्तुत की जाती है तो उसमें विस्तार से बताया जाता है कि अगर यह परियोजना लागू हो जाएगी, पूरी हो जाएगी, सफल हो जाएगी तो अमूक-अमूक उपलब्धियाँ हासिल होंगी। जिस तरह किसी परियोजना प्रतिवेदन में उसे स्वीकृत कराने के लिये, उसका लाभ-लागत अनुपात बढ़ाने के लिए, उसका इकनामिक रेट ऑफ रिटर्न अधिक दिखाने के लिये एक आदर्श परियोजना की उपलब्धियां गिनायी जाती हैं उसी तरह की कागजी उपलब्धियों और विशेषताओं को सिंचाई विभाग ने अपने इस प्रतिवेदन के उपसंहार में लाकर रख दिया है और कह रहा है कि सरकार ने बहुत बड़ा तीर मार लिया है। इसीलिए मैंने कहा कि जो चीजें महत्वपूर्ण हैं, संवेदनशील हैं, वस्तुपरक हैं, उन चीजों को स्पष्ट किया जाना चाहिए, उन सभी चीजों को छुपा लिया गया है इस प्रतिवेदन में। मेरा प्रयास है कि सदन के माध्यम से मैं सरकार का ध्यान इस ओर आकृष्ट करूं।

इसके अतिरिक्त ऐसी ही उक्तियाँ, एसी ही बातें इस प्रतिवेदन में बाढ़ नियंत्रण के बारे में भी कही गई हैं। आखिर बाढ़ क्या है ? बाढ़ नियंत्रण की कठिनाई और समस्या के बारे में हमेशा बताया जाता है कि पड़ोसी देश नेपाल और उसके उपर तिब्बत के हिमालय क्षेत्र में अधिक वर्षापात के कारण नेपाल से होकर भारत में आने वाली नदियाँ उत्तर बिहार के मैदानी इलाकों में जलप्लावन की स्थिति पैदा कर देती हैं और बाढ़ लाती हैं। यह वास्तविकता है, परन्तु हम अपने यहां के बारे में क्या सोचते हैं? गंगा नदी यहां की सबसे बड़ी नदी है। इसका 80-85 प्रतिशत जलग्रहण क्षेत्र इस देश में है और जो नदियां बिहार में बाढ़ लाने का काम, कहा जाता है कि कर रही हैं, उनका 80-85 प्रतिशत जलग्रहण क्षेत्र इस देश के बाहर में है। इसलिए हम नेपाल को कोस कर के फ्री हो जाते हैं, मुक्त हो जाते हैं कि अपना कार्य कर लिया हमने। आज तक बिहार सरकार ने यह सवाल नहीं उठाया है भारत सरकार के सामने कि देश के अन्य राज्यों में जो जल प्रबंधन परियोजनायें बन रही हैं, जितने डैम और रिजरवायर बन रहे हैं, केन्द्रीय जल आयोग द्वारा, उन परियोजनाओं की स्वीकृति के समय उनमें बाढ़ शमन का प्रावधान क्यों नहीं रखा जा रहा है। यह प्रावधान ऐसी सभी परियोजनाओं में अनिवार्य होना चाहिये। अगर बाढ़ शमन की

क्षमता उनमें रखी जायेगी तो 80–85 प्रतिशत पानी जो गंगा नदी में ऊपर से आ रहा है, वह पानी बाढ़ के दिनों में ऊपर रूकेगा और जब बाढ़ का मौसम खत्म हो जायेगा, तो इसे धीरे–धीरे छोड़ा जायेगा । तब गंगा नदी के बिहार क्षेत्र में गर्मी के दिनों में भी पानी की कमी नहीं होगी । इतना ही नहीं, जिन परियोजनाओं में हम हिस्सेदार हैं, जैसे वाणसागर परियोजना, जिनमें हम अपना हिस्सा दे रहे हैं, उनमें भी बाढ़ शमन के बारे में प्रावधान रखा जाय, यह हमने कभी नहीं कहा है । तो आखिर हमारा क्या प्रयास है इस दिशा में?

हम ड्रेनेज की बात करते हैं । आखिर ड्रेनेज कैसा होना चाहिए। कहा जाता है कि सिंचाई के मामले में काम ऊपर से शुरू होता है और ड्रेनेज के मामले में काम नीचे से शुरू होता है । नीचे के इलाकों में जब हमारा ड्रेनेज सिस्टम ठीक रहेगा तो ऊपर का पानी नीचे की ओर बहेगा और निकल जायेगा । मगर हो यह रहा है कि हम जब ड्रेनेज का काम करते हैं तो इसे सदा ऊपर से शुरू करते हैं और कहते हैं कि हमने बहुत बड़ा काम इतने दिनों में कर लिया है । गंगा नदी में जलस्तर काफी नीचे रहता है तब भी उत्तर बिहार बाढ़ और जल जमाव की चपेट में रहता है क्योंकि जल निकासी नहीं हो पाती है । नीचे के इलाकों में ड्रेनेज सिस्टम दुरूस्त नहीं है, चोक्ड है, इसका अतिक्रमण हो गया है । बेतरतीब बन रही विभिन्न कार्य विभागों की सरकारी परियोजनाओं ने भी इसे बाधित कर दिया है ।

इसी तरह से सिंचाई प्रबंधन के बारे में भी बात कही जा रही है कि हमने सिंचाई की बहुत अच्छी व्यवस्था कर ली है । अब अगर 27.15 लाख हेक्टेयर सिंचाई क्षमता 1990 तक सृजित हो गई थी और आठवीं पंचवर्षीय योजना का दस्तावेज 1992 में बना है, जिसे इसी सरकार ने तैयार किया है, उस दस्तावेज में यह सरकार कहती है कि 27.15 लाख हेक्टेयर सृजित सिंचाई क्षमता में से 25.25 लाख हेक्टेयर सिंचाई क्षमता का उपयोग हो रहा है । यह बात मैं नहीं कह रहा हूँ, यह बिहार सरकार कह रही है। यानी जितनी क्षमता हमने सृजित की है, उसके 90 प्रतिशत से अधिक का उपयोग हो रहा है। मगर अब नई बात सामने आ गई है । अब कहा जा रहा है कि नहीं अभी तक कुल केवल 17 लाख हेक्टेयर सिंचाई क्षमता का ही उपयोग किया जा रहा है । इस प्रतिवेदन के हवाले से कहा जा रहा है कि जिस

समय 25 लाख हेक्टेयर में सिंचाई क्षमता के उपयोग की बात कही गयी थी, उस समय वह क्षमता वास्तव में 25 लाख हेक्टेयर नहीं थी, बल्कि 14–15 लाख हेक्टेयर के आसपास थी। आखिर कैसे, किस आधार पर? एक ही सरकार के एक ही विभाग का एक ही विषय में चार–पांच वर्षों के अंतराल में दो प्रकार के विचार आने का अर्थ क्या है ?

इस सरकार की क्या प्राथमिकता है सिंचाई के बारे में ? सरकार किस तरह की सिंचाई करना चाहती है ? 'इंटेन्सिव इरिगेशन' करना चाहती है या 'एक्सटेन्सिव इरिगेशन' करना चाहती है ? महोदय, हमारे यहां जितनी परियोजनाएँ बनी हैं, सब की सब, जैसा कि पिछड़े राज्यों में प्राथमिकता होनी चाहिए इंटेन्सिव इरिगेशन के लिए बनी हुई हैं । जब सृजित क्षमता के विरुद्ध उपयोगिता की बात आती है तो सरकार कहती है कि यह उपयोग क्षमता 25.25 लाख हेक्टेयर से घटकर 14 या 15 लाख हेक्टेयर पर आ गई है, तो आखिर यह कैसे हुआ ? पिछले 10 वर्षों से सरकार मान रही है कि 1990 में ही 27.15 लाख हेक्टेयर में सिंचाई क्षमता का सृजन हो चुका है तो आखिर उपयोगिता और सृजन के बीच में जो गैप है, वह गैप आज तक क्यों नहीं भरा गया ? अब सरकार यह कहती है कि इस बीच हमने सृजन क्षमता का विकास नहीं किया, बल्कि हमने प्रयास किया कि हमारी सिंचाई, हमारा जल प्रबंधन अच्छा हो और पूर्व में सृजित क्षमता को अधिक से अधिक उपयोग योग्य बनाया जाये । उसका एक नियामक सरकार की नजर में यह है कि हमारा राजस्व बढ़ रहा है। पर कैसे? सिंचाई दर में दो गुना की वृद्धि कर दी गई है । पहले औद्योगिक क्षेत्रों में जो पानी जाता था, उसके लिए एक रुपया प्रति लीटर के हिसाब से सरकार वाटर रेन्ट वसूलती थी, आज यह दर 3 रुपया प्रति लीटर हो गया है, आगे 4 रुपया प्रति लीटर होनेवाला है। सिंचाई कर, औद्योगिक जल खपत की दर, सरकार बढ़ा रही है। यह बढ़ा हुआ पैसा उद्योग से आ रहा है, किसान से भी आ रहा है पर उसमें वृद्धि नगण्य है । और सरकार कह रही है कि सिंचाई से अधिक पैसा इकट्ठा हो रहा है, राजस्व बढ़ रहा है, जो बेहतर सिंचाई प्रबंधन का उदाहरण है । (लाल बत्ती) दो मिनट में मैं अपनी बात को समाप्त करूंगा, महोदय ।

इसके अतिरिक्त जो कतिपय बड़ी परियोजनायें इस प्रतिवेदन में गिनायी गई

हैं, वे आज की नहीं हैं। कुछ चौथी पंचवर्षीय योजना की हैं, कुछ पांचवीं पंचवर्षीय योजना की हैं। उस समय से ये लंबित चली आ रही हैं। कई पंचवर्षीय योजनाओं से छूटते-छूटते ये परियोजनाएँ आज तक अधूरी या बिना आरम्भ हुये चली आ रही हैं। सरकार ने इस विभागीय प्रतिवेदन में इनको संग्रहित कर दिया है। आकर्षक छपाई वाले इस प्रतिवेदन में सरकार ने अपनी उपलब्धियों के नाम पर वास्तव में परियोजनाओं की कब्रगाह का जिक्र किया है। पहले कहा जाता था कि वृहद् और मध्यम श्रेणी की सिंचाई परियोजनाओं से बिहार में 65 लाख हेक्टेयर की सिंचाई हो सकती है। अब कहा जा रहा है कि इनसे 66 लाख हेक्टेयर की सिंचन क्षमता है। आखिर कैसे ? 1950-51 के प्रतिवेदन को भी आप पढ़ेंगे, महोदय, तो पायेंगे कि उस समय भी यही आंकड़ा दिया जाता रहा है। आखिर कैसे है यह ? क्या आधार है इसका ? कौन-कौन सी परियोजनायें हैं, जिनसे हम इतनी सिंचाई क्षमता सृजित करेंगे ? इनकी कुल क्षमता कितनी होगी ? इसकी कोई गणना नहीं बतायी जा रही है। वस्तुतः राज्य के कुल क्षेत्रफल का 70 प्रतिशत का सिंचन क्षमता का आधार मानकर जो गणना कभी की गई थी, थम्ब रुल की तरह वही आज तक दुहराई जा रही है। जिसका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। इस बीच काफी तकनीकी प्रगति हुई पर सरकार ने इसका उपयोग कर लक्ष्य में वैज्ञानिक सुधार नहीं किया है। (लाल बत्ती)

महोदय, मैं एक मिनट और बोलना चाहता हूं। मैं कहना चाहता हूं कि राज्य में ट्राइबल सब प्लान की सबसे महत्वाकांक्षी सिंचाई परियोजना है, स्वर्णरेखा-बहुद्देशीय सिंचाई परियोजना। आज यह परियोजना दम तोड़ रही है। इस परियोजना के लिये सरकार विश्व बैंक से सहायता नहीं स्वीकृत करा पा रही है। 1989 में उसका प्रथम चरण खत्म हो गया, उसके बाद राज्य सरकार फिर से विश्व बैंक के यहां हाथ जोड़ कर आरजू कर रही है, वित्तीय सहायता के लिये लेकिन इतने दिनों में विश्व बैंक राज्य सरकार की बात नहीं सुन रहा है। विश्व बैंक के दबाव में राज्य सरकार के द्वारा फिर से इस परियोजना की फिजिबिलिटी रिपोर्ट तैयार कराई गई है। इस बारे में जो अद्यतन स्थिति है, मैं उसके बारे में केवल तीन-चार पंक्तियाँ पढ़ देना चाहता हूँ। भारत सरकार के वाटर रिसोर्सेस डिपार्टमेन्ट में और मिनिस्ट्री ऑफ

इकानोमिक अफेयर्स में इस बारे में जो तथ्य अंकित है, वह तथ्य इस प्रकार है।

After protracted correspondence with the World Bank, an identification mission visited the proposed project in July, 1996 and simultaneously analysed the reduced package proposed by Govt. of Bihar and Orissa. Based on this analysis and further discussion an Draft Identification Report was prepared.

यानी विश्व बैंक कहता है कि बिहार सरकार द्वारा पुनः तैयार कराई गयी फिजिबिलिटी रिपोर्ट जब वहाँ गयी तो उसके बाद विश्व बैंक ने आइडेंटिफिकेशन रिपोर्ट तैयार करवाया। महोदय, आइडेंटिफिकेशन रिपोर्ट किसी परियोजना का प्रारम्भिक चरण होती है। पहले आइडेंटिफिकेशन रिपोर्ट बनती है, उसके बाद डिटेल प्रोजेक्ट रिपोर्ट बनती है और तब उसके आधार पर योजना स्वीकृत होने, उसकी तकनीकी और प्रशासनिक स्वीकृति होने, निविदा होने, संवेदक चयन होने के बाद परियोजना पर काम शुरू होता है। मगर, राज्य सरकार की फिजिबिलिटी रिपोर्ट पहुंचने के बाद विश्व बैंक कह रहा है कि हम आइडेंटिफिकेशन मिशन भेज रहे हैं और अगर परियोजना की स्वीकृति मिल भी गयी, तो फिर से वह दो चरणों में होगी। दो चरणों के अन्तिम चरण का काम इस पर निर्भर करेगा कि पहले चरण में क्या प्रगति हुई, कितनी उपलब्धि हासिल की गई।

इस राज्य की जितनी पुरानी सिंचाई परियोजनाएं हैं, जैसे कनहर सिंचाई परियोजना है, ओरंगा है, अमानत है, जब 1974 में वाणसागर समझौता हुआ था उस समय कहा गया था कि सूखा प्रवण क्षेत्र की इन सिंचाई परियोजनाओं को सरकार प्राथमिकता के आधार पर पूरा करेगी, मगर सूखा ग्रस्त पलामू और गढ़वा जिले की ये परियोजनाएं आज दम तोड़ रही हैं। 450 मेगावाट पनबिजली बन सकती है कनहर से, 450 मेगावाट पनबिजली बन सकती है कदवन से, परन्तु ये परियोजनाएं आज नहीं ली जा रही हैं। इनपर कोई बात नहीं हो रही है। कनहर परियोजना को अनावश्यक रूप से बिहार और मध्यप्रदेश की संयुक्त परियोजना करार दिया गया है। ओरंगा, अमानत, कनहर ये सबसे सूखाग्रस्त क्षेत्र की परियोजनाएं हैं और सोन की पूरी सिंचाई व्यवस्था को स्टैब्लिश करने वाली परियोजनाएँ हैं। परन्तु इनकी प्रगति शून्य है।

श्री रघुवंश प्रसाद सिंह जब ऊर्जा मंत्री थे, तो उन्होंने कहा था कि बिहार सरकार इनमें से दो परियोजनाओं, कनहर और कदवन, को केन्द्र सरकार के पावर प्रोजेक्ट के अन्दर दे दे, एन. एच. पी. सी. को दे दे, तो इनको फाइनेन्स करायेंगे। परन्तु बिहार सरकार ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया और आज ये सारी की सारी सिंचाई परियोजनाएं दम तोड़ रही हैं। इनका कोई जिक्र इस प्रतिवेदन में नहीं है। इसी तरह आधी–अधूरी और मरम्मत एवं रखरखाव के बिना दम तोड़ रही अनेक परियोजनायें पूरे राज्य में फैली हुई हैं। इनमें से कइयों का पोस्ट–फैक्टो इवैलुयेशन, निर्माणोपरांत मूल्यांकन किया गया है और पाया गया है कि इनमें से कुछ परियोजनायें तो मात्र 7 प्रतिशत से 13 प्रतिशत की क्षमता पर चल रही हैं। ये परियोजनायें विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं की हैं। पहली से लेकर छठी पंचवर्षीय योजना काल में निर्मित परियोजनायें इनमें शामिल हैं। मगर इनके पुनर्स्थापन के बारे में कोई चर्चा सरकारी प्रतिवेदन में नहीं है। योजना मद के अलावा गैरयोजना मद में जिस प्रकार दक्षिण भारत के राज्य पर्याप्त केन्द्रीय सहायता प्राप्त कर रहे हैं, उसी तरह की केन्द्रीय सहायता प्राप्त करने के प्रयत्नों के बारे में भी यह प्रतिवेदन मौन है। इसीलिये मैने आरम्भ में कहा था कि इस प्रतिवेदन में महत्व के तथ्यों को छुपा लिया गया है। उन्हें ओझल कर दिया गया है। सरकार को शुतुरमुर्ग की तरह बालुका राशि में मुँह छुपाने के बदले वास्तविकता का सामना करना चाहिये। सदन के समक्ष सही तथ्य रखना चाहिये।

□ 13 अप्रील1999
बिहार विधान परिषद्

•••

जलनीति की प्राथमिकतायें

केन्द्र सरकार ने काफी विचार विमर्श करने के बाद राष्ट्रीय जल नीति का एक प्रारूप स्वीकृत किया है। विचार–विमर्श के दौरान न केवल राज्य सरकारों और जल प्रबंधन के विशेषज्ञों बल्कि सामाजिक संस्थाओं और गैर सरकारी संस्थाओं से भी केन्द्र सरकार ने मशविरा किया है। यह एक व्यापक एवं समन्वित नीति है, बहुआयामी भी है और कई मामलों में सांकेतिक भी है। जल नीति स्वीकृत करने के पहले केन्द्र सरकार ने एक कृषि नीति भी स्वीकृत की है। कृषि नीति में उल्लेख है कि भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के लिए कृषि के क्षेत्र में कम से कम 4 प्रतिशत का विकास दर हासिल करने का प्रयास होना चाहिये। इस कृषि नीति में भी जल प्रबंधन का संकेत है। महोदय, राष्ट्रीय जल नीति सबसे पहले 1987 में बनी थी और उस राष्ट्रीय जल नीति को बनाने के लिए एक राष्ट्रीय जल संसाधन परिषद् की स्थापना 1984 में की गई थी। तब श्री राजीव गांधी देश के प्रधानमंत्री थे। देश के आजाद होने के बाद और योजनात्मक विकास व्यवस्था स्वीकार करने के 40–45 वर्षों के बाद तत्कालीन केन्द्र सरकार ने विभिन्न प्रकार की चुनौतियों का सामना करने के लिए एक जल नीति की आवश्यकता महसूस की थी।

स्वतंत्रता पूर्व के कालखंड में और स्वातंत्र्योत्तर योजनात्मक विकास के आरंभिक कालखंड में जब जल प्रबंधन योजनाओं का काम आरंभ हुआ था तो उस समय योजनायें बनाना और उन योजनाओं को लागू करना बहुत कठिन नहीं था। जिन जगहों पर जल प्रबंधन आसान था वहाँ जल संसाधन विकास परियोजनाओं के क्रियान्वयन हेतु केन्द्र सरकार ने भी और राज्य सरकारों ने भी पहले हाथ डाला। जैसे–जैसे हम परियोजनाओं का निर्माण करते गये और जल संसाधन के उपयोग में वृद्धि करते गये, वैसे–वैसे जल संसाधन के प्रबंधन और योजनाओं के निर्माण की चुनौतियाँ भी कठिन होती चली गयीं। क्योंकि धीरे–धीरे जल प्रबंधन के आसान क्षेत्रों में परियोजना निर्माण का काम पूरा होते गया और उन्हीं क्षेत्रों में जल उपयोग परियोजनाओं का निर्माण शेष रह गया जहां इनका आयोजन, इनकी आयोजना और

इनका प्रबंधन अपेक्षाकृत कठिन था । साथ ही पेय जल, कृषि और सिंचाई के अतिरिक्त अर्थ व्यवस्था के अन्यान्य क्षेत्रों में भी जल के उपयोग की आवश्यकता दिन पर दिन बढ़ती गई। ऐसी स्थिति में सतह जल एवं भूगर्भ जल की सीमित मात्रा को देखते हुये जलोपयोग की प्राथमिकताओं का निर्धारण और जल गुणवत्ता का संरक्षण आवश्यक प्रतीत होने लगा । परियोजनाओं के निर्माण में पर्यावरण प्रभाव आकलन और पर्यावरण प्रबंधन योजना का स्थान प्रमुख होने लगा ।

बिहार की सभी पंचवर्षीय योजनाओं में जल उपयोग के संदर्भ में किसी न किसी प्रकार की प्राथमिकता के संकेत मिलते हैं। पहली पंचवर्षीय योजना में सरकार ने 'ग्रो मोर फूड' अभियान के अंतर्गत लघु सिंचाई योजनाओं पर विशेष बल दिया था। आजादी के पहले जल संसाधन के उपयोग की जो योजनाएं बनी थीं उनका प्रमुख लक्ष्य था क्षेत्रीय विकास। उसी कालखंड में बाढ़ नियंत्रण के लिये तटबंधों के निर्माण की योजनायें भी आरम्भ हुई थीं। उस समय बिहार के वित्त मंत्री और कृषि मंत्री अनुग्रह नारायण सिन्हा ने कहा था कि हम जो योजनाएं बना रहे हैं, उन योजनाओं को बनाने में न केवल इस राज्य की, बल्कि पड़ोसी राज्यों की जनता की बेहतरी और विकास की परिकल्पना भी शामिल है । इस प्रकार की सोच के साथ जल प्रबंधन योजनाओं का काम आरंभ हुआ । यद्यपि नीतिगत प्राथमिकताओं के मद्देनजर यह उपक्रम पूर्णतः सुविचारित और सुनियोजित नहीं हुआ था, फिर भी प्रत्येक योजना में जल प्रबंधन के विभिन्न आयामों का स्पर्श अवश्य किया गया था।

दूसरी पंचवर्षीय योजना में जल संसाधन विकास की वृहद एवं महत्वाकांक्षी योजनायें ली गयीं। साथ ही बिहार 'इरिगेशन एण्ड फ्लड प्रोटेक्शन एक्ट' भी बनाया गया। तीसरी पंचवर्षीय योजना में जल संसाधन के प्रबन्धन को इतना महत्व दिया गया कि योजना उद्व्यय का चालीस प्रतिशत हिस्सा जल संसाधन के प्रबन्धन की योजनाओं को लागू करने के लिए व्यय करने का लक्ष्य रखा गया । इसी तरह से चौथी पंचवर्षीय योजना में जल प्रबंधन परियोजनाओं के साथ सामाजिक आयाम जुड़े। अनुसूचित क्षेत्रों को विशेष प्रमुखता दी गयी। अब तक जिन योजनाओं में जल संसाधन की क्षमता सृजित हो चुकी थी, उनका अधिकतम उपयोग करने के बारे में

विशेष ध्यान दिया गया और कमांड एरिया डेवलपमेंट एजेंसी की स्थापना हुई । इसके बारे में अधिनियम बनाया गया। पांचवीं पंचवर्षीय योजना में भी जल संसाधन की सृजित क्षमता का उपयोग करने के बारे में विशेष जोर दिया गया और कमांड एरिया डेवलेपमेंट एजेंसी को मजबूत करने की दिशा में ठोस पहल हुई । पांचवीं पंचवर्षीय योजना में सूखा प्रभावित क्षेत्रों की जल प्रबंधन योजनाओं पर विशेष ध्यान देने की बात आयी। इन सभी परियोजनाओं में बाढ़ नियंत्रण के लिये नदियों और शहरों को तटबंधों से घेरने की योजना को प्रमुखता दी गई। तटबंध बनाकर नदियों को नियंत्रित किया गया और शहरों को सुरक्षा प्रदान की गई । जल आधिक्य और जल जमाव वाले क्षेत्रों से जल निकासी की परियोजनाओं पर भी कार्य आरम्भ हुआ।

इस बीच 1972 में स्टॉक होम में पर्यावरण पर एक विश्वस्तरीय सम्मेलन हुआ । उसके बाद जल प्रबन्धन की आयोजना में पर्यावरण संरक्षण के पक्ष को मजबूती से रखा गया और उस समय से ही जल प्रबन्धन के क्षेत्र में पर्यावरण की सुरक्षा एवं विकास और जल प्रबंधन परियोजनाओं के कारण होने वाले पर्यावरण की क्षति पर विशेष ध्यान दिया गया। जल संसाधन के विकास और प्रबंधन व्यवस्था के साथ साथ इससे पर्यावरण को होनेवाली क्षति की भरपाई करने के लिये उपाय करने और इन उपायों को लागू करने के लिये पर्यावरण प्रभाव अध्ययन तथा पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबंधन कार्यक्रम को परियोजनाओं के साथ जोड़ा गया। उसके बाद आगे की सभी पंचवर्षीय योजनाओं में सृजित सिंचाई क्षमता का उपयोग करने के साथ-साथ अतिरिक्त सिंचाई क्षमता सृजन करने का लक्ष्य भी रखा गया। छठवीं पंचवर्षीय योजना में तय किया गया था कि अगली तीन पंचवर्षीय योजनाओं में पैंसठ लाख हेक्टेयर सिंचाई क्षमता का सृजन मध्यम और बड़ी परियोजनाओं से किया जायेगा। जलाशयों के बहुद्देशीय उपयोग की अवधारणा पर इसके पहले से ही कार्य आरम्भ हो चुका था।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना काल से विश्वबैंक की सहायता लेने और विभिन्न प्रकार की बाह्य सहायता से जल संसाधन विकास परियोजनाओं को क्रियान्वित करने की पहल राष्ट्रीय स्तर पर आरम्भ हुई, जिसे राज्य सरकारों ने भी अपनाया।

बिहार में स्वर्णरेखा परियोजना को प्रमुखता से क्रियान्वित करने हेतु विश्वबैंक सहायता प्राप्त हुई। ऐतिहासिक सोन नहर परियोजना के पुनर्स्थापन के लिये भी विश्व बैंक से सहायता लेने का प्रयास हुआ। छठवीं एवं सातवीं योजना में भूमिगत एवं सतही जल संसाधन के मिश्रित उपयोग के कार्यक्रमों पर भी गंडक कमांड क्षेत्र में एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्थान के सहयोग से पायलट प्रोजेक्ट आरम्भ किया गया।

आज जब हम पुराने दस्तावेज देखते हैं तो यह स्वाभाविक सवाल उठता है कि अब तक नौ पंचवर्षीय योजनाएं लागू हो गयीं, परन्तु जल प्रबंधन एवं विकास के क्षेत्र में हम कहाँ हैं ? सिंचाई क्षमता के सृजन और सृजित क्षमता के उपयोग के क्षेत्र में सदन के सामने जल संसाधन विभाग का वार्षिक विवरण एवं उसका दस्तावेज रखा गया है। इससे स्पष्ट होता है कि छठी पंचवर्षीय योजना में जो लक्ष्य रखा गया था और आज दसवीं पंचवर्षीय योजना में भी हम उसी लक्ष्य पर विचार कर रहे हैं। यह लक्ष्य भारत सरकार के योजना आयोग द्वारा रखा जाता है और इसे प्राप्त करने हेतु केन्द्र से वित्तीय सहायता भी प्राप्त होती है। फिर भी हम अपनी स्थिति में सुधार के लिये इनका समुचित उपयोग नहीं कर सके। कारण कि अपने यहाँ हमने योजनाओं का चयन राज्य के विकास के दृष्टिकोण से नहीं वरन राजनीतिक आधार पर करना शुरू कर दिया। इसका नतीजा यह हुआ कि एक पंचवर्षीय योजना में आरम्भ की गई योजनायें समय सीमा के भीतर पूरी नहीं हुई। वे आगे की पंचवर्षीय योजनाओं में खिसकती गई। दूसरी ओर राजनैतिक दबाव के कारण नये क्षेत्रों में नयी परियोजनाओं पर काम शुरू हो गया। इस तरह वार्षिक और पंचवर्षीय योजना दस्तावेजों में लम्बित परियोजनाओं की सूची साल दर साल लम्बी होती चली गई। इनका काम समय पर पूरा नहीं हुआ। इनका व्यय भार बढ़ता गया। इनसे सृजित क्षमता को उपयोग के लायक नहीं बनाया गया। इसका नतीजा है कि तृतीय पंचवर्षीय योजना काल में जिन कतिपय जल संसाधन विकास योजनाओं को पूरा करने का निर्णय लिया गया था, वे योजनाएं आज भी अधूरी पड़ी हुई हैं।

फिर लक्ष्य रखा गया था सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान राज्य की मध्यम और बड़ी सिंचाई परियोजना से सिंचाई की जितनी क्षमता है, उस पूरी क्षमता का

हम 2017 तक सृजन कर लेंगे। आज हम जब 2017 के लिये तय किये गये इस लक्ष्य की ओर हुई प्रगति की तरफ देखतें हैं तो पातें हैं कि आज भी हम करीब-करीब वहीं खड़े हुए हैं, जहाँ से चले थे। एक दूरगामी सोच की, दीर्घकालीन योजना परिप्रेक्ष्य की, योजनात्मक सोच की, दूरदृष्टि की कमी दिखाई पड़ती है। उस कमी को पूरा करने के लिए यह जरूरी है कि एक समन्वित एवं व्यापक राज्य जल नीति तैयार की जाय। राज्य जल नीति बनाने के बारे में हम गहराई से सोचें। सातवीं पंचवर्षीय योजना में सोलह बड़ी और 69 मध्यम श्रेणी की परियोजनाएं ली गई थीं वे पूरी नहीं हो पायीं। आज भी वे हमारे योजना दस्तावेज में लम्बित परियोजनाओं की सूची में मौजूद हैं। सरकार को बताना चाहिये कि उसने इस संबंध में कौन सी नीति अख्तियार करने का फैसला किया है ? जब हम पिछले वर्ष भी और इस वर्ष का भी बजट भाषण सुन रहे थे, तो उसमें वित्त मंत्री ने कहा था कि सरकार एक व्यावहारिक बजट बना रही है, शून्य आधारित बजट बना रही है यह जो तथाकथित शून्य आधारित बजट है, उसमें सिंचाई परियोजनाओं के बारे में क्या किया गया है? क्या सोचा गया है ? इन योजनाओं को पूरा करने के लिये क्या लक्ष्य रखा गया है? किन योजनाओं को प्राथमिकता के आधार पर पूरा करने की कोशिश की गयी है और किन्हें शिथिल करने के बारे में निर्णय लिया गया है, यह स्पष्ट नहीं है।

सरकार के पास अगर निधि की व्यवस्था नहीं है तो वह इन योजनाओं के लिए सरकारी एवं गैर सरकारी वित्तीय संस्थाओं से निधि लेने की बात कर सकती है। राष्ट्रीय जलनीति में निजी क्षेत्रों की भागीदारी के बारे में माननीय सदस्य बद्री बाबू कह रहे थे। लेकिन उसमें निजी क्षेत्रों की भागीदारी के बारे में जो कहा गया है वह विशेष चिन्ता का विषय नहीं है। यह राज्य के ऊपर निर्भर है कि वह किस प्रकार से इस तरह के संकेत को ग्रहण करता है, किस प्रकार से इसके आलोक में अपनी जल नीति बनाना चाहता है और जनहित में इन विचारों का प्राथमिकता के अनुसार किस प्रकार अपनी नीति में समावेश करना चाहता है। राष्ट्रीय जलनीति में कहा गया है कि जहाँ कहीं व्यावहारिक हो वहाँ जल के विभिन्न उपयोगों के लिये जल संसाधन परियोजनाओं की आयोजन, विकास और प्रबंधन में निजी क्षेत्र की भागीदारी

को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। निजी क्षेत्र की भागीदारी से नवीनतम विचार लागू करने, वित्तीय संसाधन जुटाने, नियमित प्रबंध व्यवस्था लागू करने, सेवा कुशलता में सुधार करने और जल उपयोगकर्ताओं के प्रति उत्तरदायी बनाने में मदद मिल सकती है। विशिष्ट स्थितियों पर निर्भर करते हुए जल संसाधन सुविधाओं के निर्माण, स्वामित्व, प्रचालन और स्थानान्तरण में निजी क्षेत्र की भागीदारी पर विचार किया जा सकता है। यह एक विकल्प है। यह बंधन नहीं है, यह आवश्यक नहीं है। यह देश, काल, परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य में आवश्यकतानुसार अपनाया जानेवाला एक संकेत भर है। जल भारत के संविधान में राज्य सूची में है। जल संसाधन प्रबंधन और नीति बनाने में और उन्हें लागू करने में राज्यों को पूरी स्वतंत्रता है।

बिहार जैसे पिछड़े और गरीब राज्य में हम राज्य के वित्तीय संसाधन स्रोत से जल प्रबंधन की योजनाओं में पैसा लगाने की स्थिति में नहीं हैं। जितनी हमारी सिंचाई योजनाएं हैं, जल प्रबंधन की योजनाएं हैं उन योजनाओं को पूरा करने में हमको जितने धन की जरूरत है, उतना धन सरकार के पास नहीं है। मंत्री महोदय संभवतः अपने उत्तर में बताएंगे कि इस बारे में अद्यतन स्थिति क्या है ? अगर हम केवल सरकार के ऊपर निर्भर करेंगे तो शायद सैकड़ों वर्ष तक हम अपनी जल संसाधन विकास योजनाओं को पूरा नहीं कर पायेंगे। इसलिए यह संकेत, यह स्वतंत्रता केन्द्र सरकार ने राज्य सरकारों को निजी क्षेत्र की सहभागिता के बारे में अपनी जल नीति में दिया है। जल को निजी हाथ में सौंप देने के लिए नहीं कहा है। क्योंकि जल तो एक नैसर्गिक विरासत है, जल हमको प्रकृति ने दिया है। कृत्रिम जल का निर्माण करना अगर असंभव नहीं तो अव्यावहारिक जरूर है। जल हमारी आवश्यक आवश्यकताओं में से एक है। इसके बिना जीना मुश्किल है। इसलिए कोई भी सरकार, राष्ट्र की या राज्य की, इतनी गैरजिम्मेवार और अदूरदर्शी नहीं हो सकती कि प्रकृति प्रदत्त नैसर्गिक सम्पत्ति को किसी निजी क्षेत्र के हवाले करने के बारे में सोचे। परन्तु जहाँ तक सहभागिता का सवाल है, अगर निजी क्षेत्र की सहभागिता के बिना जल प्रबंधन की किन्हीं योजनाओं को पूरा करना संभव नहीं होता है तो निजी क्षेत्र का सहयोग लेकर आम जनता के लिए जल प्रबंधन की योजनाओं को पूरा करने

का प्रयास होना ही चाहिये। इसमें प्रत्यक्षतः राज्यहित या जनहित का कोई नुकसान नहीं दिखता। मात्र यही संकेत केन्द्रीय जलनीति के इस प्रावधान से ग्रहण किया जाना चाहिये। इसे सही संदर्भ में अंगीकार किया जाना चाहिये।

महोदय, जल प्रबंधन की योजनाएं केवल सिंचाई विभाग या जल संसाधन प्रबंधन तक ही सीमित नहीं है बल्कि ये पूरे राज्य के विकास की समन्वित एवं व्यापक योजना से संबंधित है। यह विडंबना है कि एक ओर हमारा राज्य बाढ़ से ग्रसित है और दूसरी ओर सूखा से ग्रसित है। ऐसी स्थिति में जरूरी है कि आज जल प्रबंधन की जिस नीति पर हम चल रहे हैं, उस नीति के बारे में हम पुनर्विचार करें। उसमें कुछ जोड़ने–घटाने लायक प्रतीत होता है तो अवश्य जोड़ें–घटायें। अगर लगता है कि इन कसौटियों पर हमारी नीतियाँ खरी हैं, तो इन नीतियों को लागू करें। परन्तु राज्य के सामने आज जो भयावह स्थिति दिखाई पड़ रही है, उसका समाधान करने के लिये इन नीतियों से भी आगे जाकर देखना पड़े तो इसके लिये भी खुले मन तैयार रहना चाहिये। उत्तर बिहार के जल प्रबंधन के बारे में हमारी क्या सोच हो सकती है? केवल नेपाल को कोसकर हम अपने कर्तव्यों से छुटकारा नहीं पा सकते हैं। हमें सोचना होगा कि फिलहाल विकास की जो हमारी नीति है, कार्यक्रम हैं, परिस्थिति के अनुसार क्या बदलाव लाया जा सकता है। जल की मौसम वार उपलब्धता और संबंधित क्षेत्रों की बाढ़ग्रस्तता को ध्यान में रखते हुये इस संदर्भ में हम कोई नई राह, नई सोच, नया कार्यक्रम, नई फसल पद्धति बना सकते हैं या नहीं। बाढ़ के बाद के समय में हम फसल उत्पादन पद्धति में बदलाव कर सकते हैं या नहीं, इस पर गहन विचार विमर्श होना चाहिये। जल प्रबंधन के साथ संपूर्ण बिहार के विकास का नाता है। इसलिए जल नीति तैयार करते समय केवल सिंचाई की ही बात नहीं होगी। राज्य के विकास के बारे में जल के विभिन्न उपयोगों के बारे में द्वितीय सिंचाई आयोग ने अपनी रिपोर्ट में आंकड़े दिए हैं। इनके मुताबिक सतही जल संसाधन का जितना उपयोग हम कर रहे हैं, वह बहुत कम है। इन आंकड़ों को सदन के समक्ष रख देना मैं उचित समझता हूँ।

बिहार का जल संसाधन (मिलियन क्यूबिक मीटर में)

क्षेत्र	सतही जल संसाधन	भूगर्भ जल संसाधन
उत्तरी बिहार	1,99,358.70	16336.40
गंगा स्टेम	87,793.00	1561.80
मध्य बिहार	28,735.20	10756.10
कुल जोड़	**3,15,886.90**	**28,654.30**

बिहार के जल संसाधन का उपयोग (मिलियन क्यूबिक मीटर में)

क्षेत्र	वृहत एवं मध्यम सिंचाई परियोजनायें	लघु सिंचाई सतही जल परियोजनायें	भूगर्भ जल परियोजनायें
उत्तरी बिहार	14,603.40	415.01	6,043.00
गंगा स्टेम	454.41	72.06	540.30
मध्य बिहार	13,847.26	946.78	3,841.00
कुल जोड़	**27,905.07**	**1,433.85**	**10424.30**

इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि कुल उपलब्ध सतह जल के 13.59 प्रतिशत और भूगर्भ जल के 7.78 प्रतिशत का ही उपयोग हम कर रहे हैं। केन्द्र सरकार ने अपनी जल नीति जिस तरह से बनायी है, उस जल नीति के प्रावधानों को अपने राज्य की आवश्यकताओं के अनुसार ढालकर हमको राज्य के लिये एक नई नीति बनानी चाहिए ।

द्वितीय बिहार राज्य सिंचाई आयोग ने संयुक्त बिहार के लिये एक जल नीति का प्रारूप 1994 में बिहार सरकार के समक्ष प्रस्तुत किया था। उस जल नीति के प्रारूप में कई ऐसी बातें हैं जो राष्ट्रीय जल नीति के संदर्भ में भी उद्धृत की गई हैं। उसके अधिकांश संकेतों को इस राष्ट्रीय जलनीति में भी ग्रहण किया गया है। पता नहीं, राज्य सरकार ने उस जल नीति के प्रारूप को कितना स्वीकार किया है, कितना महत्व दिया है, उस पर कोई विचार भी किया है, अथवा नहीं किया है। विशेषज्ञ समिति के प्रतिवेदन को मानना और उसके प्रारूप पर कार्य करना ये दोनों

अलग–अलग बातें हैं।

द्वितीय बिहार राज्य सिंचाई आयोग ने अपनी रिपोर्ट में ऐसी कई चीजों के बारे में विचार किया है और 20–25 वर्ष आगे जा कर जल की हमारी आवश्यकता कुल कितनी हो सकती है, उसके बारे में भी चिंतन किया है। केवल सिंचाई ही जल के उपयोग का एक क्षेत्र नहीं है। इसमें समाज जीवन के कई अन्य क्षेत्र भी आते हैं। सिंचाई के साथ–साथ घरेलू उपयोग के लिये, मनुष्यों और जानवरों के पीने के लिये, उद्योगों के लिये, नौ परिवहन के लिये, मत्स्यपालन आदि के लिये भी जल की आवश्यकता के प्रबंधन के संबंध में ध्यान रखना जरूरी होता है। पहली पंचवर्षीय योजना काल में ही रांची और जमशेदपुर में पीने का पानी और औद्योगिक उपयोग के लिये जल नीति की बात आयी थी। उस समय से ही सरकार पीने के पानी और इंडस्ट्रियल उपयोग के लिये जल की खपत के बारे में विचार करती रही है। यह कोई नई बात नहीं है। राष्ट्रीय जल नीति में भी जल के बहुद्देशीय उपयोग का जिक्र है।

अपने राज्य के पूरे क्षेत्र में कहां–कहां उद्योग लग सकते हैं और इस तरह के उद्योगों में कितने जल की जरूरत होगी, उसकी आपूर्ति कहां से होगी और उस जल की आपूर्ति हम करेंगे, तो उस जल की गुणवत्ता क्या होगी, इन सारी चीजों पर विचार किए बिना हम औद्योगिक विकास के परिप्रेक्ष्य में जल प्रबंधन की जरूरत को पूरी तरह नहीं समझ सकते हैं।

जल के विविध उपयोग के लिये 1987 में जो राष्ट्रीय जल नीति बनी थी उसमें भी जलोपयोग की प्राथमिकता के क्षेत्र तय किये गये थे। उसमें स्पष्टता के साथ यह निर्देश किया गया था कि जल के उपयोग के लिये क्रमानुसार किस तरह की प्राथमिकतायें होंगी। उसमें पीने के पानी को पहली प्राथमिकता दी गई थी। अगर हमारे पास जल भंडार है तो सबसे पहले हम उससे पीने के पानी की व्यवस्था करेंगे और जल प्रबंधन की जो भी बहुद्देशीय योजनाएं बनेंगी उनमें पीने के पानी के उपयोग की बात पहले रहेगी। उसमें पेयजल के लिए पर्याप्त जल संसाधन सुरक्षित रहेगा। उसके बाद दूसरी प्राथमिकता होगी सिंचाई की, तीसरी प्राथमिकता जल विद्युत

उत्पादन के लिए जल के उपयोग की होगी और चौथी प्राथमिकता होगी नौ–परिवहन की और फिर अंत में पांचवीं प्राथमिकता होगी औद्योगिक यानी विभिन्न प्रकार के उद्योगों के लिए जल के उपयोग की।

द्वितीय बिहार राज्य सिंचाई आयोग द्वारा 1994 में राज्य की जलनीति का जो प्रारूप तैयार किया गया है उसमें भी जल उपयोग की प्राथमिकतायें कमोबेश इसी प्रकार निर्धारित की गई हैं। बिहार के संदर्भ में तो आज भी यही प्राथमिकतायें प्रासंगिक हैं। राष्ट्रीय जलनीति में भी यही प्राथमिकतायें चिन्हित हैं। झारखंड बनने के बाद शेष बचे बिहार के संदर्भ में जलनीति की इन प्राथमिकताओं को अमली जामा पहनाया जाना चाहिये। झारखंड राज्य के लिये जल उपयोग की इन प्राथमिकताओं में थोड़ा परिवर्तन अपरिहार्य होगा।

महोदय, आज दुनिया के समक्ष विकास की चुनौतियों के संबंध में देश के वैज्ञानिक, योजनाकार, समाजसेवी जो बातें कह रहे हैं, और जिस ओर इशारा कर रहे हैं, उनसे ऐसा लगता है कि आगे आनेवाले समय में भयावह स्थिति पैदा होने वाली है, जल संकट बढ़ने वाला है और इसके प्रबंधन में सरकारों की कठिनाइयां भी बढ़ने वाली हैं, आज तक जितनी भी परियोजनाओं पर पूर्व की सरकारों ने काम किया है, मैं उन परियोजनाओं के औचित्य संबंधी विश्लेषण में नहीं जाना चाहूंगा। जिस समय जो परियोजनाएं बनाई गई थीं, उस समय के प्रबंधकों और परियोजनाकारों की मंशा क्या थी और आज उपयोगिता की कसौटी पर ये कितनी खरी हैं इस बारे में अनेक बार बहस हो चुकी है। इसलिए जिन्होंने इन योजनाओं को बनाया, उनकी नीयत पर कोई संदेह प्रकट नहीं करते हुए आज हमें देखने की जरूरत है कि देश में पंचवर्षीय योजनाओं के प्रारंभ होने के समय से अब तक जो योजनाएं बनीं है, उन योजनाओं से क्या प्राप्त हुआ है, ये योजनाएं कितना उपयोगी या अनुपयोगी साबित हुई हैं। कम से कम बाढ़–प्रबंधन की योजनाओं के बारे में तो यही लगता है कि ये योजनाएं भले ही कमोबेश कारगर साबित हुई हों, भले ही उन्होंने राज्य के कुछ हिस्से को उपजाऊ बनाया हो, परंतु आज ये योजनाएं नहीं के बराबर उपयोगी रह गई हैं।

बाढ़ और सुखाड़ के प्रबंधन के बारे में भी हमको नये सिरे से विचार करना होगा। सरकार को इस बारे में एक सुविचारित अपनी नीति निर्धारित करनी होगी। राष्ट्रीय कृषि नीति के संदर्भ में खाद्यान्न उत्पादन में आत्म निर्भरता का लक्ष्य हासिल करने के लिये और जल के अन्यान्य उपयोग के मद्देनजर भी हमको अपनी जल नीति बनानी चाहिए। इस जल नीति में जल की गुणवत्ता के बारे में भी विचार होना चाहिए। जल संसाधन के उपयोग के बारे में सरकार ने कई बार किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचने का प्रयास किया है। इस बारे में कई बार हमलोग चुक भी गये हैं। 1987 में पहली बार एक राष्ट्रीय जल नीति बनी थी। उसमें बेसिनवार योजनाएं बनाने का प्रावधान था। हम सभी मानते हैं कि नदियां राज्यों की भौगोलिक सीमा की परवाह नहीं करती हैं, ये देशों की सीमाओं की परवाह भी नहीं करती हैं। बिहार इस संदर्भ में दोनों ही तरफ से प्रताड़ित है। अन्तर्राष्ट्रीय नदियां यहां के जल प्रबंधन को बारंबार चुनौती देती रहती हैं। जो नदियां दूसरे राज्यों की ओर से आ रही हैं उनकी चपेट में भी हम पड़ रहे हैं। बिहार के सोन नदी पर देश का पहला नदी आयोग का गठन किया गया था। 1987 में देश की पहली राष्ट्रीय जल नीति तैयार होने के पहले 1980 में सोन के जल से 1874 से सिंचाई हो रही है या जो इलाके 1967 में सोन नहर सिंचाई प्रणाली के पुनर्स्थापन एवं विस्तार के बाद से सिंचित हो रहे हैं और जिससे सोन नदी आयोग का गठन हुआ था। तय हुआ था कि आयोग द्वारा बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और झारखंड सबको मिलाकर समन्वित तरीके से विचार किया जाएगा। बिहार के जिन अनाज के कटोरा के रूप में सोन कमान्ड एरिया देश भर में जाना जाता है। उस क्षेत्र की सुनिश्चित सिंचाई प्रणाली हेतु इसके पानी की जरूरतों को पूरा करने के बाद बेसिन के राज्यों में जलोपयोग की अन्य जरूरतों को पूरा किया जायेगा। 1987 में राष्ट्रीय जल नीति में नदियों के जल प्रबंधन के बारे में कहा गया है कि इनके बारे में बेसिनवार विचार किया जाना चाहिए। परन्तु विडम्बना है कि राष्ट्रीय जल नीति लागू होने के एक साल बाद सोन नदी जल आयोग को समाप्त कर दिया गया। बिहार की तत्कालीन सरकार की तरफ से इसका कोई विरोध नहीं हुआ। मैने इस बारे में पटना उच्च न्यायालय में एक चिट याचिका

सोन अंचल के लिये दायर की थी, मगर जबतक याचिका सुनवाई के लिये लिस्टेड हुई तब तक आयोग को भंग करने के अधिकार की अधिसूचना प्रभावी हो गई थी। राष्ट्रीय जल नीति बनने के पहले जल प्रबंधन की ओर से जो अवधारणाएं हमारे यहां लागू थीं, उन अवधारणाओं को भी क्रियान्वित करने में हम कामयाब नहीं हुए ।

महोदय, मुझे उम्मीद है कि अभी जितनी चुनौतियां हैं, उन चुनौतियों के संदर्भ में और राष्ट्रीय जल नीति के प्रावधानों एवं संकेतों के संदर्भ में सरकार अवश्य विचार करेगी। कोई एक स्थायी संगठन बनाना चाहिये । जो जल प्रबंधन के क्षेत्र में काम करे । यह संगठन बहुआयामी होना चाहिये इसमें दक्ष एवं निपुण विशेषज्ञों का समूह रहना चाहिये । राज्य में सरकारें भले बदलती रहें या यह संस्था बदस्तूर काम करती रहें । सबसे महत्वपूर्ण सवाल है, लघु स्तर पर इन योजनाओं में जनता की भागीदारी का। मैं अनुरोध करना चाहूँगा कि बड़े बांधों के निर्माण को प्राथमिकता देने के बदले सरकार उनकी उपयोगिता पर ध्यान दे । पूर्व में जल संग्रह के लिए बने जलाशयों में मिट्टी भर रही है, उनकी गहराई कम हो रही है, इस बारे में सरकार को ध्यान देना चाहिये । नीचे के स्तर पर आम जनता की भागीदारी सुनिश्चित होनी चाहिये । जल एक नैसर्गिक सम्पदा है, प्रकृति की देन है, एक विकेन्द्रित नीति के तहत अधिकाधिक लोगों की जरूरतें आम जन एवं लाभुकों की सहभागिता इनमें सुनिश्चित की जाय और जल प्रबंधन योजनाओं के बारे में आम लोगों के जो विचार हैं, उन्हें सरकार स्वीकार करे । जब हमलोग 1985 से 1990 के बीच उन सोन क्षेत्र की समस्याओं को लेकर तो उस समय हमलोगों ने एक व्यापक अभियान छेड़ा था। इस परियोजना के उन दस्तावेजों को पढ़ने का मौका मिला था, जिन्हें अंग्रेजों ने 1851-52 में बनाया था। ये योजनाएं तैयार की गयी थीं। एक ब्रिटिश सेना के जूनियर इंजीनियर के द्वारा 1867 से लागू होकर 1877 में वह योजना पूरी हो गयी। इन योजनाओं के बारे में जहां कहीं विवाद हुआ, किसानों ने अवरोध पैदा किया और कहा कि यहाँ पहले से तालाब हो, उससे सिंचाई के साथ मत्स्य पालन का लाभ भी मिलता है तो ऐसी स्थिति में अंग्रेज अधिकारी गाँवों में जाकर उससे बात करते थे । अंग्रेज अधिकारी गांवों में जाकर लोगों से बात करते थे । ऐसे अनेक

उदाहरण हैं जहां गांव के लोगों की बातें सही पायी गई और अंग्रेज अधिकारियों द्वारा मानी गयी । इस संदर्भ में हम आज सोचते हैं तो लगता है कि हम जनता से कितनी दूर चले जा रहे हैं । हमें इन बातों पर अवश्य ध्यान दिया जाना चाहिये । आम जनता के विचारों और भावनाओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिये । जहां आम जनता की ओर से विवाद हो और सरकार चाहती हो कि राज्य के हित में और जनहित में इस परियोजना को बनाना जरूरी है तो वहां जाकर सरकार आम जनता को समझाए, बुलाए । राज्य के हित को ध्यान में रखते हुए स्थानीय विशेष परिस्थितियों के आलोक में एक तरह का व्यापक और समन्वित दृष्टिकोण होना चाहिये । यह जरूरी नहीं है कि राष्ट्रीय जल नीति के हरेक पहलू को हम यथावत स्वीकार कर लें, लकीर का फकीर बन जायें । इन्हीं शब्दों के साथ मैं अपनी बात समाप्त करता हूँ ।

□ 26 जुलाई 2002
बिहार विधान परिषद्

• •

नदी जोड़ो परियोजना के आयाम

आज हम देश की नदियों को जोड़ने की केन्द्र सरकार की महत्वाकांक्षी योजना के प्रस्ताव प्रारूप पर सदन में बहस कर रहे हैं। राष्ट्रीय विकास के संदर्भ में यह एक महत्वपूर्ण समसामयिक चर्चा का विषय है। अभी माननीय मंत्री श्री शिवानन्द तिवारी सरकार का पक्ष प्रस्तुत करते हुये कह रहे थे कि इस विषय पर दलहित की बात नहीं होनी चाहिये बल्कि राज्यहित और राष्ट्रहित में बात होनी चाहिये। मैं उनके इस विचार से पूरी तरह सहमत हूँ।

भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व वाली केन्द्र की राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन सरकार ने हाल ही में इस महत्वाकांक्षी योजना का एक प्रस्ताव प्रारूप विचार मंथन के लिये राष्ट्र के समक्ष प्रस्तुत किया है। यह प्रारूप केन्द्रीय जल संसाधन मंत्री श्री सुरेश प्रभु के नेतृत्व में गठित विशेषज्ञों के एक समूह द्वारा तैयार किया गया है। इस योजना प्रस्ताव प्रारूप में अनेक बहुद्देशीय छोटी-बड़ी परियोजनाओं का सूत्रीकरण शामिल है। पूर्व में केन्द्रीय जल संसाधन मंत्री और यशस्वी अभियंता डा. के. एल. राव ने एक समय गंगा और कावेरी नदियों को जोड़ने के लिये ''गंगा कावेरी लिंक कनाल'' जैसी चर्चित परियोजना का प्रस्ताव प्रारूप देश के सामने रखा था। उसके बाद यह परियोजना चर्चा का विषय बनी है जिसमें देश के विभिन्न भागों की नदियों के जल आधिक्य को स्थानान्तरित करने की परिकल्पना प्रस्तुत की गयी है।

मैं इस योजना के प्रस्ताव प्रारूप के बारे में और केन्द्र सरकार की इस परिकल्पना के बारे में अत्यन्त संक्षेप में सदन के समक्ष अपना विचार रखना चाहता हूँ। सबसे पहले मैं इस योजना के विभिन्न पहलुओं को संक्षेप में सदन के समक्ष रख रहा हूँ। जैसा कि योजना के प्रस्ताव प्रारूप में अंकित है, देश के विभिन्न भागों में सलाना वर्षापात की मात्रा में अत्यधिक असमानता के कारण कई भागों में बाढ़ और कई भागों में सूखा की स्थिति बनी रहती है। इस कारण भारत सरकार द्वारा बनाई गई राष्ट्रीय जल नीति में नदियों के जल के अंतर बेसिन अन्तरण पर जोर दिया गया है। इसी उद्देश्य से राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में नदियों को जोड़ने की यह योजना बनाई गई

है। योजना प्रस्ताव प्रारूप में इसे दो भागों में विभक्त किया गया है। एक, हिमालय की नदियों का विकास और दूसरा प्रायद्वीपीय नदियों का विकास।

इस योजना में 54 बिन्दुओं पर विभिन्न नदियों का संगम होगा, जिसमें 30 वृहद और 24 लघु संगम होंगे। इसमें 14 हिमालय की नदियां होंगी और 16 प्रायद्वीपीय नदियां होंगी। जिन पर 27 वृहद जलाशय और 56 जल भंडारण केन्द्र बनाये जायेंगे। इनमें एकत्र जल भंडार का उपयोग करने के लिये 12500 किलोमीटर लम्बाई में नहरों का निर्माण होगा। जिसमें 90 कि.मी. टनेल नहर का निर्माण होगा। इस योजना की कुल लागत 5,60,000 करोड़ रुपये आंकी गई है। इस योजना द्वारा कुल करीब 173 बिलियन क्यूबिक मीटर पानी का प्रवाह परिवर्तित होगा और करीब 35 मिलियन हेक्टेयर जमीन में अतिरिक्त सिंचाई सुविधा उपलब्ध होगी। केन्द्र सरकार के टास्क फोर्स के अनुसार इस योजना के फलस्वरूप 34 हजार मेगावाट जल विद्युत उत्पादन होगा और इस के क्रियान्वयन के उपरांत 101 सूखाग्रस्त जिलों को विविध उपयोग हेतु जल उपलब्ध होगा। साथ ही बाढ़ और सूखा से होने वाली फसलों की क्षति पर रोक लगेगी और बाढ़ के विनाशकारी तांडव पर नियंत्रण पाने में सफलता प्राप्त होगी। टास्क फोर्स के मुताबिक सन् 2002 में इन प्राकृतिक आपदाओं से 25,000 करोड़ रूपये की फसल नष्ट हुई थी।

एक अनुमान के मुताबिक वर्ष 2050 में भारत की जनसंख्या 180 करोड़ हो जायेगी, जिसके लिए करीब 50 करोड़ टन खाद्यान्न की आवश्यकता होगी। वर्तमान में हमारी कुल खाद्यान्न उत्पादन क्षमता 20 करोड़ टन के आसपास है। इस अतिरिक्त उत्पादन लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये वर्तमान सिंचाई क्षमता को 16 करोड़ हेक्टेयर भूमि तक बढ़ाना होगा। यह महत्वाकांक्षी लक्ष्य इस योजना के लागू होने से प्राप्त हो सकेगा ऐसा योजना के प्रस्ताव प्रारूप में कहा गया है। इसके अलावा इस योजना के प्रस्ताव प्रारूप में यह भी अंकित है कि योजना पूर्ण होने तक इस योजना से 37 लाख लोगों को रोजगार प्राप्त होगा।

अपने देश में वर्षा आधारित भूमि से किसानों को वर्तमान में प्रति एकड़

वार्षिक आमदनी करीब 2000 रुपया से भी कम है। इस योजना द्वारा भूमि सिंचित होने पर संबंधित क्षेत्र के किसानों की कृषि से प्रति एकड़ आय 28000 रुपया तक होने की संभावना है। साथ ही इसके लागू होने के बाद नगदी फसलों में वृद्धि होगी, कृषि का विविधीकरण और कृषि निर्यात से विदेशी मुद्रा का अर्जन होगा।

योजना का प्रस्ताव प्रारूप करता है कि इस योजना के फलस्वरूप राष्ट्रीय जलमार्ग परिवहन व्यवस्था विकसित होगी। जिससे सस्ता परिवहन के कारण पेट्रोलियम पदार्थों के आयात मद में 3000 करोड़ रुपये की प्रतिवर्ष बचत होगी। इसके फलस्वरूप आर्थिक गतिविधियों में अत्यधिक क्रियाशीलता आयेगी जिसके कारण सकल घरेलू उत्पाद में प्रतिवर्ष 10 से 12 प्रतिशत की दर वृद्धि का अनुमान योजना प्रस्ताव प्रारूप में लगाया गया है। योजना के प्रस्ताव प्रारूप में यह भी कहा गया है कि इस योजना के फलस्वरूप पर्यावरण संरक्षण और प्रदूषण नियंत्रण में भी लाभ मिलेगा। इस योजना से ग्रामीण क्षेत्र में नई आर्थिक संरचना के विकास से पलायन पर नियंत्रण पाया जा सकेगा जिससे नगरीय–ग्रामीण संतुलन स्थापित होगा। साथ ही ग्रामीण भारत के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने में भी सफलता प्राप्त होगी। इसके अलावा इस योजना से राष्ट्रीय स्तर पर एक जल घेरा का निर्माण होगा जो देश को अतिरिक्त सुरक्षा प्रदान करेगा। यह योजना देश के भीतर सांस्कृतिक एकात्मता के भाव को प्रबल बनाने में भी सहायक होगी। इस योजना का यह सब लाभ योजना प्रस्ताव प्रारूप में बताया गया है और आह्वान किया गया है कि हम सब भारतवासी मिलकर इस योजना के माध्यम से राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के लक्ष्य की प्राप्ति में सहभागी बनें।

महोदय, जब हम देश की विकास नीति के संदर्भ में इस योजना के विभिन्न पहलुओं पर बात करेंगे इस देश की विकास नीति क्या होनी चाहिए, बड़ी परियोजनाओं की बात होनी चाहिए या नहीं ? आज दुनिया में ग्लोबलाइजेशन का दौर चल रहा है उसके साथ ताल में ताल मिलाने की बात होनी चाहिए अथवा नहीं, तो निश्चित रूप से इस परियोजना के पक्ष और विपक्ष दोनों ही तरफ से बहुत मजबूत तर्क आयेंगे। मैं व्यक्तिगत रूप से बड़ी परियोजनाओं का समर्थक नहीं रहा हूँ। अभी तक हमलोगों ने

जो अध्ययन किया है, अपने मित्रों के साथ ऐसी परियोजनाओं के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया है, उससे निष्कर्ष निकलता है कि बड़ी परियोजनाओं की तरफ जाने के बदले में हमें पहले छोटी परियोजनाओं को कार्यान्वित करना चाहिए। एक नदी बेसिन में वाटर हार्वेस्टिंग और वाटरशेड डेवलपमेन्ट के माध्यम से जल का भरपूर संचय करना चाहिये। जमीन की नमी बनाये रखने के लिये और भूगर्भ जल को समृद्ध करने के लिए प्रयास किये जाने चाहिए।

हमारे संविधान में जल को राज्य सूची में रखा गया है। इसका मतलब है कि राज्य की सरकारें जलोपयोग की योजनाएं बनायेंगी। परन्तु संसाधन का अभाव राज्य की सरकारों के लिए विकट समस्या है। जब द्वितीय बिहार राज्य सिंचाई आयोग के सदस्य के रूप में मैं कार्य कर रहा था उस समय तथ्य सामने आया था कि अभी तक हमने जितनी परियोजनाएं बनाई हैं और उनसे जितने जल का हम उपयोग कर रहे हैं, उसके अलावा अपनी कृषि के लिए, नौ–वहन के लिए एवं विभिन्न प्रकार के उद्योगों के लिए जितना अतिरिक्त जल उपलब्ध है उसके संचय के लिये समुचित संरचनाओं का निर्माण करने के लिये 15 से 20 हजार करोड़ रुपये की अविलम्ब आवश्यकता होगी। परन्तु सरकार कहती है कि इतना धन जुटाना हमारे बस में नहीं है इसलिए इसके बारे में केन्द्र से सहायता की मांग होती है। कई परियोजनाएं ऐसी हैं जिनके बारे में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की वित्तीय संस्थाओं से सहायता लेने की हम बात करते हैं। यानी इसे केवल राज्य के भरोसे छोड़ा जाय तो राज्य केवल अपने संसाधनों के बलबूते उपलब्ध संपूर्ण जल का उपयोग अपनी समस्त छोटी–बड़ी परियोजनाओं के लिए करने में सक्षम नहीं होंगे। यहां तक कि वाटर हार्वेस्टिंग के लिए, वाटर शेड डेवलपमेन्ट के लिए आज जो पैसा आ रहा है वह भी केन्द्र की सरकार से आ रहा है। केन्द्रीय सहायता द्वारा राज्य की सरकारें अपने विभिन्न विभागों के माध्यम से ऐसी परियोजनाओं को कार्यान्वित कर रही हैं। ऐसी स्थिति में हमलोगों के निजी विचारों, हमलोगों के मित्रों और उनके कार्य–समूहों के विचारों के मद्देनजर आज इस बात पर गौर करने की जरूरत है कि हमारी आबादी जिस तरह से बढ़ रही है या दुनिया जिस रफ्तार से आगे जा रही है, उसे ध्यान में

रखते हुए हमें क्या करना चाहिए ? क्या कोई ऐसा तरीका निकल सकता है कि ग्लोबलाइजेशन के साथ–साथ हम लोकलाइजेशन का समन्वय कर सके। बड़े उद्योगों के साथ–साथ हम छोटे, मंझोले और कुटीर उद्योगों का समन्वय कर सकें और बड़ी–बड़ी राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय परियोजनाओं के साथ–साथ हम गांवों एवं पंचायतों के स्तर पर चलने वाली छोटी–बड़ी योजनाओं का, वाटर हार्वेस्टिंग की योजनाओं का, वाटर शेड डेवलपमेंट की योजनाओं का समन्वय कर सकें ?

कभी–कभी तो ऐसा महसूस होता है कि आज दुनिया जिस दिशा में आगे बढ़ रही है, जिस गति से आगे बढ़ रही है, उस पर लगाम लगाने की स्थिति में हम नहीं हैं। इसलिए आज हमें यह तय करना पड़ेगा कि हमारी प्राथमिकताएं क्या हों और उन प्राथमिकताओं का हम तथाकथित राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय विकास की आधुनिक प्राथमिकताओं के साथ कैसे समन्वय करें ? इस संदर्भ में हम नदियों को जोड़ने की योजना पर विचार करेंगे तो इसके पक्ष एवं विपक्ष में आने वाले तथ्यों का हम सम्यक् रूप से विश्लेषण कर सकेंगे और इस विश्लेषण के आधार पर राज्य के हित में हम किसी निष्कर्ष पर पहुंच सकेंगे। नदियों को जोड़ने की योजना कोई नई नहीं है। 1839 से, आर्थर कॉटन के समय से, आज तक ऐसी योजना पर कवायद चल रही है। के. एल. राव से लेकर दस्तूर तक कई तकनीकी विशेषज्ञों द्वारा इसका प्रारूप रखा गया है। 1982 में भारत सरकार ने एन.डब्ल्यू.डी.ए., नेशनल वाटर डेवलपमेंट एजेन्सी की स्थापना की। उसके बाद इस विषय में कई प्रारूप पत्र बने।

यह आशंका भी व्यक्त की गई है कि इस परियोजना से पर्यावरण का बहुत विनाश होगा और परियोजना को कार्यान्वित करने में जितने बड़े पैमाने पर धन की आवश्यकता होगी, उसे हम कहाँ से प्राप्त करेंगे ? महोदय, आज दुनिया एक आधुनिक वैश्विक सोच के साथ विकास की एक दिशा में बढ़ रही है। विकास के ऐसे हर कदम का प्रतिकूल असर पर्यावरण पर हो रहा है। इसके साथ–साथ विकास की इस सोच के अनुरूप, पर्यावरण प्रबंधन के तरीके भी निकाले जा रहे हैं। अगर हमको इस सोच वाली प्रगति की रफ्तार से चलना है, तो हमको पर्यावरण प्रबंधन के ऐसे उपयुक्त तरीके भी क्रियान्वित करने पड़ेंगे। विकास का कोई ऐसा कदम नहीं है, जिससे

पर्यावरण का क्षरण नहीं होता है, जिससे पर्यावरण का नुकसान नहीं होता है। इसलिए जब विशेषज्ञ नदियों को जोड़ने की इस तरह की योजना का पर्यावरण प्रभाव अध्ययन करेंगे, तदनुरूप पर्यावरण का प्रबंधन करेंगे, डिटेल्ड प्रोजेक्ट रिपोर्ट बनेगी, तो उसमें ऐसे तथ्य आयेंगे जो हमें इस योजना के लाभ–हानि से अवगत करा सकेंगे। इसके आलोक में इस योजना के पक्ष–विपक्ष में मत स्थिर करना संभव हो पायेगा।

सिंचाई की जितनी बड़ी परियोजनाएं बनायी गयी हैं, उनके साथ–साथ उनका एनवायरन्मेंट मैनेजमेंट प्लान भी बनाया गया है और भारत सरकार के पर्यावरण विभाग को संतुष्ट करने का प्रयास किया गया है कि पर्यावरण को जितना नुकसान इससे पहुंच रहा है, उसकी हम किसी–न–किसी प्रकार से भरपाई कर रहे हैं। इस प्रक्रिया में परियोजनाओं का कॉस्ट–बेनिफिट या इकोनोमिक रेट ऑफ रिटर्न द्वारा तुलनात्मक रूप से यह साबित किया जाता है कि यह परियोजना लाभकारी सिद्ध होगी या नहीं। इसलिए ऐसी सारी तकनीकी कसौटी पर, ऐसे सारे आर्थिक विश्लेषणों की कसौटी पर हम नदियों को जोड़ने की इस परियोजना को तभी कस सकेंगे जब इस की डिटेल्ड प्रोजेक्ट रिपोर्ट हमारे सामने आयेगी, फिजिबिलिटी रिपोर्ट सामने आयेगी या प्री–फिजिबिलिटी रिपोर्ट सामने आयेगी। इसके बिना आज हम जो बहस कर रहे हैं, वह इस योजना के ऐसे आयामों तक ही सीमित है जो हमारे लिए, हमारे देश के लिए, हमारे राज्य के लिए आवश्यक है या नहीं है। आज हमारे सामने विचार का जो विषय है वह यह है कि नदियों को जोड़ने की इस योजना के जो विविध आयाम हैं, वे राष्ट्रीय स्तर पर, राज्य स्तर पर या जनता के स्तर पर हमारे लिए उपयोगी हो सकते हैं या नहीं और हम केन्द्र सरकार के साथ इस मामले में कदम मिलाकर चलने की मानसिकता रखना चाहते हैं या नहीं ?

केवल इस देश में ही नहीं बल्कि दुनिया के अनेक देशों में पानी की समस्याओं पर लड़ाइयां, मतभेद और विभेद चलते रहे हैं। हमारे यहां भी कई परियोजनायें हैं, जैसे–सोन नदी परियोजना, कर्मनाशा नदी परियोजना, कनहर की परियोजना आदि हैं। ऐसी कई परियोजनायें हैं जिनपर पड़ोसी राज्यों से हमारे मतभेद हैं। कई

योजनाओं में हम नदियों के निचले हिस्से में हैं। कई योजनाओं में हम नदियों के ऊपर के हिस्से में हैं। बिहार की अब तक की जो स्थिति रही है, 1950 से लेकर अबतक, चाहे हम लोअर रिपेरियन स्टेट के नाते रहें या अपर रिपेरियन स्टेट के नाते रहें, दोनों ही हालत में हमारे साथ इन्साफ नहीं हुआ है। अब तक की राज्य सरकारों ने, यहाँ राज्यहित और जनहित के मामलों को केन्द्र सरकार के सामने मजबूती से नहीं उठाया है। बिहार की सरकारों ने अबतक पड़ोसी राज्यों के साथ अंतर्राज्यीय नदियों के जल बंटवारा के लिये जितने समझौते किये हैं, हम भले ही किसी में अपर रिपेरियन स्टेट है तो किसी में लोअर रिपेरियन स्टेट है मगर हम समझौतों का विश्लेषण करेंगे तो दोनों ही प्रकार के समझौतों में हमको नुकसान हुआ है। पड़ोसी देशों के साथ भारत सरकार द्वारा किये गये समझौतों में भी बिहार को नुकसान उठाना पड़ रहा है। उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, नेपाल से आनेवाली नदियों पर हुए समझौतों से हम लाभ कम नुकसान ज्यादा उठा रहे हैं।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर यह माना जाता है कि नदियां किसी देश या किसी राज्य की सीमा को नहीं मानती हैं। इसलिए बहुत पहले से, आज से सौ दो सौ साल पहले से नदियों के पानी के समझौते के बारे में, उनके उपयोग के बारे में संघर्ष होते रहे हैं, लड़ाइयां होती रही हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर तो संघर्ष होता ही है, देश के स्तर पर, स्थानीय स्तर पर संघर्ष होता रहता है कि किसका खेत पहले पटेगा। जनता के स्तर पर भी और देश से लेकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जल-विवाद होते रहे हैं। इन विवादों के हल के लिए समझौता के भी प्रयास होते रहे हैं, नियम-कानून बनते रहे हैं। अब जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सर्वस्वीकृत नियम है, वह नियम है कि नदियां देश और राज्य की सीमाओं को नहीं मानती हैं। इसलिए पूरी नदी को एक सामाजिक, आर्थिक विकास की इकाई मानना चाहिये और उस नदी के साथ जो-जो राज्य या देश जुड़े हैं, वहां के जनहित, राज्य हित और आर्थिक हित को ध्यान में रखते हुए उसके जलोपयोग की योजनाएं बनायी जानी चाहिये।

1987 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने पहली राष्ट्रीय जल नीति घोषित की थी। उसमें भी यह प्रावधान रखा था कि जितने राज्यों से होकर नदियां

गुजरती हैं उन सबों के साथ जलोपयोग पर सम्यक विचार होना चाहिये। पहले से पानी का जितना इस्तेमाल होता रहा है, उस पानी के इस्तेमाल की इजाजत देते हुए जो शेष पानी बचता है उस शेष पानी को उन राज्यों के क्रॉप पैटर्न के हिसाब से उनके बीच में बाँटना चाहिये। आज मोटा-मोटी इसी तरह के सुझाव श्री अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार द्वारा सन् 2000 में बनाई गई दूसरी जल नीति में भी है। इसी आलोक में नदियों को जोड़ने की बात की जा रही है। क्योंकि नदी बेसिन के अंतर्गत होने के बावजूद कतिपय राज्यों में सीधे उस नदी जल का उपयोग संभव नहीं हो जाता है और नदी जल में हिस्सेदारी प्राप्त करने के लिये जरूरी है कि किसी अन्य संभावित नदी बेसिन जल को स्थानान्तरित किया जाय।

दुनिया में ऐसे कई उदाहरण हैं जहाँ लंबी दूरी तक नहरें बनाकर जल का अंतरबेसिन स्थानान्तरण हुआ है। अमेरीका मेक्सिको तक कैनाल सिस्टम ले गया है। कोलराडो नदी पर, डैंग्यूब नदी पर अमेरिका का कनाडा के साथ ऐसा समझौता है। चीन भी अपनी ह्वांग हो नदी को सुदूर उत्तर में ले जा रहा है। वहाँ इसी तरह का जल प्रबंधन करके दो हजार किलोमीटर तक 75 से 80 हजार मिलियन क्यूबिक मीटर पानी ऊपर उठाकर ले जाया जा रहा है, जिसमें बारह-तेरह सौ मीटर तक उठान है। अमरीका में भी 1600 मीटर तक की उठान पर ले जाया जा रहा है। इस तरह आज ऐसी योजनाएं दुनिया में सफलतापूर्वक लागू हो रही हैं। इसलिए यह कहना सही नहीं होगा कि भारत सरकार ने जिस योजना को लागू करने का मन बनाया है वह योजना व्यावहारिक नहीं होगी। महोदय, दुनिया के दूसरे देश अमरीका, रूस, मेक्सिको, कनाडा आदि में इस तरह की योजनाएं आज सफलतापूर्वक काम कर रही हैं तो हमारे यहां भी यह योजना सफलतापूर्वक काम नहीं करेगी, ऐसा नहीं कहा जा सकता है। इसलिए फिजीबिलिटी के स्तर पर या सोच के स्तर पर तो यह योजना सही प्रतीत होती है। परन्तु अब जरूरत यह देखने की है व्यावहारिक रूप इस योजना में होना क्या-क्या है। तभी हम तय कर पायेंगे कि यह हमारे लिये लाभकारी कितनी है।

श्री शिवनंदन प्रसाद सिंह : महोदय, एक जानकारी लेनी थी जो माननीय सदस्य ने कहा, क्या आपको ये मालूम है कि रूस में ये योजना चल रही है ? साइबेरिया में ये योजना जब बनायी गयी थी उसको खुद लेनिन ने अस्वीकार कर दिया था कि इससे बुरा असर पड़ेगा देश पर, तो रूस में इस तरह की योजना नहीं चल रही है।

श्री सरयू राय : महोदय, यह योजना साइबेरिया की नहीं है । मेरे पास रूस की इन योजनाओं का नाम नोट किया हुआ है । मगर इन योजनाओं का नाम बता कर मैं सदन का समय नहीं लेना चाहता हूँ। आज भी रूस में केन्द्रीय कजाकिस्तान में यह योजना चल रही है। केन्द्रीय कजाकिस्तान की योजना की मैं बात कर रहा हूँ। यह तथ्यगत बात है । कोई मनगढ़ंत बात नहीं कर रहा हूँ। 1974 के पहले से ऐसी योजनाएं वहाँ चल रही हैं ।

महोदय, अब प्रश्न है कि बिहार इस संदर्भ में कहां आता है ? जब हम पूरे देश के मानचित्र पर विचार करते हैं और पूरे देश की नदियों में कितना पानी है इसका विचार करते हैं तो पाते हैं कि कर्क रेखा के उत्तर के इलाके में इस देश का दो तिहाई पानी है और कर्क रेखा के उत्तर और दक्षिण में हमारी कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल करीब आधा–आधा है। कर्क रेखा के उत्तर में बिहार की स्थिति पर नजर डालते है तो पता चलता है कि गंगा नदी के उत्तर में तीन चौथाई पानी है। जैसे कर्क रेखा के दक्षिण में कम पानी है वैसे ही बिहार में गंगा नदी के दक्षिण में भी कम पानी है। कर्क रेखा के उत्तर में स्थित गंगा नदी के उत्तर और दक्षिण में हम जब जल की उपलब्धता पर विचार करते हैं तो ऐसा लगता है कि देश की नदियों को जोड़ने की इस परियोजना के संबंध में गंगा नदी एक मुख्य धारा हो सकती है जहां से हम पानी को कहीं भी ले जाने की बात कर सकते हैं। परन्तु गंगा नदी में भी जहां गंगा का संगम इलाहाबाद में जमुना से होता है उसके बाद बक्सर और पटना तक पानी की उपलब्धता काफी कम है। जब पटना के समीप घाघरा नदी गंगा नदी में मिलती है तब उसके नीचे पानी की उपलब्धता में वृद्धि होती है। गंडक, कोसी, महानन्दा आदि हिमालय क्षेत्र की नदियां इसके बाद गंगा में मिलती हैं । तकनीकी तौर पर यह माना गया है कि 78 डिग्री अक्षांश के पश्चिम इन नदियों में पानी कम है ।

इसके बाद जल की पर्याप्त उपलब्धता ब्रह्मपुत्र घाटी में है। ब्रह्मपुत्र घाटी की चौड़ाई मात्र 80 किलोमाटर है, इसलिए ब्रह्मपुत्र घाटी में ब्रह्मपुत्र नदी के पूरे जल का इस्तेमाल नहीं कर सकते हैं । एक संभावना यह हो सकती है कि किसी न किसी योजना से ब्रह्मपुत्र घाटी के अतिरिक्त जल को गंगा नदी में किसी उपयुक्त बिन्दु पर और गंगा नदी के इस बिन्दु से इसे ऊपर ले आया जाएं । महोदय, जब सोन नदी आयोग देश का पहला नदी जल आयोग बना था, तब इस आयोग में ऐसी एक योजना पर विचार किया गया था। योजना थी कि गंगा नदी में चुनार के पास, जहां से सोन नदी की दूरी बहुत कम है, एक बराज बनाकर अगर गंगा नदी का पानी सोन बेसिन में ले जाया जाय तो आज सोन नहरों का जो जाल केवल पुराने शाहाबाद और गया जिले तक सीमित है उसको हम मुंगेर और भागलपुर तक ले जा सकते हैं। ऊपर मिर्जापुर और वाराणसी जनपदों में भी सिंचाई हो सकती है। मुगलसराय और आसपास तक यह पानी पहुँच सकता है। ऐसा एक प्रतिवेदन 1851–52 में आरंभिक स्तर पर बना था जब इन सोन नहरों की योजना आकार ले रही थी। इसी तरह से अगर कोई योजना बनती है तो गंगा के पानी से और ब्रह्मपुत्र का पानी जो गंगा में आयेगा उसको लेकर हम अपनी छोटी–बड़ी नदियों के माध्यम से दक्षिण बिहार के पूरे इलाके को सिंचित कर सकते हैं और दक्षिण बिहार का जो इलाका छोटानागपुर की पहाड़ियों से सटा हुआ है वहां उद्योगों का जाल बिछाकर उनके लिए भी हम यहां से पानी की व्यवस्था कर सकते हैं ।

महोदय, ब्रह्मपुत्र के पानी को गंगा में लाना और उसका उपयोग दक्षिण बिहार और संथाल परगना छोटा नागपुर के क्षेत्र में अन्तरबेसिन द्वारा स्थानान्तरण करना तो संभव प्रतीत होता है पर आगे देश के अन्य राज्यों में इसे ले जाना कितना व्यावहारिक होगा यह मैं नहीं कह सकता । माननीय सदस्य बद्री बाबू ने सही कहा है कि इस योजना के अंतर्राष्ट्रीय आयाम हैं । हम इसके अंतर्राष्ट्रीय पहलू से जुड़ी समस्याओं को सुलझाने में सफल नहीं होंगे तो यह योजना इस रूप में भी कभी आरंभ नहीं हो सकेगी। महोदय, नेपाल, भूटान, बंगलादेश हमारे पड़ोसी हैं। अगर बंगलादेश इजाजत दे देता है कि ब्रह्मपुत्र का पानी बंगलादेश से होकर हम फरक्का

बराज के उपर लायें तो यह ग्रैविटेशनल फ्लो, गुरुत्व प्रवाह, से वहाँ तक आ जायेगा। इसमें कोई बहुत अधिक खर्च भी नहीं होगा। परन्तु बांगला देश यह इजाजत नहीं देता है तो हमको चिकेन नेक से होकर काफी घूमकर ब्रह्मपुत्र का पानी गंगा बेसिन में ले आना पड़ेगा। भारत सरकार की इस योजना में इसका एक प्रारूप भी नक्शा में संबंधित रूप से दिया गया है। यह नक्शा मैं सदन के समक्ष रख दे रहा हूँ। अगर अंतर्राष्ट्रीय पहलू से जुड़ी समस्याएँ सुलझ जाएं तो कम से कम बिहार के लिये यह एक व्यावहारिक योजना हो सकती है। क्योंकि ऊपर में घाघरा और यमुना तक को जोड़ने का प्लान हिमालय की नदियों को जोड़ने के परिप्रेक्ष्य में इस योजना का अंग है। इस तरह तीन चौथाई पानी जो कर्क रेखा से उत्तर हिमालय की नदियों से आता है उसको दक्षिण तक ले जाने की योजना की संभाव्यता पर विचार किया जा सकता है। अगर यह प्रयास सफल हो जाय तो पूरे देश में हम कृषि की समस्या का समाधान कर सकते हैं।

जब द्वितीय बिहार सिंचाई आयोग यहां काम कर रहा था। उस समय राज्य में 2025 तक जलोपयोग की एक ही योजना पर विचार हुआ था और विभिन्न नदियों में जल की उपलब्धता की जानकारी एकत्र की गयी थी। इस एक तालिका द्वारा इसे संक्षेप में सदन के सामने रखने की इजाजत चाहता हूँ।

क्षेत्र	कुल जलोपलब्धि (मिलि. क्यु. मी.)		वर्तमान में कुल खपत	वर्ष 2025 में कुल संभावित खपत	2025 में शेष
उत्तर	1,99,358.70				
बिहार	(सतह)	(वृहद एवं मध्यम सिंचाई)	14603.40	17,145.00	
	16,336.40	(लघु सिंचाई सतह)	415.10	3087.00	
	(भू-गर्भ)	(लघु सिंचाई भूगर्म)	6043.00	9456.00	
		गैर सिंचाई	1030.50	2770.00	
जोड़ (क)	2,15,695.10	22092.00	33,008.00	1,82,687.00	87,793.00

	(सतह)	(वृहद एवं लघु सिंचाई)	454.00	703.00	
मध्य	1,561.80	(लघु सिंचाई सतह)	72.60	207.00	
बिहार	(भू-गर्भ)	(लघु सिंचाई भूगर्म)	540.30	1236.00	
		गैर सिंचाई	1183.30	504.00	
जोड़ (ख)	89,354.8		1250.20	2650.00	86704.80
सतह	28,753.2				
	(सतह)	(वृहद एवं लघु सिंचाई)	12847.26	12,953.00	
बिहार	10,756.1	(लघु सिंचाई सतह)	946.78	2,457.00	
झारखण्ड	(भू-गर्भ)	(लघु सिंचाई भूगर्म)	3841.00	6,451.00	
		गैर सिंचाई	611.60	1,649.00	
जोड़ (ग)	39509.3		18246.64	23,510.00	15,999.00
कुल जोड़ (क+ख+ग)	3,54,559		41,588	59,168.00	2,95,391.00

इस तालिका में स्पष्ट है कि वर्ष 2025 तक बिहार के विभिन्न क्षेत्रों में उपलब्ध कितना पानी का इस्तेमाल हम कर सकते हैं और कितना पानी शेष रह जायेगा। जो पानी शेष बचा हुआ दिख रहा है वह वैसा जल है जिसकी आमद वर्षा के समय होती है और पूरी तरह से इसे रोकने की योजनाओं का ढाँचा खड़ा करना तब तक संभव नहीं प्रतीत हो रहा है।

अब सवाल है कि जिन नदियों में पानी उस बेसिन की जरूरत से ज्यादा है, उस पानी को कहीं दूसरी नदी बेसिन में ले जाना है तो उसे कैसे ले जाया जायेगा। निश्चित रूप से इस स्थानान्तरण प्रक्रिया का पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। विस्थापन के साथ-साथ पारिस्थितिकीय असंतुलन, जैव विविधता का नुकसान आदि अनेक समस्याएं उत्पन्न होंगी। डिटेल प्रोजेक्ट रिपोर्ट के माध्यम से इन समस्याओं की विकरालता का अनुमान लगाया जा सकता है और इनका समाधान ढूँढने का प्रयास किया जा सकता है। राष्ट्रीय हित में नदियों के जल के अगर सुदूर दक्षिण तक ले जाने की जरूरत है तो जरूरत को कैसे पूरा किया जा सकता है, इसके बारे में स्थिति स्पष्ट होनी चाहिये। अगर नौवहन की कोई योजना इससे बना सकते हैं तो

वैसी योजना आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से कितनी उपयोगी होगी ? आज यह माना जा रहा है कि सड़क मार्ग के माध्यम से परिवहन में जितना खर्च होता है उसका एक तिहाई खर्च रेलवे के माध्यम से होता है और जितना खर्च रेलवे के माध्यम से होता है उसका एक तिहाई खर्च नौवहन से होता है, जलमार्ग के यातायात से होता है। भारत सरकार ने इलाहाबाद से लेकर फरक्का तक के इलाके को वाटरवेज नम्बर एक के रूप में घोषित किया है। इसके अंतर्गत नदी को गहरा करने के लिए जगह–जगह पर ड्रेजिंग मशीनें चल रही हैं गंगा को पटना के नजदीक लाने के लिए भी कोशिशें हो रही हैं। महोदय, गंगा जी पटना से दूर भाग रही हैं। इसका प्रमुख कारण है कि पहले पटना से पहलेजा तक नौवहन का जो मार्ग था वह काफी दिनों से बंद हो गया है।

विकास की आधुनिक अवधारणा के संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीय सिद्धांत है कि नदियां एक आर्थिक इकाई हैं और सम्पूर्ण देश और दुनिया में इसकी आवश्यकता को ध्यान में रख कर इनके जल का अधिकतम उपयोग होना चाहिए। निश्चित रूप से बिहार राज्य की यह प्राथमिकता होनी चाहिए कि राज्य सरकार केन्द्र सरकार के टास्क फोर्स से मिलकर ऐसी योजनाएं बनाये ताकि हम अपनी एक–एक इंच भूमि की सिंचाई कर सकें, पेयजल की व्यवस्था कर सकें, उद्योग के लिए, पशुओं के लिए पानी की व्यवस्था कर सकें, म्यूनिसिपल इंडस्ट्रियल उपयोग के लिए पर्याप्त पानी की व्यवस्था कर सकें और जब हमारी ये सभी जरूरतें पूरी हो जायं तभी हमारे हिस्से के पानी को, हमारे यहां उपलब्ध अतिरिक्त पानी को, अगर वास्तव में है, तब कहीं बाहर भेजने की बात हो।

महोदय, राज्य सरकार द्वारा कल एक पुस्तक वितरित की गई है। इसमें इन्होंने अपना दृष्टिकोण रखा है। यह दृष्टिकोण रखे जाने के पहले भी इस राज्य के नेताओं के कई प्रकार के बयान इस संदर्भ में आये हैं। राजनीतिक दलों के नेताओं में कुछ लोग ऐसे होते हैं जो सोच कर बोलते हैं, कई ऐसे लोग होते हैं जो बोलने के बाद सोचते हैं, और कई लोग ऐसे भी होते हैं जो बोलने के बाद भी सोचने की जरूरत महसूस नहीं करते हैं तो बिहार की सरकार ने जो पुस्तिका वितरित की है और इसके

माध्यम से अपना दृष्टिकोण स्पष्ट किया है उससे यह ध्वनि निकलती है कि बिहार की सरकार भी केन्द्र की इस योजना के पक्ष में है। मेरा स्पष्ट मत है कि इसमें जो मुद्दे उठाये गये हैं उन मुद्दों से संतुष्ट होने के बाद ही राष्ट्रीय स्तर पर इस योजना को कार्यान्वित करने की सहमति दी जानी चाहिए। परन्तु जैसा झारखंड बनने के पहले भी कुछ लोगों ने कहा था कि यह राज्य हमारी लाश पर बनेगा, उसी तरह से जैसे ही भारत सरकार की इस परियोजना के बारे में अखबारों में खबर आयी वैसे ही इस स्वनाम धन्य नेता श्री लालू प्रसाद जी का बयान आ गया कि अगर मैं जिन्दा रहूँगा तो यह योजना कार्यान्वित नहीं होगी। (व्यवधान)

महोदय, मैं अधिक समय नहीं लेना चाहता हूँ। परन्तु यह अवश्य कहना चाहता हूँ कि ऐसे वक्तव्यों से यहाँ के नेताओं को बचना चाहिए। इससे आम जनता में गलत संदेश जाता है, भावनायें भड़कती हैं और अच्छी योजनाओं का भी ऋणात्मक पहलू ही आम जनता के सामने पेश होता है। बिहार की सरकार ने तकनीकी विशेषज्ञों की सलाह से जो पुस्तिका सदन के सामने रखी है उसमें अंकित तथ्य ऐसे लोगों के बयानों से मेल नहीं खाते हैं। मुझे यह भरोसा है कि उन्हीं के दल की सरकार द्वारा तैयार की गई इस पुस्तिका में वर्णित तथ्यों को देखने के बाद ये भी अपने बयान बदलेंगे।

भारत की सरकार ने जो भगीरथ प्रयत्न किया है इसके लिए माननीय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी का नाम इतिहास में दर्ज होगा। देश की नदियों को जोड़ने की सैद्धांतिक अथवा व्यावहारिक कोशिश एक भगीरथ प्रयत्न ही है। इसके लिए भारत सरकार ने एक संकल्प व्यक्त किया है। पिछले 50 वर्षों से ऐसी योजनाएं विचाराधीन थीं। एक योजना श्री के. एल. राव ने रखी थी, दूसरी योजना श्री दस्तूर ने रखी थी। परन्तु किसी भी सरकार में यह दूरदृष्टि नहीं थी, यह साहस नहीं था कि वह इन योजनाओं को लागू करने हेतु इनकी व्यावहारिकता और संभाव्यता पर विचार मंथन के लिये, विशेषज्ञों द्वारा तैयार आधार पत्र को विचार हेतु देश के सामने प्रस्तुत करने की कोशिश करें। दूरदृष्टि के अभाव में, संकल्प के अभाव में, आत्मविश्वास के अभाव में राष्ट्रीय हित के प्रति दूरदर्शी नीति के अभाव में इस

योजना को लागू करने की संभावना पर विचार करने का इसके पहले किसी सरकार ने प्रयास नहीं किया। इस योजना को लागू करने के लिए, इसके लिए धन इकट्ठा करने के लिए जो संकल्प व्यक्त किया गया है उसके लिए सदन को केन्द्र सरकार को धन्यवाद देना चाहिए। मैं तो यह बताना चाहूँगा कि 5 लाख 60 हजार करोड़ रुपये का यह धन एक वर्ष में नहीं लगने वाला है। यह 25 वर्षों में लगने वाला है। देश और दुनिया में कई ऐसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएं हैं जो आज दो प्रतिशत ब्याज पर ऐसी परियोजनाओं के लिये धन देने के लिए तैयार हैं।

आज आर्थिक दृष्टि से हमारी खेती लाभकारी नहीं है। इसका मुख्य कारण है कि हमारा किसान 15 प्रतिशत, 18 प्रतिशत सूद पर ऋण के रूप में धन लेता है। बैंकों से नाबार्ड से वह ऋण लेता है, अन्य कई संस्थाओं से ऋण लेता है। इसके एवज में किसान 15 प्रतिशत, 18 प्रतिशत की दर से ब्याज और मूलधन की किस्त देकर ऋण चुकाता है। अगर किसान 15 प्रतिशत, 18 प्रतिशत की ब्याज दर से ऋण चुकायेगा तो कैसे खेती लाभकारी होगी ? आज उद्योगपतियों की लॉबी हमारे देश में मजबूत है। उद्योगपति दबाव देकर अपनी मांगों को बजट में मनवाते हैं। उद्योगपति अपने सवालों को लेकर केन्द्र के पास जाते हैं। वे कहते हैं, हमको कम परसेंट पर ऋण मिलना चाहिए, बिजली की सुविधा मिलनी चाहिए, अन्य कई प्रकार की छूट मिलनी चाहिये और सरकारें उनकी मांग मानती हैं। परन्तु आज किसान 18 प्रतिशत इंटरेस्ट पर शॉर्ट टर्म लोन लेता है। अगर कोई कहेगा कि उस इन्टरेस्ट से ऋण लेने पर किसान का फायदा होगा और खेती लाभकारी होगी तो यह सोचना महज एक ख्याली पुलाव है। इसलिए महोदय आधारभूत संरचना विकास के लिये अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर दो प्रतिशत ब्याज दर पर धन उपलब्ध है। यह धन एक मुश्त प्राप्त होगा तो इसलिए प्राप्त होगा कि आज अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत पर भरोसा हो गया है कि भारत की सरकार जिन नीतियों पर चल रही है उसमें यहां का रुपया मजबूत हो रहा है। आने वाले दिनों में अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में रुपया की स्थिति और भी अधिक मजबूत होने जा रही है।

दुनिया में दो ही करेंसी ऐसी हैं, पहली चीन की करेंसी युआन और दूसरी

भारत की करेंसी रुपया, जिनके बारे में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर धन लगाने वालों का मानना है कि आगे आने वाले समय में ये दोनों मजबूत होंगी। रुपया के बारे में कहा जा रहा है कि रुपया काफी मजबूत होगा। इसलिए आज जो डालर में हमको कर्ज मिलेगा वह रुपया में चुकाना होगा तो भार कम पड़ेगा और अगर हम दो परसेंट ब्याज दर पर सूद लेंगे तो उसका एक तिहाई से अधिक हिस्सा वास्तव में परोक्ष रुप में हमको ग्रांट के रूप में मिल जायेगा। ऐसा प्रतीत होता है कि भारत सरकार ने इस योजना के लिये धन जुटाने के लिए जो दृष्टिकोण रखा है, जो योजना बनायी है वे योजनाएं सफल होंगी। पर्यावरण का जहां तक सवाल है, जहां पर्यावरण का नुकसान होगा वहां सरकार ने वादा किया है इस देश से कि उसकी भरपाई करेंगे। यह योजना जनहित में सफल हो गई तो गरीबी हटेगी, बेरोजगारी मिटेगी, लाखों लोगों को, देश के 101 जिलों में लोगों को, इससे रोजगार मुहैया होगा। केन्द्र सरकार अभी जो कह रही है, उससे यही निष्कर्ष निकलता है। अगर यह योजना सफल साबित हो गई तो श्री अटल बिहारी वाजपेयी का नाम भगीरथ की श्रेणी में इतिहास का अंग बन जायेगा। इसलिए मेरा अनुरोध होगा कि इस परियोजना के बारे में अब तक जिन लोगों ने बेतुका वक्तव्य दिया है उन्हें इसके लिए माफी मांगनी चाहिए और अपने वक्तव्यों को वापस लेना चाहिए, उन्हें अपने विचार में परिवर्तन करना चाहिए। अगर देश की जनता को इससे फायदा होगा तो यह योजना जरूर लागू होनी चाहिये, अन्यथा इसकी अवधारणा में आवश्यक परिवर्तन होना चाहिये। अगर तकनीकी एवं वैज्ञानिक कसौटी पर यह योजना व्यावहारिक एवं लाभकारी नहीं साबित होती है तो इसे रोक देना चाहिए।

□ 26 जुलाई 2003
बिहार विधान परिषद्

• • •

लचर पेयजल प्रबंधन

पेयजल समस्या पर सदन में हो रही बहस में मैं इस उम्मीद के साथ अपना विचार रख रहा हूँ कि बहस के अंत में जब इस विषय पर सरकार का पक्ष रखा जायेगा तो पूरी बहस के दौरान माननीय सदस्यों द्वारा जो प्रश्न खड़ा किये जा रहे हैं, उनका उत्तर, उनके बारे में सरकार का स्पष्टीकरण माननीय मंत्री जी द्वारा संजीदगी से दिया जायेगा। आज इससे कोई इंकार नहीं कर सकता है कि इस राज्य में पीने के पानी का संकट है, न केवल संकट है बल्कि यह संकट दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। पिछले चार वर्षों में, राज्यपाल महोदय के अभिभाषणों में और राज्य सरकार के बजट भाषणों में इस बारे में जो तथ्य दिये गए हैं वे तथ्य निश्चित रूप से इस ओर इंगित करते हैं कि सरकार इस संकट के समाधान की दिशा में प्रयत्नशील है। इस संकट को समाप्त करने के लिए सरकार अनेक कदम उठा रही है। परंतु यह भी उतना ही सही है कि व्यवहार में वे कदम अभी तक प्रभावी साबित नहीं हो पा रहे हैं। जल संकट केवल इस राज्य की समस्या नहीं है, यह समस्या पूरे राष्ट्र की है। अतिशयोक्ति नहीं होगी, अगर यह कहा जाय कि यह संकट विश्वव्यापी है। ग्लोब के विभिन्न हिस्सों में यह समस्या गंभीर रूप धारण करती जा रही है। अलग-अलग स्थानों पर समस्या का स्वरूप भिन्न है।

सातवीं पंचवर्षीय योजना काल में यह लक्ष्य तय किया गया था कि 1995 तक पूरे देश में और खासकर के देश के शहरों में पीने के पानी की समस्या का हल कर लिया जायेगा। उसी दृष्टिकोण से जब बिहार एक था उस समय कई कार्यक्रम बने थे। बिहार सरकार की आठवीं पंचवर्षीय योजना 1992-2007 दस्तावेज में इनका विस्तृत विवरण मौजूद है। वर्ष 1995 तक राज्य के सभी शहरों में पेय जलापूर्त्ति की व्यवस्था कर लेने का लक्ष्य था। परन्तु दुःख के साथ कहना पड़ता है कि उनमें से कोई भी कार्यक्रम सफलतापूर्वक लागू नहीं हो सका। इस दृष्टि से 1989 में ये कार्यक्रम तय किये गये थे, मगर उस समय की और उसके बाद की सरकार ने इस पर समुचित ध्यान नहीं दिया। पेयजल संकट दूर करने की योजना

वस्तुतः एक समन्वित, व्यापक और बहुआयामी दृष्टिकोण वाली योजना है। यह जनहित की योजना है। पीने का पानी न केवल मनुष्यों के लिए बल्कि पशुओं के लिए भी उतना ही आवश्यक है। 1995 तक तो हम इस लक्ष्य की दिशा में एक कदम भी नहीं बढ़ा सके। 1995 के पहले से जो कार्यक्रम तैयार किये गए थे, पहले से जो उपाय किये गये थे वे उपाय भी इतना अव्यावहारिक और नाकाफी साबित होते गये कि आज स्थिति भयावह संकट के कगार पर पहुँच गई है।

उस समय कहा गया था कि रांची, धनबाद और जमशेदपुर इन तीनों शहरों में पेय जल आपूर्ति की क्षमता बढ़ाई जा रही है और इन शहरों में 1995-97 के बाद कोई पेयजल संकट नहीं रहेगा। परंतु मुझे लगता है कि जितना संकट 1989 में था, उससे कहीं अधिक संकट आज इन शहरों में पैदा हो गया है। जिस समय मैसूर कांफ्रेंस में यह लक्ष्य तय किया गया और इसके कार्यान्वयन के संबंध में जो समय सीमा तय की गई थी उस अवधि में आवश्यक प्रयासों का नहीं होना इसका सबसे बड़ा कारण है। धनबाद के लिए उस समय कहा गया था कि धनबाद को प्रतिदिन साढे तेरह करोड़ लीटर पानी की जरूरत है। आज धनबाद की वर्तमान पेयजल आपूर्ति संरचना की क्षमता केवल सात करोड़ तीस लाख लीटर प्रतिदिन है। सरकार ने मैथन डैम से धनबाद को पीने के पानी की व्यवस्था करने की योजना पर पिछले साल से ही कार्य आरंभ किया है। उसका नतीजा इस साल तक आ जाना चाहिए। परियोजना का फेज एक पूरा हो जाने के बाद जब फेज दो पर कार्य शुरू होगा तभी वहाँ पीने के पानी की समस्या समाप्त होगी इसका अनुमान लगाया जा सकता है।

1991 में बिहार सरकार द्वारा एक सिंचाई आयोग गठित किया गया था। उस समय तक राज्य सरकार की ओर से पेयजल समस्या के बारे में कोई समन्वित और व्यापक योजना नहीं बनायी जा रही थी। आयोग ने राज्य सरकार के लोक स्वास्थ्य विभाग से सूचना मांगा कि बिहार में पीने के पानी की जरूरत का आंकलन हुआ है या नहीं तो औसतन विभाग द्वारा बताया गया कि 70 लीटर प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति पानी की जरूरत इस राज्य में है। आयोग ने पेयजल के संबंध में विभिन्न

राज्यों से भी आँकड़े मंगाये और इस आधार पर पेयजल उपलब्धता और आवश्यकता की मात्रा का निर्धारण हुआ। आयोग इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि शहरों में रहने वाली आबादी के लिए कम से कम 140 लीटर पानी प्रति दिन प्रति व्यक्ति चाहिये। ग्रामीण क्षेत्र में न्यूनतम 70 लीटर पानी प्रतिव्यक्ति प्रति दिन की दर से चाहिए और जो अर्द्धशहरी क्षेत्र या औद्योगिक इलाके हैं वहाँ कम से कम 120 लीटर प्रति दिन प्रति व्यक्ति के हिसाब से पानी की उपलब्धता होनी चाहिये। इस आधार पर आकलन किया गया तो गणना से पता चला कि झारखंड राज्य में इतना अधिक पानी है कि न केवल आज बल्कि 2025 तक के लिए भी पेयजल आपूर्ति योजनायें बनाई जायं तो एक-एक व्यक्ति के पीने के पानी की समस्या को हल किया जा सकता है। उस समय पीने के पानी की समस्या को हल करने के लिए शहरों और गांवों के लिये कई योजनाओं को चिन्हित किया गया। परन्तु, अफसोस है कि ये योजनायें अब तक शुरू नहीं हुई। ये योजनायें कब शुरू की जाएंगी यह सरकार को बताना चाहिये।

विभिन्न प्रकार के अन्य घरेलू उपयोग, पशु-पक्षी, उद्योग-धंधा आदि सब मिलाकर झारखंड में 34 से 46.5 लीटर अतिरिक्त पानी प्रतिव्यक्ति प्रतिमाह चाहिए। देश-दुनिया की प्रगति के हिसाब से दिन प्रति दिन जैसे-जैसे झारखंड राज्य विकास करेगा और यहाँ के लोगों का जीवन स्तर बढेगा तो 2011 ई0 तक और 20 प्रतिशत पानी की अतिरिक्त जरूरत होगी। सब प्रकार के अन्य उपयोगों को मिलाकर इस राज्य में पानी की जरूरत 8370.6 लीटर प्रतिमाह प्रति व्यक्ति होने का अनुमान है। आज जरूरत है कि जहाँ भी जल संग्रहण क्षमता है वहाँ छोटे-बड़े जलाशय बनाये जायं और उन जलाशयों से अन्य उपयोग के साथ-साथ पीने के पानी की व्यवस्था सरकार आवश्यक रूप से करे क्योंकि भारत सरकार ने 1987 में भी और 2000 में भी जो जल नीति बनायी है उसके अनुसार जल स्त्रोतों पर जहां भी जलाशय बने हैं या बनाये जाने हैं उन जलाशयों के जल के उपयोग में पहली प्राथमिकता पीने के पानी की होनी चाहिए। मुझे नहीं लगता है कि राज्य में जितने जलाशय अभी मौजूद हैं, उनसे पीने के पानी की व्यवस्था प्राथमिकता के आधार पर की जा रही है। पेयजल की प्राथमिकता के अनुसार इन जल भंडारों का इस्तेमाल

नहीं हो रहा है।

राष्ट्रीय जलनीति में निर्धारित प्राथमिकता के अनुसार पहले पीने के पानी का उसके बाद सिंचाई का और उसके बाद उद्योग का नंबर आता है। परंतु जो भी जलाशय बने हैं उनसे उद्योगों का हित साधन अधिक हो रहा है। वस्तुतः इनका निर्माण ही औद्योगिक जलापूर्ति के लिये हुआ है। जरूरत है कि इन जलाशयों से प्राथमिकता के आधार पर पीने के पानी की आपूर्ति की जाय। इससे शहरी और अर्द्धशहरी इलाकों की पेय जल समस्याओं का निदान तुरंत निकल जाएगा। इस राज्य का जैसा भूगोल है उसके हिसाब से बहुत सारे गाँव ऐसे हैं जहाँ गर्मी के दिनों में पीने के पानी की समस्या प्रचंड हो जाती है। मुझे लगता है कि ऐसे गांवों को सूचीबद्ध किया जाना चाहिए। हमलोगों को पिछले चार-पाँच वर्षों के अनुभव के आधार पर यह तय करना चाहिये कि कौन-कौन ऐसे गाँव हैं जहाँ पीने के पानी के लिए लोगों को लंबी दूरी तय करनी पड़ती है। ऐसी समस्या शहरी क्षेत्रों में भी है। जमशेदपुर के मानगो आदि क्षेत्रों में गर्मी के दिनों में भूगर्भीय जलस्तर काफी नीचे चला जाता है। लोग घंटों पानी के लिये नलों पर कतार लगाकर खड़ा रहते हैं। टैंकरों से पेयजल आपूर्ति करनी पड़ती है। अगर सरकार द्वारा सभी तथ्यों को ध्यान में रखकर पेय जलापूर्ति की योजनायें बनाई जायं तो इस राज्य में पीने की पानी की समस्या का समाधान किया जा सकता है।

जैसा कि नेता प्रतिपक्ष सुधीर महतो जी ने कहा है कि केवल पीने के पानी की मात्रा ही पर्याप्त नहीं होनी चाहिए, बल्कि वह मात्रा शुद्ध भी होनी चाहिए, वह मात्रा गुणवत्ता युक्त होनी चाहिए। हमारे प्राकृतिक जल स्रोतों का प्रदूषण बहुत सारे उद्योग-धंधों के द्वारा अविवेकपूर्ण तरीका से हो रहा है, उसे रोका जाना चाहिए। पिछले वर्ष 2004 में हमलोगों ने 'दामोदर बचाओ आन्दोलन' के अंतर्गत दामोदर नदी के उद्‌गम स्थल से कोलकाता तक की 10 दिनों की यात्रा की थी। इसके बाद इस वर्ष 2005 में स्वर्णरेखा के उद्‌गम स्थल से बहरागोड़ा तक जल जागरूकता अभियान के तहत यात्रा हुई। दोनों ही अभियानों में वैज्ञानिकों की एक टीम भी अपनी चलंत प्रयोगशाला के साथ पूरी यात्रा में थी और स्थान-स्थान पर नदी जल का नमूना

लेकर जल गुणवत्ता का परीक्षण कर रही थी । दोनों ही यात्राओं का अनुभव है कि चाहे भारत सरकार के औद्योगिक संस्थान हों, बिजली बनाने वाले उद्योग हों, खनन उद्योग हों, अन्य प्रकार के कल–कारखाने हों या राज्य सरकार और केन्द्र सरकार के सार्वजनिक उपक्रम हों, ये सभी उद्योग नदियों के पानी को प्रदूषित कर रहे हैं । जो नियम–अधिनियम प्रदूषण रोकने के लिये बनाये गये हैं और जिनके क्रियान्वयन की जिम्मेवारी राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को सौंपी गयी है उस जिम्मेवारी का निर्वाह प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ठीक ढंग से नहीं कर रहा है ।

जरूरत है कि न केवल पीने के पानी की पर्याप्त व्यवस्था हो बल्कि पीने के 'शुद्ध पानी' की व्यवस्था भी हो । आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व बैंक सहित कई संस्थायें पीने के पानी की व्यवस्था के लिए वित्तीय सहायता दे रही हैं। उस सहायता का उपयोग सरकार उपयुक्त तरीका से करे तो पीने के पानी के लिए नागरिकों को आज जैसा बजट झेलना पड़ रहा है और जैसी कीमत चुकानी पड़ रही है वह बजट और कीमत काफी कम हो जायेगी । मेरा अनुरोध है कि पेयजल की लागत और शुल्क निर्धारण के लिये विद्युत ऊर्जा नियामक आयोग की तरह एक 'जल दर निर्धारण नियामक आयोग' का गठन सरकार को करना चाहिये, क्योंकि शहरी क्षेत्रों में पेयजलापूर्ति के क्षेत्र में कतिपय निजी कम्पनियां कदम बढ़ा रही हैं। बिहार म्युनिसिपल एक्ट में जिसे झारखंड सरकार ने अंगीकृत कर लिया है, निजी कम्पनियों की गतिविधियों को नियंत्रित करने के लिये सक्षम कानूनी प्रावधान नहीं है। मुझे उम्मीद है राज्य सरकार पेयजल आपूर्ति कार्यक्रमों को तत्परता से लागू करेगी और केवल पेयजल टास्क शुद्ध पेय जल नागरिकों को उपलब्ध कराना सुनिश्चित करने की दिशा में ठोस कदम उठायेगी।

□ 14 जून 2005
झारखंड विधान सभा

•••

विद्युत व्यवस्था का पुनरुद्धार

माननीय सदस्य श्री राधाकृष्ण किशोर जी ने विस्तार से बिजली की समस्या के बारे में और राज्य में इसकी संरचनात्मक स्थिति के बारे में प्रकाश डाला है । मैं उन बातों को दोहराना नहीं चाहता हूँ। परंतु यह अवश्य कहना चाहता हूँ कि इस बारे में पिछले पाँच वर्षों में जो परिणाम हमलोगों के सामने आना चाहिए था, जिस तरह के परिणाम की सुखद कल्पना हमलोग राज्य निर्माण के समय से करते आ रहे हैं उस अनुपात में वह परिणाम सामने नहीं आया है । बिजली के उत्पादन की, संचरण की और वितरण की जर्जर संरचनायें इस राज्य को विरासत में मिली हैं । ऐसी ध्वस्त संरचनाओं को ठीक करना, इन्हें दुरुस्त करना दो, चार, छह महीने का काम नहीं है। राज्य सरकार के कतिपय इस संदर्भ में प्रासंगिक दस्तावेजों को देखने का अवसर मुझे मिला है। झारखण्ड में सरकार बनने के बाद ऊर्जा के क्षेत्र में प्रतिवर्ष सरकार ने अच्छा–खासा ध्यान दिया है और काफी व्यय किया है। दसवीं पंचवर्षीय योजना में भी करीब 850 करोड़ रुपये खर्च करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है, ताकि बिजली की स्थिति में अपेक्षित सुधार हो सके । जब झारखंड राज्य बना था और ऊर्जा के क्षेत्र में जिस प्रकार की आधारभूत संरचना झारखंड को विरासत के रूप में बिहार से मिली थी उसमें सुधार करने के सराहनीय प्रयत्न इस बीच झारखंड सरकार ने किया है ।

1974 से लेकर 1995 तक विभिन्न प्रकार के सर्वेक्षण भारत सरकार की संस्था सेन्ट्रल इलेक्ट्रिसिटी ऑथोरिटी कराती रही है । उन पर नजर डालते हैं तो ऐसा लगता है कि विगत 20–25 वर्षों से, जब बिहार और झारखंड एक था उस समय से ही, इसकी ओर आवश्यक ध्यान नहीं दिया गया कि राज्य में बिजली की स्थिति सुधरे । यहां के डिमान्ड में वृद्धि का उचित निर्धारण हो, उसकी स्वीकृति केन्द्र से मिले, यहाँ के विकास के दीर्घलक्षी खाका के अनुरूप बिजली उपलब्ध हो इस पर केन्द्र सरकार द्वारा कभी ध्यान नहीं दिया गया । बल्कि उत्तरोतर, भारत सरकार ने यहां के डिमांड को कम करके दिखाने की कोशिश की है। 1985–86 से मैं प्रत्यक्ष रूप से यह अनुभव कर रहा हूँ, जितने विद्युत संयंत्र पहले यहाँ थे उतने ही

आज भी हैं। वे सभी पुराने हैं, उनमें से कई बंद हैं, कई जर्जर हालत में हैं, कइयों की उत्पादन क्षमता घट गई है। अगर स्थापित क्षमता को आधार माना जाय तो झारखंड विद्युत उत्पादन क्षमता के मामले में एक आत्म निर्भर राज्य है। अगर हम यहां की स्थापित विद्युत क्षमता पर नजर डालेंगे तो कहीं कोई कारण नहीं दिखाई देता कि लंबे समय से इस राज्य को विद्युत उत्पादन में आत्म निर्भर राज्य का दर्जा क्यों नहीं दिया गया।

राज्य में ऊर्जा विभाग के साथ एक प्रमुख संस्था जुड़ी है वह है राज्य विद्युत बोर्ड। बिहार के समय जो बिहार राज्य विद्युत बोर्ड था झारखंड बनने के बाद वही अब झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड हो गया है। देश में जो विद्युत अधिनियम है, उसके अधीन विद्युत बोर्ड ही ऐसी संस्था रही है जिसके ऊपर यह जिम्मेवारी है कि वह राज्य का उत्पादन बढ़ाये, संचरण की आवश्यक संरचना को सुदृढ़ बनाने का उपाय करे और सुचारू रूप से वितरण का कार्य करे। परन्तु बोर्ड की भूमिका इस बारे में निराशाजनक रही है। नतीजा यह है कि यहाँ का प्लांट लोड फैक्टर राष्ट्रीय औसत से काफी कम है। यहाँ का ट्रांसमिशन-डिस्ट्रीव्यूशन लॉस करीब 40 से 50 प्रतिशत के बीच है। यह कोई आज से नहीं है, बल्कि 20-25 वर्षों से यही स्थिति चली आ रही है। पहले की सरकारों ने बिजली बोर्ड में जिस तरह बेहिसाब बहालियां की है, उसके कारण बिजली बोर्ड आज की तिथि में राज्य के लिए एक उपयोगी संगठन नहीं रह गया है। बल्कि एक ऐसा संगठन बन गया है जिसका दुरूपयोग पूर्ववर्त्ती सरकारों ने अपना निहित स्वार्थ साधन के लिए किया है और उसका खामियाजा वर्तमान व्यवस्था को भुगतना पड़ रहा है।

ऐसी स्थिति दो-तीन दशकों से चली आ रही है। यही कारण है कि झारखंड सरकार ने विगत पाँच साल में जितना प्रयास किया है उसका वैसा नतीजा नहीं दिखाई पड़ रहा है। बिजली बोर्ड और उसका कार्यभार संभालने वालों के बारे में, उनके वक्तव्यों के बारे में, उनके प्रयासों के बारे में राज्य की सरकार और राज्य की जनता बहुत पहले से जानती है। राज्य बनने के बाद भी यह दुर्भाग्य रहा कि बिजली की व्यवस्था सुधारने के लिये सरकार चार कदम आगे बढ़ाने का प्रयास

करती है तो उसे खींचकर दो कदम पीछे करने का काम भी सरकार में बैठे लोगों द्वारा ही किया जाता रहा है। एक लंबे समय से, बिहार के समय से, जो कार्य संस्कृति राज्य के विद्युत क्षेत्र में जड़ जमा चुकी थी वह इन चार-पाँच वर्षों में बदल नहीं सकी है। उस जड़ को उखाड़ना तो दूर हिलाया भी नहीं जा सका है। मुझे लगता है कि फिर भी दो-तीन वर्षों से जो प्रयास हो रहे हैं उसके कारण कुछ कुछ होता हुआ दिखाई पड़ रहा है। ठीक है संचरण की व्यवस्था को दुरूस्त करने के लिये, जैसा कि माननीय सदस्य श्री राधाकृष्ण किशोर जी बता रहे थे कि हमको पावर सब-स्टेशन बनाने का काम अधिक से अधिक स्थानों पर पूरा करना चाहिये ताकि वहाँ तक जो बिजली पहुँचे उसे कम ट्रांसमिशन-डिस्ट्रीब्यूशन लॉस में और उपयुक्त वोल्टेज के साथ हम गांवों तक या लाइन में लगे अंतिम व्यक्ति तक पहुँचा सकें। इस कार्य में सरकार दो वर्ष से लगी है। कई जिलों में पावर सब-स्टेशन निर्माण के काम में संतोषजनक प्रगति नहीं दिखाई पड़ रही है। मैं जमशेदपुर का उदाहरण देना चाहता हूँ। पिछले दो-तीन वर्षों में मानगो के आसपास उपयुक्त जगह ही नहीं मिल रही थी जहाँ पर पावर सब-स्टेशन स्थापित किया जाय। जगह की भारी दिक्कत थी। कहीं जगह मिली भी तो उसके निबंधन में संबंधित विभाग द्वारा अड़ंगा डाल दिया गया। परन्तु ये दिक्कतें अब जाकर दूर हो गयी हैं। पड़ोसी जिला सरायकेला-खरसावां में जगह मिली है। वहाँ तुरंत काम शुरू होने वाला है। इसी तरह से जितने पावर सब-स्टेशन बनाने के बारे में राज्य सरकार ने सोचा था, उनके निर्माण कार्य की प्रगति का काम आज कहीं 25 प्रतिशत तो कहीं 50 प्रतिशत तक ही पहुंचा है। कुछ जगहों पर अभी शुरूआत हो रही है। जब इनकी प्रगति सौ प्रतिशत पर पहुँच जायेगी तो आज जो बिजली की चिंताजनक स्थिति राज्य में दिखायी पड़ रही है उससे हमें छुटकारा मिल सकता है।

राज्य सरकार ने आकलन किया है कि आगे आने वाले दिनों के लिए यहाँ कबतक कितनी बिजली चाहिए। ताप बिजली में और पानी से बनने वाली बिजली में कितना का अनुपात होना चाहिए। आज यह अनुपात मुझे लगता है कि 87 और 13 के आस-पास है। यह अनुपात और संतुलित हो, यहाँ जल विद्युत उत्पादन

संयंत्र स्थापित हों, यहाँ के प्राकृतिक संसाधनों का इस्तेमाल बिजली उत्पादन के लिए पूरा देश करे और उत्पादित ऊर्जा से झारखंड भी लाभान्वित हो यह प्रयास भी राज्य सरकार कर रही है।

झारखंड में कोयला का विपुल भंडार है। कोयला को जलाकर बिजली बनती है तो इस बिजली को किसी दूसरी जगह ले जाने में जितना खर्च होता है उससे बहुत अधिक खर्च होता है अगर यहाँ से कोयला ले जाकर उस जगह विद्युत उत्पादन संयंत्र स्थापित किया जाय। पर्यावरण पर भी इसका विपरीत असर होता है। देश के अन्य राज्यों की सरकारें भी इसमें रूचि ले रही हैं कि झारखंड राज्य में कोयला खदान के समीप बिजली उत्पादन के संयंत्र बने। पूंजी निवेश की जैसी खबरें आ रही हैं अगर वे जमीन पर उतर जाती हैं, ऐसी कोशिशें वास्तविक रूप धारण कर लेती हैं तो मुझे लगता है कि झारखंड इस देश का ''पावर हब'' बन जाएगा और पूरे देश में जो बिजली की कमी है उसका बड़ा हिस्सा नेशनल ट्रांसमिशन लाइन के थ्रू झारखंड से पूरा हो सकेगा। इस संदर्भ में बन रही योजनाएं अगर धरती पर उतरें तो राज्य का भी और देश का भी इनसे हित होगा। विद्युत उत्पादन की इकाइयां कोई छः महीने या साल भर में धरती पर नहीं उतरती हैं। इनके निर्माण में समय लगता है । जो व्यक्ति या जो संस्थान या जो कंपनियाँ बिजली उत्पादन करने के लिए यहाँ आ रहे हैं, आना चाह रहे हैं, वे कितना सही हैं, कितना विश्वसनीय हैं, उनके इरादे कितने नेक हैं, कितना ठीक हैं या कितना गलत हैं इसके बारे में भी मुझे लगता है कि सरकार चिंतन विश्लेषण कर रही होगी। परंतु अब समय आ गया है कि सरकार उहापोह छोड़कर इस बारे में अपनी सोच को जमीन पर उतारने में जुट जाय।

भारत सरकार ने बिजली एक्ट, 2003 पास कर दिया है। मुझे लगता है कि अब राज्य सरकार को संचरण व्यवस्था पर अधिक ध्यान देना चाहिए। जिस तरह बी.एस.एन.एल. ने जमीन के नीचे ऑप्टिकल फाइवर बिछाया है। कुछ प्राइवेट कंपनियां भी बिछा रही हैं। कोई भी उनके ऑप्टिकल फाइवर नेटवर्क माध्यम का व्यावसायिक उपयोग कर सकता है। मेरा सुझाव है कि राज्य सरकार विद्युत उत्पादन और वितरण का अधिकार अपने पास रखने के बारे में भले ही चिंता कम करे, परन्तु

संचरण के क्षेत्र में एकाधिकार स्थापित करने के लिये कदम अवश्य आगे बढ़ाये। राज्य सरकार राज्य में संचरण के क्षेत्र में एकाधिकार प्राप्त कर लेती है तो बिजली उत्पादन करने वाले निजी क्षेत्र में उत्पादित बिजली को भी राज्य सरकार के संचरण लाइन के माध्यम से ले जाने के लिए बाध्य होंगे।

राज्य बिजली बोर्डों की अनबंडलिंग हो रही है, अलग-अलग राज्यों में बिजली बोर्डों को पुनगर्ठित किया जा रहा है। उत्तर प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र आदि कई राज्य हैं जहाँ सरकार ने बिजली बोर्ड को भंग कर दिया है। अब बिजली बोर्ड की वह कानूनी स्थिति नहीं है जो भारत सरकार ने बहुत पहले 1947 में बिजली बोर्ड स्थापित करने का अधिनियम बनाते समय निर्धारित किया था। अब बिजली बोर्डों को पुनर्गठित करके ट्रांसमिशन की, डिस्ट्रब्यूशन की, जेनरेशन की अलग-अलग कंपनियाँ बनायी जा रही हैं। एक राज्य तीन-तीन, चार-चार कंपनियाँ एक-एक क्षेत्र में बना रहे हैं। अब यह जरूरत है कि निजी पूंजी प्रवाह का सरकार इस्तेमाल करे और बिजली के जेनरेशन से यथासंभव अपना हाथ खींचे। सरकार वितरण व्यवस्था भी यथासंभव गैर सरकारी क्षेत्र में दे दे । अगर मजबूत संचरण व्यवस्था राज्य सरकार के हाथ में रहेगी तो इसका भरपूर लाभ राज्य सरकार को मिलेगा।

विभिन्न स्थानों पर कई निजी कंपनियाँ चाह रही हैं कि वे इस राज्य में विद्युत का उत्पादन और वितरण करें। टाटा पावर नामक कंपनी ने, झारखंड राज्य इलेक्ट्रीसिटी रेगुलेटरी ऑथोरिटी के सामने आवेदन डाला है कि वह कुछ स्थानों पर बिजली का डिस्ट्रीब्यूशन अपने हाथ में लेना चाह रही है । आज केवल विद्युत उत्पादन ही नहीं विद्युत वितरण में भी सरकार को भारी घाटा हो रहा है । उत्पादन और वितरण से अपना हाथ खींच लेने के बाद इस घाटा से सरकार बचेगी । सरकार को इस मामले में थोड़ा उदार होना चाहिए। विद्युत एक्ट 2003 में प्रावधान है कि कोई निजी कंपनी अगर बिजली का वितरण अपने हाथ में लेना चाहती है तो इस हेतु वह किसी भी एक रेवेन्यू डिस्ट्रीक्ट को ले सकती है या किसी एक नगरपालिका या नगर निगम या नोटिफाइड एरिया की इकाई को इस हेतु ले सकती है। निश्चित रूप से कोई निजी कंपनी इस क्षेत्र में आयेगी तो वह नुकसान के लिए नहीं आयेगी। आज

हमारे यहाँ नगर निगम, नगर पालिका, नोटिफाइड एरिया में भी, जहाँ से बिजली बोर्ड को ज्यादा कलेक्शन आता है, अगर तुलनात्मक दृष्टिकोण से देखा जाय तो वहाँ भी विद्युत वितरण सरकार के लिये घाटे का ही सौदा है। इस तरह उत्पादन के साथ निजी क्षेत्र को ऐसे इलाकों में विद्युत वितरण के लिये भी अनापत्ति प्रमाण देकर सरकार वह घाटा भी कम कर सकेगी। सरकार को चाहिये कि नगरपालिका, नगरनिगम, नोटिफाइड एरिया एवं अन्य राजस्व इकाइयों में विद्युत वितरण व्यवस्था हेतु निजी संस्थानों के साथ समझौता की शर्तें तय करे और इन शर्तों पर वे जहाँ तक चाहते हैं वहाँ तक बिजली पहुँचाने का अधिकार उन्हें दे दे ताकि लोगों को 24 घंटा सुनिश्चित बिजली मिले, अच्छी गुणवत्तायुक्त बिजली मिले। संचरण लाइन अपने हाथ में ले लेने के बाद सरकार निजी कंपनियाँ को बाध्य कर सकती है कि दूर-दराज के ग्रामीण क्षेत्रों में भी उनके द्वारा बिजली पहुँचाई जाय।

आज बिजली की व्यवस्था पर हम सभी को पॉजिटिव माइन्ड से सोचना चाहिए। देश और दुनिया प्रगति की दिशा में जिस ओर जा रही है हम भी उस ओर चलने की हिम्मत करेंगे तभी हम अपने लिए सही विकास की योजनायें बना सकेंगे। आम जनता को और सदन को भी सरकार यह कनविन्स कर सकती है कि इस बारे में वह जो कदम उठा रही है वह कदम सही है। बिजली बोर्ड को अपने कब्जा में लेकर बैठे रहना और उस पर नियंत्रण का अधिकार होने का भ्रम पाले रहना और बोर्ड को होनेवाले घाटा की भरपाई सरकारी खजाने से करते रहना कहीं से भी राज्यहित में नहीं है।

राज्य विद्युत बोर्ड द्वारा लगातार यह शिकायत की जाती है कि सरकार के अमूक विभाग के उपर इतना बकाया है और सरकार की नीतियां ही बोर्ड की खस्ताहाली के लिये जिम्मेदार हैं। सरकार के विभिन्न अंगों द्वारा आपस में ताल-मेल नहीं बैठा पाने की परस्पर विरोधाभासी कार्य संस्कृति ऐसे ही चलती रही तो मुझे नहीं लगता है कि गाँव के लोगों तक बिजली पहुँचाने का काम सरकार अपने बलबूते कभी भी कर पायेगी।

ग्रामीण विद्युतीकरण के क्षेत्र में संचरण लाइन सरकार अपने नियंत्रण में स्थापित

करें और वितरण व्यवस्था सम्हालने के लिये निजी क्षेत्र को आगे लाया जाये। उत्पादन में भी निजी पूंजी निवेश को प्रोत्साहन दिया जाय। 10वीं पंचवर्षीय योजना में जितना धन ऊर्जा क्षेत्र के लिये आवंटित किया गया है, मुझे लगता है कि उसकी मध्यवर्ती समीक्षा राज्य सरकार को करनी चाहिए। पुराने जंग पड़े हुए संयंत्रों को ठीक करने के लिए, उनकी मरम्मत के लिये जितना उद्व्यय निर्धारित किया गया है, वह कितना जायज है, उन संयंत्रों का रख-रखाव कैसा हो रहा है, किस तरह से हो रहा है इसकी भी सरकार समीक्षा करे, तो असलियत सामने आ जायेगी, विद्युत व्यवस्था की बदहाली के लिये दोषियों की शिनाख्त हो जायेगी। मगर मुझे लगता है कि पीछे की ओर जाकर 10 साल में, 15 साल में, 20 साल में किसने क्या गलती की है और आज भी मेन्टेनेंस के कार्य में जो लगे हैं उसमें कौन कितनी गलती कर रहा है, इस छिद्रान्वेषण की ओर बहुत ध्यान देने के बदले में सरकार घाटा में चल रहे संयंत्रों को लाभकारी संयंत्र बनाने के लिये भारत सरकार से या अन्य किसी भी वित्तीय संस्थान से पूँजी लाये, उनको अधिकाधिक सक्षम बनाए, अच्छा बनाये तो यह कदम राज्यहित और जनहित में होगा।

तेनुघाट विद्युत निगम लिमिटेड जैसे अत्यंत आधुनिक विद्युत उत्पादन संस्थान में भी बिजली का उत्पादन रोज बंद हो रहा है, बार-बार ट्रीप हो रहा है। इसके परिचालन में अन्य कई कठिनाइयाँ आ रही हैं। कोई बड़ी मशीनरी चलेगी तो उसका चलना तभी सुनिश्चित होगा जब उसके नट-बोल्ट की मजबूती का भी ख्याल रखा जायेगा। अफसोस होता है यह देखकर कि इस पूरी प्रक्रिया में राज्य के अधीन जो संस्थान हैं वे संबंधित समस्याओं को व्यापक एवं समन्वित दृष्टिकोण से नहीं देख रहे हैं। 'कहीं का ईंट कहीं का रोड़ा, भानुमति ने कुनबा जोड़ा' की तर्ज पर काम कर रहे हैं। राज्य सरकार को चाहिए कि अविलम्ब बिजली बोर्ड का पुनर्गठन करे और उत्पादन, संचरण और वितरण के क्षेत्र में व्यावहारिक कार्य संस्कृति और युगानुकूल कार्यपद्धति अपनाये। उत्पादन, संचरण और वितरण तीनों क्षेत्रों के लिए अलग-अलग संस्थान बनाये। तभी आम जनता की आकांक्षाओं पर खरा उतरा जा सकता है।

आज बहुत सारे उद्योग अपने लिए कैप्टिव पावर प्लांट स्थापित कर रहे हैं। उनकी जरूरतें इससे पूरी हो जा रही हैं। इसलिए निजी क्षेत्र के जो बड़े उद्योग यहाँ आयेंगे और आज से पाँच-दस साल बाद जब अपना उत्पादन शुरू करेंगे तो उनके लिए सरकार द्वारा उत्पादित बिजली की कोई खास जरूरत नहीं होगी। इसलिए आम जनता के लिए, किसान के लिए, गाँव के लिए लघु, मध्यम तथा कुटीर उद्योगों के लिये, असंगठित क्षेत्र के कारीगरों और हुनरमंदों के लिये उचित मूल्य पर सुनिश्चित बिजली मिले इसके लिए राज्य सरकार को अपनी चालू पंचवर्षीय योजना की एक मध्यवर्ती समीक्षा अवश्य करनी चाहिए। फिर से उसके एलौटमेंट की प्राथमिकताओं का विश्लेषण कर इसमें आवश्यक बदलाव करना चाहिये। कहाँ से कितनी पूंजी सरकार लायेगी, कितना स्वयं लगायेगी, बाह्य संस्थाओं से कितना पूँजी निवेश आयेगा, इससे कितना फायदा होगा, इसका ठोस संश्लेषण होना चाहिये। इस नफा-नुकसान और लाभ-लागत अनुपात के आधार पर कृषि क्षेत्र के लिये, समाज के कमजोर तबके के लिये, सब्सिडी वाले अन्य क्षेत्रों के लिये, नगर निकायों के लिये सहायता अनुदान के संदर्भ में विद्युत क्षेत्र की ठोस एवं वस्तुपरक आयोजना होनी चाहिये। गाँवों में, दूर-दराज के इलाकों में संचरण लाइन ले जाने के लिए भी सरकार को एक व्यावहारिक नीति निर्धारित करनी चाहिये। इस दिशा में शीघ्र आवश्यक कदम उठाना चाहिए। अब ऐसी टेक्नोलॉजी आ गई है जिसके माध्यम से ''लीक प्रूफ'' डिस्ट्रीब्यूशन हो सकता है, बिजली की चोरी रोकी जा सकती है, तार का कटना रोका जा सकता है। देश और दुनिया में, इस आधुनिक युग में जिस तकनीक से काम हो रहे हैं उनका इस्तेमाल अपने यहाँ भी किया जाना चाहिए। आम जनता से कर वसूली एवं विद्युत दर वसूली से जितना पैसा आता है उसके अतिरिक्त बाहर से कितनी बड़ी निवेश राशि सशर्त या बिना शर्त लायी जा सकती हैं, इसकी योजना बनाने के लिए दसवीं पंचवर्षीय योजना में ऊर्जा विभाग की प्राथमिकताओं की पुनर्समीक्षा अवश्य की जानी चाहिए।

मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है और मुझे लगता है कि सभी माननीय सदस्य इससे सहमत होंगे कि राज्य में बिजली की व्यवस्था अच्छी नहीं है,

संतोषजनक नहीं है, लचर है। ऊर्जा के क्षेत्र में सुधार का काम एक गम्भीर चुनौती का काम है। हमारे लिये यह भारी चुनौती है कि पूरे राज्य में बिजली जाये, सभी गाँवों में बिजली पहुंचे, उद्योगों को, कल-कारखानों को निर्बाध बिजली मिले, शहरों में चौबीस घंटा बिजली रहे, गाँव के इलाकों में कृषि और ग्रामीण रोजगार के लिये पर्याप्त बिजली रहे और खेती के लिए भी कम से कम अठारह से बीस घंटा तक बिजली मिले। कृषि क्षेत्र के लिये अलग ग्रिड बनाकर किसानों को पर्याप्त बिजली दी जा सकती है, ग्रामीण घरेलू कनेक्शन को इससे अलग किया जा सकता है, शहर की सुविधाओं को गाँवों तक पहुँचाने की दिशा में यह सराहनीय कदम होगा। यह एक बड़ी चुनौती है। मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता हो रही है कि पिछले पाँच वर्षों में एन.डी.ए. की सरकार ने इस चुनौती का सामना करने के लिए भरपूर प्रयास किया है। सदन के सामने प्रस्तुत बजट में जो मांग रखी गयी है, उस माँग में भी पिछले वित्तीय वर्ष की उपलब्धियों के बारे में चर्चा है, आने वाले वर्ष की योजनाओं की भी चर्चा है। ये योजनाएं और कार्यक्रम अपने आप में प्रमाण हैं कि सरकार इस चुनौती का सामना करना चाहती है, इसके लिये दृढ़प्रतिज्ञ है।

परन्तु मैं सरकार के केवल इन्हीं कार्यक्रमों से संतुष्ट नहीं हूँ। सरकार को इसके अतिरिक्त कई अन्य सुधारात्मक कार्य करने की आवश्यकता है। यह सही है कि राज्य में बिजली की स्थिति में पहले से काफी सुधार हुआ है। 15 नवम्बर, 2000 के दिन जब झारखंड राज्य बना था तब तक यहाँ के पाँच हजार एक सौ आठ गाँवों तक बिजली पहुँची थी। आज के दिन नौ हजार एक सौ उन्तीस गाँवों तक बिजली पहुँच चुकी है। इस अवधि में बिजली की खपत भी 265 यूनिट प्रतिव्यक्ति से बढ़कर 392 यूनिट प्रति व्यक्ति हो गयी है। हर साल सरकार ने बिजली उत्पादन में कम से कम 50 मेगावाट वृद्धि का लक्ष्य रखा है। यह लक्ष्य महत्वाकांक्षी नहीं है, पर यह लक्ष्य सुधारात्मक जरूर है।

अभी जो स्थिति राज्य में है बिजली व्यवस्था की उसे समझने के लिये चार-पाँच दशक पीछे की ओर मुड़कर देखना होगा। 40 साल, 50 साल पीछे के काल खंड में ऊर्जा के क्षेत्र में जो कार्य हुए हैं उन्हें देखते हैं, उनकी समीक्षा करते हैं, तो

लगता है कि तीसरी पंचवर्षीय योजना काल में बहुत अच्छा काम हुआ। 60 से 70 के दशक में पतरातु थर्मल पावर स्टेशन का निर्माण हुआ। इसके बाद तेनुघाट ताप बिजली घर बनाने के अलावा कोई काम नहीं हुआ। सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान अविभाजित बिहार में कांग्रेस की सरकार थी। उसने कहा है कि सेन्ट्रल इलेक्ट्रिसीटी ऑथोरिटी द्वारा बिहार राज्य के लिये डिमांड की गणना कम करके किया जाता है। झारखंड के लिये फिलहाल मात्र 2988 मेगावाट डिमांड बताया गया है जो कि बहुत ही अन्डर इस्टीमेटेड है। उस समय यहाँ का पी.एल.एफ. 50 प्रतिशत भी नहीं था। इसका मतलब कि राज्य के लिए साढ़े चार हजार, पौने पाँच हजार मेगावाट बिजली उत्पादन का लक्ष्य रखना चाहिये था, इस हिसाब से डिमान्ड में वृद्धि होनी चाहिये थी, पर ऐसा नहीं हुआ।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में बजट का 27 परसेंट से 30 परसेंट खर्च ऊर्जा क्षेत्र में हो रहा था। एकाएक सातवीं पंचवर्षीय योजना में घटकर यह उद्व्यय 7 परसेंट हो गया। 8वीं पंचवर्षीय योजना काल में जब राष्ट्रीय जनता दल की सरकार यहाँ थी, यह योजना उद्व्यय घटकर 5 परसेंट हो गया। बिजली के क्षेत्र में निवेश लगातार कम होता गया। इस बारे में कोई स्पष्ट दृष्टिकोण राज्य सरकारों के पास नहीं रहा। इसके चलते जो आधारभूत ढांचा तीसरी और चौथी पंचवर्षीय योजना में खड़ा किया गया था, वह ढांचा धीरे-धीरे ध्वस्त होता गया, कमजोर होता गया। झारखंड राज्य बना तो इसको विरासत में बिजली की जर्जर संरचना मिली। अब इसमें सुधार की गुंजाइश नहीं है, बल्कि इसके पुनरुद्धार की जरूरत है। इसकी जगह पर समानान्तर वैकल्पिक संरचना व्यवस्था खड़ी करने की जरूरत है। वर्तमान झारखंड सरकार ने इस विषय पर अपना दृष्टि-पत्र प्रस्तुत किया है। उसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि वर्ष 2010 में हम कितना मेगावाट बिजली बनायेंगे। इससे स्पष्ट है कि राज्य सरकार विद्युत उत्पादन बढ़ाने के प्रति सचेष्ट है। वह कोशिश कर रही है। मुझे उम्मीद है कि जिस सिद्दत के साथ राज्य सरकार द्वारा केन्द्र के समक्ष विद्युत उत्पादन बढ़ाने हेतु सहायता की मांग जोरदार तरीके से उठायी जा रही है, आने वाले दिनों में यह कोशिश जरूर रंग लायेगी।

अभी माननीय सदस्य नियेल तिर्की जी बता रहे थे कि झारखंड के कितने गांवों में बिजली नहीं है। सातवीं पंचवर्षीय योजना का दस्तावेज देखने से यह पता चलता है कि बिहार के 67 हजार गांवों में से केवल 35 हजार गांवों में ही बिजली की व्यवस्था है। अगर इसे सही मानकर झारखंड के लिये औसतन इसका एक-तिहाई भी लेंगे, तो झारखंड के 10 से 12 हजार गांव आज विद्युतीकृत होने चाहिए थे। परंतु जब नया राज्य बना तो राज्य सरकार ने पाया कि मुश्किल से 5000 हजार गांवों तक ही बिजली गयी है, वह भी आधी-अधूरी गयी है। जिस गाँव में बिजली का पोल कागज पर गड़ा दिखा दिया गया उस गांव को विद्युतीकृत मान लिया गया। विरासत में राज्य को ऐसी जर्जर और ध्वस्त संरचना मिली है जहां जेनरेशन नगण्य है, ट्रांसमिशन और डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम का अस्तित्व ही नहीं है। ऐसी स्थिति में तो इस जर्जर व्यवस्था को बदलकर इसका पुनरुद्धार करना ही एकमात्र विकल्प है।

बिजली के क्षेत्र में पहले जो वैधानिक व्यवस्था थी आज वह व्यवस्था बदल गयी है। वर्ष 2003 में बिजली का केन्द्रीय एक्ट पास हो चुका है। उसके बाद सरकार को एक मिशन लेकर चलना पड़ेगा। उस मिशन के अनुसार उपभोक्ताओं की सभी जरूरतें पूरी हों, लागत खर्च कम हो, उनके जीवन-स्तर में सुधार हो, सेवा में सुधार हो, उत्पादन के स्तर में सुधार हो, हमारे यहाँ जो संसाधन हैं, उन संसाधनों का संरक्षण हो, 'पीट हेड' पर बिजली पैदा करने का प्रयास हो, कोयला ढोकर ले जाने की जगह अन्य राज्य यहाँ पर उत्पादित बिजली को अपने यहां ले जायें, राज्य को इससे आमदनी हो, राज्य की आय बढ़े, इसका ध्यान रखना होगा। इस दृष्टिकोण से देखें तो बिजली एक तरह से हमारा 'रॉ मैटेरियल' हो सकती है, जो राज्य की वित्तीय व्यवस्था को सुदृढ़ करने में, राज्य को उन्नत, विकसित और गतिशील बनाने में एक अहम भूमिका निभा सकती है।

इसलिए मैं चाहूँगा कि राज्य सरकार ने जो लक्ष्य तय किया है, यद्यपि वह लक्ष्य प्रशंसनीय है, फिर भी उस लक्ष्य को और महत्वाकांक्षी बनाया जाना चाहिये। हमारी जरूरतें आज कितनी हैं, और आने वाले दिनों में कब कितनी हो सकती हैं, हमारा अपना वित्तीय एवं प्राकृतिक संसाधन कितना है, उसका मूल्य संवर्द्धन करने

अथवा उसे ऊर्जा में रूपान्तरित करने के लिये हमको कितना अतिरिक्त धन चाहिए? अगर यह धन राज्य सरकार और केन्द्र सरकार से नहीं मिलने वाला है तो हम किस तरह से निजी क्षेत्र एवं वित्तीय संस्थानों से इसे प्राप्त कर सकते हैं, इस पर विचार होना चाहिये । जिस तरह से विद्युत उत्पादन में वृद्धि के लिये केन्द्र सरकार ने कई दूरगामी लक्ष्य निर्धारित किया है, उसके परिप्रेक्ष्य में 30 हजार मेगावाट बिजली पैदा करने का लक्ष्य हम जेनरेशन के क्षेत्र में निर्धारित करेंगे तथा ट्रांसमिशन और डिस्ट्रीब्यूशन के क्षेत्र में उसके हिसाब से सुदृढ़ और विश्वसनीय संरचना खड़ा करेंगे तभी राज्य के विकास का महत्वाकांक्षी लक्ष्य प्राप्त हो सकेगा । विद्युत संचरण व्यवस्था को सरकार के हाथ में रखकर और सुदृढ़ बनाकर इसकी संरचना को क्षेत्रशः ट्रांसफर की पद्धति से निजी क्षेत्र के विद्युत आपूर्त्तिकर्ताओं को सौंपा जा सकता है और निजी क्षेत्र से पूंजी निवेश आकर्षित किया जा सकता है ।

आज जरूरत है ऊर्जा क्षेत्र में पूर्व एवं वर्तमान ढाँचे को बदल कर नया ढाँचा तैयार करने की । बेहतर होगा अगर हम यह मान लें कि हमको विरासत में शून्य ढांचा मिला है, एक ऐसा सिस्टम राज्य निर्माण के बाद झारखंड में मिला है जिसका योगदान राज्य के विकास में ऋणात्मक हो रहा है । इसके सुधार में सरकार जितनी पूँजी लगा रही है, वह पूँजी भी ऋणात्मक फल देने वाली साबित होती जा रही है । यह व्यय निष्फल व्यय की श्रेणी में रखा जा रहा है । इसलिए जरूरी है कि ऊर्जा क्षेत्र में एक नई व्यवस्था खड़ी की जाय । सरकार ने प्रत्येक प्रखण्ड में एक पावर सब स्टेशन बनाने का लक्ष्य रखा है । उस लक्ष्य को प्राप्त करने के बाद सरकार किस तरह से क्षेत्र को पर्याप्त बिजली दे सकेगी इसकी आयोजना अभी से की जानी चाहिये। यह सब एक सुचिंचित, समन्वित, व्यापक एवं दीर्घकालीन योजना के अंतर्गत होना चाहिये, यही मेरा विनम्र निवेदन है ।

□ 15 जून 2005
झारखंड विधानसभा

•••

दामोदर घाटी निगम अपनी ही कसौटी पर

इस महत्वपूर्ण विषय पर सदन में चर्चा के दौरान माननीय सभा अध्यक्ष द्वारा व्यक्त किये गये इस विचार से मैं पूरी तरह सहमत हूँ कि झारखंड, पश्चिम बंगाल और केन्द्र सरकार के बीच दामोदर घाटी निगम को लेकर नये समीकरण बनाने की जरूरत है । जैसा कि हम सभी जानते हैं दामोदर एक अन्तर्राज्यीय नदी घाटी है जो झारखंड से निकलती है और बंगाल में जाकर गंगा नदी की शाखा हुगली में मिल जाती है । दामोदर की कुल लम्बाई 541 किलोमीटर है उसमें से 258 किलोमीटर झारखंड में और 283 किलोमीटर पश्चिम बंगाल में प्रवाहित होती है । दामोदर घाटी के कुल जलग्रहण क्षेत्र 22,528 वर्ग किलोमीटर का 76 प्रतिशत यानी 16,934 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र झारखंड राज्य में पड़ता है । 7 जुलाई, 1948 को दामोदर घाटी निगम के रूप में देश का पहला बहुद्देशीय निगम बनाया गया था । यद्यपि इसका उद्देश्य दोनों प्रदेशों, तत्कालीन बिहार प्रदेश और पश्चिम बंगाल की जनता की भलाई रखा गया था, परन्तु इसके गठन के समय पश्चिम बंगाल की भलाई को ही मुख्यतः ध्यान में रखा गया ।

1943 में पश्चिम बंगाल में भीषण बाढ़ आई थी । 40 दिनों तक कलकत्ता का सम्पर्क पूरे देश और दुनिया से टूटा रहा । यातायात व्यवस्था पूरी तरह बन्द रही । उसके बाद श्री मेघनाथ साहा, जो उस समय फिजिक्स के जाने माने वैज्ञानिक थे, एवं अन्य विशेषज्ञ लोगों ने मिलकर तय किया कि अमेरिका की 'टेनेसी वैली ऑथोरिटी' की तर्ज पर दामोदर और इसकी सहायक नदियों पर डैम बनाकर बाढ़ लाने वाले बरसात के पानी को रोका जाय ताकि बंगाल में इससे प्रतिवर्ष आनेवाली भीषण बाढ़ की प्रचंडता कम की जा सके और बाढ़ की विभीषिका को नियंत्रित किया जा सके । दामोदर का उपरी जलग्रहण क्षेत्र तत्कालीन बिहार में अवस्थित था । इसलिए बिहार सरकार से भी इस बारे में बात की गयी और बिहार, बंगाल तथा

भारत सरकार के बीच एक त्रिपक्षीय समझौता हुआ। मैंने उस समझौते को देखा है और मुझे इसका अध्ययन करने का मौका भी मिला है। इस बारे में मैं अपना विचार बहुत संक्षेप में रखना चाहूँगा। उस समझौते में दामोदर घाटी निगम का उद्देश्य बताया गया है कि इससे कृषि, सिंचाई, उद्योग का विकास, आर्थिक विकास और जन–स्वास्थ्य का विकास पूरे दामोदर घाटी क्षेत्र में होगा। एक उद्देश्य तो उसका यह था। दूसरा उद्देश्य बाढ़ के रूप में जो जल संसाधन पश्चिम बंगाल में नुकसान पहुँचाता है, वहाँ बाढ़ की विभीषिका पैदा करता है, उसका उपयोग एक संसाधन के रूप में, विकास के संसाधन के रूप में करना था और तीसरा उद्देश्य बताया गया था कि इस जल से सिंचाई एवं पेय जलापूर्ति की योजनाएँ बनाना, बिजली के उत्पादन, संचरण एवं वितरण की योजनाएँ बनाना, बाढ़ नियंत्रण की योजनाएं बनाना, दामोदर नदी में नौ–परिवहन की योजनाएं बनाना, घाटी के क्षेत्र में वन लगाना, भू–संरक्षण करना एवं जमीन का कटाव रोकना, यानी कैचमेन्ट एरिया का सम्पूर्ण विकास करना। ये कुछ महत्वपूर्ण काम 'दामोदर घाटी निगम' की स्थापना के उद्देश्य बताये गये थे।

1948 में जब यह निगम बना था उस समय पर्यावरण संरक्षण एवं प्रदूषण नियंत्रण की चर्चा आज जितनी गम्भीर और महत्वपूर्ण नहीं थी। सन् 1972 ई0 में स्टॉक होम कांन्फ्रेंस के बाद 'नदी घाटी योजनाओं' से पर्यावरण पर खतरा की बात गम्भीरता से होने लगी। धीरे–धीरे ऐसी योजनाओं के क्रियान्वयन में पर्यावरण प्रभाव अध्ययन और पर्यावरण प्रबंधन योजना एक अनिवार्य हिस्सा बन गयी। परियोजनाओं के कास्ट–बेनिफिट निर्धारण या इकोनोमिक रेट ऑफ रिटर्न के आकलन में पर्यावरण क्षति की भरपाई के उपायों का समावेश करना अनिवार्य हो गया। उस समय के हमारे वैज्ञानिक और प्रबंधक इतने दूरदर्शी थे कि उन्होंने 1948 ईस्वी में ही इस निगम का एक प्रमुख उद्देश्य पर्यावरण का संरक्षण और प्रदूषण का नियंत्रण भी रखा। भारत की संविधान सभा द्वारा बनाये गये दामोदर घाटी निगम अधिनियम

में दामोदर वैली कॉरपोरेशन को जो कई शक्तियाँ दी गईं। उनमें एक प्रमुख शक्ति यह भी है कि इसके नियंत्रणाधीन अथवा अन्य विकास परियोजनाओं से किसी भी प्रकार के जल का प्रदूषण रोकना और किसी को भी सिंचाई, पेयजल एवं अन्य कार्य हेतु जिस पानी की आपूर्ति हो रही है, उसमें किसी के द्वारा किये जा रहे कोई भी घातक द्रव्य का स्राव रोकना निगम के अधिकार क्षेत्र में होगा। यह प्रमुख शक्ति दामोदर घाटी निगम को एक अधिनियम बनाकर दी गयी थी।

इस आलोक में हम देखें कि जो प्रमुख उद्देश्य दामोदर घाटी निगम के गठन का रहा है उन उद्देश्यों की कसौटी पर यह निगम कालक्रम में कितना खरा उतरा है। मुझे यह कहने में थोड़ा भी संकोच नहीं है कि जहाँ तक झारखण्ड का संदर्भ है, दामोदर घाटी निगम से झारखण्ड को होने वाली उपलब्धियाँ शून्य हैं। यहाँ कुल 8 जलाशय बनने थे, जिसमें से 4 जलाशय बने हैं। कहा गया था कि तिलैया डैम से 1 लाख 20 हजार एकड़ भूमि में खरीफ की सिंचाई होगी और 24 हजार एकड़ में रबी फसल की सिंचाई होगी। कोनार डैम से झारखण्ड में 1 लाख 21 हजार एकड़ जमीन पर खरीफ की सिंचाई होगी और 49 हजार एकड़ जमीन पर रबी की सिंचाई होगी। यह सिंचाईं कहाँ हो रही है ? आज तक कुछ पता नहीं है। इस बारे में प्रगति शून्य है। इसके अलावा बोकारो, चन्द्रपुरा, दुर्गापुर और मेजिया चार थर्मल पावर स्टेशन हैं दामोदर बेसिन में। इनमें दो थर्मल पावर स्टेशन्स, बोकारो और चन्द्रपुरा, झारखण्ड में हैं। बिजली के संचरण की योजना बनाना और वितरण की योजना बनाना भी निगम के प्रमुख उद्देश्यों में शामिल है। सवाल है कि दामोदर घाटी निगम द्वारा कितनी ऐसी योजनाएँ अब तक बनीं, जिससे झारखण्ड के क्षेत्र में इसके द्वारा उत्पादित बिजली का उपयोग हो और वह बिजली आम जनता तक पहुँचे।

तिलैया में, मैथन में, पंचेत में जलाशयों से जो पनबिजली बनती है, वह इसलिए बनती है कि वहाँ से पानी की एक निर्धारित मात्रा नीचे निरंतर गिरती रहेगी और इससे पश्चिम बंगाल में दुर्गापुर बराज से सिंचाई होगी और बर्द्धमान जिला की

खेती उन्नत होगी। बर्द्धमान जिले में डी.भी.सी. के कारण आज तीन फसलों की खेती हो रही है और झारखंड में खेती मानसून पर आधारित है। जब से दामोदर घाटी निगम बना है। तब से बंगाल का बेनिफिट कैलकुलेट करें, तो उसको बाढ से जितना नुकसान होता था, वह नुकसान रूक गया। यह उसका नेट हिडेन बेनिफिट है। दुर्गापुर बराज के कारण आज बर्द्धमान जिला कृषि उत्पादन के क्षेत्र में पश्चिम बंगाल का सबसे अग्रणी जिला है। इसका टोटल बेनीफिट अगर हम कैलकुलेट करें, तो दोनों, हिडेन और एपेरेन्ट बेनीफिट, मिलाकर उनको इससे अथाह फायदा हुआ है। दूसरी ओर झारखण्ड को क्या फायदा हुआ है ? इससे झारखंड में फायदा तो शून्य हुआ है, मगर नुकसान अपार हुआ है।

1978 ईस्वी में माननीय कर्पूरी ठाकुर जी बिहार के मुख्यमंत्री थे। उस समय फिर से इस बारे में एक समझौता हुआ। इसमें कई बातें सामने लायी गयीं। संतुलन बनाने की कोशिश की गई। परन्तु उसके बाद भी डी. वी. सी. से इस राज्य को कोई लाभ हो उसके बारे में गंभीरता से नहीं सोचा। इतना ही नहीं, इसके जो थर्मल पावर स्टेशन्स बोकारो और चन्द्रपुरा में हैं और इसके जो थर्मल पावर स्टेशन्स दुर्गापुर एरिया में हैं, यानी डी.वी.सी. जो पावर स्टेशन्स बंगाल में हैं और जो पावर स्टेशन्स झारखण्ड में हैं, उनमें काम करने वालों के साथ राज्य के आधार पर भेदभाव बरता जाता है। मैं अनेक बार पंचेत और मैथन गया हूँ। डैम निर्माण के समय वहाँ लोग विस्थापित हुये हैं, मगर 50-55 साल बाद भी उन्हें समुचित लाभ नहीं मिलते पाया है। आज तक वे न्याय के लिए दौड़ रहे हैं।

इस परियोजना के आरम्भ में डैम बनने के समय जो लोग विस्थापित हुए थे, उनकी संख्या मैने प्रोजेक्ट रिपोर्ट से नोट किया है। उस समय 28,730 हेक्टेयर, यानी करीब 60,000 एकड़ से अधिक जमीन का अधिग्रहण किया गया था झारखण्ड के क्षेत्र में। यहाँ जो डैम बनाये गये हैं, उनमें 71,000 एकड़ जमीन डूबी है। उस समय के हिसाब से करीब 20,310 परिवार विस्थापित हुए हैं और विस्थापितों की

कुल संख्या 95,000 के आसपास है। दर्जनों गाँवों के 5,000 से अधिक घर डी.वी.सी. के जलाशयों में स्थायी रूप से डूब गये हैं। इस तरह से इस प्रोजेक्ट के बनते समय झारखण्ड को और झारखण्ड की जनता को भारी नुकसान हुआ है। यह नुकसान परपेचुअल है। आज भी हो रहा है और आगे भी होता रहेगा। परन्तु, इस परियोजना से झारखंड को जो अपेक्षित लाभ मिलना चाहिए, वह लाभ नहीं मिल पा रहा है।

1991 ईस्वी में द्वितीय बिहार राज्य सिंचाई आयोग बनाया गया था। मैं इस सिंचाई आयोग का एक सदस्य था। आयोग की पहली उप समिति पर अंतर्राज्यीय जल समझौतों की समीक्षा करने और राज्य की जल नीति बनाने का दायित्व सौंपा गया था। मैं उस उप समिति संख्या एक का अध्यक्ष मनोनीत किया गया था। आयोग का प्रतिवेदन 1994 में तत्कालीन बिहार सरकार को सौंप दिया गया। तत्कालीन बिहार सरकार ने उसे स्वीकार भी कर लिया। आयोग के प्रतिवेदन में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि अब जरूरत है इस अन्तर्राज्यीय नदी जल समझौता पर पुनर्विचार की। उस समय समझौता हुये 48 साल हुए थे अब 58 साल हो गए। कोई समझौता किसी नदी पर 58 साल का हो जाता है तो उसपर नए सिरे से विचार होना ही चाहिए। आज देश और दुनिया में अनेक परिवर्तन हो गए हैं जल नीति में, उद्योग नीति में, कृषि नीति में अलग-अलग राज्यों ने, इस देश में नयी-नयी उपलब्धियाँ, नये-नये मुकाम हासिल किए हैं। आज जरूरत है इस समझौते पर फिर से विचार करने की ताकि इस परिप्रेक्ष्य में इस समझौते को कितना तृपक्षीय समझौता रखा जाय, जिसमें केन्द्र भी शामिल हो, झारखंड भी शामिल हो और बंगाल भी शामिल हो और कितना द्विपक्षीय समझौता रखा जाय केवल झारखंड और बंगाल के बीच।

दो राज्यों की नदियों के जल प्रबंधन के बारे में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जितने भी कानून बने हैं उनके अनुसार जल पर राज्यों का अधिकार है, राज्य

की जनता का अधिकार है । भारत के संविधान में नदी जल सेंट्रल सबजेक्ट नदी है, यह कंकरेन्ट सब्जेक्ट भी नहीं है यह स्टेट सब्जेक्ट है । इसलिये मुझे लगता है कि इस समझौते पर पुनः विचार किया जाना चाहिए । क्योंकि यह समझौता अपनी कसौटी पर खरा नहीं उतरा है । जन स्वास्थ्य की कसौटी पर और दामोदर घाटी क्षेत्र के ऑल राउंड विकास की कसौटी पर खरा नहीं उतरा है । डी.वी.सी. वस्तुतः एक विद्युत उत्पादन करनेवाली और इसका व्यवसाय करने वाली कम्पनी बनकर रह गई है । मुनाफा कमाना इसका प्राथमिक ध्येय हो गया है ।

दामोदर घाटी निगम का हेडक्वार्टर बंगाल में रहने के कारण भी झारखंड के साथ भेदभाव हो रहा है । हेडक्वार्टर में आवश्यकता से अधिक लोगों की बहाली कर ली गयी है । इनका पूरा खर्च थर्मल पावर स्टेशनों पर डाल दिया जाता है और कहा जाता है कि ये थर्मल पावर स्टेशन लाभ में नहीं चल रहे हैं । बोकारो और चन्द्रपुरा थर्मल पावर स्टेशनों में जितने लोगों की जरूरत है, जितने मैन पावर की जरूरत है, उतनी ही जरूरत के हिसाब से बहाली कर इन्हें चलाया जाय तो यह लाभ का सौदा हो सकता है । पर डी. वी. सी. के प्रबंधक इन्हें ऐसे नहीं चलाते हैं। वे यहाँ के कर्मियों की छटनी करते हैं और स्थायी प्रकृति का काम भी ठेका पर कराते हैं। झारखंड के लोग 15 वर्षों से, 20 वर्षों से डी.वी.सी. में ताप बिजली घरों में काम कर रहे हैं लेकिन वे नियमित नहीं हुए हैं । जबकि बंगाल क्षेत्र के तीन बिजली घरों में कार्यरत ऐसे ही लोग, इसी श्रेणी के कर्मी, नियमित होते जा रहे हैं । डी. वी सी. अपने यहाँ दो तरह की नीति चला रही है। इन सबों को देखते हुए दो राज्यों और केन्द्र के बीच में अभी का जो समझौता है उसमें बंगाल को कोई नुकसान नहीं हो, मगर झारखंड को जो लाभ मिलने वाला है वह लाभ मिले, ऐसा प्रबंध जोड़ा जाना चाहिये । इसलिए सबसे पहले झारखंड सरकार को केन्द्र के पास जाना चाहिए कि 1948 में जो समझौता हुआ है उसको स्क्रैप कीजिए, रद्द कीजिये । फिर नए सिरे से बंगाल और झारखंड की सरकार वार्ता करें। बैठकर इस पर बात करें कि

किनको कितना बेनीफिट मिलना चाहिए, किनकी कितनी हिस्सेदारी होनी चाहिये। किसका कितना पानी यहाँ है, किस राज्य में दामोदर का जलग्रहण क्षेत्र कितना है, इसके संबंध में सम्यक विचार होना चाहिए ।

वर्ष 1987 में तत्कालीन प्रधान मंत्री श्री राजीव गांधी द्वारा एक राष्ट्रीय जल नीति बनायी गई थी । वर्ष 2000 में श्री अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार ने उसको और आगे बढाया है, व्यापक और सक्षम बनाया है । इन दोनों जलनीतियों के परिप्रेक्ष्य में यह जरूरत है कि हम इस समझौता पर फिर से विचार करें। यह सदन एक प्रस्ताव पास करे और केन्द्र सरकार के पास भेजे कि डी. वी. सी. को भंग किया जाय । बंगाल और बिहार के बीच इसके एसेट्स और लाइबिलिटीज का बंटवारा किया जाए । जिसका जिस परियोजना पर जितना अधिकार बनता है उतनी हिस्सेदारी रखी जाय । अगर यह होता है तो हम आने वाली पीढ़ी और वर्तमान पीढ़ी को दामोदर के जल से लाभ पहुँचा सकेंगे । राज्यहित और जनहित में यह आवश्यक कदम सरकार को उठाना चाहिये ।

दूसरी बात है कि वर्ष 1948 में डी. वी. सी. एक्ट के उद्देश्यों में प्रदूषण की रोकथाम की बात कही गयी थी। इसकी दिशा में इन्होंने कोई कदम नहीं उठाया है। प्रदूषण रोकने का जिम्मा राज्य पोल्युशन कंट्रोल बोर्ड और केन्द्रीय पोल्युशन कंट्रोल बोर्ड के पास है । लेकिन वर्ष 1948 में जिनको यह शक्ति दी गयी है ऐक्ट में उनसे भी पूछा जाय कि उन्होंने इस संदर्भ में अबतक कौन सा कदम उठाया है । इनके थर्मल पावर स्टेशनों और दूसरे थर्मल पावर स्टेशनों से, बोकारो स्टील प्लांट से, कोल वाशरियों से जो प्रदूषण हो रहा है उसको रोकने के लिये इन्होंने कितना प्रयास किया है । इस बारे में क्या कदम उठाया है । दुर्गापुर स्टील प्लांट, बोकारो स्टील प्लांट, ईस्को स्टील प्लांट से प्रदूषण होने के कारण दामोदर में मछलियाँ मर रही हैं, जलीय जीवन, जलीय वनस्पतियाँ समाप्त हो रही हैं । मेरा सदन से निवेदन है कि मेरे वक्तव्य के आलोक में इस आशय का एक प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित

करें और इसे स्वीकृति के लिये केन्द्र के पास भेजा जाय ।

अध्यक्ष : आपने दामोदर बचाओ आंदोलन के तहत जो यात्रा की थी वह कहाँ से कहाँ तक की थी ?

सरयूराय : महोदय, मैंने यात्रा प्रारम्भ की थी लातेहार और लोहरदग्गा जिलों की सीमा पर स्थित चूल्हा पानी नामक स्थल से, जहाँ से देवनद के रूप में दामोदर निकलता है । उद्‌गम स्थल से 30 किलोमीटर तक इसे देवनद कहा जाता है । उसके बाद इसका नाम दामोदर हो जाता है । चूल्हा पानी से लेकर हमलोगों ने कलकत्ता तक यात्रा की थी । स्थान–स्थान पर जल का, गाद का, जलीय जीवों और वनस्पतियों का सैम्पल लिया था । जो कूड़े कचड़े उद्योगों से निकलकर नदी जल में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से चले जाते हैं उन स्थानों पर सैम्पल लिए थे । हमलोगों के साथ पटना साइंस कॉलेज के जीव विज्ञान विभाग से जुड़े वैज्ञानिकों की एक टीम भी प्रो. (डा.) आर. के. सिन्हा के साथ अपनी चलंत प्रयोगशाला लेकर चल रही थी और दामोदर के जल की जांच कर रही थी । दुनिया भर में 'डाल्फिन मैन' के नाम से विख्यात प्रो. आर. के सिन्हा की यह प्रयोगशाला गंगा एक्शन प्लान के तहत हरिद्वार से गंगासागर तक गंगाजल की नियमित मोनिटरिंग करती है । इनके द्वारा की गयी दामोदर जल की जांच रिपोर्ट हमलोगों ने प्रकाशित की है । दुनिया की जो सर्वाधिक प्रदूषित नदियाँ हैं, उनमें से दामोदर भी एक है। बेरमो के करगली बाजार के पास, जहाँ से दामोदर नदी से पीने के पानी की आपूर्ति हो रही है, इतनी गंदगी है कि कोई भी आदमी उसको देखकर वहाँ का पानी नहीं पी सकता है । घरों में आपूर्ति किये जानेवाले जल को वहां के निवासी पहले छानते हैं, फिर उबालते हैं, उसके बाद पीते हैं । ऐसी स्थिति कई–कई जगहों पर है, जहाँ जानवर भी इसका पानी नहीं पीते हैं।

औद्योगिक एवं नगरीय कूड़ा–कचरा बिना साफ किये सीधे दामोदर नद में डाला जा रहा है । अनेक स्थानों पर यह नदी मर गयी है, डेड हो गयी है । शहरों

की गंदगी, पतरातू, बोकारो और चन्द्रपुरा थर्मल, तथा बोकारो एवं दुर्गापुर स्टील प्लांट से निकला गंदा पानी, विभिन्न कोलवाशरियों से निकली गंदगियां सब बेतहाशा दामोदर में प्रवाहित की जा रही हैं । स्थान–स्थान पर प्रदूषण का शिकार होकर दामोदर नदी मृतप्राय हो गयी है, जलीय जीवन समाप्त प्राय हो गया है ।

दामोदर को प्रदूषण मुक्त रखने के उद्देश्य में भी दामोदर वैली कारपोरेशन विफल रहा है । अपने अन्य उद्देश्यों में भी यह विफल रहा है । अपनी ही कसौटी पर यह संगठन खरा नहीं उतरा है । इसलिये इसी स्वरूप में इसके आगे बने रहने का कोई औचित्य नहीं है ।

☐ 24 जून 2005
झारखंड विधान परिषद्

•••

नोट

नोट